इमाम-उल-हिन्द

शताब्दी स्मारक ग्रंथावली

खंड ३

मौलाना आज़ाद की प्रमुख कृतियाँ
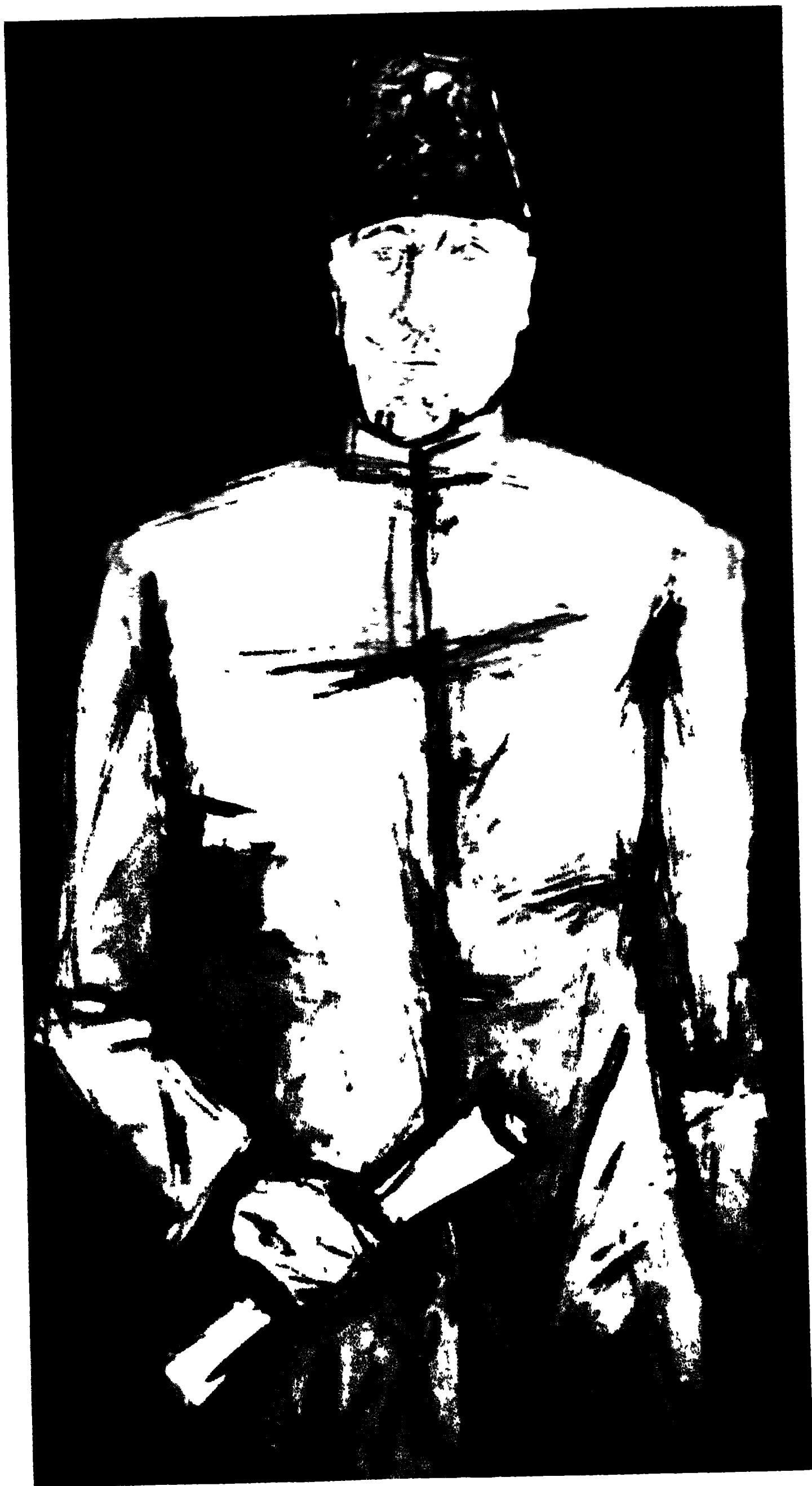
Portrait by M F Husain in the collection of the NGMA, New Delhi

इमाम-उल-हिन्द

अबुल कलाम आज़ाद

संपादक
सैयदा सैयदैन हमीद
प्रोफेसर मुजीब रिज़वी
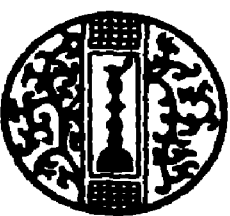
भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिचय
एवं विकास प्रकाशन गृह प्रा० लिमिटेड

इमाम-उल-हिन्द

प्रथम सस्करण 1990

प्रकाशक वीणा सीकरी, महानिदेशक,
भारतीय सास्कृतिक सबध परिषद्
आजाद भवन, इन्द्रप्रस्थ स्टेट, नई दिल्ली- 110002
तथा
विकास पब्लिशिग हाऊस प्रा० लिमिटेड
576 मस्जिद रोड, जगपुरा, नई दिल्ली- 110014

जैकेट सज्जाकार प्रेम नायर

अन्तर्राष्ट्रीय मानक पुस्तक क्रम सख्या
81-85434-00-X (Set)
81-85434-03-4 (Vol-III)

भारत में मुद्रण न्यू-टेक फोटोलिथोग्राफर, शाहदरा, देहली

आभार

मैं उन सभी मित्रो और सहयोगियो का हृदय से आभारी हूँ जिन्होने इस ग्रथावली की प्रस्तुति मे मेरा मार्गदर्शन किया है और मुझे सहायता प्रदान की है।

श्री सैयद मुजफ्फर हुसैन बरनी, अल्पसख्यक आयोग अध्यक्ष की कृतज्ञ हूँ जिन्होने ग्रथावली के समस्त खण्डो मे अपने परामर्श और सहयोग से मेरी सहायता की है। चिंतक और लेखक श्री मालिकराम तथा मकतबा जामिया के प्रमुख प्रबधक श्री शाहिद अली खॉ ने उर्दू खण्ड की प्रस्तुति मे विशेष रूप से अपना बहुमूल्य समय दिया है और अपने परामर्श द्वारा मेरी सहायता की है। मै उनके प्रति आभार प्रकट करती हूँ। मै खण्ड तीन (हिन्दी) और खण्ड चार (उर्दू) का सहसपादक होना स्वीकार करने के लिए क्रमश प्रोफेसर मुजीब रिजवी और डा० सुगरा मेहदी की हृदय से आभारी हूँ।

भारतीय सास्कृतिक सबध परिषद् मे मुझे सुयोग्य व्यक्तियो के साथ कार्य करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। उनकी सख्या इतनी अधिक है कि प्रत्येक को धन्यवाद देना असभव है। परन्तु मैं भारतीय सास्कृतिक सबध परिषद् की महानिदेशिका वीना सीकरी के प्रति विशेषरूप से आभारी हूँ जिनके सक्रिय सहयोग के बिना यह परियोजना पूर्ण ही नही हो सकती थी। श्री अशोक श्रीनिवासन ने इस परियोजना के प्रारम्भ से इसके अत तक जिस प्रकार प्रोत्साहन दिया है और मेरी सहायता की है और पाण्डुलिपि को अन्तिम रूप देने मे श्री ओ०पी० मदान ने जिस तत्परता से मेरी मदद की है उसके लिए मैं इन दोनो व्यक्तियो की अत्यधिक आभारी हूँ। पुस्तकालय-कर्मियो का आभार शब्दो मे व्यक्त करना कठिन है क्योकि इन लोगो ने आजाद भवन पुस्तकालय मे कार्य करने के लिए ऐसा अनुकूल वातावरण उत्पन्न किया जो मेरे लिए अत्यन्त सुखद रहा और अनुसधान सबधी जो भी सुविधा मैने चाही वह इन्होने तुरन्त उपलब्ध कराई। मै मुख्य पुस्तकालय प्रबधक गुलजार नकवी और उनके सहकर्मियो पाकीजा सुल्तान और ख्वाजा मुनीर अहमद के प्रति हृदय से आभार प्रकट करती हूँ। अमरजात कौर ने अत्यन्त जिम्मेदारी से, प्रफुल्लमन से जो सहायता इस कार्य मे प्रदान की है उसके लिए मैं विशेष रूप से उनकी आभारी हूँ।

प्रारभ मे जो फोटो प्रकाशित है वह भारती सास्कृतिक सबध परिषद् मे सग्रहित के०के० हेबर के चित्र से लिया गया है।

अन्त मे अपने स्वर्गीय पति सैयद मुहम्मद अब्दुल हमीद का जिन्होने इस विशाल परियोजना की पूर्ति मे हर प्रकार का नैतिक मनोबल प्रदान किया और स्वर्गीय डॉ० ख्वाजा गुलाम सैयदैन का स्मरण किए बिना नही रह सकती जिन्होने मेरे मन मे मौलाना के प्रति जिज्ञासा और सम्मान मेरे बालजीवन मे जाग्रत किया। तीन दशाब्दियो पश्चात् मै अपनी उन भावनाओ को रूपायित कर सकी और इस महान परियोजना को परिपूर्ण करने मे अपनी समस्त योग्यता समर्पित कर सकी।

— **सपादक**
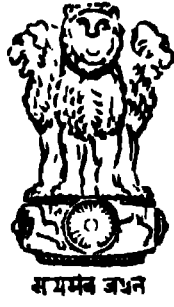
राष्ट्रपति
भारत गणतंत्र

राष्ट्रपति का संदेश

यह अत्यन्त शोधनीय कार्य है कि मौलाना आजाद की जन्म शताब्दी के उपलक्ष्य मे उनके भाषणो और कृतियो का सकलन उर्दू, हिन्दी और अग्रेजी मे प्रकाशित किया जा रहा है और उनके प्रति श्रद्धाजलि अर्पित की जा रही है तथा उनका मूल्याकन किया जा रहा है। मुझे विश्वास है कि १९वी-२०वी शताब्दी के हमारे स्वतन्त्रता आन्दोलन से इन सकलनो द्वारा दिलचस्पी बढेगी।

गॉधी जी के नेतृत्व में अनेक महापुरुष स्वतत्रता आन्दोलन मे कूद पडे थे । इनमे से हर एक ने अपने मूल्यवान व्यक्तित्व और प्रतिभा का योगदान दिया है। किसी ने अपनी सघटन क्षमता समर्पित की है तो दूसरे ने अपनी प्रखर बुद्धि का योगदान दिया है तथा अन्य ने अपनी श्रद्धा और निष्ठा से इस उद्देश्य की सेवा की है। परन्तु मौलाना साहब ने बुद्धि और हृदय के अद्भुत मिश्रण द्वारा इस उद्देश्य की सेवा की है। उनके द्वारा दी गयी प्रेरणा बौद्धिक भी थी और भावनात्मक भी। उनकी श्रद्धा ऐसी थी जो बुद्धिपरक भी थी और साथ ही साथ जो चेतना द्वारा उत्तेजित भी।

मौलाना साहब हृदय से भारतवर्ष के भविष्य के प्रति आस्था रखते थे-न केवल एक राष्ट्र के रूप मे बल्कि एक सस्कृति के रूप मे भी। इतिहास-ज्ञान ने उन्हे एक दृष्टि दी थी। धर्म ग्रथो के ज्ञान ने उन्हे विवेक प्रदान किया था। दृष्टि और विवेक मे उद्देश्य के प्रति आस्था जुड गयी थी। यह मिश्रण अमोघ हो गया था, यही रचनात्मक भी था।

बाल्यावस्था मे ही वे असाधारण रूप से अध्ययनशील थे और अपने प्रारम्भिक युवावस्था मे ही उन्होने उर्दू मे विचारपूर्ण लेखो के लेखक के रूप मे ख्याति प्राप्त कर ली थी। सोलह वर्ष की आयु होते होते भावी मौलाना उच्च इस्लामी शिक्षा के परम्परागत पाठ्यक्रम मे पारगत हो चुके थे।

ईश्वर मे आस्था और अपने देश पर गर्व ने युवा मौलाना की सवेदना का मन्थन करके शुद्ध देशभक्ति को जन्म दिया। आज्ञाभग आन्दोलन और बहिष्कार द्वारा विरोध की पद्धति ने उन्हे प्रेरित करना आरम्भ किया। अपने मुसलमान भाईयो की चेतना जाग्रत करने के लिए उन्होने एक महत्त्वपूर्ण साप्ताहिक "**अल-हिलाल**" के नाम से १९१२ मे निकाला। सकीर्ण लोगो ने अखिल भारतीय राष्ट्रीयता के उनके विचार का विरोध किया। परन्तु दूरदर्शी लोगो ने उनका समर्थन किया।

"अल-हिलाल" ने एक साथ दो सदेश प्रसारित किये एक सदेश था इस्लाम का, और दूसरा भारतीय स्वतत्रता का। मुसलमानो के लिए देश भक्ति को एक धार्मिक कर्त्तव्य बताते हुए मौलाना साहब ने सस्कृत की एक शाश्वत कहावत को चरितार्थ किया है।

"जननी जन्मभूमिश्च
स्वर्गादपि गरीयसी"
(माता और मातृभूमि स्वर्ग से भी श्रेष्ठ है)

राष्ट्र ने जितना मौलाना साहब के साहस पर ध्यान दिया और उसकी सराहना की उतना ही उनके उत्साहवर्धक और प्राजल भाषण की भी प्रशसा की और उनकी यह ख्याति समस्त घेरो को तोडकर प्रसारित हुई। मौलाना साहब के विख्यात समकालीन आचार्य कृपलानी ने उनके योगदान को निम्नलिखित शब्दो में प्रस्तुत किया है।

"वे महान धर्मात्मा थे और यदि उन्होने केवल अपने समुदाय की आध्यात्मिक थाती तक ही अपने को सीमित रखा होता तो उन्हें इस क्षेत्र मे प्राथमिकता प्राप्त हुई होती। वे एक महान वक्ता थे और यदि वे केवल वक्ता मात्र ही रहे होते तो देश उनकी गणना महान वक्ताओ मे करता। वे एक महान विद्वान थे और यदि उन्होने विद्या को अपना जीवन अर्पित किया होता तो वे इस क्षेत्र के नेता हुए होते परन्तु उनकी महत्ता इस बात मे है कि उन्होने समस्त विद्या, धर्म और दर्शन के समस्त ज्ञान, अपने समस्त ऐतिहासिक बोध को तुच्छ समझा यदि देश स्वतत्र न हो, और उन्होने अपनी प्रतिभा और अपने समय को स्वतत्रता-आन्दोलन की सेवा मे अर्पित कर दिया। परन्तु स्वतत्रता-प्राप्ति से आगे भी उनकी दृष्टि थी। वे देख रहे थे कि देर या सबेर स्वाधीनता तो प्राप्त होगी ही, किन्तु इसके पश्चात् स्वाधीनता आन्दोलन की भावना को भी घनीभूत होना चाहिए। वे अपने हृदय की गहराई से समझते थे कि स्वाधीनता से अधिक लाभ नही होगा यदि वह देशवासियो मे एकता उत्पन्न नही कर पाती। मौलाना साहब ने एक दफा कहा था,

'यदि तुम ईश्वर-भक्त हो तो तुम बुराई से मुक्त होओ और यदि तुम ईश्वर को प्रसन्न करना चाहते हो तो तुम्हे शैतान को अप्रसन्न करने से हिचकिचाना नही चाहिए।"

मौलाना आजाद के मन मे भारत के कल्याण का जो चित्र था उसमे समन्वित सस्कृति की महान परम्परा और एक आधुनिक तथा प्रगतिशील राष्ट्र के रूप मे उसके भावी उत्थान की कल्पना अकित थी। मौलाना साहब जिस बात को अशुभ समझते थे वह भारत के मुख्य समुदायो मे अनेकता थी।

बारम्बार जेल-यात्रा, नाना प्रकार के कष्टो और प्रतिबधो ने मौलाना साहब के राष्ट्रीय महत्त्व और जनता मे उनकी प्रतिष्ठा को बढाने मे सहायता ही की।

गॉधी जी मे मनुष्य के सामर्थ्य का पता लगा लेने की अद्भुत क्षमता थी और उन्होने मौलाना आजाद की इस क्षमता को पहचान लिया कि वो स्वाधीनता के उद्देश्य के लिए असाधारण रूप से महत्त्वपूर्ण हैं। मौलाना साहब ने भी समय की चुनौती का महान उत्तर गॉधी जी के रूप मे पा लिया। महात्मा गॉधी का सहयोगी बनने के पश्चात् मौलाना ने इस सम्बन्ध पर पुन विचार कभी नही किया। एक के पश्चात् दूसरे अभियान चले और एक के पश्चात् दूसरे कदम उठाये गये और हर एक मे महात्मा और मौलाना कन्धे से कन्धा मिलाए खडे थे। उनका मिलन एक महामिलन था, गगा की शक्ति और सिन्धु नदी की धारा का महान सगम था, इसमे गीता की गहराई और कुरान की शक्ति थी।

काग्रेस अध्यक्ष पद का भार जब मौलाना के युवा कन्धो पर पडा तो उस समय उनकी आयु लगभग पैंतीस वर्ष की थी और यह इस बात की स्वीकृति थी कि भारतीय समाज के प्रत्येक अग का विश्वास उन्हे प्राप्त है। हमारे वैविध्यपूर्ण समाज ने उन्हे भारत के समन्वित विवेक, उसकी उदार दृष्टि की परम्परा और दूसरो की आस्था धार्मिक कर्मकाण्डो के प्रति पारस्परिक सम्मान का प्रमाणित स्वर जाना।

मौलाना साहब इडियन नेशनल काग्रेस के रूप मे राष्ट्रीय उत्थान के प्रतीक थे। वे युद्ध के सकटपूर्ण काल मे और भारत छोडो आन्दोलन के दौरान काग्रेस के अध्यक्ष थे।

गॉधी जी ऐतिहासिक भारत छोडो आन्दोलन के पश्चात् गिरफ्तार करके पूना ले जाये गये। काग्रेस अध्यक्ष मौलाना साहब और सम्पूर्ण कार्यकारिणी समिति को बदी बना लिया गया और उन्हे अहमद नगर दुर्ग मे नजर बन्द कर दिया गया। वहा की अधेरी कोठरी मे उनके क्रान्तिकारी प्रकाश ने उनकी विद्वत्ता का दीपक प्रकाशित किया। मौलाना साहब ने कारावास की अवधि मे निरन्तर पढा और लिखा। जवाहरलाल जी उसी स्थान पर बदी थे और उस महान साहित्यिक उपलब्धि की पाण्डुलिपि लिखने मे व्यस्त थे जो **"भारत की खोज"** के नाम से प्रसिद्ध है। जवाहरलाल जी ने अपने इस कार्य मे मौलाना साहब से विस्तार से परामर्श किया था और अपनी कृति के उस भाग पर विशेष रूप से विचार विनिमय किया था जिसका सम्बन्ध मुगल इतिहास से है।

इसी दौरान मौलाना साहब की पत्नी बेगम जुलेखा भयानक रूप से रुग्ण हो गयी। जेल के अधीक्षक ने एक दिन उन्हे एक तार दिया। इससे सूचना मिली की उनकी जीवन सगिनी सदा के लिए उन्हे छोडकर चली गयी। उन्होने लिखा कि "यद्यपि मेरा निश्चय अटल रहा किन्तु ऐसा लगा जैसे मेरे पाव डगमगा गये हो।" इसके पश्चात् मौलाना साहब एक वर्ष तक और जेल मे रहे। मुक्त होकर कलकत्ता आने पर विशाल जन-समूह ने उनका स्वागत किया। उनके प्रशसको से सडके भरी पडी थी और उनकी कार इच-इच आगे बढ रही थी। इस सम्बन्ध मे उन्होने लिखा है–

"जब हावडा पुल से मेरी कार गुजरने लगी तो मेरे मन मे अपनी पत्नी की याद उभरने लगी—मेरी पत्नी घर के द्वार तक मुझे विदा करने आयी थी। अब मै तीन वर्ष के पश्चात् लौट रहा था, किन्तु वह अब अपनी कब्र मे थी और मेरा घर खाली था। मैने अपने साथियो से कार मोडने के लिए कहा क्योकि घर जाने से पहले मै उनकी कब्र पर जाना चाहता था। मेरी कार फूलो के हारो से भरी पडी थी। मैने उनकी कब्र पर एक हार चढाया और मन ही मन फातिहा पढी।"

यह अनुच्छेद शाहजहॉ की सवेदनशील काव्यात्मकता और बहादुरशाह जफर की कविता के समतुल्य है।

मौलाना साहब मो० अली जिन्ना के राजनैतिक सिद्धान्त और देश-विभाजन के कट्टर विरोधी थे और हिन्दू-मुस्लिम एकता तथा धर्म निरपेक्ष भारत मे सहअस्तित्व के उद्देश्य के अग्रणी समर्थक थे। मौलाना साहब भारत के विभाजन को पराजय समझते थे और उन्होने देश की स्वतन्त्रता को स्थगित कर देना इसके बदले मे अधिक उचित समझा होता। उन्होने १४ जून १९४७ को काग्रेस की कार्यकारिणी समिति की उस बैठक मे केवल इतना ही कहा था जिसमे विभाजन के पक्ष मे प्रस्ताव पारित हुआ था। उन्होने कहा था कि यदि राजनैतिक पराजय स्वीकार ही करनी है तो "हमे इस बात को निश्चित करने का प्रयत्न इसी के साथ करना चाहिए कि हमारी सस्कृति विभाजित न हो।" गॉधी जी के समान आजाद भी देश के विभाजन से स्वय को कभी सहमत नही कर पाये, किन्तु फिर भी स्वतन्त्रता के पश्चात् उन्होने न तो जिन्ना की और न ही अपने साथियो की निन्दा की बल्कि जा कुछ सम्भाव्य था उसके सम्मुख सम्मानपूर्वक नतमस्तक हुए।

उन्होने कहा,

"जो कुछ न घटना चाहिए था वह घट गया। हमे तो अब भविष्य के सम्बन्ध मे सोचना है।" जिस समय स्वतन्त्र भारत का शासन चलाने का कर्तव्य जवाहर लाल नेहरू के कन्धो पर डाला गया उस समय मौलाना साहब उनके साथ थे। आज़ाद नये राष्ट्र की राजकीय प्रगतिशील नीतियो को रूपायित और कार्यान्वित करने मे जवाहरलाल जी के विश्वसनीय सहयोगी थे। मौलाना साहब को शिक्षा मत्रालय का भार सौंपा गया था और १९५८ मे अपनी मृत्यु तक वे इस मत्रालय का मार्ग-दर्शन करते रहे। शिक्षा मत्रालय मे उनकी कार्यावधि एक से अधिक कारणो से महत्वपूर्ण है। इसी अवधि मे शिक्षा को केवल पुस्तकीय ज्ञान देने के स्थान पर कुछ अधिक महत्त्वपूर्ण बात समझा जाने लगा। वैज्ञानिक तथा प्राविधिक शिक्षा, अध्यापक-प्रशिक्षण, भाषा प्रशिक्षण, जन जातियो, अनुसूचित जन जातियो तथा अन्य पिछडे वर्गो के लिए छात्रवृत्तियो की रूपरेखा इन्ही वर्षो मे निर्धारित हुई। मौलाना आजाद ने यद्यपि इन शब्दो का उपयोग कभी नही किया किन्तु सत्य यह है कि शिक्षा मत्रालय के उनके निर्देशन काल मे ही सर्वप्रथम भारत सरकार ने शिक्षा को मानवससाधन मे लगायी पूँजी के रूप मे स्वीकार किया।

शिक्षा मत्रालय मे मौलाना साहब के कार्य काल को वे सब लोग अत्यन्त प्रेमपूर्वक याद करते हैं जिन्हे इसे देखने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था। इस काल मे उनका बौद्धिक क्षितिज विस्तृत रहा। उन्होने अखिल भारतीय प्राविधिक शिक्षण परिषद् को स्वीकृति प्रदान की और विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की स्थापना की। एक दूसरे अध्यापक डॉ० राधाकृष्णन और जवाहरलाल नेहरू के सहयोग से उन्होने सगीत, साहित्य और कला के लिए हमारी तीन उत्कृष्ट अकादमियो की कल्पना को साकार किया। उन्ही की प्रेरणा से साहित्य अकादमी, सगीत नाटक अकादमी और ललित कला अकादमी का जन्म हुआ। मौलाना साहब चाहते थे कि उभरते हुए भारत मे स्फूर्ति उत्पन्न हो और उत्थान के मार्ग पर चलते हुए वह स्वय को परिपूर्ण करे।

उदारता के अपने प्रारम्भिक प्रशिक्षण ने उन्हे अतर्राष्ट्रीय सहयोग और विश्वशाति का शक्तिशाली समर्थक बनाया। सास्कृतिक सम्बन्धो का भारतीय परिषद् जिसके वे जनक और प्रथम अध्यक्ष थे, उनके विश्वदृष्टिकोण का ज्वलत प्रमाण है।

२२ फरवरी १९५८ को जब मौलाना साहब इस ससार मे नही रहे तब डॉ० राधाकृष्णन ने कहा था,

"वे जिस बात के पोषक थे उसे मस्तिष्क की स्वतन्त्रता कहा जा सकता है, यह मस्तिष्क की ऐसी स्थिति है जो नस्ल या भाषा, प्रात या बोली, धर्म या जाति के सकीर्ण भेद-भावो से मुक्त है। मौलाना के रूप मे हमे एक सभ्य मस्तिष्क उपलब्ध था—निश्चय ही उन जैसा दूसरा नही मिलेगा, वे महामानव, एक वैभवशाली, अटल साहसी और निर्भीक मनुष्य थे। इन्ही सब बातो का नाम 'मौलाना' था।"

जन्म शताब्दी की ये स्मारिकाए मौलाना साहब के जीवन की विविधता को सजीव बनाए और वे हमारे लिए एक समाज, एक राष्ट्र और उनके पदचिह्नो पर चलने की परम्परा के रूप मे हमारे लिए प्रेरणा के स्रोत बने।

R Venkataraman

अप्रैल २६, १९८९

आर वेकटरामन

विषय सूची

प्रस्तावना

ऐसे महत्त्वपूर्ण व्यक्तियो की रचनाओ का चयन करना अत्यन्त दुष्कर है जिनके लेखन और भाषण ने इतिहास की सरचना की हो। स्वतन्त्रता सग्राम मे मौलाना को एक केन्द्रीय स्थान प्राप्त था। उनके लेखन और भाषण जो अत्यन्त धारदार और सतुलित थे और उन्होने उस बधन को तोड डाला जो राष्ट्र को पराधीन बनाये हुए थे। अपने समकालीन बुद्धिजीवियो की तुलना मे मौलाना की रचनाए बहुत कम है। सख्या मे वे कम है किन्तु उनके लेखन मे ज्ञान, दूरदर्शिता और देश का सूक्ष्म समन्वय दृष्टिगोचर होता है। कम मे कम शब्दो मे पूर्ण बात कहने मे मौलाना समर्थ है। वे सक्षेप मे अधिक से अधिक बाते कहने का गुण जानते थे।

उनकी रचनाओ का चयन करते समय हमारे सम्मुख यह समस्या थी कि हम इनमे से क्या ले और क्या छोडे। एक ओर हमे अपने अल्प ज्ञान का अभाव चिन्तित किये हुए था तो दूसरी ओर यह बात व्याकुल किए हुए था कि इस महत्त्वपूर्ण दायित्व का निर्वाह किस प्रकार उचित रूप से किया जाए। मौलाना की रचनाओ का एक ऐसा चयन प्रस्तुत करना जो लगभग ३०० पृष्ठो का हो और वो भी इस प्रकार कि उसमे मौलाना की समस्त रचओ का सार आ जाये, ऐसा ही था जैसे सागर को गागर मे समाहित करने का प्रयास। इस अवसर पर हमारा निर्देशन स्वय मौलाना के इन शब्दो मे हुआ कि "तुम्हारे पास एक ऐसी ज्वलत चिनगारी विद्यमान है कि यदि ठीक से हवा दो तो हजारो अग्निकुड प्रज्ज्वलित हो सकते है।" इसलिए हमने सोचा कि यही क्या कम है कि हम मौलाना की कुछ चयनित रचनाओ का अनुवाद करके उनके विचारो को ससार भर मे दूर-दूर तक पहुचाए।

मौलाना के लेखन और भाषण के इस चयन के सबध मे हम तीन बातो की चर्चा करना चाहते है। एक तो उन कठिनाइयो का जिनका मौलाना की रचनाओ की अग्रेजी और हिन्दी अनुवाद करते समय हमे सामना करना पडा। दूसरे इस बात पर प्रकाश डालना चाहते है कि हमने इस चयन मे सम्मिलित रचनाओ का ही क्यो चयन किया। तीसरे इन लेखो के लेखक के उस परिवेश का उल्लेख करना चाहते हैं जिसमे रह कर और प्रशिक्षित होकर वह इन रचनाओ को जन्म दे सकता है।

मौलाना की रचनाओ को अग्रेजी मे रूपायित करना एक चुनौती था। उन लेखो के जो अनुवाद उपलब्ध है वे विशेषरूप से सैयद अब्दुल लतीफ और मुहम्मद मुजीब के अनुवादो को छोड कर त्रुटिपूर्ण हैं और आवश्यकता है कि इनमे सशोधन किया जाये। इसके अतर्गत काग्रेस के अधिवेशनो मे दिए गए अभिभाषणो, साहित्यिक निबध, राजनैतिक लेख और धार्मिक अर्थापन भी आते है। अल-हिलाल" की उत्तेजक और पत्रकारिता के अनुसार लिखे गये लेखो

---

१ 'उर्दू अदब और मौलाना अबुल कलाम आजाद" शीर्षक से मर्ह-अल-कादरी की पुस्तक, **मौलाना अबुल कलाम आजाद, एक अध्ययमें सकलित लेख से उद्धृत।**

का भी कोई अनुवाद नही हुआ। मौलाना के अध्येत्ताओ ने इधर-उधर से कुछ अनुच्छेदो का अनुवाद करके उनकी प्रारभिक रचना-शैली के नमूने प्रस्तुत किये है। इस ग्रथावली मे मौलाना की रचनाओ का आधुनिक रूप प्रस्तुत किया गया है और उनका चयन और प्रस्तुति इस रूप मे सर्वप्रथम हो रही है। इस सबध मे हमे इस समस्या का सामना करना पडा कि मौलाना की प्रारभिक रचनाओ के जो अनुवाद मिले उन्हे असावधानीपूर्वक उर्दू से अग्रेजी मे रूपायित कर दिया गया। जिन पर उर्दू शैली और अभिव्यक्ति की माध्यमो की पूर्ण प्रतिच्छाया है। हमारे लिए ऐसा अनुवाद करना अत्यधिक दुष्कर था कि रचना का प्रवाह और उसकी प्राजलता सुरक्षित रहे। हमने इस सबध मे इस शताब्दी के श्रेष्ठ अनुवादको मे से एक सैयद हुसैन के इन शब्दो को अपना मार्गदर्शक बनाया कि अनुवाद एक कला भी है और एक शिल्प भी। उन्होने लिखा है कि "इसको शिल्प भी कह सकते है क्योकि इसमे भी निर्धारित नियमो का निर्वाह करना पडता है। अनुवाद के ऐसे कोई निर्धारित नियम नही होते। अनुवादक को अपनी चिन्तन का अधिक उपयोग करना पडता है, सोचना पडता है, चयन करना पडता है, किसी साहित्यिक रचना का अनुवाद करना न्यूनाधिक एक रचना-प्रक्रिया ही है। ईमानदारी इस बात मे है कि अनुवाद शाब्दिक हो किन्तु शब्दत न हो। 'फाउस्ट' के मेरे अनुवाद की सराहना करते हुए डॉ० इकबाल ने कहा था कि 'बहुत अच्छा है मगर आप नाम बदल देते तो बहुत अच्छा होता।" मैंने उत्तर दिया कि 'मै नही समझता कि नाम बदलना उचित होता क्योकि यह नाम विश्वविख्यात है। यह नाम एक विशिष्ट सस्कृति और नैतिकता का प्रतीक बन गया है। " मौलाना की रचनाओ का अनुवाद करते समय हमे निरतर इस बात का ध्यान रखना पडा कि अनुवाद मे मौलाना की शैली का सौन्दर्य लुप्त न होने पाये। उदाहरणतया 'गुबार-ए-खातिर' इस सदर्भ को ले लीजिए जिसमे मौलाना ने अपना जीवन मार्ग निश्चित करने मे अपनी अत्यधिक वैयक्तिकता की चर्चा की है "धर्म मे, साहित्य मे, राजनीति मे, चिन्तन-मनन के साधारण मार्गो मे जिस तरफ भी निकलना पडा अकेले ही निकलना पडा, किसी मार्ग मे भी काल के कारवा का साथ न दे सका। जिस राह मे भी कदम उठाया, समय की मजिलो से इतना दूर होता गया कि जब मुड कर देखा तो धूल के अतिरिक्त कुछ भी नही दिखाई देता था और यह धूल अपनी तेज गति की उडाई हुई थी।'[3] इसकी तुलना अग्रेजी अनुवाद मे कीजिए

In religion, in literature, in politics, wherever I had to go, I went alone I could not bring myself to walk along the caravans on time that flored along any of these paths Whichever direction, took, I went so far ahead of the times, that when, turned back, I saw nothing but the dust of the road, the dust raised by the speed of my own passage

इसमे कुछ प्रबलता और प्रभाव की कमी महसूस होती है जो मौलाना की उर्दू शैली का गुण है।

हिन्दी मे अनुवाद की समस्या अन्य प्रकार की है। हिन्दी और उर्दू क्योकि एक ही भाषाई परपरा का अग है इसलिए इन्हे एक-दूसरे मे रूपायित करना सरल है, परन्तु हिन्दी मे तर्जुमा करने वालो को कठिनाई का अनुभव इसलिए करना पडता है कि मौलाना अपनी उर्दू शैली मे

२ हयात-ए-आबिद, डॉ० सैयद आबिद हुसैन, सकलनकर्त्ता डॉ० सुहरा मेहदी

३ "गुबार-ए-खातिर", पृ० १२५

अरबी और फारसी के शब्दो और समासो का अत्यधिक उपयोग करते है और अरबी तथा फारसी शब्दो के पर्याय ढूढने मे अत्यन्त कठिनाई होती है। इन अनुवादको को इस बात का भी ध्यान रखना पडता है कि अनुवाद सही हो और उर्दू की जो विशिष्ट शैली है वो भी सुरक्षित रहे। हम अनुवाद की गुत्थियो से जब चिन्ताग्रस्त हुए तो फिर एक बार मौलाना के इन शब्दो ने हमारा मार्गदर्शन किया जो सत्ताईस मार्च १९४० मे उन्होने पडित जवाहरलाल नेहरू को एक पत्र मे लिखे थे "एक दृष्टिकोण से अनुवाद करना रचना प्रक्रिया से अधिक कठिन कार्य है। यह कोई सरल कार्य नही है कि साथ ही साथ वास्तविक रचना से अनुवाद मिलना भी हो और रचनाकार की साहित्यिक शैली भी सुरक्षित रहे। यह दुष्कर कार्य वही मनुष्य कर सकता है जिसको दोनो भाषाओ पर समानाधिकार प्राप्त हो।"[४] इसी पत्र मे मौलाना उस अनुवादक की जो नेहरू स्वय है, इस प्रकार सराहना करत है कि "तुमने मेरी उर्दू की शैली को इतनी सुन्दरता मे अग्रेजी मे रूपायित किया है कि मुझे आश्चर्य नही होगा यदि पाठकगण ये समझे कि वस्तुत यह अभिभाषण उर्दू मे नही, अग्रेजी मे लिखा गया है।" मौलाना की रचनाओ के अनुवादक होने के रूप मे हम लोगो की इच्छा यही थी कि इस मापदण्ड पर पूरे उतरे।

तीसरी बात अब यह है कि हमने किस आधार पर मौलाना की रचनाओ का चयन किया है। पहले तो हमने उनकी समस्त रचनाओ का अध्ययन किया जिनमे उनके भाषण भी सम्मिलित है, और फिर हमने इन कृतियो को तीन मुख्य भागो मे विभाजित किया। पहले भाग का शीर्षक हमने "भव्य प्रारभ" रखा है, इसमे १८९९ मे जब उन्होने अपना पहला अखबार 'नये रग-ए-आलम' निकाला था और १९१६ मे 'अल-हिलाल' प्रेस के जब्त होने तक वो सारी कृतिया है जो मौलाना ने एक पत्रकार के रूप मे लिखे है। इसमे कुछ राजनैतिक, दार्शनिक और साहित्यिक लेख भी हैं। इस अवधि मे मौलाना ने अनेकानेक 'पत्रिकाओ' का सपादन भी किया, जिनमे 'अल-हिलाल' अत्यधिक विख्यात है।

दूसरे भाग का शीर्षक "उन्नति का शिखर" है। इसमे धर्म सबधी राजनैनिक और साहित्यिक रचनाओ का सकलन किया गया है यह तीन दसाब्दियो तक फैली हुई है। मौलाना जब राची मे नजरबद थे और स्वतन्त्रता प्राप्ति तक अर्थात् १९१६ से १९४७ तक की धार्मिक और साहित्यिक रचनाए इसमे सम्मिलित है। तीसरे भाग का शीर्षक है "उपसहार" जिसमे स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् से लेकर उनके जीवन की अतिम दशाब्दी तक की रचनाए सकलित है, जिनमे उनके सरकारी अभिभाषण भी सम्मिलित है। इन अभिभाषणो का रूप सरकारी अवश्य है किन्तु इनमे अधिकाशत ऐसे हैं जो शिक्षा, विज्ञान और सस्कृति के विषयो पर युग-प्रवर्तक दृष्टिकोण के परिचायक है। इसी प्रकार इस अवधि मे ससद मे जो भाषण मौलाना ने दिए हैं वह नीति और राजनैतिक दर्शन पर प्रभावशाली वक्तव्य है।

उन तीन मुख्य भागो के अतिरिक्त जिनकी चर्चा ऊपर की जा चुकी है। हमने इस पुस्तक मे तीन अन्य भाग भी जोडे है जिनमे मौलाना के कुछ विशिष्ट लेखो और प्रत्यक्ष रूप से सबधित सामग्री के कुछ अश सम्मिलित हैं। भाग चार का शीर्षक "पत्रावली" है जिसमे मौलाना आजाद द्वारा महात्मा गाधी तथा जवाहरलाल नेहरू को लिखे गए पत्र एव भेजे गए तार और इन दोनो के द्वारा मौलाना को भेजे गए पत्र एव तार सकलित है। इनके अतिरिक्त इस भाग मे ऐसे विविध ज्ञापन,

---

४ अप्रकाशित पत्र, जवाहरलाल नेहरू सग्रहालय और पुस्तकालय, नई दिल्ली।

५ खेद है कि मौलाना अबुल कलाम आजाद की रचनाओ की कोई पूर्णरूपेण प्रकाशित ग्रथावली नही है।

प्रेस-वक्तव्य भी इसमे शामिल है जिनसे मौलाना के व्यक्तित्व के महत्त्वपूर्ण और रोचक पहलुओ पर प्रकाश पडता है। पाचवे भाग मे उनके जीवन की घटनाओ की अनुक्रमणिका है और छठे भाग मे पूर्ण एव सटीक पुस्तक सूची है। इसमे उन पुस्तको और लेखो को भी सग्रहित किया गया है जो मौलाना पर विभिन्न भाषाओ मे लिखे गए हैं। इससे पूर्व विवरण सहित कोई भी पुस्तक सूची आजाद के सबध मे प्रकाशित नहीं हुई।

इन रचनाओ को राजनैतिक, धार्मिक साहित्यिक और दार्शनिक शीर्षको के अतर्गत निर्धारित करने मे सपादकीय आवश्यकताओ के कारण हमने कही-कही नियमो का उल्लघन भी किया है। इसका कारण यह था कि मौलाना की रचनाओ को किसी एक विशिष्ट शीर्षक के अतर्गत रखने मे कुछ कठिनाइया थी। उदाहरणतया उनका एक लेख "स्वतन्त्रता के लिए सघर्ष" के शीर्षक से "अल-हिलाल" मे प्रकाशित हुआ था। इसको धार्मिक भी कहा जा सकता है, राजनैतिक और साहित्यिक भी। एक दूसरी रचना मूलतया धार्मिक है किन्तु साथ ही साथ एक प्रमाणिक साहित्यिक रचना भी है। यह तर्जुमान-उल-कुरान है। इसके दूसरे सस्करण के प्रस्तावना के अक मे मौलाना ने एक फारसी शेर उद्धृत किया है, जिसमे समर्पण के मार्ग मे निष्ठाप्राप्ति का सकेत मिलता है।

"मैने उत्तग लहरो मे जितना अधिक हाथ-पाव मारे, उतना ही दु खी और व्याकुल मुझे होना पडा परन्तु जब मैने सघर्ष करना छोड दिया और निश्चेत हो गया तो लहरो ने स्वत अपनी इच्छा के बीच धारे से उठाकर तट पर लाकर डाल दिया।"

इसको धार्मिक रचना कहे अथवा राजनैतिक या फिर दोनो का मिश्रण? इस सबध मे केवल इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि मौलाना की नाना प्रकार के अभिव्यक्ति के माध्यमो को उनकी सर्जनात्मकता के अलग-अलग खानो नही बाटा जा सकता।

उन्होंने ससद के सम्मुख अनुदान माग के प्रस्ताव प्रस्तुत करते हुए अपने भाषणो मे कविता का आश्रय लिया है और उसके द्वारा अपने दृष्टिकोण को रूपायित किया है

"लालायित है तू मदिरा के लिए?
जो केवल बढिया ही न हो, हो तेज भी,
किन्तु हो मात्रा मे अत्यधिक?
भूल न इस बात को कि पिलाने वाला कलार (मदिरा का व्यापारी)है।
स्वर्ग की शाकी वाला नही।"

"मै सदन से निवेदन करूगा कि वह शिक्षा मत्रालय से जो भी माग करना चाहे उसे स्वतन्त्रतापूर्वक माग ले। मै सारी मागो का स्वागत करूगा। परन्तु एक बात याद रखी जाए कि केवल मै एक शिक्षामत्री हू, स्वर्ग का प्रबधक नही।"

मौलाना की कृतियो के सदर्भ मे इन समस्याओ को देखते हुए हमने जिस रचना मे जिस गुण को अधिक मात्रा मे पाया, उसको उसी शीर्षक के अतर्गत रख दिया। इससे भी अधिक कठिन प्रश्न यह था कि हम मौलाना के किन कृतियो का चयन करे। मौलाना की प्रत्येक शैली की रचना का चयन करना सरल कार्य नही था। उनकी समस्त रचनाए गद्य मे है। यद्यपि उन्होने अपनी प्रारभिक आयु मे कविताए भी लिखी है। परन्तु मौलाना काव्य-रचना को अल्पायु का

---

६ आम बजट, मागो की सूची १९५३

अपना शौक कहते थे और उसे कोई महत्त्व नही देते थे। कुछ कृतिया इस चयन मे केवल इसलिए सम्मिलित की गई हैं कि वे अमर हैं और हर युग मे समानरूपेण सार्थक हैं। उदाहरणतया "निर्णायात्मक निर्णय" (कौल-ए-फैसल) को ले लीजिए। यह वह लिखित वक्तव्य है जिसे मौलाना ने १९२२ मे कलकत्ता न्यायालय मे प्रस्तुत किया था। या इडियन नेशनल काग्रेस के तिरपनवे वार्षिक अधिवेशन मे इनके अध्यक्षीय अभिभाषण को ले लीजिए। जो रामगढ भाषण के नाम से विख्यात है या उनकी उन कृतियो को ले लीजिए जो उन्होने अपनी पत्नी की मृत्यु पर १९४२ मे अहमद नगर दुर्ग मे बदी होने की अवधि मे लिखी थी। इनमे से मौलाना की प्रत्येक रचना साहित्यिक, ऐतिहासिक, राजनैतिक और दार्शनिक महत्त्व रखती है। इनमे से सभी रचनाओ से लोग और विशेष रूप से उर्दू प्रेमी भली भाति परिचित है। कुछ हिन्दी और अग्रेजी मे अनुवाद भी हो चुका है। परन्तु अभी बहुत-सी ऐसी रचनाए है जिनको केवल सीमित सख्या मे ही लोग पढ सकते हैं।

यह चयन मौलाना आजाद की जन्म-शताब्दी के अवसर पर प्रस्तुत किया जा रहा है। इसलिए हमने पूर्ण प्रयत्न किया है कि इस ग्रथ मे उनकी विख्यात और प्रतिनिधि रचनाए अधिक से अधिक मात्रा मे सकलित हो जाए। कही-कही हमने यह भी किया है कि किसी लबी रचना मे से कुछ उद्धरण ले लिए है और उसको पाद-टिप्पणी सहित इस चयन मे सम्मिलित कर लिया है ताकि इस विशिष्ट विषय पर मौलाना के विचार ज्ञात हो सके। उदाहरणतया "गुबार-ए-खातिर" से हमने एक सदर्भ लिया है जो देखने मे तो असबद्ध वस्तुओ के बारे मे है—चाय और बदी जीवन—किन्तु मौलाना ने "खुशी" के माध्यम से इन दोनो मे सबध स्थापित कर दिया है क्योकि इन दोनो से उन्हे प्रसन्नता प्राप्त हो रही थी। इससे मौलाना के असाधारण व्यक्तित्व पर प्रकाश पडता है। शेक्सपियर के नाटक "जूलियस सीजर" मे मार्क अन्टुनी अपने भाषण मे उस वक्त यह बात कहता है जब ब्रूट्स मर चुका है कि "वह एक भला मानुष था और उसमे विभिन्न प्रकार के तत्व इस प्रकार एकत्रित हो गए थे कि प्रकृति उसके सम्मुख खडे होकर पूरी दुनिया से यह कह सकती है कि देखो मनुष्य यह था।"

यही बात मौलाना पर चरितार्थ होती है। जहा तक पहले गुण भलमनसाहत का सबध है, उसका सबध उनके व्यक्तित्व से है और विभिन्न तत्वो के एक स्थान पर एकत्रित होने का सबध उनके लेखन और भाषण से है। इन्ही विभिन्न शैलियो को हमने इस चयन मे प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया है। इनमे से तीन निबध वो हैं जो उनकी अल्पायु के लेखन का प्रतिनिधित्व करते हैं और जिनमे उत्कृष्ट गद्य का नमूना प्राप्त होता है। इनमे अरबी और फारसी शब्दो का अत्यधिक मिश्रण है। इन लेखो का उद्देश्य लोगो के उनके सामुदायिक कर्त्तव्यो की ओर आकृष्ट करना और इनकी पूर्ति के लिए उनको उकसाना है। यह कर्त्तव्य मौलाना की दृष्टि मे राष्ट्रीय कर्त्तव्यो के साथ-साथ धार्मिक कर्त्तव्य थे। 'अल-हिलाल के उद्देश्य", "स्वतन्त्रता के लिए सघर्ष", "इस्लाम और राष्ट्रीयता", मे भी उपर्युक्त विशेषताए परिलक्षित होती है।

दूसरे अश मे राजनैतिक और धार्मिक चिन्तन की बहुत-सी महत्त्वपूर्ण रचनाए समाहित है। इसी काल मे उन्होने कुरान की विद्वतापूर्ण और चिन्तनपूर्ण अनुवाद भी किया था जो उनकी इस काल की रचनाओ मे सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है। मौलाना ने इस कार्य को पूर्ण करने मे अपने जीवन के पन्द्रह वर्ष लगाए थे। यह वह काल था जिसमे एक देशप्रेमी विद्वान को कडी परीक्षाओ का सामना करना पडा था। उसको एक साथ वह दोनो कार्य सपन्न करने थे जिनमे से एक के

लिए शाति और एकातवास की आवश्यकता थी और दूसरे के लिए रणक्षेत्र के हगामे की जरूरत थी।[७] मौलाना ने कुरान से सबद्ध तीन पुस्तके लिखने की योजना बनाई थी। पहली पुस्तक मे वो कुरान का अनुवाद और उसका ऐसा भाष्य प्रस्तुत करना चाहते थे जिसे वे किसी अन्य के हस्तक्षेप के बिना स्वय पढ एव समझ सके। दूसरी पुस्तक मे वह कुरान का तर्कपूर्ण और विस्तारपूर्ण भाष्य लिखना चाहते थे। तीसरी पुस्तक मे वह अपने भाष्य की प्रस्तावना प्रस्तुत करना चाहते थे जिसमे वह कुरान के उद्देश्यो और सिद्धातो का विवेचन करना चाहते थे। परन्तु खेद है कि यह पुस्तके अलग-अलग लिखने का अवसर न मिल सका। १९३० मे 'तर्जमान-अल-कुरान' के नाम से उनकी एक पुस्तक प्रकाशित हुई जिनमे उपर्युक्त तीनो पुस्तको का सार प्रस्तुत किया गया। इसके उद्देश्यो पर प्रकाश डालते हुए मौलाना लिखते हैं कि "अब यदि आप चाहते है कि कुरान को उसके वास्तविक रूप मे और उसकी गुणात्मकता मे उसे देखे तो आवश्यक है कि पहले वह सारे पर्दे हटाए जो विभिन्न युगो और विभिन्न क्षेत्रो के बाह्य प्रभावो मे उसके मुखमडल पर डाल दिए हैं और आगे बढे तथा कुरान की वास्तविकता की खोज स्वय कुरान के पृष्ठो मे करे।"

मौलाना अपनी समस्त कृतियो मे सबसे अधिक महत्त्व सूर फातिहा (प्रारभ) के भाष्य को देते थे। कुरान का प्रारभ इसी सूर से होता है। इसे सात वाक्य है और यह समस्त इस्लामी मान्यताओं का सार है। इसलिए हमने सूर फातिहा की प्रस्तावना को भी इस चयन मे सम्मिलित किया है। इसे प्रारभ मे ही स्थान दिया गया है। 'अल-हम" के भाष्य और सुर फातिहा के भाष्य का अतिम भाग भी सकलित किया गया है। इसके अतिरिक्त तर्जमान-अल-कुरान के प्रथम सस्करण की प्रस्तावना भी इस चयन मे सम्मिलित की गई है। कुरान का अनुवाद करते समय मौलाना को जिन कठिनाइयो का सामना करना पडा उनके विवरण को पढकर मौलाना की प्रमाणित जीवनियो मे कही अधिक उनके व्यक्तित्व पर प्रकाश पडता है।

इसके पश्चात् का काल मूलतया राजनैतिक भाषणो पर आधृत है। इसके अतर्गत हमने सबसे पहला उद्धरण 'कौल-ए-फैसल" (निर्णायक निर्णय) से लिया है। इसकी प्रशसा महात्मा गाधी ने २३ फरवरी १९२२ के यग इडिया" मे इन शब्दो मे की, "यह एक भावोत्तेजक अभिभाषण है जिसके द्वारा मौलाना ने खिलाफत और राष्ट्रीयता से सबद्ध अपने विचार अभिव्यक्त किए हैं, यह ऐसा अभिभाषण है जिसको प्रस्तुत करने के अभियोग मे इन्हे आजीवन कारावास का दण्ड मिलना ही चाहिए।"

मौलाना अपने विरुद्ध चलाए गए इस अभियोग की कार्यवाही मे स्वय भाग नही ले सके थे किन्तु अपने स्वाभावानुकूल उन्होने एक वक्तव्य प्रस्तुत किया जो तीस टकित पृष्ठो का है। इस वक्तव्य के अत मे मौलाना ने मजिस्ट्रेट को प्रत्यक्ष रूप से सबोधित करते हुए कहा था कि 'मिस्टर मजिस्ट्रेट ! अब न्यायालय का अधिक समय नही लूगा। यह इतिहास का रोचक और शिक्षाप्रद अध्याय है जिसको रूप देने में हम दोनो समान रूपेण व्यस्त हैं। मेरे भाग्य मे अपराधियो का यह कटहरा है, तुम्हारे भाग्य मे मजिस्ट्रेट की वह कुर्सी है। मैं स्वीकार करता हू कि

७ हुमायू कबीर, द्वारा सपादित मौलाना अबुल कलाम आजाद स्मारिका ग्रथ मे सकलित "एक अपूर्ण महान कृति" के शीर्षक से सैयद अब्दुल लतीफ के लेख मे उद्धृत।

८ यह तर्जमान-अल-कुरान के सैयद अब्दुल लतीफ द्वारा अग्रेजी अनुवाद के प्रथम सस्करण की प्रस्तावना।

९ महादेव दसाई, 'मौलाना अबुल कलाम आजाद', १९४०

इस कार्य के लिए यह कुर्सी भी उतनी ही जरूरी है जितना कि यह कटहरा। आओ आख्यान बनने वाले उस कार्य को शीघ्रता मे समाप्त कर दे। इतिहासकार हमारी प्रतीक्षा मे हैं, भविष्य न जाने कब से हमारी राह तक रहा है। हमे जल्दी-जल्दी यहा आने दो और तुम भी जल्दी-जल्दी निर्णय लिखते रहा। अभी कुछ दिनो तक यह कार्य चलता रहेगा, यहा तक कि एक-दूसरे न्यायालय का द्वार खुल जाएगा, यह विधाता के विधि का न्यायालय है, समय इसका निर्णायक है। यह निर्णय वह लिखेगा और उसी का निर्णय अतिम निर्णय होगा।"

इस चयन के दूसरे भाग मे मौलाना के तीन विख्यात भाषण सम्मिलित है जो मौलाना ने काग्रेस अध्यक्ष के रूप मे उसके सार्वजनिक अधिवेशनो मे दिए थे। एक अभिभाषण १९२३ मे दिल्ली के अधिवेशन मे दिया गया था और दूसरा १९४० मे रामगढ के अधिवेशन मे। तीसरा वह भाषण है जो मौलाना ने जामा मस्जिद की सीढियो पर मुसलमानो के सम्मुख सन् १९४७ मे दिया था। इस काल के मौलाना के अभिभाषण वाग्वैदिग्धता के श्रेष्ठ नमूने हैं। इन अभिभाषणो मे उन्होने अपने देशवासियो—हिन्दू और मुसलमा दोनो से अपने समान शक्ति के विरूद्ध एकता के सूत्र मे बध जाने की माग की थी। दिल्ली और रामगढ के अभिभाषण मौलाना के उस सघर्ष के श्रेष्ठतम उदाहरण है जो **वह** आजीवन करते रहे हैं। इसके विपरीत जामा मस्जिद पर दिए गए अभिभाषण मे उनकी निराशा और उनका असतोष झलकता है जो समय के परिवर्तन ने उत्पन्न कर दिया था। फिर भी इस अभिभाषण मे उन्होने अपने वैयक्तिक दु ख, नैराश्य और अविश्वास की भावनाओ पर नियन्त्रण प्राप्त करके उन सैकडो-हजारो नि सहाय लोगो का साहस बधाया जो अकस्मात अपनी राजनैतिक पहचान खो बैठे थे। उन्होने कहा था कि "अभी कुछ अधिक समय नही बीता कि जब मैने तुमसे कहा था कि दो राष्ट्रो का सिद्धात वास्तविक जीवन के लिए मृत्यु तुल्य रोग है, इसको छोड दो। यह खभ जिन पर तुमने आश्रय लिया है अत्यन्त तीव्र गति से टूट रहे है। तुमने सुनी-अनसुनी कर दी और यह न सोचा कि काल और उसकी तीव्र गति रुकी नही। तुम देख रहे हो कि जिन सहारो पर तुम्हे विश्वास था वो तुम्हे निराश्रय छोड कर भाग्य के हवाले कर गये। यह वह भाग्य है जिसका तुम्हारी मानसिकता की शब्दावली से भिन्न अर्थ है। उनके लिए यह भाग साहसहीनता का नाम है।"

मौलाना के इस काल के लेखन और भाषण मे एक लघु लेख भी है। वस्तुत यह "महात्मा गाधी की अट्ठारहवी वर्षगाठ" पर मौलाना की एक वार्ता है जो १९४७ मे आल इडिया रेडियो से प्रसारित हुई थी। यह प्रथम बार प्रकाशित हो रही है और टेप सुन कर इसे लिपिबद्ध किया गया है। इस अवसर पर उनके स्वर मे जो अवषाद् और पीडा है उसने इसे और भी अधिक प्रभावशाली बना दिया है। उनकी दीर्घाकार अभिभाषणो को भी यदि इसी प्रकार रेकार्ड कर लिया जाता तो उनके व्यक्तित्व के न जाने कितने पक्ष हमारे सम्मुख आते। निम्नलिखित अवतरण मे जो कटुता है वह मौलाना के अतिम काल के भाषणो और लेखनो की विशेषता है

पजाब मे पाच दरिया पानी के हजारो वर्ष से बह रहे थे। अब एक छठा दरिया इसान के गर्म-गर्म खून का भी बहने लगा है। पानी के दरियाओ पर हमने ईट, पत्थर, और लोहे के पुल बना दिये है, छठे दरिया का पुल अब मनुष्य के शवो से चुना जा रहा है।"[११]

---

१० कौल-ए-फैसले" मौलाना अबुल कलाम आजाद, स० अर्श मर्सयानी

११ आकाशवाणी सन् १९४७ मे प्रसारित वार्ता, आजाद भवन पुस्तकालय, नई दिल्ली।

मौलाना की साहित्यिक रचनाओ मे अन्य उनकी चार कृतियो का चयन किया गया है। नीन "गुबार-ए-खानिर" मे और एक "तजकिरा" से। "गुबार-ए-खातिर" उर्दू मे साहित्यिक गद्य का चमत्कार माना जाता है। यह वह कोश है जिसमे साहित्यिक रत्न छिपे हुए है। इसमे भाषाई और साहित्यिक सौदर्य के दर्शन होते है तथा विभिन्न शैलियो मे मनोभाव को अभिव्यक्त किया गया है। इस ग्रथ से तीन उद्धरण इस चयन मे सकलित किए गए हैं। इनमे से एक वह है जो मौलाना ने अपनी पत्नी की रुग्णावस्था और उनके मृत्यु पर लिखा है। दूसरा निबध "सगीत पर" है और "चाय का आनद और कारावास जीवन" तीसरा निबध है जिसका चयन किया गया है। पहले निबध मे मौलाना की सवेदनशीलता और अपने वैयक्तिक दु ख की अभिव्यक्ति मे उनकी सतुलित मनोभावना का परिचय प्राप्त होता है। वह लिखते है कि "इस प्रकार हमारा छत्तीस वर्षीय दापत्य जीवन समाप्त हो गया है और मृत्यु की दीवार हम दोनो के बीच खडी हो गई है। हम अब भी एक-दूसरे को देख सकते हैं किन्तु इसी दीवार की ओट से।"[१२]

दूसरे निबध मे मौलाना ने सगीत से अपने गहरे लगाव और उसके अभ्यास के सबध मे लिखा है। वह अपने पिता से छुप कर मसीता खा मे विधिवत सगीत की शिक्षा प्राप्त करते थे। यह व्यक्ति उनके पिता द्वारा दीक्षित था। इसके अतिरिक्त नित नवीन और अनोखे स्थानो पर अपने सितार बजाने का उल्लेख मौलाना ने इस लेख मे किया है। ताजमहल मे अपने सितार बजाने के आनद को उन्होने जिस प्रकार प्रस्तुत किया है वह उनके सौंदर्य-बोध का सुदर उदाहरण है। उन्होने लिखा है

"प्रकाश और अधकार के मिले-जुले उस वातावरण मे अकस्मात सितार का सुर नि शब्द स्वरमाधुर्य मे फूट पडता और हवा की लहरो पर बेरोक तैरने लगता। आसमान से तारे झड रहे थे और मेरी घायल उगलियो मे ताल और सुर।"

मौलाना ने "गुबार-ए-खातिर" कारावास मे अत्यन्त कष्टदायक परिस्थितियो मे लिखा था। बदी जीवन के दुख, जीवनसाथी की पृथकता, राजनैतिक सकट, अनेकानेक नेताओ को कारावास, बद किया जाना, ये वे परिस्थितिया थी जिसमे निराशा का आ जाना स्वाभाविक है। परन्तु मौलाना की इस रचना मे इन सब बातो के होते हुए भी आशा और साहस का तत्व महत्त्वपूर्ण है। उन्नीस सौ चालीस के प्रारभ की मौलाना की रचनाओ की तुलना जब हम उन्नीस सौ चालीस के अत की कृतियो से करते है तो वह हमे किसी अन्य युग की रचनाए प्रतीत होती है। इस पुस्तक मे उन्होने कदम-कदम पर हर्षोल्लास के महत्त्व पर प्रकाश डाला है और कहा है कि परिस्थितिया चाहे कितनी भी प्रतिकूल क्यो न हो मनुष्य को प्रत्येक स्थिति मे प्रसन्नचित्त रहना चाहिए

"शुष्क उदास मुखाकृति बना कर हम उस चित्रशाला मे नही खप सकते जो चित्रकार ने प्रकृति के कलम मे यहा चित्र बनाए है। जिस चित्रशाला मे सूर्य के मस्तक का प्रताप हो, चाद का हसता हुआ मुखडा हो, नक्षत्रो की क्रीडा हो, वृक्षो का नृत्य हो, पक्षियो का गान हो, प्रवाहित जल का सगीत हो और फूलो की रगीन हाव-भाव अपना चमत्कार दिखा रहे हो तो उसमे एक बुझे हुए मन और सूखे हुए मुखडे के साथ स्थान पाने के हम निश्चय ही पात्र नही हो सकते।"[१४]

---

१२ गुबार-ए-खातिर पृ २४१ साहित्य अकादमी, नई दिल्ली।
१३ वही पृ० २५० साहित्य अकादमी नई दिल्ली।
१४ गुबार-ए-खातिर पृष्ट २२६, साहित्य अकादमी नई दिल्ली।

हमने पाठको की अभिरुचि का ध्यान रखते हुए एक अन्य निबध का भी चयन किया है। पक्षियो से मौलाना के लगाव को सभी लोग जानते हैं। उन्होने अपने दो पत्रो "चिडे-चिडिया की कहानी" मे इसका उल्लेख विस्तार से किया है। हमने इन पत्रो को इस चयन मे सम्मिलित नही किया है। इनका अग्रेजी मे श्रेष्ठ अनुवाद उपलब्ध है।"[15]

परन्तु भारत मे भूतपूर्व ब्रिटिश महाआयुक्त मैलकाम मैकडोनेल्ड की एक टिप्पणी को यहॉ उद्धृत कर रहे है जो उन्होने पक्षियो के प्रति मौलाना के प्रेम के सबध मे लिखा है "वह राजनैतिक कार्यो से अपना समय बचा कर प्रकृति का अध्ययन किया करते थे। अहमद नगर दुर्ग मे निष्प्राण बदी बन कर पडे रहने के स्थान पर वह आनदपूर्वक चिडियो को देखा करते थे।"[16]

तजकिरा से जिस अश का चयन किया गया है उसका महत्त्व साहित्यिक है और यह एक स्वलिखित जीवनी है। परन्तु इसको धार्मिक रचना भी कहा जा सकता है क्योकि इसमे जीवन का वृत्तात तो इसके अतिम भाग मे लिखा गया है। बिल्कुल अत मे मौलाना ने इस पुस्तक के लिखे जाने के उद्देश्य की चर्चा की है

"यह अव्यवस्थित पृष्ठ मित्रवर श्री फजलुद्दीन अहमद के अत्यधिक आग्रह पर लिखे गए थे।" हमे फजलुद्दीन अहमद साहब का आभारी होना चाहिए कि उनके कारण यह अत्यन्त असाधारण आत्मकथा लिखी गई। वह इजीनियर थे और 'विख्यात व्यक्तियो के पूजक भी। निष्ठावानो की निष्ठा-प्रदर्शन मे सभी महान व्यक्ति घबराते और उलझते है।" उन्होने सबमे पहले मौलाना से इस विषय पर बात की तो उन्होने इसे हमी मे उडा दिया। "बहुत-से महान व्यक्तित्व ऐसे है जिन्होने अत्यन्त महान कार्य किये हैं किन्तु किसी ने भी उनकी जीवनचर्या नही लिखी। इन व्यक्तियो की उपेक्षा करके स्वय अपने बारे मे लिखना मौलाना को हास्यास्पद लगता था।' प्रो० मुजीब के कथनानुसार "हम आभारी है कि फजलुद्दीन अहमद ने हास्य-विनोद को समझने की चिन्ता न की। वह मौलाना से आग्रह करते रहे और यहा तक कि मौलाना को वचनबद्ध होना पडा कि वह प्रत्येक सप्ताह अपने जीवन के सबध मे लिख कर कुछ भेजा करेगे।"

सकलनकर्त्ता के सम्मुख समस्या यह थी कि न्यूनाधिक तीन सौ पृष्ठो से किस अश का चयन करे। यह बात तो निश्चित है कि जब तक "तजकिरा" के अतिम भाग को न पढा जाए तब तक कुछ समझ मे नही आ सकता कि मौलाना ने अपने सबध मे क्या लिखा। यद्यपि उन्होने अपनी जीवन की कथा को बिना किसी कृत्रिमता के प्रस्तुत किया है किन्तु घटनाओ को अत्यन्त अलकृत भाषा और काव्यात्मक प्रतीको के द्वारा प्रकाशित किया है। अपनी आध्यात्म यात्रा पर उन्होने अत्यधिक बल दिया है। और इसके कारण अनावश्यक विवरण इसमे समाहित हो गये हैं। "तजकिरा" मे एक साथ दो भिन्न प्रकार की शैलिया परिलक्षित होती है। फजलुद्दीन अहमद ने जब इच्छा प्रकट की थी कि मौलाना केवल अपनी जीवन-चर्या के सबध मे लिखे तो उन्होने उत्तर दिया कि मेरी मन स्थिति मे बाधा उत्पन्न न करो, जो कुछ अनायास लेखनी से निकल जाता है उसे एकत्रित करते जाओ। इससे लाभ-ही-लाभ होगा।"[17]

तीसरे और स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् के काल की मौलाना की उन कृतियो, वक्तव्यो और पत्रो का चयन किया गया है जो उन्होने १९४७ से लेकर १९५८ तक अपनी मृत्यु के समय तक शिक्षामत्री के रूप मे लिखे थे।

---

१५ इलस्ट्रेड वीकली मे प्रकाशित खुशवत सिह द्वारा "चिडे-चिडिया की कहानी' का अनुवाद।

१६ मौलाना अबुल कलाम आजाद स्मारिका, सकलनकर्त्ता हुमायू कबीर, मैलकाम मैकडोनाल्ड का एक निबध मौलाना आजाद और चिडिया"।

१७ "तजकिरा", पृ० १८, फजलुद्दीन अहमद द्वारा लिखित प्रस्तावना, सपादक, मालिकराम।

कठिन समस्या यह थी कि इनके इस प्रकार के लेखन को सहज रूप से राजनैतिक, धार्मिक, दार्शनिक और साहित्यिक शीर्षको के अतर्गत नही रखा जा सकता था। यह रचनाए उस काल की है जब स्वाधीनता सग्राम समाप्त हो चुका था। और उसके तत्पश्चात् देश मे उथल-पुथल मची हुई थी। उस समय कोई ऐसा नही दिखाई पडता था कि जनसमूह का नेतृत्व कर सके। अतिम काल की कृतियॉ अधिकाशत इसी बात से सबद्ध है। मौलाना ने विभिन्न विषयो पर भाषण दिए हैं और इन पर लिखा भी हैं क्योकि ऐसा करना शिक्षा, प्राकृतिक ससाधन और वैज्ञानिक अनुसधान के मत्री के रूप मे यह जरूरी था। वो जब भी बोलते थे तो चुभते हुए वाक्यो, भाषागत लालित्य और गहरे विचारो से उच्च पदाधिकारियो को झिझोड कर रख देते थे। इस काल के अधिकाशत भाषण जो उपलब्ध हैं वो अग्रेजी मे है और भारत सरकार के प्रकाशन विभाग ने अनूदित करा के प्रकाशित किया है। इस दौरान मौलाना की भाषा पर फारसी और अरबी का प्रभाव अत्यधिक कम है और उन्होने ऐसी उर्दू लिखी है जो साधारणतया समझी जाती है। फिर भी उनकी अभिव्यक्ति की विशेषताए और उसकी छाप इन भाषणो मे परिलक्षित होती है। स्वतन्त्रता के उद्देश्य की पूर्ति के लिए स्वय को समर्पित कर देने का सकल्प और उस भाव के उत्तेजनापूर्ण अभिव्यक्ति की धारा अब नवस्थापित सरकार की नीतियो और कार्यक्रमो की सुदृढता और दृढसकल्पता के साथ व्याख्या की ओर मुड गई थी। आकाशवाणी मे उनकी आवाज का टेप अब भी सुरक्षित है जिसमे युवावस्था के उनके भाषणो का जोश और जनता को उत्तेजित करने वाली विशेषताए विद्यमान है। इस चयन मे उनका वह अभिभाषण सम्मिलित है जो उन्होने १९४८ मे केन्द्रीय शिक्षा सलाहकार बोर्ड के सम्मुख दिया था। इसकी विशेषता यह है कि यह उनके अपने हाथो का लिखा हुआ है और जिसका सरकारी अनुवाद अग्रेजी मे किया गया है। इसमे उन्होने शिक्षा-नीति निर्धारित करने के दो अत्यन्त सूक्ष्म समस्याओ पर प्रकाश डाला, एक स्कूलो मे धार्मिक शिक्षा की समम्या और दूसरी हिन्दी को राष्ट्रभाषा का पद पर आसीन करने की समस्या। १९५६ मे उन्होने यूनेस्को के नवे इजलास से सबोधन किया था जो देहली मे प्रथम बार आयोजित हो रहा था। श्री मोहम्मद यूनुस जो उस समय इस जलसे मे एक नवयुवक प्रतिनिधि के रूप मे उपस्थित थे, उनका कहना है कि मौलाना ने अपना यह अभिभाषण अत्यन्त प्राजल उर्दू मे बिना किसी नोट के सहायता के पढा था। अग्रेजी मे लिखा हुआ अभिभाषण प्रतिनिधियो के हाथो मे था। जो मौलाना के भाषण के साथ-साथ उसके पृष्ठ पलटते जा रहे थे। "इस जलसे के अत मे पडित नेहरू ने मुझसे कहा कि इस व्यक्ति की स्मरणशक्ति इतनी प्रबल है कि एक शब्द भी लिखित अभिभाषण से हटा हुआ नही है।"[१८]

मौलाना की सास्कृतिक दृष्टि और उनके सौंदर्य-बोध के प्रमाण साहित्य अकादमी, सगीत नाटक अकादमी और ललित कला अकादमी है और इन्ही की प्रेरणा से राष्ट्रीय सीमाओ को तोडकर सास्कृतिक सबध के भारतीय परिषद् की स्थापना हुई। इन तीनो अकादमियो के उद्घाटन समारोहो मे जो भाषण मौलाना ने दिए हैं उनके उद्धरण इस चयन मे सम्मिलित है ताकि मौलाना के व्यक्तित्व का यह असाधारण पक्ष भी लोगो के सामने आ जाए जिससे उनकी विद्वत्ता और प्रशासनिक योग्यता के साथ-साथ उनके सौंदर्य-बोध और ललित कलाओ के प्रति उनका आदरभाव व्यक्त होता है। उन्होंने इस आवश्यकता को महसूस किया कि राष्ट्रीय स्तर पर ललित कलाओ को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। अग्रेजी राज्य के डेढ सौ वर्षो की अवधि मे

---

१८ श्री मोहम्मद यूनुस ने एक भेट में ये घटना मुझे सुनाई थी।

इस प्रकार के प्रोत्साहन का कोई प्रश्न ही नही उठना था। और देश इससे नितान्त वचित था।

मौलाना के ससदीय भाषणो मे से वह ऐतिहासिक वाद-विवाद इस चयन मे सम्मिलित किया गया है जो १९ मार्च १९३४ को शिक्षामत्री मौलाना अबुल कलाम आजाद और पुरुषोत्तम दास टडन तथा सेठ गोविन्द दास के बीच हुआ था। "इडियन एक्सप्रेस" के विशेष सवाददाता ने लिखा है कि "मौलाना ने जब अपने मत्रालय पर की गई आलोचना के उत्तर मे भाषण दिया तो १९३० और १९४० का समय याद आ गया जब काग्रेस अध्यक्ष के रूप मे मौलाना ने अपने उत्कृष्ट अभिभाषण दिये थे और अपनी वाग्वैदिग्धता से हजारो लोगो को मोहित कर दिया था। अतिथियो की गैलरी मे बैठे हुए लोगो ने देखा कि आपत्तिया उठाने वालो की हालत बुरी थी। मौलाना के इन शब्दो ने लोगो को मुग्ध कर दिया और सबसे अधिक उत्तेजक क्षण वो थे जब मौलाना के कहा था कि

"मैने चालीस वर्ष पहले अपने जीवन का कार्यक्रम देशसेवा का बनाया था और उस समय मेरी आयु १९ वर्ष से अधिक न थी। उस समय से लेकर आज तक मेरा जीवन एक खुली पुस्तक है जो दुनिया के सामने है। कोई इच्छा अब मेरे अदर नही है। जीवन का बहुत बडा भाग समाप्त हो गया, जो थोडा शेष है, जाने कब वह भी समाप्त हो जाए जब कोई व्यक्ति तमाम वैयक्तिक स्वार्थो से मुक्त हो जाता है तो वह असीम हो जाता है अथाह हो जाता है।"[१९]

स्वाधीनता प्राप्ति के पश्चात् शिक्षामत्री के रूप मे मौलाना ने कई दीक्षान्त समारोहो मे अभिभाषण दिए हैं। हमने इन दीक्षात समारोहो के भाषणो मे से उसका चयन किया है जो मत्रीपद स्वीकार करने के तुरत पश्चात् उन्होने दिया था और जिसका शीर्षक है, "राष्ट्रीयता और अलीगढ"। इस अभिभाषण की महत्ता यह है कि इसमे पहली बार मौलाना ने सर सैयद अहमद खा से अपने मतभेदो का उल्लेख स्पष्ट शब्दो मे किया है। पहले तो उनके प्रति अपनी निष्ठा की चर्चा की है और उसके पश्चात् उस निराशा का उल्लेख किया है जो सर सैयद से उन्हे हुई थी। मौलाना और सर सैयद के मतभेद के सबध मे विभिन्न सप्रदायो मे नाना प्रकार की बाते होती रही है। इस अभिभाषण मे जो कुछ कहा गया है, उससे उस सारे वाद-विवाद का अत हो जाता है। ये अभिभाषण केवल अग्रेजी मे उपलब्ध है। स्पष्ट है कि इसका अनुवाद अग्रेजी से हिन्दी मे करना पडा। यह स्थिति मौलाना के उस 'प्राक्कथन" की है जो उन्होने राधाकृष्ण की पुस्तक 'दर्शन के इतिहास' पर लिखा था और जिसे १९५२ मे एलाइन एड ऐनून ने प्रकाशित किया था। इस "प्राक्कथन" से मौलाना की विद्वत्ता और उनके दार्शनिक चितन का अनुमान लगाया जा सकता है। इससे सिद्ध होता है कि उन्होने विभिन्न दर्शनो का कितनी गहराई से तुलनात्मक अध्ययन किया था। यह अग्रेजी मे है किन्तु मौलाना की शैली की छाप इसमे स्पष्ट दिखाई पडती है। इसका प्रारभिक अश देखिए

"एक फारसी कवि ने सृष्टि की तुलना उस प्राचीन पाडुलिपि से की है जिसका प्रथम और अतिम पृष्ठ खो गया हो। इसलिए यह कहना असभव है कि इसका आरभ कैसे हुआ और न ही हम यह जानते हैं कि इसका अत कैसे होने जा रहा है।

मज आगज-ओ-जे अजाम-ए-जहा बेखबरेम
अव्वल-ओ-आखिर ई इक कुहना किताब उफ्तदस्त
(मै सृष्टि के आदि और अत से अनभिज्ञ हू
इस प्राचीन ग्रथ का आरभ और अत खो गया है।)

---

१९ अनुदान भाग, १९५४, लोकसभा सग्रहालय, नई दिल्ली।

मौलाना की अतिम रचना "हमारी आजादी" उनके देहावसान के पश्चात् सर्वप्रथम जनवरी, १९५९ मे प्रकाशित हुई थी। एकमात्र पुस्तक यही है जो अग्रेजी मे मौलाना के नाम से प्रकाशित हुई है। इसको "हमारी आजादी" के नाम से प्रो० मुहम्मद मुजीब ने अग्रेजी से उर्दू मे रूपातरित किया है। ये एक ऐसी पुस्तक है जो मौलाना ने लिखी नही है, बल्कि वह जो कुछ उर्दू मे बोलते जाते थे, हुमायू कबीर उसे अग्रेजी मे लिखते जाते थे। उन विवादाग्रस्त तीस पृष्ठो के अतिरिक्त जिन्हे दुर्भाग्यवश मौलाना की जन्म-शताब्दी मे सबसे अधिक ख्याति मिली। इस पुस्तक मे उस काल के इतिहास के अनेक पृष्ठ जुडे हुए है। सपूर्ण पुस्तक की रचना-शैली के विषय मे हमारा यह तुच्छ मत है कि उर्दू और हिन्दी भाषाओ मे जो भेद है उन्हे दृष्टि मे रखते हुए इस बात पर ध्यान देना चाहिए कि यह पुस्तक लिखी नही गई है बल्कि बोल कर लिखवाई गई है। यही कारण है कि मौलाना की अन्य रचनाओ 'तजकिरा", तर्जमान-अल-कुरान" और "गुबार-ए-खातिर" की शैली से इस पुस्तक की शैली मेल नही खाती है। मौलाना ने डाक्टर राधाकृष्णन की पुस्तक "दर्शन का इतिहास" पर जो प्राक्कथन लिखा था और जो अग्रेजी मे उपलब्ध है, जैसे कि पहले कहा जा चुका है, इससे भी मौलाना की चिन्तन-पद्धति का आभास होता है और इस पर उनकी दार्शनिक और साहित्यिक, रचना-शैली की छाप है। वास्तविकता यह है कि "इडिया विस फ्रीडम", मौलाना और हुमायू कबीर के बीच जो बात हुई है उसको जिस ढग से इस पुस्तक मे लिपिबद्ध किया गया है वह पद्धति रिपोर्ट की जैसी है और यह मौलाना की तुलना मे हुमायू कबीर की रचना-शैली से कही अधिक निकट है। इस सबध मे यह रोचक बात याद आती है कि फजलुद्दीन अहमद साहब जिन्होने अत्यन्त प्रयत्न और श्रम से मौलाना की जीवनी उनसे लिखवाई है, वह मौलाना के जीवन और तिथि क्रमानुसार घटनाओ से सबद्ध पन्द्रह प्रश्न लेकर मौलाना के पास राची गए। मौलाना ने इनमे से एक भी प्रश्न का उत्तर प्रत्यक्ष रूप से नही दिया था और फजलुद्दीन अहमद ने उनके उत्तर को वैसे का वैसा ही लिख दिया था। इसलिए 'तजकिरा प्रत्यक्ष सुदर रचना-शैली के कारण एक साधारण स्वरचित जीवनी बन गया। दूसरी ओर हुमायू कबीर ने "इडिया विस फ्रीडम" मे घटनाचक्र को प्रस्तुत करते समय मौलाना को तिथियो पर ध्यान देने को विवश किया। इस पुस्तक का एक रोचक अध्याय "भारत छोडो" है। इसे इस चयन मे सम्मिलित किया गया है।

मौलाना की गणना उत्कृष्ट पत्र लेखको मे होती है। उनके अत्यधिक विख्यात पत्रो का सकलन 'गुबार-ए-खातिर" है। ये पत्र उन्होने अपने मित्र सद्र यारगज को लिखे थे। इन पत्रो मे मौलाना ने अपने व्यक्तित्व का विश्लेषण किया है और अपने दृष्टिकोण की व्याख्या की है। कारावास मे ये पत्र लिख-लिख कर मौलाना इन्हे एकत्रित करते रहे हैं और जिसे ये पत्र लिखे गये थे उसे यह उस समय पहुचे जब जून १९४५ ईस्वी मे मौलाना जेल से छूटे। कुछ और भी पत्र है, जिन्हे "मकातीब अबुल कलाम" के नाम से अबु सलमान शाहजहापुरी ने सकलित करके प्रकाशित कराया है। अन्य पत्र ऐसे हैं जो छपे नही है और पुस्तकालयो मे सुरक्षित है। मौलाना के सैकडो पत्रो मे से हमने उन पत्रो को ही चुना है जो उन्होने उन दो महानुभावो को लिखे हैं जिनका उनके जीवन पर गहरा प्रभाव पडा है। इनमे एक उनके मार्गदर्शक गाधी जी हैं और दूसरे उनके दीर्घकालीन मित्र जवाहरलाल नेहरू हैं। इन पत्रो मे उस आदर और सम्मान की सीधी-सादी अभिव्यक्ति मिलती है जो इन लोगो के मन मे एक-दूसरे के लिए थी। २७ जून १९४६ ई० को मौलाना ने गाधी जी को एक अत्यन्त ज्वलत समस्या पर उस समय पत्र लिखा था, जब महात्मा गाधी के पुत्र हरिलाल ने इस्लाम धर्म स्वीकार कर लिया था। उन्होने लिखा था

कि "आपने मुझसे पूछा है कि क्या इस प्रकार का धर्म परिवर्तन इस्लाम मे मान्य है? क्या यह इस्लाम के प्रचार-प्रसार का उचित ढग है? और क्या इसे चलते रहना देना चाहिए? इस्लाम मे धर्म का सबध केवल आत्मा और मन से है। कोई भी उस समय तक उचित रूप से इस्लाम स्वीकार नही कर सकता जब तक उसमे किसी सासारिक स्वार्थ का लेशमात्र भी अश शेष है। इस्लाम के पैगबर ने यह सिखाया है कि मनुष्य के कर्मो का आधार इस बात पर है कि उसकी नियति क्या है? और ईश्वर केवल शब्दो और दिखावे कामो को नही देखता वह तो मन और उस नियति को देखता है जिससे वे कार्य किए गए है?"[२०] इस सकलन मे वे पत्र, तार, और वे विज्ञप्तिया सम्मिलित की गई हैं जिनमे गाधी जी, पडित जी और मौलाना ने अनेक महत्त्वपूर्ण विषयो पर विचार-विनिमय किया है।

इस सकलन मे सम्मिलित सामग्री का इस प्रस्तावना मे विवेचन करने के पश्चात् अब इस बात की आवश्यकता है कि हम उस प्रशिक्षण पृष्ठभूमि का सिहावलोकन करे जिसके कारण लेखक ने उत्कृष्ट रचनाए प्रस्तुत की। फातिमा बेगम मौलाना आजाद की बडी बहन थी। और उन्होने ख्वाजा अहमद फारुकी को मौलाना के बचपन के सबध मे बताया था कि "स्वर्गीय मौलाना आजाद मुझसे चार साल छोटे थे। हम दोनो का जन्म मक्का मे हुआ था। जब आजाद की आयु १० वर्ष की थी तो हमारे पिता हमे कलकत्ता ले आये जहा उनके बहुत से शिष्य रहत थे। मेरे भाई का नाम मोहिउद्दीन अहमद था और आजाद उनका उपनाम था। इनकी शिक्षा-दीक्षा पिता की देख-रेख मे हुई थी। आजाद उच्चकोटि की कविता लिखते थे। जब वह १४ वर्ष के थे तो उन्होने एक शेर लिखा था जो मुझे अभी तक याद है

आजाद बेखुदी के नशेबोफ्रोज देख,
पूछी जमीन की तो कही आसमान की।[२१]

मौलाना के पूर्वजो मे से एक जमालुद्दीन इलियास "शेख बहलोल" मुगल सम्राट अकबर के समकालीन थे। यह उन धर्माचार्यो मे से थे जिन्होने इस वक्तव्य पर हस्ताक्षर करना अस्वीकार कर दिया था जिसमे कहा गया था कि बादशाह किसी नए धर्म का प्रवर्त्तक हो सकता है। जमालुद्दीन के बेटे शेख मुहम्मद अपने पिता के पदचिह्नो के पदो पर चलते हुए ग्वालियर के नरेश के सम्मुख उसकी अधीनता अस्वीकार कर दी थी और इस अपराध मे उन्हे बदी बना लिया गया था। "तजकिरा" मे मौलाना ने शेख जमालुद्दीन के जीवन पर प्रकाश डालते हुए इस बात पर अत्यन्त सतोष प्रकट किया है कि उनके पूर्वज सासारिकता को घृणा की दृष्टि से देखते थे "यह शहादत देख कर मन को कितना सतोष हुआ कह नही सकता। इस विचार ने मन को प्रसन्न और मस्तिष्क को आनदित किया कि हमारे पूर्वज सदैव ही विद्याअर्जन, हदीस (वचनावली) एव सुन्नह (आचरण) की सेवा मे सलग्न रहे और प्रारभ से ही सम्मान प्राप्ति हमे इस कारण से होती रही कि हमने दारिद्रय को आत्मसात किया, फर्श पर बैठना स्वीकार किया और सासारिक सफलता से दूर रहे। इसीलिए लोग हम लोगो के बारे मे आदरपूर्वक चर्चा करते है और सुन्नह का अनुसरण करने मे हमे निष्ठावान बताते हैं। क्योकि सासारिक लालसाओ से विमुख होकर हम इस मार्ग पर चलते रहे।"[२२]

---

२० महात्मा गाधी के नाम मौलाना आजाद का अप्रकाशित पत्र, गाधी स्मारक निधि, नई दिल्ली।

२१ आजकल', सितबर १९६७, मौलाना अबुल कलाम आजाद नामक अपने लेख मे अश मर्लसियानी द्वारा उद्धृत।

२२ 'तजकिरा'', सपादक, मालिकराम, पृष्ठ ३०२

मौलाना मनुव्वरुद्दीन आजाद के परदादा थे जो १८५५ मे भारत की तत्कालीन स्थितियो से विचलित होकर हिजाज चले गये थे। उन्हे बबई जाना था। वह जाते हुए भोपाल से गुजरे। उस समय भोपाल नवाब सिकदर बेगम के शासन मे था जिन्होने आग्रह करके मौलाना मुनुव्वरुद्दीन को भोपाल मे रोक लिया। परन्तु अततोगत्वा मौलाना मुनुव्वरुद्दीन बबई पहुचे जहा उनके मुरीदो ने उन्हे रोक लिया और वही १८५८ या १८५९ मे उनका देहान्ह हो गया। मुनुव्वरुद्दीन के पोते (मौलाना आजाद के पिता) खैरुद्दीन ने इस यात्रा को जारी रखा और अकेले ही हिजाज पहुच गये। यहा उन्हे धर्माचार्यो और सूफियो के सपर्क मे आने का अवसर मिला। १८७० या १८७१ मे उन्होने एक अरब महिला से विवाह कर लिया जो उनके एक गुरु शेख मोहम्मद जाहिद वली की भाजी थी। मौलाना खैरुद्दीन के पाच बच्चे हुए। इनमे से तीन बेटिया थी जिनके नाम जैनब, फातिमा और हनीफा हैं और दो बेटे थे जिनका नाम अबूनस गुलाम यासीन और अबुल कलाम मोहीउद्दीन अहमद है। बडे बहन के अतिरिक्त ये सारे बच्चे कविता करते थे। इनमे दोनो लडकियो का उपनाम आरजू और आबरू है और दोनो भाईयो का उपनाम 'आह' और 'आजाद' है।

आजाद का जन्म मक्के मे 'जिलहिद' १३०५ हिजरी ईस्वी सन् के अनुसार नौ अगस्त 'या ६ सितबर १८८८ को हुआ था। हुमायू कबीर ने मौलाना के स्मारिका ग्रथ मे उनकी 'जन्मतिथि ११ नवबर १९८८ लिखी है। किन्तु इस तिथि के ठीक होने का साक्ष्य अन्य किसी स्रोत से नही होता। इनके पिता ने इनका तारीखी नाम **फिरोज बख्त** रखा था। १८९८ मे मौलाना खैरुद्दीन सपरिवार कलकत्ते आ गए। यहा १५ साल की आयु मे आजाद ने निजामी पाठ्यक्रम समाप्त कर लिया। इस पाठ्यक्रम की पूर्ति इसमे अधिक आयु मे भी कम ही शिक्षार्थी कर पाते है। केवल यही वह अवधि है जिसमे आजाद की विधिवत शिक्षा-दीक्षा हुई। यह मान्यता ठीक नही है कि आजाद की शिक्षा काहिरा के जामिया-उल-अजहर मे हुई है। यह भ्राति महादेव देसाई के 'मौलाना अबुल कलाम आजाद' नामक मौलाना की जीवनी द्वारा प्रसारित हुई है। प० जवाहरलाल नेहरु ने मौलाना आजाद के देहावसान के एक दिन पश्चात् ससद मे जो भाषण दिया था उसमे इस भ्राति की पुष्टि हुई है। मौलाना ने तो जामिया-उल-अजहर की शिक्षा पद्धति की कटु आलोचना की है। उन्होने **गुबार-ए-खातिर** मे लिखा है कि "बौद्धिक शास्त्रो की अत्यधिक आधुनिक भारतीय पुस्तको का पढाया जाना अल-अजहर मे निषिद्ध है। जमालुद्दीन अफगानी को अपने भाषण के लिए वहा पुस्तके उपलब्ध न हो सकी और **अबदू** निराश होकर विश्वविद्यालय छोड कर चले गये।' [२३] आजाद के पिता उनकी शिक्षा-दीक्षा पर कडा नियत्रण रखते थे। मौलाना खैरुद्दीन बहुत सख्त आदमी थे। आजाद ने इस बात का उल्लेख गुबार-ए-खातिर" मे किया है। मौलाना आजाद को जो पाठ पढाया जाता था वो प्रथम बार मे ही उसे याद कर लेते थे। इनकी स्मरणशक्ति इतनी अच्छी थी कि एक बार जो कुछ पढ लेते थे वह उन्हे तुरत याद हो जाता था। इनके पिता प्रतिदिन प्रात काल अपने दोनो बेटो को पढाते थे। किन्तु इनको पाठ के दौरान प्रश्न करने की अनुमति नही थी। परन्तु इनके पढाने की पद्धति इतनी पूर्ण थी कि पाठ के अत मे किसी प्रकार के प्रश्न की आवश्यकता नही होती। अब्दुल रज्जाक मलीहाबादी ने स्वय मौलाना के माध्यम से उनकी असाधारण स्मरणशक्ति और हर बात को समझ लेने की उनकी क्षमता के सबध मे लिखा है कि मैने अपने मस्तिष्क मे खाने बना रखे है, सैकडो हजारो खाने। यह खाना विधि का है, यह अतर्राष्ट्रीय राजनीति का है, यह इतिहास

२३ आयान हण्डरसन डग्लस द्वारा उद्धृत मौलाना अबुल कलाम आजाद एक बौद्धिक एव धार्मिक जीवनी, पृ० ४०

का है, यह गणित का है और यह सेना का है। मै अपने ज्ञान को एक निपुण 'स्टोर कीपर' के समान सुघडता से पूरे अनुशासन सहित अलग-अलग खाने मे एकत्रित करता हू और जिस समय जिस प्रकार की आवश्यकता पडती है वही खाना खोल देता हू और शेष खाने बद रखता हू।"[२४]

इस वक्तव्य को भली भाति समझे बिना डोग्लस ने यह टिप्पणी की है कि मौलाना का प्रशिक्षण अपूर्ण था और उसने लिखा है कि

'उनका प्रशिक्षण वस्तुत ऐसा हुआ था जिससे ज्ञान-भडार के एकीकरण के मार्ग मे अवरोध उत्पन्न होता था और एक शास्त्र का ज्ञान दूसरे क्षेत्र के ज्ञान से सबद्ध नही था। निश्चय ही आजाद की बौद्धिकता कुछ सीमा तक अपने इस प्रारभिक प्रशिक्षण के प्रभाव पर नियत्रण करने मे सफल हो सकी।"[२५]

आजाद की तीव्र इच्छा होती थी कि उन्होने जो कुछ पढा है उसके सबध मे किसी से वार्तालाप करे। बाल्यावस्था मे इनके यहा की दिनचर्या यह थी कि इनकी बैठक मे पचास-साठ लोग एकत्रित होते थे और सध्या समय की नमाज के पश्चात् वह आजाद से विभिन्न विषयो पर प्रश्न करते थे। उस समय उनकी आयु दस-ग्यारह वर्ष से अधिक न थी। यह लोग उनको वीर-पुत्र कहते थे और इनकी बातो को अत्यत ध्यान से सुनते थे, इनके एक-एक शब्द की प्रशसा करते थे। मौलाना अपने इस बातचीत को "मूर्खता" कहते थे जो बाल्यावस्था मे अपने पिता के मुरीदो मे किया करते थे।

आजाद ने शीघ्र ही स्वय को इस सैनिक अनुशासन से निकाल कर जिज्ञासु जीवन के स्वतन्त्र वातावरण मे ला खडा किया और यह उन अनेक बाह्य प्रभावो का फल था जो उन पर उस समय पड रहे थे। इनके पिता इन्हे जब व्याकरण लिखवाते तो वह चुपके-चुपके उर्दू साहित्य का अध्ययन करते रहते। उससे इनके मानस क्षितिज का विस्तार हुआ। इसी अवधि मे सगीत के प्रति इनमे अभिरुचि उत्पन्न हुई और इन्होने सितार बजाना आरभ कर दिया। एकात मे वे अपने पिता से उस असहिष्णुता के सबध मे बहस करते जो उनके पिता वहाहिबो के प्रति रखते थे। मौलाना आजाद को अपने पिता के मुरीदो की विनम्रता और चाटुकारिता बुरी लगने लगी। और वह लोग जब उनके प्रति उसी प्रकार व्यवहार करते थे तो इन्हे अच्छा नही लगता था

"अधिक से अधिक आयु मेरी तेरह वर्ष की थी कि मेरा मन अकस्मात् अपनी तात्कालिक स्थिति और परिवेश मे उचाट हो गया। तथा ऐसा लगने लगा कि मै किसी अच्छी स्थिति मे नही हू यहा तक कि मुझे उन सारी बातो से जो लोगो की दृष्टि मे अत्यन्त आदर और सम्मान की बाते थी, एक प्रकार से घृणा हो गई जो लोग अब मेरा हाथ-पाव चूमते तो मुझे ऐसा लगता कि जैसे कोई बहुत बुरा काम हो रहा है।"[२६] केवल इतना ही नही, उनके मन मे उन अवधारणाओ के सबध मे भी आशकाए उत्पन्न होने लगी जिनमे उन्होने आख खोली थी और जो केवल प्राचीन रीति-रिवाजो के प्रति मोह और पिता पितामह की जीवन-पद्धति के अनुकरण का फल थी। वास्तविकता को प्राप्त करने की इच्छा और जिज्ञासा तेरह वर्ष की आयु मे आरभ हुई थी। बहुत दिनो के पश्चात् उन्होने तर्जमा-उल-कुरान लिखते समय अपनी इस व्यथा का उल्लेख किया है

२४ अबुर रज्जाक मलीहाबादी **जिक्र-ए-आजाद** आयन एण्डरन डोग्लास द्वारा उद्धृत, **मौलाना अबुल कलाम आजाद एक बौद्धिक और धार्मिक जीवनी**, पृ० ४१

२५ श्री डग्लस पृ० ४१

२६ श्री डग्लस, पृ० ५०

"मेरे मन का कोई विश्वास ऐसा नही है जिसमे सदेह के कटक न चुभ चुके हो और मेरी आत्मा की कोई अवधारणा ऐसी नही है जो अस्वीकृत की समस्त परीक्षा से निकली हो। मैंने विष की घूट भी प्रत्येक प्याले से पीये है और विष को उतारने के प्रत्येक चिकित्सालय के नुस्खे का भी मैंने सेवन किया है। मै जब प्यासा था तो मेरी तृष्णा दूसरो के समान न थी और जब मै तृप्त हुआ तो मेरी तृप्ति का स्रोत भी सहज मार्ग पर न था।" २७

इस ग्रथ मे मौलाना की जो रचनाए सकलित हैं उन्हे मौलाना के प्रारभिककालीन परिवेश को सम्मुख रख कर पढना चाहिए। इनकी तैयारी उन्होने बाल्यकाल से ही आरभ कर दी थी। इनकी बाल्यावस्था के सबध मे आश्चर्य प्रकट करते हुए इनकी बडी बहन ने कहा है कि आजाद सचमुच कभी बच्चा थे। उन्होने लिखा है कि "इसके ही उन नन्हे-मुन्ने कधो पर एक प्रौढ मस्तिष्क था।' मौलाना की समकालीन सरोजनी नायडू के कथनानुसार जब मौलाना का जन्म हुआ तो उनकी आयु पचास वर्ष थी। इदिरा गाधी के नाम लिखे गये अपने एक पत्र मे नेहरू ने भी ऐसे विचार व्यक्त किये है

"सभवत वह बहुत जल्दी बडे हो गये। समय से पूर्व उनमे प्रौढो जैसी प्रतिभा है, वह अब भी किसी प्रकार बूढे नही लगते। वह सर्वदा ऐसे ही पक्के और प्रौढ रहे है। और उनके सबध मे यह सोचना कठिन है कि वो कभी सरफिरे और उत्तेजनायुक्त युवक रहे होगे।" २८

मौलाना ने "गुबार-ए-खातिर" मे अपने बाल्यकाल की जो घटना उल्लिखित की है उससे भी इस विचार की पुष्टि होती है

"लोग लडकपन का समय खेलकूद मे बिताते है। परन्तु बारह-तेरह वर्ष की आयु मे मेरी स्थिति यह थी कि पुस्तक लेकर किसी कोने मे जा बैठता और प्रयत्न करता था कि लोगो की आखो मे ओझल रहे। कलकत्ता मे आपने "डलहौजी स्क्वायर" अवश्य देखा होगा। बडे डाकखाने के सम्मुख स्थित है, इसे साधारणतया लाल डिग्गी कहा करते थे। इसमे वृक्षो का एक झुण्ड ऐसा था कि बाहर से देखिए तो पेड ही पेड किन्तु इसके अदर पर्याप्त खुली जगह है और इसमे एक बेच पडी हुई है। जब मै सैर के लिए निकलता तो पुस्तक साथ ले जाता और वृक्षो के झुण्ड मे बैठकर अध्ययन मे तल्लीन हो जाता। स्वर्गीय पिता जी के विशेष सेवक स्वर्गीय हाफिज वली उल्लाह साथ हुआ करते। वो बाहर टहलते रहते और झुझला-झुझला कर कहते—"यदि तुझे पुस्तक ही पढनी थी तो घर मे क्यो निकला?" २९

यह विचार प्रमाणित है परन्तु मौलाना के जीवन का एक पक्ष और भी है जिस पर उनके किसी समकालीन ने प्रकाश नही डाला। इसका कारण सभवत यही हो कि वो लोग इनके सहचर नही थे। इस बात को विशेष रूप से स्वीकार कर लिया गया है कि उनकी युवावस्था भी उत्तेजनापूर्ण और दीवानी नही थी, क्योकि उनकी बाल्यावस्था साधारण बच्चो जैसा न था। मौलाना ने इसका उल्लेख स्वय किया है किन्तु यह साकेतिक और अलकृत भाषा मे है "तजकिरा" का अतिम अध्याय उनके इस जीवन का परिचायक है जिससे लोग कम परिचित हैं

"मस्ती और विस्मृति के इन्द्रजाल मे घिर गया। मादकता से प्याला भर गया। जवानी के

२७ तरजाम-उल-कुरान, प्रथम सस्करण की प्रस्तावना साहित्य अकादमी, पृष्ठ ५२

२८ जवाहरलाल नेहरू की कृतियो का सकलन, एस गोपाल, पृ० ३९

२९ गुबार-ए-खातिर, साहित्य अकादमी, पृ० ८०-८१

सरफिरेपन ने मुझे वशीभूत कर लिया। तृष्णा और लालसा ने मन पर अधिकार जमा कर उसने इनकी पूर्ति की ओर अग्रसर किया। बुद्धि और ज्ञान ने पहले तो इस पर आश्चर्य प्रकट किया तत्पश्चात् उन्होने भी अनुमति दे दी कि यही निश्चय ही उचित मार्ग है और जीवन का आनद लेने का यही उचित सबध है। एक कवि ने कहा है

ऐ साकी बुरा न मान
मेरे आचरण का,
यह तो मेरे यौवन का काल है।

इसके पश्चात् जवानी के बीते दिनो को याद करते हुए मौलाना ने 'गुबार-ए-खातिर'' मे लिखा है

चौबीस वर्ष की आयु मे जब लोग यौवन और ऐश्वर्य की मादकता की यात्रा आरभ करते है तो मै यात्रा समाप्त करके अपने तलवो के काटे चुन रहा था। इस सबध मे भी अपनी चाल दूसरो से उल्टी रहा। लोग जीवन के जिस मोड पर कमर बाध रहे थे, मैं खोल रहा था।

पाठको को इस पुस्तक मे सकलित सामग्री के लिए मानसिक रूप से तत्पर करने के लिए मौलाना आजाद के जीवन के सबध मे और भी लिखा जा सकता है किन्तु हम इस चर्चा को मीर के इस शेर पर समाप्त करते है जो मौलाना को बहुत पसद था

काम थे इश्क मे बहुत पर **मीर**
हम फारिग[१] हुए शताबी[२] से

हमने इस प्रस्तावना मे अनुवाद की समस्याओ पर प्रकाश डाला है और इस बात की व्याख्या की है कि इस चयन मे सम्मिलित रचनाए किस कारण से सकलित की गई है। मौलाना की जीवन-वृत्तात का भी हमने सक्षिप्त वर्णन किया है इससे अधिक विस्तार मे जानने की इच्छा जिन पाठको को हो उनसे निवेदन है कि वह इसके लिए अनुक्रमणिका और मौलाना की जीवन की घटनाओ की तिथिबद्ध तालिका देखे जो इस चयन मे सन्निहित किया जा रहा है।

मौलाना आजाद की कृतियो की सक्षेप मे प्रस्तुति तिलिस्मी कार्य है क्योकि ये रचनाए ऐसा लघु ब्रह्माड है जिनमे बीसवी शताब्दी के पहले अर्द्धशतक की विस्तृत और महत्त्वपूर्ण घटनाओ का सार निहित है। मौलाना की जन्म-शताब्दी वर्ष मे उनकी साहित्यिक व बौद्धिक परपरा को इस स्मारिका ग्रथ मे सकलित करके अग्रेजी, हिन्दी एव उर्दू मे इस दृष्टि से प्रस्तुत किया जा रहा है कि भारतवासी और ससार के अन्य भागो के लोग शताब्दी के एक उत्कृष्ट मनीषी से परिचित हो सके। मौलाना आजाद क्या इस सकलन को पसद करेगे जो इकबाल की कविता ''शाकीनामा'' के इस शेर के साथ प्रस्तुत किया जा रहा है

यही कुछ है साकी मताए[३] फकीर
इसी से फकीरी मे हूँ मैं अमीर।

---

१ फारिग—मुक्त होना, २ शताबी—शीघ्रता से, ३ मताए—धन-सम्पत्ति

३० वही पृ० १०३

भाग १

प्रतिभाशाली प्रारंभ : १८९९–१९१६

प्रयोगात्मक पत्रकारिता

लिसान-उल-सिदूक़

(सत्यवाणी)

"समुदाय को असत्य से बचाना और सत्य की ओर उसे अग्रसर करना लिसान-उल-सिदूक का दायित्व और कर्तव्य है।"

लिसान-उल-सिद्क *

उद्देश्य और कार्य

सत्य मुक्त करता है और असत्य मारता है।' लिसान-उल-सिद्क का दायित्व और कर्तव्य असत्य के विरुद्ध राष्ट्र की रक्षा करना है और उसे सत्य-पथ पर ले चलना है।

क्योकि इसे सत्य के अतिरिक्त और कुछ न बोलने का कर्तव्य सौपा गया है इसलिए राष्ट्र को इससे पचम स्वर के सगीत की आशा नही करनी चाहिए। सत्य सदैव ही कडवा होता है। 'सत्य की भाषा' मीठी हो ही नही सकती। यह कर्कश शब्दो द्वारा अभिव्यक्ति करती है और तीक्ष्ण कटाक्ष करती है जो सदैव रुचिकर नही होती, बहुधा अत्यन्त अरुचिकर ही होती है। वह समय दूर नही जब 'सत्य द्वारा मुक्ति' और 'असत्य द्वारा मृत्यु' का रहस्य आपके सम्मुख प्रकाशित हो जायेगा।

इस पत्रिका के उद्देश्य और कार्य निम्नलिखित है

१ समाज-सुधार अर्थात् मुस्लिम समाज और उसके आचार-व्यवहार मे सुधार।
२ उर्दू का प्रचार-प्रसार अर्थात् उर्दू भाषा मे विद्याश्रित साहित्य का क्षेत्रविस्तार।
३ साहित्यिक अभिरुचि पर विचार, विशेष रूप से बगला साहित्य।
४ आलोचना अर्थात् उर्दू प्रकाशनो का वस्तुनिष्ठ विवेचन।

उद्देश्यों का स्पष्टीकरण

समाज-सुधार

यह मूर्खतापूर्ण रीतिया हमारी मनोवृत्ति क्यो बन गई है। धर्माचार्यो की उपेक्षा के फलस्वरूप साधारण जन समझने लगे कि यह धर्म का अग है और प्रत्येक मुसलमान के लिए इनका पालन करना अनिवार्य है। कुछ रीतिया ऐसी है जिनसे धर्माचार्यो को आर्थिक लाभ मिलता है और इसी कारण से वे किसी प्रकार के परिवर्तन मे बाधा उत्पन्न करते है। जब किसी प्रकार के सुधार नहीं किए गए और दीर्घकाल तक यह रीतिया प्रचलित रही तो ये उनके दैनिक-जीवन का अटूट भाग बन गई।

अपने अतिम चरण मे मुस्लिम-साम्राज्य पतनावस्था को प्राप्त हो गया और व्यर्थ के ऐश्वर्य मे तल्लीन हो गया। जीवन-पद्धति के इस पतन मे लखनऊ ने नई रीतियो को जन्म

---

* १९०३ मे १५ वर्ष की आयु मे आजाद ने एक पाक्षिक पत्रिका 'लिसान-उल-सिद्क' (सत्यवाणी) के नाम से निकाली थी। अपनी पत्रिका निकालने का उनका यह प्रथम प्रयास था। इसके दिनाक २० नवबर, १९०३ के अक मे छपे इस लेख मे लिसान-उल-सिद्क के उद्देश्यो और कार्यो का उल्लेख है। उपरोक्त सकलित भाग समाज-सुधार के कार्यों का विवरण है। १५ वर्ष की आयु मे मौलाना के लेख मे सामाजिक जागृति, विश्लेषणात्मक प्रतिभा और उद्देश्य की स्पष्टता का आभास होता है। लेखन-शैली और वर्ण्य-विषय की दृष्टि से इसकी तुलना उस शैली मे करना रुचिकर है जो नौ वर्ष पश्चात् अल-हिलाल की अत्यन्त नवीन पत्रकारिता के रूप मे विद्यमान हुई।

दिया जाता है वह यह है कि हमारे जन-साधारण रीति-रिवाजो को महत्त्व देते है इसलिए इन्हे मिटाने का कोई भी प्रयास उनके मन मे सुधारको के प्रति घृणा उत्पन्न करेगा और सभावना है कि अन्य समस्त सुधारो की प्रगति भी रुक जाए। परन्तु यह सर्वज्ञात तथ्य है कि सुधार लागू करने के समस्त प्रयासो का सदैव ही विरोध होता है। अग्रेजी भाषा के सीखने को लोकप्रिय बनाने मे जो चेष्टाए हमने की उसके फलस्वरूप हमे अपशब्द सुनने पडे और उसके बदले मे हमे घृणा प्राप्त हुई। यह ऐसा अपमान है जिसे हम सभवत भुला नही सकते। यदि उन लोगो को सुधारने की चेष्टा की जाए जो दीर्घकाल से अज्ञान के गर्त मे पडे हुए है तो चाहे सुधार की रूपरेखा अथवा उसका माध्यम कुछ ही क्यो न हो यह निश्चय ही लोगो का आक्रोश भडकाएगी। ऐसे महत्त्वपूर्ण सुधारो की उपेक्षा करना, जिनका रीति-रिवाजो से सबध है, एक भयकर गलती है।

दूसरे पक्ष की यह आशा कि शिक्षा जब सार्वजनिक हो जाएगी तो लोग सुधारो को आत्मसात कर लेगे, अत्यन्त भ्रामक है। अनुभव बताता है कि वे रीति-रिवाज जो एक पीढी को दूसरी पीढी मे थाती के रूप मे प्राप्त होते रहते है शिक्षा द्वारा समाप्त नही होते। समाज और पारिवारिक सस्कार बहुधा शिक्षा के प्रभावो को क्षीण कर देते है। एक शिक्षित व्यक्ति जब घर की चारदीवारी से बाहर होता है तो वह स्वच्छद और सभ्य प्रतीत होता है किन्तु घर मे घुसते ही वह पुरातन रीतिया के चगुल मे फस जाता है। शिक्षा का जो प्रभाव उसे घर के बाहर सभ्य और स्वच्छद बनाता है वह रीति-रिवाजा के बोझ के नीचे दब कर प्रभावहीन हो जाता है। शिक्षा निश्चय ही कुछ भाव उत्पन्न करती है किन्तु उन्हे सुस्थिर रखने के लिए शक्तिशाली आदोलन की आवश्यकता है। आदोलन जब तक उस ओर बढने की सशक्त प्रेरण नही देता तब तक व्यक्ति इन रीति-रिवाजो को छोडने पर सहमत नही होता। इस आदोलन का नाम सुधार है और इसकी उपलब्धि की चेष्टा करने का समय आ गया है, व्यर्थ की बाते करने और उद्देश्यहीन विचार-विनिमय का अब समय नही है। हमे जो कुछ प्राप्त करना है उसके लिए तुरन्त चल पडना चाहिए।

यह प्रसन्नता की बात है कि मोहम्मडन शैक्षणिक कान्फ्रेस और नदवतुल आलेमा ने अपनी चेष्टाए सास्कृतिक सुधारो पर केन्द्रित कर दी है। इस समय नदवतुल आलेमा (पाडुलिपि पृ० ७ पर देखिए) की गतिविधि के सबध मे तर्क-वितर्क करना व्यर्थ है। कान्फ्रेस ने अपने दिल्ली अधिवेशन के पश्चात् ऐसा शैक्षणिक कार्य प्रारभ किया है जिस पर हमे पूर्ण ध्यान देना चाहिए। आशा की जाती है कि इन प्रयत्नो से विश्वसनीय परिणाम सामने आएगे।

कान्फ्रेस ने सास्कृतिक सुधार का पृथक् विभाग स्थापित किया है। अलीगढ कालेज के एक विख्यात भूतपूर्व विद्यार्थी श्री ख्वाजा गुलाम-उल्-सकलैन इसके सचिव नियुक्त हुए है। उनकी इस पद पर नियुक्ति अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए ख्वाजा साहब ने **अस्त्र-ए-जदीद** नाम से एक पत्रिका निकाली है और इस तरह ऐसे सदस्य बनाने का एक ढग निकाला है जिनसे किसी रीति-रिवाज का पालन न करने का प्रण लेने को कहा जाएगा। हम ख्वाजा साहब के इन प्रयत्नो को सराहते है और आशा करते है कि जब बबई की कान्फ्रेस मे इनके महत्त्वपूर्ण कार्य का विवरण प्रस्तुत किया जाएगा तो कान्फ्रेस मे सम्मिलित सभी लोग इसे सराहेगे। इस प्रगति की महत्ता के कारण सास्कृतिक सुधार लिसान-उल्-सिद्क के उद्देश्यो मे सम्मिलित कर लिया गया है। परन्तु अधिकाश हानिकारक रीति-रिवाजो का सबध समाज से है। इसलिए यह पत्रिका सामाजिक-सुधारो को अधिक प्राथमिकता देती रहेगी।

दिया। निस्सदेह, इनमे से कई घृणित रीतियो का सबध हर्षोल्लास और अवसाद के क्षणो से है किन्तु ये उत्पन्न हुई है लखनऊ की दरबारी और स्वच्छद जीवन-पद्धति से। हिन्दुस्तान ने जब नए चरण मे पदार्पण किया (एक सुसभ्य जाति द्वारा पराधीन किए जाने के पश्चात्) तो पुरातन रीति-नीति पर चलते रहना कठिन हो गया। वस्तुओ का उत्पादन और विद्यार्जन प्राथमिक आवश्यकता बन गए, परन्तु इसके विपरीत इन रीतियो का उपयोग चलता रहा। प्रत्येक अवसर के लिए एक विशष रीति थी और प्रत्येक व्यक्ति ने उसका पालन किया। क्योकि आर्थिक स्थिति पहले जैसी नही रह गई थी इसलिए इन रीति-रिवाजो का अनुसरण और प्रचलन सैकडो परिवारो के लिए घातक सिद्ध हुआ। सहस्रो त्यौहारो के उपलक्ष्य मे धन का अपव्यय किया जाता था। यह सामाजिक दबाव ऐसा था कि चले आ रहे रिवाजो से विमुख होने का साहस कोई नही कर सकता था।

हिन्दुस्तानी सामाजिक स्थिति के विषय मे हमारे एक तुर्क मित्र ने हमे बताया कि हिन्दुस्तान की दरिद्रता का प्रमुख कारण उसके रीति-रिवाज है जो सामाजिक दबाव के अतर्गत लोगो को धन लुटाने पर विवश करते है। लखनऊ मे आपको बहुधा ऐसे उदाहरण मिल जायेगे कि 'बब्बन मियाँ' के विवाह के लिए पाच हजार रुपये ऋण लिए गए या 'छुट्टन मियाँ' के खतने के समारोह के लिए दो घर गिरवी रख दिये गये। वे परिवार, जिनकी आजीविका का कोई अन्य साधन नही है, भूखो मरते है। यदि ऐसे रीति-रिवाजो को सादगी से मनाया जाए तो ये दो परिवार भिखारी बनने से बच सकते है।

रीति-रिवाजो के प्रति श्रद्धा ने हिन्दुस्तान मे कई बुराइया उत्पन्न कर दी है किन्तु खेद है कि आज तक किसी ने भी इन्हे समाप्त करने की चेष्टा नही की और यह घुन समुदाय को खाता जा रहा है। कुछ लोगो का कहना है कि अन्य प्रकार के सुधारो की इनसे कही अधिक आवश्यकता है। वे महसूस करते है कि यदि समाज-सुधारो की ओर समाज विरोधी भाव रखने लगेगा और उनकी नीयतो पर सदेह करने लगेगा तो समाज-सुधार के उनके प्रयास निष्फल हो जाएगे। इसका परिणाम यह है कि अन्य और अधिक आवश्यक सुधार कभी नही हो पाते।

कुछ व्यक्तियो का विचार है कि जब शिक्षा का प्रचार-प्रसार हो जाएगा और आधुनिक विचार समाज के वर्गो को अपने प्रभावाधीन कर लेगे तो लोग स्वत ही सुधारो के सबध मे सोचने लगेगे। अत इस समय उन्हे लागू करने का उचित समय नही है। ये विचार इन महत्त्वपूर्ण सुधारो के मार्ग मे बाधक है। चिकित्सक के मौन-धारण और रोगी के अज्ञान के कारण दुर्भाग्यवश रोग असाध्य हो जाएगा। अगर हम इस दृष्टिकोण का आग्रह करते रहे तो प्रत्येक प्रकार के उपचार को विफल कर देगे और श्रेष्ठतम वैद्य भी इसको ठीक न कर पाएगे।

प्रथम पक्ष जिसे 'बहुसख्यक' कहा जाता है अनेकानेक सुधारो मे सलग्न हैं। ये ऐसे सुधार है जो निश्चय ही राष्ट्र के लिए महत्त्वपूर्ण हैं। परन्तु वास्तविक स्थिति यह है कि रीति-रिवाजो का सुधार एक ऐसा महत्त्वपूर्ण तत्त्व है जिस पर अन्य समस्त सुधार निर्भर है। मुसलमानो मे शिक्षा का अभाव मूलत रीति-रिवाजो के प्रति आग्रह के कारण है। बहुत-से परिवारो मे अग्रेजी भाषा का सीखना निषिद्ध है क्योकि वे एक परपरागत पाठ्यक्रम को अपनाए हुए है जिसे रीति-रिवाज ने प्रचारित किया है। माता-पिता कहते है कि "यदि बच्चो को अग्रेजी पढाई गई तो उनके पास परपरागत शिक्षा प्राप्त करने का समय नही रहेगा।" यह मान्यता सामाजिक सुधारो की अवहेलना होगी। इन घिसी-पिटी रीतियो के पालन के कारण सुधारो के मार्ग मे अनेक बाधाए उत्पन्न हो गई हैं जिन्हे केवल सुधारो के द्वारा खत्म किया जा सकता है। दूसरे सुधारो को महत्ता प्रदान करना और इन सुधारो को द्वितीय स्थान देना भूल है। इस सबध मे जो दूसरा तर्क

'अल-हिलाल' *

उद्देश्य और राजनैतिक शिक्षा

अल-हिलाल के मकासिद और पोलीटिकल तालीम

स्वाधीनना-प्राप्ति के लिए हर प्रकार की चेष्टा करना मुसलमानो का कर्तव्य होना चाहिए और उनके धार्मिक विश्वासो के अनुमार उन्हे उम ममय तक निश्चिन्त नही होना चाहिए जब तक वह सामदीय मरकार स्थापित न कर ले।''

‘अल-हिलाल’ *

उद्देश्य और राजनैतिक शिक्षा

हमारी इच्छा थी कि इस सप्ताह इस विषय पर कुछ लिखेगे। परन्तु एक घनिष्ठ मित्र की टिप्पणी ने इस बात को और अधिक आवश्यक बना दिया। वे लिखते है कि “ इन सात अको को बिना एक अक्षर छोडे हुए पढ लेने के पश्चात् भी स्पष्टतया ज्ञात नही होता कि आप कौम को किस प्रकार की राजनैतिक शिक्षा देना चाहते है ? एक बहुत बडा मौलिक सिद्धात जो आपका ज्ञात होता है और उसी ने आपके लिए अत्यधिक निष्ठा मेरे मन मे उत्पन्न कर दी है, वह यह है कि आप मुसलमानो के समस्त रोगो का उपचार धर्म और कुरान को समझते है, और चाहते है कि इनमे इस्लाम की वास्तविकता की न कि रीति-रिवाज की, आत्मा उत्पन्न की जाय। इस सिद्धात की चर्चा और भी बहुत-से लोग करते है और इसे जानते है। किन्तु सत्य यह है कि आपसे बढकर इसे अन्य कोई व्यवहार मे नही ला सकता। अभी थोडे से ही लेख आपके प्रकाशित हुए हैं, किन्तु उन्ही से प्रमाणित होता है कि आपकी दृष्टि कुरान और उसके सत्य अथवा उसके ज्ञान के सबध मे कितनी व्यापक और गहरी है। परन्तु क्षमा कीजिएगा, आप अपने धार्मिक रग मे राजनीति को भी रग देते है और दोनो को इस प्रकार मिला देते है कि दोनो की पहचान कठिन हो जाती है। मै समझता हू कि मेरी तरह ‘अल-हिलाल’ के सैकडो पाठको को भी इसी कठिनाई का अनुभव करना पडता होगा। अत आपको चाहिए कि सर्वप्रथम आप अपनी नीति का स्पष्टीकरण कर दे और कम-से-कम राजनैतिक शिक्षा को धार्मिक शिक्षा से पृथक् करके स्पष्टत बतला दे कि आप कौम को किस मार्ग पर ले जाना चाहते है? एक बात तो वह है जिस पर आज तक हम चलते रहे, दूसरा मार्ग मध्यमार्गी हिन्दुओ का है जो अग्रेज साम्राज्य के तत्वावधान मे अपने अधिकारो की माग करते है। तीसरा दल उन हिन्दू अराजकतावादियो का है जो बम के गोले और पिस्तौल चलाकर भारतमाता को विदेशियो से स्वतत्र कराना चाहते है। कृपया बतला दे कि आप किस दल मे है और किसके साथ हमको खडा करना चाहते है? उस समय हम या तो आपका साथ देगे और या केवल आपकी धार्मिक शिक्षा को आत्मसात करेगे और जीवन के अन्य दूसरे पहलुओ से सबध-विच्छेद कर लेगे। मेरा अभिप्राय यह है कि आपने न जाने कितनी यातनाए सहकर एक ऐसा बडा कार्य आरभ किया है आपकी सच्चाई और नि स्वार्थ भाव मे भी सदेह नही और आपकी विद्वत्ता तथा विशेष रूप से धार्मिक ज्ञान की जितनी भी प्रशसा करू, वो कम है। ये बाते सर्वदा हमारी दुर्भाग्यग्रस्त जाति को उपलब्ध नही रहीं। “ऐसा न हो कि ये सपूर्ण शक्तिया विनष्ट हो जाए और कौम आपकी योग्यता से वचित हो जाए ”

हमारी इच्छा थी कि सबसे पहले ‘अल-हिलाल’ के उद्देश्यो पर एक विस्तृत लेखमाला

---

* अल हिलाल ८ सितम्बर १९१२। इसका प्रथम अक १३ जुलाई १९१२ ई० को प्रकाशित हुआ था। यह एक सचित्र साप्ताहिक पत्रिका थी। प्रथम अक मे आजाद के तीन पथ-प्रदर्शको अल-सैयद जमालउद्दीन अफगानी, शेख मुहम्मद अब्दुह और अल-सैयद मुहम्मद रशीद रजा के चित्र छपे थे। यह लेख खड १ अक ८ मे प्रकाशित हुआ था।

प्रारभ करे और सुव्यवस्थित रूप से बता दू कि हमारी यात्रा की सीमाए और उद्देश्य क्या है ? परन्तु बीच मे कुछ समस्याए ऐसी उत्पन्न हो गयी कि जिन पर विवश होकर लिखना पड गया और प्रस्तावना के पूर्व ही मूल पुस्तक का लेखन आरभ कर देना पडा। परन्तु हम अपने मित्र के आभारी हैं कि उन्होने इस आवश्यक प्रश्न को उठाया।

उन्होने जिन शब्दो मे मेरे धार्मिक चिन्तन और लेखो की प्रशसा की है वो उनके बडप्पन का द्योतक है। अन्यथा लेशमात्र विनम्रता का प्रदर्शन किए बिना निवेदन करता हू कि मै किसी प्रकार भी इस प्रशसा के योग्य नही हू। सभव है कि थोडी-बहुत धार्मिक बाते मुझे ज्ञात हो किन्तु कुरान के रहस्य तो इतने सस्ते नही जिन्हे मै अपना अक्षर-ज्ञान देकर क्रय कर सकू। मैं तो उनके पत्र मे अपने प्रति ऐसे प्रशसात्मक शब्द पढकर अकस्मात काप उठा। यदि इसकी सत्यता और रहस्य को समझने के लिए अरबी भाषाविद् होने की आवश्यकता होती तो मै उसे प्राप्त करन का प्रयत्न करता, यदि भाष्यो के अध्ययन की आवश्यकता होती तो पुस्तको की मेरे पास कमी न थी। परन्तु इसके लिए ये समस्त बाते व्यर्थ है। इसके लिए प्रथम आवश्यकता है आत्मा की पवित्रता और हृदय की शुद्धता की, और समस्त विडबना यही है कि इन दोनो से वचित हू। एक हृदय जो पवित्रता की सपदा से वचित है और सासारिक सुखो का बदी है वो एक क्षण के लिए भी कुरान के सत्य और उसके रहस्य से प्रकाशमान नही हो सकता। ज्ञान-विज्ञान इसके लिए नितात व्यर्थ है और प्रतिभा और बुद्धि को यहा कोई नही पूछता।

विश्वास कीजिए कि जो कुछ निवेदन कर रहा हू वो नितात सत्य है। कुरान के रहस्यो और उसके बोध मे उस व्यक्ति का कोई भाग्य नही है जो आत्म-शुद्धता से विहीन हो, चाहे वो कितना भी बडा ज्ञानी क्यो न हो। न्याय कीजिए कि जब स्थिति यह हो तो फिर मै किस गिनती मे हू।

इनके पत्र मे कई बाते विचारणीय है

१ राजनैतिक वाद-विवाद धार्मिक शिक्षा से पृथक होने चाहिए?

२ हिन्दोस्तान मे इस समय जो राजनैतिक दल है उनमे से 'अल-हिलाल' किसका साथ देता है ?

प्रथम प्रश्न के सबध मे तो निवेदन यह है कि आपने यहा उस मौलिक सिद्धान्त को छेड दिया है जिस पर हम 'अल-हिलाल' का सपूर्ण भवन निर्मित करना चाहते है। आप कहे कि मेहराब सुदर नही है तो सभव है कि हम उसे बदल दे, किन्तु यदि आपकी इच्छा हो कि नीव का पत्थर बदल दिया जाए तो क्षमा कीजिए, इसके पालन मे हम अक्षम है। मानवीय कर्मो की चाहे कोई भी शाखा हो हम तो उसे धार्मिक दृष्टि से ही देखते है। हमारे पास यदि कुछ है तो कुरान ही है जिसके अतिरिक्त हम कुछ और नही जानते। सारी दुनिया की ओर से हमारी आखे बद है और समस्त आवाजो के सुनने से हमारे कान बहरे है। यदि देखने के लिए प्रकाश की आवश्यकता है तो विश्वास कीजिए कि हमारे पास तो 'ज्योतिपुज दीपक' द्वारा प्रदत्त एक ही प्रकाश है जिसे हटा दीजिएगा तो हम बिलकुल अधे हो जाएगे। कुरान एक ऐसी पुस्तक है जिसका अवतरण इसलिए हुआ है कि मानव को अधकार से निकाले और ज्योति की ओर ले जाये।

आप कहते हैं कि राजनैतिक वाद-विवाद को धर्म से पृथक् कर दू, किन्तु यदि अलग कर दू तो हमारे पास शेष क्या रह जाता है ? हमने तो अपने राजनैतिक विचार भी धर्म से प्राप्त किए है। वो धार्मिक रग मे ही रगे हुए नही है बल्कि धर्म द्वारा उत्पन्न हैं। हम उन्हे धर्म से कैसे अलग कर सकते है ? मेरे धर्ममत से कोई विचार कुरान के अतिरिक्त किसी स्रोत से प्राप्त किया हुआ पूर्णतया ईशनिन्दात्मक है, इससे मै राजनीति को समाविष्ट करता हूँ।

हमारे पथ में तो प्रत्येक विचार जो कुरान के अतिरिक्त अन्य किसी और शिक्षालय से प्राप्त किया गया हो, स्पष्टतया धर्म-विरोधी है और राजनीति को भी मै इसमे सम्मिलित करता हू। दु ख की बात है कि आप जैसे महानुभावो ने इस्लाम को कभी भी उस वास्तविक महानता के परिवेश मे नहीं देखा अन्यथा राजनीति के लिए न तो सरकार के द्वार पर झुकना पडता और न ही हिन्दुओ का अनुसरण करने की आवश्यकता होती। उसी से सब कुछ सीखते, जिसके द्वारा समस्त ससार को आपने सब कुछ सिखलाया था। इस्लाम मनुष्य के लिए एक व्यापक और आदर्श नियमावली लेकर आया और मानवीय कर्मो का कोई भी अश ऐसा नही है, जिसका नियम कुरान मे न हो। इस्लाम अद्वैत के अपने सिद्धात के सबध मे अत्यत कट्टर है और कभी नही चाहता कि उसकी चौखट पर झुकने वाले किसी अन्य द्वार के भिखारी बने। मुसलमानो का जीवन नीतिनिष्ठ जीवन हो अथवा ज्ञाननिष्ठ, राजनैतिक हो अथवा सामाजिक, धार्मिक हो या सासारिक, राष्ट्रीय हो अथवा प्रजा के रूप मे हो, वो हर प्रकार के जीवन के लिए एक सपूर्ण विधान अपने अदर रखता है, यदि ऐसा न होता तो वह ससार का अतिम और विश्वव्यापी धर्म न होता। वो ईश्वर का स्वर है और उसका विद्यालय है। जिसने ईश्वर के हाथ पर हाथ रख दिया तो उसे फिर किसी मनुष्य की सहायता की आवश्यकता नही।

कुरान मे बहुधा कहा गया है कि वह एक ज्योति-स्तभ है, और जब प्रकाश होता है तो हर प्रकार का अधकार गुम हो जाता है चाहे वो धार्मिक भ्रष्टता का अधकार हो, चाहे राजनैतिक तिमिर हो। "निश्चय ही, तुम्हारे पास विधाता की ओर से ज्योति-पुज और हर बात को प्रकाशित करने वाली पुस्तक आई है। विधाता इसके द्वारा शाति और सुरक्षा के मार्गो का निर्देश करता है। जो उस पर निर्भर करता है उसे विधाता प्रत्येक प्रकार के कुमार्गगमन के अधकार से निकाल कर सद्मार्गगमन के प्रकाश मे लाता है और उस मार्ग पर चलाता है जो सत्य का मार्ग है।" (८५ १५)

ससार मे कौन-सा ग्रथ है जिसने स्वय अपनी वाणी से अपने सबध मे इस प्रकार के उच्च दावे किये हो? इस आयत मे स्पष्टतया बता दिया गया है कि कुरान ज्योति है और वह यदि प्रकाश है तो समस्त मानवीय कर्मो का अधकार केवल उसी से दूर हो सकता है। फिर कहा गया है कि यह हर बात को स्पष्टतया बता देने वाली पुस्तक है और मानवीय कर्मो की कोई भी शाखा ऐसी नही है जिसका निरूपण उसके अदर न हो। इसी बात का समर्थन अन्य स्थान पर यह कहकर किया गया है कि "निश्चय ही हमने उनको ग्रथ दिया है जिसमे हमने ज्ञान का सविस्तार उल्लेख कर दिया है और जो सद्मार्गगमन का निर्देशक है और निष्ठावानो के लिए वरदान है। इसके उपरान्त पहली आयत मे कुरान को शाति एव सुरक्षा के मार्ग का पथ-प्रदर्शक बताया गया है क्योकि वह पूर्ण शिवत्व और कल्याण के मार्गो की ओर निर्देशन करता है और यदि आपके सम्मुख राजनैतिक कर्मो का भी कोई मार्ग है तो कोई कारण नहीं कि उसका कल्याणात्मक निर्देश आपको कुरान से न मिले। फिर कहा गया है कि कुरान मनुष्य को समस्त भ्रातियो के अधकार से निकाल कर सद्मार्गगमन के प्रकाश मे लाता है और हम देख रहे है कि हमारी राजनैतिक पथ-भ्रष्टता इसलिए है कि हमने कुरान को पथ-प्रदर्शक समझ कर स्वय को उस पर अर्पित नही किया अन्यथा अधकार के स्थान पर आज हमारे चारो ओर प्रकाश होता। अत मे कुरान ने कह दिया है कि वह 'अग्नेय सुपथा' पर ले जाने वाला ग्रथ है और 'आग्नेय सुपथा' की परिभाषा कुरान की शब्दावली मे इतना व्यापक अर्थ रखती है कि उसके अदर समस्त ससार को व्याप्त समझिए।

खेद है कि सविस्तार निरूपण का यहा अवसर नही है। परन्तु इस बात की चर्चा ने सैकडो आयतो का मुझे स्मरण करा दिया है। एक स्थान पर कहा गया है

"ऐ पैगबर ! मैने आपको एक पुस्तक का वरदान दिया है जो प्रत्येक बात को स्पष्टतया बता देने वाली है और जो सद्मार्गगमन की निर्देशिका है तथा निष्ठावानो के लिए वरदान है।"

सुर यूसुफ की अतिम आयत में कहा गया है

"कुरान मे कोई मनगढत बात नही है बल्कि जो सच्चाइया उसके पूर्व विद्यमान थी उनको वह प्रमाणित करता है। और इसमे निष्ठावानो के लिए हर बात का विस्तृत विवरण है तथा यह पथ-प्रदर्शक और ईश्वरीय वरदान है।"

एक अन्य स्थान पर कहा गया है

"मनुष्यों को समझाने के लिए इस कुरान में प्रत्येक प्रकार के दृष्टात प्रस्तुत कर दिए गए है ताकि लोग इससे लाभान्वित हो सके।"

इन आयतो मे कुरान की अवधारणा नितात स्पष्ट है। वह प्रत्येक प्रकार की शिक्षा के लिए स्वय को पूर्वशिक्षकों की बातो को प्रमाणित करने वाला बताता है। फिर इसका ज्ञान स्पष्ट और भ्रमरहित है, यदि उस पर विवेक द्वारा विचार किया जाए

"समस्त स्तुतिया उस ईश्वर के लिए है जिसने अपने भक्तो पर कुरान उतारा और उसमे किसी प्रकार की दुरूहता न रखी।' (१८ १)

अत यह कैसे सभव है कि कुरान के अनुयायी अपने जीवन के आवश्यक विभाग अर्थात् राजनैनिक कर्मो के लिए अन्य स्रोतो का आश्रय ले जब कि स्वय कुरान उनके पास एक आदेश और एक प्रकट पथ-प्रदर्शक के रूप मे उपस्थित है।

"और हर वस्तु को हमने इस स्पष्टीकृत ग्रथ (कुरान) मे एकत्रित कर दिया है।"

दूसरे स्थान पर कुरान को समस्त समस्याओ के निवारण का अतिम वाक्य कहा गया है

"नि सदेह यह कुरान एक अतिम वाक्य है जिसमे तमाम मतभेदो और कर्मो के लिए अन्य कोई निरर्थक और व्यर्थ बात नही है।" (८७ १३)

मानव के समस्त दु ख केवल इसी भ्रम का परिणाम है कि उन्होने ईश्वरीय शिक्षालय को छोड दिया और समझने लगे कि केवल पूजा-कथा-व्रत से सबधित प्रश्नो पर कुरान मे निर्देशन प्राप्त करने की आवश्यकता है अन्यथा इनके शैक्षणिक, सामाजिक और राजनीतिक व्यापारो से उसे क्या लेना-देना ? परन्तु वो जितना कुरान से दूर होते गए उतना ही समस्त ससार इनसे दूर होता गया तथा जिस मार्ग मे उन्होने कदम उठाया उन्हे पथ-भ्रष्टता के अधकार का सामना करना पडा। इस स्थिति की भविष्यवाणी पहले ही कर दी गई थी

"प्रलय के दिन पैगबर निवेदन करेगे कि ऐ ईश्वर मेरे पथ के अनुयायियो ने इस कुरान **को निरर्थक समझा और इस पर वह नहीं चले।"** (२५ ३०)

मेरे विचार मे कुरान के अवतरण के समय मक्का के बहुदेववादियो ने, जिन्होने कुरान के सदेश को नही सुनना चाहा और उसकी अवहेलना की, इतना बडा पाप नहीं किया जितना बडा पाप दुनिया भर के मुसलमान शताब्दियो से करते आ रहे है जिसमे धर्मसत्ता के विधायक और **सासारिक सिहासन पर आरूढ व्यक्ति, दोनो सम्मिलित है। मक्का के बहुदेववादी यदि कुरान का** पाठ किए जाने के समय कानो मे उगलिया डाल लेते थे या काबे के अदर हुल्लड मचाते और तालिया पीटते थे कि कुरान का सदेश कोई सुन न सके तो आज स्वय मुसलमान कानो के स्थान पर हृदयो को बद किये हुए हैं और हुल्लड मचाने के स्थान पर मौन धारण किए हुए है। परन्तु

मायाजाल के अधीन होकर उन्होने ऐसा हुल्लड मचा दिया है कि ईश्वर का स्वर किसी के कान मे नही पडता। कुरान मे कहा गया है कि

"ऐ पैगम्बर 'जिस समय तुम कुरान का पाठ करते हो, हम तुममे और उन व्यक्तियो के बीच मे जिन्हे कयामत के दिन पर विश्वास नही है, एक आवरण डाल देते है तथा उनके हृदयो पर लिहाफ ओढा देते हैं ताकि वे कुरान न समझ सके और उनके कानो के लिए ऐसी स्थिति उत्पन्न कर देते है ताकि वे सुन न सके।" (१७ ४६)

अत यदि आपकी चिता का कारण यह है तो खेद है कि हम इसे दूर नही कर सकते। यदि हमको मविस्तार अपने उद्देश्यो को प्रस्तुत करने का अवकाश नही मिला तो कोई बात नही है, वो तो अत्यत सक्षिप्त शब्दो मे भी आज सुनाये जा सकते है। हम सक्षेप मे निवेदन करते है कि 'अल-हिलाल' का वास्तविक उद्देश्य इसके अतिरिक्त कुछ और नही है कि वह मुसलमानो को यह सदेश पहुचाये कि उनके समस्त कर्म और उनकी समस्त निष्ठाए ईश्वर द्वारा प्रदत्त **एकमात्र पुस्तक पर आधारित हो और उनका आचरण पैगम्बर के आचरणो के अनुकूल हो।** 'अल-हिलाल' हर क्षेत्र मे मुसलमानो को मुसलमान देखना चाहता है, चाहे वह क्षेत्र शिक्षा का हो या सामाजिक और राजनैतिक समस्याओ का हो। 'अल-हिलाल' का सदेश केवल यही है कि "उस ईश्वरीय पुस्तक की ओर आओ, जिसके प्रति हम और तुम दोनो समानरूपेण श्रद्धा रखते है और जिसे सिद्धानत कोई भी अस्वीकार नही करता।" (३ ५७) परन्तु आचरण की स्थिति यह है कि "इन्होने मुख से तो कह दिया कि हम निष्ठावान बन गये किंतु उनके हृदयो मे निष्ठा नही है।" (५ ४५)

ईश्वर तुमको गर्वोन्नत करता है तो फिर तुम कुरान से विमुख होकर मनुष्यो के सम्मुख निरादरपूर्ण सर क्यो झुकाते हो ? इसके अतिरिक्त 'अल-हिलाल' के सदेश का अन्य कोई उद्देश्य नही है

'और इससे अधिक कल्याणकारी कौन-सी बात हो सकती थी जो ईश्वर की ओर तुम्हे बुलाये और शुद्ध आचरण का आह्वान करे और कहे कि मै मुसलमान हू।" (३२ ३१)

आपका दूसरा प्रश्न यह है कि हिन्दोस्तान मे तीन राजनैतिक विचारधाराए विद्यमान है। 'अल-हिलाल' कौम को किस मार्ग पर चलाना चाहता है ? फिर आपने उनको गिना भी दिया है, किन्तु खेद है कि आप एक चौथे मार्ग को नितात विस्मृत कर गये। ये तीन मार्ग तो आज आपके सम्मुख है। परन्तु चौथा मार्ग तो वह पुरातन मार्ग है जिस पर चलकर हजारो व्यक्ति ध्येय की पूर्ति कर चुके है। आकाश और धरती के स्रष्टा ने जिस समय इन मनुष्यों को देखने के लिए आखे प्रदान की उसी समय उनके सम्मुख यह मार्ग भी खोल दिया। आदम इस पर चले और ओलो की वृष्टि ने नूह मे इसका सदेश सुनाया, इब्राहिम ने इसी की लीको को सुदृढ बनाने के लिए अग्निकुण्ड मे प्रवेश किया और इस्माइल ने इसके लिए ईटे चुनी, **यूसुफ** से मिस्र के बदीगृह मे एक साथी ने पूछा तो उन्होने यही मार्ग उसे दिखाया, और मूसा जब **सिना** की घाटी मे ज्योति के लिए उत्कठित हुए तो इसी मार्ग का प्रकाश उन्हे एक हरे-भरे वृक्ष के रूप मे दिखाई दिया, **गलीली** का इस्राइली प्रचारक जब यरोशलम के निकट एक पहाड पर चढा तो उसकी दृष्टि इसी मार्ग पर थी और जब ईश्वरीय ज्योति फारान की पहाडी की चोटियो पर दीप्तिमान हुई तो वही मार्ग था जिसकी ओर उसने दुनिया को बुलाया

"ईश्वर ने तुम्हारे पथ का वही मार्ग निश्चित किया है जिस पर चलने का उसने नूह को आदेश दिया था, और ऐ पैगम्बर, वही मार्ग तुम्हारे लिए अवतरित किया गया है तथा इसी का

हमने इब्राहिम, मूसा, तथा ईसा को आदेश दिया था कि इस पथ के मार्ग को सुस्थिर रखे और उसे छिन्न-भिन्न न होने दे।"

यही वह मार्ग है जिसके सबध मे सत्यभाषी यूसुफ ने मिस्र के बदीगृह मे यह कह कर अपना प्रवचन समाप्त किया था

"यही सीधा मार्ग है किन्तु बहुत ऐसे हैं जो नही जानते।" (१२ ४०)

यही वह मार्ग है जिसके सबध मे इस्लाम के प्रवर्तक को यह कहने का आदेश मिला था

"मेरा मार्ग यह है, तुम सबको ईश्वर की ओर बुलाता हू, मैं और मेरे दो साथी मेरे अनुयायी है। सभी बुद्धि और विवेक-सहित इसी धर्म-पथ के अनुगामी है।" (१२ १०८)

धन्य भाग्य कि हम 'अनुयायियो' की श्रेणी मे है और इसीलिए आपके द्वारा निर्दिष्ट उन तीनो मानवीय मार्गो से कोई सबध नही रखते, बल्कि चौथे ईश्वरीय मार्ग की ओर बुलाते है। यह कुरान का बताया हुआ 'आग्नेय सुपथा' है और हमारा विश्वास है कि जो मुसलमान अपने किसी कर्म तथा निष्ठा के लिए भी इस पुस्तक के अतिरिक्त किसी अन्य दल या अन्य शिक्षा को अपना पथप्रदर्शक बनाए वह मुस्लिम नही है क्योकि वह कुरान के विकल्प को आश्रय देता है, जो उस कोटि का बहुदेववाद है जैसा कि ईश्वर के विकल्पो पर विश्वास करना।

मुसलमानों की अपनी राजनैतिक विचारधारा

आप पूछते है कि "आजकल हिन्दुओ के जो राजनैतिक दल विद्यमान है, हम उनमे से किसके साथ है?" निवेदन है कि हम किसी के साथ नही है बल्कि केवल ईश्वर के साथ हैं। इस्लाम की गरिमा इस बात की अनुमति नही देती कि उसके अनुयायियो को अपनी राजनैतिक नीति के निर्धारण के लिए हिन्दुओ का अनुसरण करना पडे। मुसलमानो के लिए इससे बढकर लज्जाजनक बात नही हो सकती कि वह दूसरो की राजनैतिक अवधारणाओ के सम्मुख झुककर अपना मार्ग प्रशस्त करे। उनको किसी दल मे सम्मिलित होने की आवश्यकता नही है। वह तो स्वय दुनिया को अपने दल मे सम्मिलित करने वाले और अपने मार्ग पर चलाने वाले है और शताब्दियो तक चला चुके है। वे ईश्वर के सम्मुख खडे हो जाए तो सारी दुनिया उनके आगे खडी हो जायगी। उनका अपना मार्ग विद्यमान है, मार्ग की खोज मे फिर वह क्यो दूसरो के द्वारो पर भटकते फिरे? ईश्वर उनको भालोन्नत करता है तो वे क्यो अपने सिरो को झुकाते हैं? वह ईश्वर का दल है और ईश्वर की मर्यादा इस बात को सहन नहीं कर सकती कि उसकी चौखट पर झुकने वालो के सिर दूसरो के सम्मुख झुके।

यह मार्ग किस ओर ले जाता है?

'अल-हिलाल' का सदेश जीवन के अन्य क्षेत्रो के समान ही राजनीति के क्षेत्र मे भी यही है कि सरकार के प्रति श्रद्धावान मत बनो और न ही हिन्दुओ की अवधारणाओ को आत्मसात करो। केवल 'आग्नेय सुपथा' पर चलो जिसका मार्गदर्शन इस्लाम ने किया है।

१ इस्लाम का मूलभूत सिद्धात अद्वैत है। वह सिखलाता है कि केवल परमसत्ता के प्रति ही आस्था रखो और उसी के आगे झुको। उसी से सहायता की याचना करनी चाहिए और उसकी सामर्थ्य पर विश्वास करना चाहिए। जिस प्रकार ईश्वर को तत्त्व रूप मे एक मानना अद्वैत है, उसी प्रकार उसके गुणो मे किसी दूसरे अस्तित्व को सम्मिलित न करना अद्वैत का अश है।

अत ईश्वर के अतिरिक्त कोई नहीं, जिसका आदेश अतिम हो, कोई नही जो नमन करने के योग्य हो, और उस बात का अधिकारी हो जिसके सम्मुख अपनी हीनता को प्रदर्शित किया जाए, कोई नही जिसकी सत्ता और महत्ता के ऊपर प्रश्नचिह्न लगाने की किसी को क्षमता प्राप्त हो और कोई नही जो डरने और भयभीत होने के योग्य हो।

२ ईश्वर ने मुसलमानो को **खैर-उल-उम्मम** (मानवमात्र का कल्याणकर्ता) बनाया है और उन्हे ससार मे अपना प्रतिनिधि नियुक्त किया है ,उन्हे सत्तासचालन का वरदान दिया है। अत प्रत्येक मुसलमान को चाहिए कि वह अपने महत्त्व को महसूस करे और नैराश्य, साहसहीनता और भय के स्थान पर अपने अदर विचारो की उच्चता, आत्मसम्मान, शक्ति और दृढता उत्पन्न करे।

३ ईश्वर ने मुसलमानो को न्याय की एक शक्ति घोषित किया है और कहा है कि उनके समस्त कार्य न्याय पर आधारित और सतुलित होगे। अत प्रत्येक अवसर पर मुसलमानो को मध्यम मार्ग का अनुगमन करना चाहिए और सतुलन को बनाये रखना चाहिए।

४ मुसलमान ससार मे शाति के सदेशवाहक है। उन्होने तलवार भी उठाई है तो शाति के हित मे। अत लडाई-झगडा यदि दूसरो के लिए अनुचित और अपराध है तो उनके लिए महापाप है और ईश्वरीय आदेशो का उल्लघन है। ससार मे जिन समुदायो ने प्रपच का मार्ग अपनाया वह ईश्वरीय प्रकोप से बच न सके।

५ कुरान उनको सिखलाता है कि "एक-दूसरे की सहायता करो, अच्छे कार्यो मे ,और पापो से बचने मे, पापाचार और दगो के लिए नही।" वह दुनिया मे इस बात के लिए ईश्वर के प्रति उत्तरदायी है कि अच्छाई की रक्षा करे और बुराई को रोके। अत हर अच्छी बात करने वाले के सहायक हो, चाहे वह सरकार हो या कोई अन्य समुदाय।

६ कुरान सासारिक व्यवस्था के लिए आवश्यक समझता है कि व्यक्तिगत सत्ता और नियत्रण का विरोध हो। उसकी शिक्षा यह है कि ईश्वर के अतिरिक्त कोई नही है जो मनुष्यो को केवल अपने मतानुसार और इच्छानुसार बनाये हुए आदेशो के पालन पर विवश करने का अधिकारी हो।

"यह अधिकार किसी भी व्यक्ति को प्राप्त नही है जिसे ईश्वर ने पुस्तक, बुद्धि, सहिता और रसूल का वरदान दिया हो कि वह लोगो से कहे कि ईश्वर से विमुख होकर मेरी वदना करो।"

किसी भी सासारिक सत्ता या सरकार को वह अधिकार और सामर्थ्य प्राप्त नही हो सकता जो पैगम्बरो को भी नही दिया गया। ईश्वर ने बताया है कि उसका अपना विवेक समुदायो और दलो के विवेक मे निहित है। उसने कहा है कि "जन-समूह को उसका सरक्षण प्राप्त होता है।" अत उसके निकट वही सरकार औचित्यपूर्ण हो सकती है जो वैयक्तिक न हो और किसी समुदाय और जाति के हाथ मे हो। इसी आधार पर उसने विचार-विमर्श करने का आदेश दिया है

'उनको आदेश दिया गया कि पारस्परिक विचार-विमर्श करके समस्त कार्य सपन्न करे। ऐ पैगम्बर !समस्त कार्य-व्यापारो को विचार-विमर्श द्वारा सपन्न किया करो।' अत मुसलमानो का कर्तव्य होना चाहिए कि वह स्वतत्रता प्राप्ति के लिए प्रयत्न करे और ससदीय प्रणाली की सरकार उन्हे जब तक न मिल जाय, अपने धार्मिक सिद्धातो के पक्ष मे सघर्ष करे।

उपरोक्त सिद्धातो के आधार पर हम अपनी राजनीतिक नीति तैयार कर सकते है और

इसके लिए हमे न तो मध्यमार्गी हिन्दुओ की चाटूकारी करने की आवश्यकता है और न ही उग्रवादी हिन्दुओ की। यदि हम ऐसा करेगे तो एक मध्यमार्गी किन्तु निर्भीक समुदाय होगे और हमसे अन्य किसी समुदाय को हानि पहुँचने का भय न होगा। हम अपने नितात धार्मिक सिद्धातो के अनुरूप देश की एकता और स्वतत्रता के लिए प्रयत्न करेगे, किन्तु हमारे प्रयत्न लडाई-झगडे, उपद्रव और विद्रोह से नितात मुक्त होगे। कुरान ने हमको सिखलाया है कि 'धरती पर शाति स्थापित हो जाने के पश्चात् लडाई-झगडे मत फैलाओ।''

बरतानिया सरकार ने निश्चय ही हमको शाति दी है और इस शाति के वातावरण मे हम स्वतत्रता से अपने धार्मिक कर्तव्यो का निर्वाह करते है। अत हमारा धर्म हो जाता है कि विद्रोहियो के उत्पात और कानून के अवज्ञाकारियो से स्वय को दूर रखे, क्योकि यह बात धरती पर शाति की स्थापना के पश्चात् उसे उपद्रवग्रस्त बनाना होगा और निश्चय ही यह ईश्वर के प्रति अपराध और पाप है। अत जो लोग देश मे अशाति फैलाते है, चाहे वह हिन्दू अराजकतावादी हो या अपराधी वृत्ति के दल हो, हमारा कर्तव्य होना चाहिए कि उनसे दूर रहे और हो सके तो उन्हे सुधारने का प्रयास करे।

परन्तु सरकार को भी याद रखना चाहिए कि यदि हम सच्चे मुसलमान हो जाए तो जितनी मात्रा मे अपने लिए लाभदायक होगे, उतना ही सरकार के लिए और उतना ही अपने पडोसियो के लिए भी। इस बात को न भूलना चाहिए कि यदि हम सच्चे मुसलमान होगे तो हमारे हाथ मे कुरान होगा और जिस हाथ पर कुरान का अकुश होगा, वह बम का गोला या रिवाल्वर नही पकड सकता। परन्तु यह भी समझ लेना चाहिए कि इस्लाम ने हमे स्वतत्रता प्रदान करमे और उसे प्राप्त करने, दोनो बातो की शिक्षा दी है। हम जब सत्ताधारी थे तो हमने स्वतत्रता प्रदान की थी और अब हम पराधीन है तो वही बात माग रहे हैं। हमारा विश्वास है कि ईश्वर की इच्छा यही है कि जातियो और देशो को आप अपने ऊपर राज करने के लिए स्वतत्र छोड दिया जाय और योरोप स्वय इसी सिद्धात को अपनाकर स्वतत्र हो चुका है। हम इगलिशतान से आज उसी बात के इच्छुक है जिसके लिए वह स्वय कल तक विचलित था। निश्चय ही यदि इस्लाम की बतलाई हुई राजनैतिक पद्धति हमारे सम्मुख होगी तो हम एक शक्तिशाली समूह होगे, निर्भीक और साहसी होगे क्योकि हम ईश्वर के अतिरिक्त किसी से नही डरेगे। हमारा मार्ग सुस्पष्ट होगा और हम सशयग्रस्त नही होगे। इसीलिए हमारी कार्यनीति भी एक होगी और उसकी अभिव्यक्ति की भाषा भी एक होगी। हम आक्रोश मे भी आयेगे कितु हमारा आक्रोश और हमारा आदोलन कानून और शाति की परिधि मे होगा क्योकि 'ईश्वर ने कहा है कि उत्पात मत करो।' अब तक मुसलमानो के जो नेता समुदाय को चुप और असावधान रखने की चेष्टा करते रहे है वे अदर ही अदर फोडे को पकाना और राख के अदर चिगारियो को दबाना चाहते थे। परन्तु यदि हम इस सत्य मार्ग पर चले तो घाव हमारे हृदय पर नही होगे बल्कि व्यक्त रूप से हमारे मुह पर होगे। हमारी इच्छाओ-आकाक्षाओ और शिकायतो के फोडे अदर पक़ कर शाति के शरीर को हानि नही पहुचायेगे, बल्कि फूटकर बह जायेगे। हम निश्चय ही शोर मचायेगे कितु फिर मन मे मलिनता शेष न रहेगी। हम चीत्कार अवश्य करेगे कितु अदर ही अदर शिकायतो की अग्नि प्रज्वलित न होगी। अत सरकार की भी नीति यही होनी चाहिए कि हमे मुसलमान बनने के लिए छोड दे क्योकि मुसलमान होने के पश्चात् हम अपने लिए तथा समस्त ससार के लिए समानतया लाभदायक हो सकते हैं।

यही 'अल-हिलाल' की नीति है और इसी की ओर हम मुसनमानो को बुलाना चाहते हैं।

यह नीति किसी मानवीय मस्तिष्क की उपज नही है और न किसी मानवीय समुदाय के आचरण का अनुसरण है, बल्कि उस जगपालनहार ने यह मार्ग हमारे सम्मुख खोल दिया है जिसने पुस्तके, विवेक, न्याय और औचित्य का वरदान देकर धरती पर पैगम्बरों को भेजा था। उसकी यदि अनुकम्पा हुई तो उसके द्वारा प्रदत्त जीवन को इस सत्याह्वान मे समाप्त कर देना चाहते हैं। न किसी से युद्ध है, न किसी से द्वन्द्व, न पाने की इच्छा न सराहना की आशा। इस मार्ग के सबध मे जो आदेश पैगम्बरों को दिया गया था वह हमारे सम्मुख था "(ऐ पैगम्बर ! तुम उनको बुलाओ और जो आदेश दिया गया है उस पर सुदृढ रहो, उनकी इच्छाओ पर न चलो और उनसे कह दो कि समस्त अवतरित पुस्तको पर मेरी आस्था है और मुझको आदेश मिला है कि न्याय करू। वही ईश्वर हमारा और तुम्हारा दोनो का पालनहार है, हमारा आचरण हमारे लिए और तुम्हारा आचरण तुम्हारे लिए, झगडने की कोई बात नहीं। ईश्वर ने हम सब को एक स्थान पर एकत्रित कर दिया और हम सबको उसी की ओर लौट कर जाना है।)" (४२ १४)

मुस्लिम लीग यदि मुसलमानो का राजनैतिक नेतृत्व करना चाहती है तो उसको यही मार्ग अपनाना चाहिए।

स्वतंत्रता के लिए धर्मयुद्ध

अल-जेहाद फी सबील-अल-हुर्रियत

अलहिलाल

"ईश्वर के अतिरिक्त किसी से भी भयभीत न हो यदि तुम मोमीन हो।"

(कुरान) १७ १३

स्वतंत्रता के लिए धर्मयुद्ध *

भारतीय स्वतंत्रता का इतिहास जिसका लेखन अभी शेष है

जो घटना होनी है वह अवरोधोत्पादक तत्त्वो के षड्यत्र के होते हुए भी घट कर रहेगी। निश्चय ही वह दिन आएगा जब राजनैतिक क्राति सम्पूर्ण भारत मे उत्पन्न होकर रहेगी। पराधीनता की जजीरे जो मातृभूमि के पैरो मे डाल दी गई हैं वह २०वी शताब्दी की स्वतत्रता की प्रचण्ड वायु के हथौडे से टूट जाएगी, जो कुछ होना है वह होकर रहेगा। कल्पना कीजिए कि उस समय जब भारत का इतिहास लिखा जाएगा और आप जानते है कि उसमे हिन्दोस्तान के सात करोड जन-समुदाय के सबध मे क्या लिखा जाएगा?

उसमे लिखा जाएगा कि एक भाग्यहीन और दुर्भाग्यग्रस्त समुदाय था जिसने सदैव देश की प्रगति मे बाधा उत्पन्न की और उसके विकास मे सर्वदा अवरोधक सिद्ध हुआ। यह लोग देश की स्वतत्रता के मार्ग मे रुकावट थे और सत्तारूढ बाजीगरो के हाथ का खिलौना थे, विदेशियो के हाथ की कठपुतली थे और भारत के ललाट पर कलक थे। वह सरकार के हाथ के ऐसे हथियार थे जिसके द्वारा उसने देश की आशाओ और आकाक्षाओ पर कुठाराघात किया।

इतिहास मे लिखा जाएगा कि यह ऐसा समुदाय था जिसकी स्थिति दयनीय थी जैसे उस पर जादू कर दिया गया था तथा कुछ महामना महात्माधारी व्यक्तियो के जादूई मत्रो से यह समुदाय पशु बन गया था। इसकी नकेल पकडकर इसके स्वामी चलते थे और यह उनके सकेत पर नाचता था, यह वह जन्तु था जो अपनी दास्यावस्था से प्रसन्न था और जो मानवीय इच्छाशक्ति, चेतना और भावना को व्यक्त नही कर सकता था। सक्षेप मे इनमे किन्ही मानवीय गुणो का लेशमात्र भी चिह्न दिखाई नही पडता था। इन्होने न अपनी बुद्धि का उपयोग किया और न ही कोई विरोध प्रकट किया। यह अपने पैरो पर चलने या अपने हाथ उठाने मे असमर्थ थे। यह इन्द्रजाल मे फसे ऐसे लोग थे जिनकी चेतना जादूगर की इच्छाशक्ति पर निर्भर होती है। उनका अस्तित्व गतिहीन था, वैसे वह ऐसे वृक्ष के समान थे जो हवा के हल्के से झोके से गिरने को तैयार खडा होता है, वह ऐसी चट्टान थे जो केवल हाथो के छू जाने से ही हिल सकती थी, वह धरती के वक्षस्थल पर बोझ थे, वह मानवता के ललाट पर दुर्भाग्य की रेखा थे।

इस्लाम के पतनावसाद का पूर्ण दृश्य

इतिहास के पृष्ठो पर लिखा जाएगा कि यह उन लोगो की दुर्दशा थी जो स्वय को

---

* यह लेख अल-हिलाल के खण्ड १ अक २३, १६ दिसम्बर १९१२ मे प्रकाशित हुआ। इस लेख के एक निकटवर्ती पृष्ठ पर एक चित्र छपा है जिसमें ईसाइयो क धार्मिक युद्ध मे विजयी होने के लिए बुलगारिया के सम्राट को पोप द्वारा सम्मानित करन हुए दिखाया गया है। इमके नीचे मशीनगन का चित्र है जिसके द्वारा बुलगारियाई सेना के सामन क मार्चे को तुर्को न उडा दिया था। इन दोनो चित्रो और इस लेख का पारस्परिक सबध स्पष्ट है।

मुसलमान कहते थे, जिनका चयन ससार की थाती को ग्रहण करने के लिए किया गया था, जो पृथ्वी पर परमसत्ता के प्रतिनिधि थे तथा जो मानवीय सम्मान और उसकी भव्यता के इतिहास के रक्षक थे।

यह लोग दुनिया मे ईश्वर की सृष्टि को अत्याचार और पराधीनता से मुक्त कराने के लिए भेजे गए थे, जिनका अवतरण दासता की जजीरे काटने के लिए हुआ था और इसलिए नही कि वह इन जजीरो को स्वय अपने पाव मे डाल ले। वे आए थे उन बेडियो को तोडने के लिए जिससे शैतानी व्यक्तियो ने (इस्लामी परिभाषा मे ईश्वर के अतिरिक्त किसी अन्य की श्रेष्ठता की स्वीकृति शैतानी काम है) मनुष्यो को जकड रखा था, इसलिए नही कि उन्हे वे स्वय अपनी ग्रीवा मे डाल ले। इसका अपवाद केवल एक श्रृखला थी और वह थी परमसत्ता के सम्मुख नमन की जजीर। उन्हे ईश्वर का प्रतिनिधि नियुक्त किया गया था ताकि वह धरती पर राज कर सके, इसलिए नही कि वह स्वय अपनी दासता के प्रति उदासीन हो जाए। वह इस ससार मे भेजे गए थे ताकि जो उनके पावो पर गिर जाए उन्हे ऊपर उठा सके, इसलिए नहीं कि वह स्वय दासता के असम्मानजनक पथ मे विलोडित हो जाए और कीचड मे धसते जाए। वे ऐसे पथ के अनुयायी थे जिन्हे मानवता के सम्मुख इसलिए प्रस्तुत किया गया ताकि वह दूसरो पर राज कर सके, इसलिए नही कि उस पर दूसरे राज करे।

आह ! यह मुसलमान कौन थे ? मानवीय श्रेष्ठ गुणो मे से कोई ऐसा है जो उन अत्यत प्राजल और पुनीत शब्दो मे समाहित न हो जो ईश्वर की ओर से कहे गए थे ? वह मुसलमान थे और इसीलिए उनका कर्तव्य था कि वह हिन्दोस्तान मे वह सब करते जो अन्ततोगत्वा दूसरो ने किया। वह मुसलमान थे, इसलिए हिन्दोस्तान की स्वतत्रता और उन्नति की पताका उनके हाथो मे होनी चाहिए थी, अन्य समस्त समुदायो को उनके पदचिह्नो पर चलना चाहिए था क्योकि वह इस्लाम के अनुयायी थे और इस्लाम का अर्थ है अग्रगामी होना पिछलग्गू होना नही। इस्लाम की शक्ति ऐसी है कि उसकी महानता को स्वीकार करके दूसरे भी भौतिक और आध्यात्मिक मुक्ति प्राप्त करते है। इस्लाम किसी सासारिक शक्ति के सम्मुख नतमस्तक नही होता।

मस्तिष्क चिन्तन के लिए है, निद्रा-निमग्न होने के लिए नही। आप जो सुप्तावस्था को जागृति और मृत्यु को जीवन समझते हैं, मुझे ईश्वर को साक्षी बनाकर बताए कि आपके सबध मे यदि यह सब इतिहास के पन्नो पर नही लिखा जाएगा तो आगामी वर्षो मे आपके सबध में क्या लिखा जाएगा ? विश्वास कीजिए कि ये पक्तिया लिखते समय मेरा हृदय दु खी है, मेरी आत्मा अशात है, मेरे हृदय के धावो से रक्त उबल-उबल कर बह रहा है और मेरी लेखनी मेरी उत्तेजना के अकन मे असमर्थ है। मैं क्या देख रहा हू ? आप सब भी आखे रखते है किन्तु देख नही सकते ? वह कौन-सी आवाज है जो मै सुनता हू ? आपके भी कान है लेकिन क्या आप सुन नहीं सकते ? आप ! मेरे परिजनो ! मैं आपसे क्या कहू ? ईश्वर के नाम पर मै पूछता हू क्या आप सद्धर्म के अनुयायी नही है, इस्लाम के नाम से आप क्या सम्मानित नही हुए है और आपको ईश्वर ने अपना विश्वासपात्र नहीं बनाया है। यदि इन बातो के प्रति आप निष्ठावान है तो आपको जानना चाहिए कि आपका निर्माण निर्भीक, साहसी, स्वतत्र, और स्वराज-प्रेमी होने के लिए हुआ है, आप केवल इसलिए नही बनाए गए है कि स्वय को स्वाधीन करे बल्कि आप इसलिए बनाए गए हैं कि दूसरो को भी दासता के बधन से मुक्त करे। मै इससे कुछ आगे की बात कहता हू और सशक्त भाषा मे कहता हू कि आपका निर्माण इसलिए हुआ है कि आप सत्य के हेतु अपना जीवन बलिदान करने के लिए तत्पर रहे। फिर ऐसा क्यो है कि यह समस्त गुण

मुझे दूसरो मे दृष्टिगोचर होते है, किन्तु दुर्भाग्यग्रस्त लोगो ! तुम मे नही है ? **कैसी विचित्र और आश्चर्यजनक घटना है।**

भारतीय इतिहास का एक विशिष्ट अध्याय

आपको यदि विश्वास है कि भारतीय इतिहास मे आपके सबध मे एक यशपूर्ण अध्याय होगा तो आइये इसमे क्या लिखा होगा उसकी भविष्यवाणी मै कर दू और आपको पढकर सुना दू। निश्चय ही किसी के हाथ मे जब इस इतिहास का अध्याय आएगा तो आप जानते है कि **इसमे क्या लिखा होगा ? उसमे लिखा होगा कि भारत जब प्रगति और स्वतत्रता के मार्ग पर** अग्रसर हुआ तो हिन्दुओ ने अपना जीवन बलिदान करके उसके पथ को प्रशस्त किया। परन्तु जब रणक्षेत्र मे दुदुभी बजी तो मुसलमानो ने स्वय को गुफाओ मे छुपा लिया। हिन्दुओ ने उन्हे **पुकारा लेकिन उन्होने अपने होठ सी लिए। देश अन्यायपूर्ण कानूनो के नीचे पिस रहा था तो यह** हिन्दू थे जिन्होने सघर्ष का उद्‌घोष किया, मुसलमान न केवल इस सघर्ष मे दूर रहे बल्कि चीखने लगे कि अन्याय के विरुद्ध सघर्षरत सभी लोग बागी है।

भारतीय दमन की कथा

इस देश की अर्थव्यवस्था कृषिप्रधान है। इसके कृषक वर्ग को नष्ट किया जा रहा था, इसके ससाधनो को इग्लैण्ड ले जाया जा रहा था और शीघ्र ही कच्चे माल की बढती हुई माग के फलस्वरूप इसकी अर्थव्यवस्था को छिन्न-भिन्न कर दिया गया था। रेल व्यवस्था के विस्तार के लिए अग्रेजी कम्पनियो को ठेके दिए गए थे ताकि वह और अधिक धन-सम्पत्ति हडप कर सके। देश के कृषि उत्पादन को बढाने के लिए सिचाई व्यवस्था को धन उपलब्ध नही था। हमारी वफादारी की प्रशसा की जाती थी किन्तु हथियारो को छूने की अनुमति हमे नही थी क्योकि हमे अत्यत सदिग्ध प्राणी समझा जाता है। देश की समस्त धन-सम्पत्ति लाल कालर वाले ७० हजार सेनानियो को उत्तम भोजन खिलाने के लिए लुटाई जा रही थी, भूखे मर रहे काले,लोगो को शिक्षा और स्वास्थ्य की सुविधाओ से वचित कर दिया गया था। नमक तक पर कर लगा दिया गया था, शिक्षा केवल सम्पत्ति और घर-बार बेच करके ही प्राप्त की जा सकती थी। महारानी विक्टोरिया जब साम्राज्ञी बनी तब उन्होने सुदर शब्दो मे वादा किया कि राजा और प्रजा के बीच किसी भेदभाव का प्रश्न नही उठेगा और जो सुअवसर एक को प्राप्त होगा उसी के अधिकारी सब होगे। परन्तु जब उनके शब्दो पर विश्वास करके हम आगे बढे तो हमने अपने लिए सारे द्वार बद पाये और प्रत्येक अग्रेज राजा और प्रजा के बीच के भेदभाव के प्रति जागरूक हो उठा।

यह वह परिस्थितिया थी जिनका देश को सामना करना पड रहा था। हिन्दू विरोध प्रकट करने के लिए उठ खडे हुए और दमन के विरुद्ध सघर्ष मे अपनी समस्त शक्ति उन्होने समर्पित कर दी। परन्तु ठीक उसी समय मुसलमानो ने न केवल अपने हाथ-पाव तोड लिए बल्कि उन्होने चाहा कि जिसके हाथ-पैर सुरक्षित हो उसको भी विकलाग बना दे। उस समय जब हिन्दू देश की आजादी की मशाल जला रहे थे तो मुसलमान उपेक्षाभाव से शिक्षा के शव के चारो ओर घेरा बनाए बैठे थे। किसी न 'अभी समय नही आया'' का भ्रामक मत्र फूक दिया था और वह पूर्णतया इसके वशीभूत थे। 'सहस्र-रात्रि' नामक अरबी ग्रथ के किसी जिन्न ने अपने मत्र द्वारा उन्हे पाषाण बना दिया था। पाषाण की यह चट्टाने देश की उन्नति के मार्ग मे बाधक थी।

मुसलमानों की राष्ट्रीयता का लेखा-जोखा

भावी इतिहासकार जब घटनाक्रम का अकन करेगा तो अततोगत्वा वह लिखेगा कि जो कुछ होना था वह होकर रहा। बीसवी शताब्दी मे कोई भी देश पराधीन नही रह सकता था और कोई रहा भी नही। अग्रेजी सरकार का ढाचा सवैधानिक था। यह चगेज खा का स्वेच्छाचारी राज नही था। इसलिए अग्रेजी सरकार ने अपनी भूमिका निभाई और भारत स्वतत्र हो गया। परन्तु दुनिया याद रखेगी कि घटनाचक्र के इस परिवर्तन मे मुसलमानो की कोई भागीदारी नही, जो कुछ घटा उसका मान-सम्मान किसी भी समुदाय को क्यो न मिले किन्तु मुसलमानो को नही मिलेगा। मुसलमानो ने सदैव स्वतत्रता की तुलना मे पराधीनता को और मान-मर्यादा तथा गौरव-गरिमा की तुलना मे धूल-धूसरित होने को प्राथमिकता दी। भारत की राजनैतिक स्वतत्रता निश्चय ही मानवीय गरिमा की स्मारिका है। परन्तु इसके निर्माण मे मुसलमानो का कोई हाथ नही है। देश के कानूनो मे यदि सशोधन किया गया, यदि वित्त सबधी विधिया लागू की गई, यादे लोगो को कमरतोड करो से मुक्ति मिली, यदि अनिवार्य शिक्षा प्रारभ हुई, सेना पर व्यय किया गया धन घटा और अतत यदि देश को स्वराज मिला तो यह सब केवल माननीय हिन्दुओ और उन हिन्दुओ के कारण सपन्न हुआ जिन्होने राजनैतिक आदोलन चलाकर और उसे चलाए रखकर मुसलमानो के सम्मुख एक उदाहरण प्रस्तुत किया। जहा तक मुसलमानो का सबध है उन्होने इस आदोलन को पाप समझा और इससे पृथक् रहे। उन्होने जब कोई आदोलन प्रारभ करने का प्रयास भी किया तो केवल सरकार के सम्मुख स्वय को नतमस्तक करने और छलछलाते नेत्रो से भिक्षा मागने के लिए। शैतान ने उन्हे बहकाया, उसने कहा कि मुक्तामणि मत मागो बल्कि घिसा-पिटा ताबे का पैसा या सडी-गली रोटी का टुकडा मागो।

मुस्लिम लीग

दीर्घ काल के पश्चात् बेडिया टूटी। जिसे पाक कहा गया था, जिसे पावन बताया गया था वह पाक-देश बन गया, परन्तु कैसे ? क्या यह उनके प्रयासो, उनकी जागरूकता, उनकी चेतना अथवा उनके आध्यात्मिक मार्गदर्शन का फल था ? इसके विपरीत यह उस षड्यत्र का फल था जो दूसरो ने रचा था। जिन लोगो के आदेशानुसार उन्होने गुफाओ मे शरण ली थी अब उन्होने इन्हे बाहर निकलने और स्वय को धराशायी होने का आदेश दिया था। इस नाटक के अतिम अक का मचन शिमला मे प्रतिनिधि मडल की वाइसराय से भेट के पश्चात् हुआ और इसका नामकरण 'लीग' किया गया।

परन्तु यदि तुम एक हिमगृह बना कर उसका नाम अग्निगृह रख दोगे तो क्या बर्फ आग हो जाएगी ? यदि तुम एक खिलौना लेकर उसके वक्षस्थल के निकट लगे हुए बटन को अगूठे से दबाओगे ताकि वह अपने दोनो हाथ हिला-हिलाकर ताली बजाये तो क्या इस तमाशे से उसे मनुष्य का बच्चा समझ लिया जाएगा ? मूर्खो, मौन क्यो हो ? मुझको उत्तर दो। सभवत आज तक दुनिया मे किसी समुदाय ने राजनीति का ऐसा खुला हुआ तिरस्कार और निरादर नही किया होगा जैसा कि इन छ वर्षो मे तुमने किया है। तुमने, ऐ चादी और सोने के पूजने वालो 'तुमने किया है। तुम्हारा अस्तित्व पूर्णतया राजनीति का तिरस्कार है और तुम्हारे कर्म उसके गर्वोन्नत भाल पर कलक का टीका है। तुमने दासता का एक मूर्त्यालय बनाया और उसका नाम राजनीति की मस्जिद रखा, तुमने अपना सिर झुकाया और समुदाय को धोखा दिया कि हम आदर-सम्मान

से सिर ऊचा कर रहे है। तुम दलदल मे अपने पाव डालकर कूद रहे थे ताकि और गहरे धस जाओ, किन्तु समुदाय से कहते थे कि हम मैदानो मे दौड रहे है। तुम स्वय पथभ्रष्ट थे, किन्तु इस पर सतुष्ट न हुए और सपूर्ण समुदाय को पथभ्रष्ट करना चाहा।

प्रश्न छत का नहीं है बल्कि उन ईटो का है जो नीव मे रखी गई है, यह वाद-विवाद व्यर्थ है कि दीवार कैसी है। देखना यह है कि नीव तो टेढी नही है। राजनीति एक आग है जो स्वय भडकती है और भडकाई जाती है। वह शीतल जल से भरा गिलास नही है जिसका मिलना किसी उपेक्षा-दृष्टि रखने वाले पेय-पदार्थदाता की कृपादृष्टि पर निर्भर होगा। मार्गभ्रष्टता के प्रथम चरण के बाद वर्षो की निद्रा के पश्चात् जीवन ने करवट ली भी तो अपनी आकाक्षा, अपने उत्साह और अपने सामर्थ्य पर विश्वास के कारण नहीं ली बल्कि केवल किसी की भृकुटि के सकेतो और हाथ मिलाने के आश्वासन पर ली। परिणाम यह हुआ कि राजनीति दासता का एक दूसरा रूप बन गई और वह निर्दिष्ट स्थान से विमुख रखने का साधन बन गई। फिर इसके पश्चात् समस्त शक्ति इस बात पर लगाई जाने लगी कि सरकार से कुछ दक्षिणा मागी जाए और जिस शक्ति को सरकार के विरुद्ध लगना चाहिए था उसको हिन्दुओ के विरुद्ध लगाया जाए। यह बात उस उन्माद के लिए अतिरिक्त तीखी मदिरा का भरा प्याला सिद्ध हुई। वस्तुत समुदाय को यह महसूस करना है कि वह अपने पॉव पर खडा है या किसी बैसाखी के आश्रय टिका है। परन्तु विशेषाधिकार की इच्छा जब पैदा होगी, चाहे उसका कुछ भी नाम रखा जाएँ, निश्चय ही अपने बाहुबल के स्थान पर केवल दाता की दया-कृपा पर विश्वास होगा। निश्चय ही मुसलमानो को अपने सामुदायिक अधिकारो की रक्षा के प्रति उदासीन नही होना चाहिए किन्तु साथ ही वास्तविक प्रयास इस बात का होना चाहिए कि वृक्ष अपनी जगह पर सुदृढ खडा रहे।

देश की पराधीनता के लिए मुसलमानों के बलिदान

हिन्दू-मुसलमान की समस्या भी एक जादूगर का खेल है और दुर्भाग्यवश नाचने वाले नाच रहे है। सेना मे फूट पड गई है और शत्रु सतुष्ट है। यह विचार कि "तुम अभी शिक्षा-क्षेत्र मे आगे नही बढे और इसलिए तुम्हारी राजनीति यही है कि पहले हिन्दुओ से उन अधिकारो को छीन लो जो उन्होने हडप कर लिए है।" सोचो तो, कि चतुर शत्रु की कितनी भयकर चाल थी। याद होगा कि हमने एक बार इस स्थिति की ओर सकेत किया था। हिन्दुस्तान मे स्वभावत सरकार को अपने हितो की रक्षा के लिए एक महानाहुति की आवश्यकता थी। वह आहुति-बलि यह थी कि कोई एक समुदाय देश-पक्ष को छोड कर उसके साथ हो जाए और अपने देश की आकाक्षाओ की आहुति देकर उसके रक्त से सरकार के स्वार्थ-वृक्षो को सीचे। मुसलमानो ने स्वत अपने आपको इस बलि के लिए प्रस्तुत कर दिया और जिस बोझ के उठाने से हिन्दोस्तान के सारे समुदायो ने इकार कर दिया था उसके लिए पहले दिन ही उन्होने अपनी ग्रीवा प्रस्तुत कर दी।

मुसलमानो की आखो को यदि नेताओ के जादू-टोने ने बद न कर दिया होता तो वह इस दृश्य को देखते और खून के आसू रोते। वह देखते कि यह क्या दुर्भाग्य है कि देश की उन्नति तथा उत्थान की समस्या ही नितान्त 'हिन्दू समस्या' हो गई है और मुसलमानो का एक समुदाय के रूप मे इससे कोई सबध नही रहा। 'हाउस आफ कामस' मे वादविवाद हो या काग्रेस के मच पर 'हिन्दुस्तान की समस्या' पर विचार-विमर्श, उनके लिए सब हिन्दू समस्या थी। यद्यपि देश की उन्नति और स्वतत्रता का दायित्व हिन्दुओ पर देश की ओर से था तो ऐ आत्मविस्मृति से

ग्रस्त लोगो ! तुम्हारे सिर पर तो दायित्व तुम्हारे ईश्वर की ओर से था। दुनिया मे सत्य के लिए सघर्ष और मानव को मनुष्य की दासता से मुक्त करना तो इस्लाम का स्वाभाविक ध्येय है। ईश्वर ने तुम्हे आगे करना चाहा था किन्तु खेद है कि तुमने सर्वप्रथम ईश्वर को और फिर अपने आपको भुलाया, परिणाम यह हुआ कि पिछली पक्तियो मे भी तुम्हारे लिए स्थान नही है।

परन्तु मैं निवेदन करूगा कि तनिक धीरज रखिए और जिस्वा पर ताले न लगाइये क्योकि वस्तुत उलाहना देने का समय पहले न था, समय तो इसका अब आया है। हम भी परीक्षा के इसी क्षण की प्रतीक्षा मे थे। केवल इच्छा करने से मजिल नही मिल सकती। आप ईट-गारा प्राप्त भी कर ले तो भी घर नहीं बन सकता, जब तक राजगीर न हो। लीग के यह नए कटाक्ष सभवत धैर्य को भग करने की शक्ति अवश्य रखते है किन्तु इनमे ऐसा आकर्षण नही है कि टूटे हुए हृदय को पुन प्रलोभित कर सके। परन्तु अभावग्रस्त व्यक्तियो की ओर से खटका अवश्य है कि कही वह इसके धैर्य-भजक हाव-भावो पर लट्टू न हो जाए।

शारीरिक स्नायुओ की पहचान और लक्ष्य की खोज निश्चय ही रोग-निवारण के वास्तविक उपचार की खोज है, किन्तु जिज्ञासु होना ही समस्या का उचित निदान नही है और न ही स्वास्थ्यलाभ के लिए औषधि-प्राप्ति ही पर्याप्त है। आवश्यक है कि निदान की खोज सम्यक हो और जो औषधि प्रस्तावित की जाए वह रोग निवारण का वास्तविक उपचार हो। लीग यदि इस बात से सहमत हो गई है तो अहोभाग्य !

संधि-पत्र

वास्तविकता यह है कि लीग घोर निराशा का प्रतीक थी, अब भी है, और रहेगी, जब तक वह अपने आप को आशावान सिद्ध न कर दे। जन-समुदाय ने भली भाति देख लिया है कि न केवल महत्त्वपूर्ण राजनैतिक प्रश्नो के समाधान के लिए बल्कि तुच्छ राजनैतिक आवश्यकताओ के लिए भी लीग व्यर्थ है और इस दृष्टि से अत्यत हानिकारक है कि राष्ट्र का भावी मार्ग रोक कर खडी है।

परन्तु ठीक उस समय जब यह बात स्पष्ट हो गई है कि हम लीग का त्याग करके अपना मार्ग ढूढ रहे हैं और मन लगाने के लिए एक नये ठिकाने की चिन्ता मे हैं तथा हमारी मन स्थिति पहले से अच्छी है तो लीग पुन सामने आई है और कहती है कि पिछली बातो को भूल जाओ ! यदि लीग पुन हमारे मन को वशीभूत करना चाहती है तो उचित है कि हममे और उसमे एक सधि हो जाए। यह सधि-पत्र बिल्कुल न्यायपूर्ण होगा और इमके अनुबधो के सबध मे कोई भ्रम नही होगा। लीग पिछली बातो को भुला दे, अपने घर को प्रतिद्वद्वियो से रिक्त करे और हमसे लगाव रखना है तो प्रतिद्वद्वियो से लगाव छोड दे। फिर हम भी दूसरे ठिकानो की चिन्ता छोडकर उसी के हो रहे होगे। परन्तु याद रहे कि अतिम सधि होगी और यदि फिर कभी दूसरो की छाया भी उस पर पडी तो यह सधि-पत्र निष्फल और निरर्थक हो जाएगा।

यह बात भी स्पष्टतया कह दे कि प्रतिद्वद्वियो और दूसरो से सबध का अभिप्राय क्या है ? अभी इस बात का समय नही आया है कि प्रेम-सबधो की अतिम मागे की जाए। हमे इससे कोई चिढ नहीं, सरकार से पूरी तरह सबध रखिये, काग्रेस की वर्तमान स्थिति का दृष्टात आपके सम्मुख है। अब तो स्वय सरकार भी आशा की ज्योति प्रज्ज्वलित करने के लिए प्रयत्नशील है। परन्तु इन सबधो के केवल यही अर्थ समझिए कि आनन्द के किसी क्षण मे अपने सम्मान और अपनी गरिमा को सुरक्षित रखते हुए दो-चार घडी हँस-बोल लिए।

संधि के अनुबंध और लक्ष्य

राजनैतिक सघर्ष के लिए लक्ष्य निर्धारण सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है और यदि आपको जीवित रहना है तो किसी उच्चादर्श की अगीठी सुलगाइए जो प्रति क्षण आपके हृदय को गर्म रखे। यह बात बारबार कही जा चुकी है कि कोई राष्ट्र अपने सघर्ष मे वास्तविक कर्मठता, उच्चावधारणा और शक्ति का प्रयोग नही कर सकता जब तक उसके सम्मुख एक अत्यत प्रेरक लक्ष्य न हो। अब आपको क्या समझाए कि स्वतत्रता वह महानतम लक्ष्य है जिसका आभास मात्र ही हृदय को प्राणवान बनाने के लिए पर्याप्त है।

लीग खोज मे निकली है तो उसको भटकना नही चाहिए। हिन्दुस्तान मे राजनैतिक लक्ष्यपूर्ति ही एकमात्र समस्या है यद्यपि इस सबध मे हमारा मार्ग साधारण पथो से भिन्न है और हम इसे दूसरी दिशा से आकर लेना चाहते है किंतु लीग से उसमे सहयोग की आशा करना व्यर्थ होगा। अतत उनको चाहिए कि घोषणा कर दे कि 'इगलिस्तान के तत्वावधान मे हिन्दोस्तान का स्वराज' उनका एकमात्र लक्ष्य है।

बोली कम लग रही है अत खून बढाओ

याद रहे कि हमारा प्रस्तावित लक्ष्य कोई अत्यत उच्च कोटि का नही है क्योकि हमारे साहस का विश्रामस्थल इस शाखा से भी उच्च स्थान की खोज मे है। फिर भी यही उचित है कि आप 'स्वस्थ' राजनैतिक उद्देश्य निर्धारित करे और आज से ही उस ओर चलना आरभ कर दे। यदि एक आकर्षक लक्ष्य आपके सम्मुख होगा तो यात्रा की यातनाये भी भूल जाइयेगा।

३० वर्षो से जो उलझाव इस समस्या के समाधान मे बाधक रहे है, उन पर इधर बार-बार लिखा जा चुका है। हमे भ्रम है कि हिन्दुओ के बहुमत, समाज के विभिन्न तत्त्वो की पारस्परिक प्रतिद्वंद्विता, हिन्दू-मुसलमानो का गत इतिहास, देश की अतत्परता, मुसलमानो के लिए हिन्दोस्तान मे विदेशी राज की श्रेष्ठता और इसी प्रकार के वह समस्त सशय और स्वार्थ भाव जो मुसलमानो के हृदय मे उत्पन्न किए गए थे अब भुलाए जा चुके है। स्वशासन की माग हम इसी क्षण नही कर रहे है कि देश की सक्षमता और अक्षमता की कथा दोहराई जाए। उद्देश्य एक लक्ष्य को सम्मुख रखना है और शनै -शनै उस तक पहुचना है। हिन्दू बहुमत का भय भी अब खुदा के लिए मन से निकाल दीजिए। यह सर्वाधिक शैतानी सशय था जो मुसलमानो के हृदय मे उत्पन्न किया गया। शक्ति केवल सख्या पर नही बल्कि अन्य बातो पर निर्भर है, राष्ट्रो का वास्तविक बल उनका नैतिक बल है जो उनकी नैतिकता, उनकी सुचरित्रता, उनकी एकता और यदि इस्लामी पारिभाषिक शब्द मे कहे तो ईश्वर की इच्छा और हमारे सुकृत्यो से उत्पन्न होती है। यह समस्त आशकाए इसलिए उत्पन्न होती है क्योकि देश के सम्मुख सर्वमान्य उच्च लक्ष्य नही है। **यदि प्रारम्भ काल से यही हो गया होता तो सब मिल कर एक ही लक्ष्य की ओर देखते और वह समस्त बल जो आज पारस्परिक रक्तपात मे लगाया जा रहा है उसी लक्ष्य की पूर्ति के हेतु प्रयुक्त होता।**

असावधानी से न सुनिये क्योकि मै एक अत्यत महत्त्वपूर्ण बात कह रहा हूँ। आपका समस्त भटकाव, आत्म-सतुष्टि, स्वार्थपरता और पारस्परिक रक्तपात, त्याग और समर्पण की उपेक्षा और प्रत्येक प्रकार के कुकर्म केवल इसलिए हैं कि सामने कोई आकर्षण नही है और मन-मस्तिष्क को विमोहित करने वाली जिस वस्तु को हम देख रहे है उसे आपने अभी देखा ही

नही है। जिस दिन एक उचटती हुई दृष्टि भी 'स्वतत्रता की देवी' के सौदर्य पर पड गई तो फिर आप स्वत यह सारे प्रपच भूल जाएगे।

यात्रा की यातनायें

बहुत से लोग है जो यहा तक हमारे साथ आ गये है। मुसलमानो को भी यही लक्ष्य अपने लिए निर्धारित करना चाहिए किंतु वह मार्ग की कठिनाइयो से घबराते है।

प्रेमासक्त मेरे भाइयो !पता नही अब तक किस दुविधा मे पडे हो ? यह राजनीति बलि की वेदी है, यह स्वतत्रता और स्वाधीनता की रमणी है, यह आपका तीस वर्षीय मनोरजक खेल-कूद का मैदान नही है। यदि आप कठिनाइयो से घबराते है तो आपके लिए फूलो की सेज उचित है, आप से किस मूर्ख ने कहा है कि इस काटो से भरी घाटी मे प्रवेश कीजिए ? यहा आइयेगा तो पद-पद पर काटे मिलेगे और प्रत्येक क्षण आपत्तियो का सामना करना होगा। आप कठिनाइयो से घबरा रहे है जबकि यहा तो प्राणाहुति और जीवन-बलिदान का प्रश्न है। यहा वासना-लिप्त व्यक्तियो के लिए स्थान नही है। इस रणक्षेत्र के शूरवीर वह है जो ईश्वर के नाम पर बलि हो जाते है और सत्य के लिए सघर्षरत रहते है, जिनके सिर गर्दनो पर नही बल्कि हथेलियो पर रहते है।

राजनीति क्षणिक जादू नही है कि कुछ प्रस्ताव पढ कर आभार प्रकट करने के हेतु दण्डवत करके अपने आनद कुज मे छुप जाइये, और वह आकाश से उतर कर आपको ढूढती हुई आपके सम्मुख विराजमान हो जायेगी। आप से कोई नही कहता कि आइये, किंतु आने का सकल्प है तो मन को टटोल लीजिए कि आपके हृदय मे और आपके बाहुओ मे कितनी शक्ति है क्योकि प्रेम-पथ के अनुबधो से आप अनभिज्ञ है।

दासता-मूर्ति और राजनैतिक प्राण-प्रतिष्ठान

आपके गत राजनैतिक क्रिया-कलाप सामने आ जाते है तो हँसी भी आती है और रोना भी। आपने वर्षो राजनीति के साथ जो उपहास किया है उसका उदाहरण शायद ही किसी पापलिप्त और मार्गभ्रष्ट राष्ट्र मे मिले। चाटुकारिता और दासता के कीचड का प्रत्येक कीट स्वार्थपरता के प्रदूषण से उत्पन्न दुर्गन्ध से युक्त दावा करता था कि वह राजनैतिक रणक्षत्र का शूरवीर है और राष्ट्रीय राजनैतिक कृत्यो का सुधारक है। ऐश्वर्य मे तल्लीन जिन व्यक्तियो को किसी परीक्षण मे पडने का साहस न हो तो उनमे इस बात का भी साहस नही हो सकता कि सरकार की लेशमात्र उपेक्षा-दृष्टि भी सहन कर सके। वे इस बात का दावा करते थे कि इस राष्ट्र के राजनैतिक रणक्षेत्र के वह सेनापति है, और रणक्षेत्र मे इसलिए कूदे है ताकि इस मोर्चे पर अपनी तलवार की तीक्ष्ण धार के जौहर दिखलाए। जो लोकद्रष्टा थे वह इन वासना-ग्रस्त व्यक्तियो को देखते थे तो हँसते भी थे और समय की विडबना पर रोते भी थे।

भाग्य की विडबना ही है कि जिस बहुमूल्य वस्तु की प्राप्ति के हेतु प्राण देने और सिर कटाने की माग को पूर्ण करना भी हम अपना सौभाग्य समझे, वह निर्मूल्य ही उनके हाथ आई है। उसका लीगी सार्थवाह की दृष्टि मे इतना कम मूल्य है कि कुछ खोटे सिक्के हथेली पर रख कर बोलिया बोली जाती है।

अज्ञान के अधकार मे लिप्त लोगो !इस बात को याद रखो कि यदि तुम जीवित रहना

चाहते हो तो तुम्हे हतोत्साह नही होना चाहिए। केवल वही लोग पराजय की पीडा भोगते है जो जीवत है, मृतक इन सब बातो से मुक्त है। यदि तुम्हे शाति चाहिए तो उसके लिए अत्यधिक अच्छा स्थान कब्र है। यदि तुम बैठे रहोगे तो निश्चय ही कभी गिरोगे नही, किंतु यदि चलोगे तो इस बात की सभावना है कि ठोकर अवश्य खाओगे और घुटना जरूर फोडोगे।

सुधार और व्यवस्था में परिवर्तन

मुसलमानो ने भद्रजनो मे से अपने नेता चुनने की भूल की थी। यह लोग सहस्रो श्रृखलाओ मे जकडे हुए है और सदा-सर्वदा इसी प्रकार के बधन मे अपने अनुयायियो को बाधे रखते है। इनके केवल दो गुण है। एक तो यह कि धन-धान्य सपन्न है और दूसरे यह कि विशेषाधिकार प्राप्त वर्ग के सदस्य है। तुम्हारा दोष इनकी तुलना मे वस्तुत कही अधिक है क्योकि तुमने इन्हे घसीटा और यह उन परिस्थितियो की अवहेलना करके उनसे निकल न पाए जिन्होने इनके पाव मे बेडी डाल रखी थी। हम भी यदि इन्ही की स्थिति मे होते तो हम भी इसी प्रकार का आचरण करते। यह बात आवश्यक है कि लीग राजनीति को धन-सम्पत्ति के चगुल से निकाल कर बुद्धि के हवाले करने का दृढसकल्प करे।

बंदी जीवन की शेषावधि

समय आ गया है जब हमे लीग को कुछ विशिष्ट व्यक्तियो के चगुल से निकाल कर उसे जनता को दे देना चाहिए और भद्रजनो से पूर्ण विनम्रता सहित प्रार्थना करनी चाहिए कि वह हमारी समस्याओ से विमुख हो जाए और हमे अपने भाग्य के आश्रय छोड दे। हमे विधिवत अपनी पिछली भूलो के लिए क्षमाप्रार्थी होना चाहिए। करबद्ध हमे कहना चाहिए कि "हमे क्षमा प्रदान कीजिए, हमने जुलूस मे आपकी गाडिया खीची, आपको हमने हार पहनाए, स्वय को पशु बना डाला और अपनी लगाम आपके हाथ मे दे दी। हमने यह जो कुछ किया उसके लिए हम दड पाने के अधिकारी थे और हमे दड मिल भी गया। अब यदि कारावास की अवधि मे कुछ वर्ष शेष रह गए हैं तो हमारे अच्छे चाल-चलन और सरकारी नियमो को दृष्टि मे रखते हुए इस अवधि को कृपया समाप्त कर दिया जाए। हम पर कृपा कीजिए। हमारी बेडिया खोल दीजिए।" इस समस्या का जब तक समाधान नहीं होगा तब तक केवल लीग के विधान मे परिवर्तन लाने मात्र से कोई लाभ होने वाला नही है।

जेहाद : स्वाधीनता के लिए संघर्ष

लेख बहुत बडा हो गया है किन्तु इस सबध मे हम अपने विचार-प्रवाह के सम्मुख अत्यत विवश है। बहुत-सी बाते अभी शेष है लेकिन जो रह गई है उनको नही लिखूगा और उन्हे आपके चितन-मनन के लिए छोड देता हू। परन्तु केवल कुछ शब्द सेवा मे प्रस्तुत करने की अनुमति अवश्य चाहता हू।

असावधानी और मादकता की स्थिति मे बहुत-सी राते बीत चुकी है, अब खुदा के लिए उन्माद-शैया से सिर उठा कर देखिये कि रज कितना चढ आया है? आपके सहयात्री कहा पहुँच गए हैं और आप कहा पडे हैं, यह न भूलिये कि आप और कोई नही बल्कि 'मुस्लिम' है और

इस्लाम आप से आज बहुत-सी मागे कर रहा है। कब्र तक इस ईश्वरीय पथ को आप अपने कुकर्मो से लज्जित कीजियेगा ? कब तक दुनिया को अपने ऊपर हॅसाइयेगा और स्वय न रोइयेगा ? और कब तक हिन्दोस्तान मे इस्लामी शक्ति का खाना रिक्त रहेगा ? यदि आपत्तियो का कुशाग्र विभ्रम दूर करने का उपाय है तो कौन-सी आपत्तिया है जो आप पर अवतरित नहीं हो चुकी है।

याद रखिये कि हिन्दुओ के लिए देश की स्वाधीनता के हेतु सघर्ष करना देशभक्ति है किन्तु आपके लिए यह एक धार्मिक कर्तव्य है, और ईश्वर के लिए सघर्षरत होना है। अब आपको ईश्वर ने उसके पक्ष मे सघर्षशील होने के लिए बनाया है और जेहाद की परिधि में प्रत्येक वह प्रयास सम्मिलित है जो सत्य और मनुष्य को दासता और अत्याचार के बधन से मुक्त कराने के लिए किया जाए। आज जो लोग देश के कल्याण और स्वाधीनता के लिए अपनी शक्ति का प्रयोग कर रहे है वह विश्वास कीजिए जेहाद करने वाले है और एक ऐसे जेहाद मे सलग्न है जिसके लिए वस्तुत सबसे पहले आपको कटिबद्ध होना चाहिए था। इसलिए उठ खडे हो कि खुदा तुम्हे अब उठाना चाहता है और उसकी इच्छा यही है कि मुसलमान जहा कही भी है जागे और सघर्षशीलता के अपने विस्मृत कर्तव्य का पालन करे। हिन्दोस्तान मे तुमने कुछ नही किया यद्यपि अब तुम्हारा ईश्वर चाहता है कि तुम यहा भी वह सब करो जो तुम्हे हर जगह करना है।

इस्लाम और राष्ट्रीयता

इस्लाम और नेशनलिज्म

अल-हिलाल

"इस्लाम का आह्वान 'मानवतावाद' और 'मानव भ्रातृत्व' के लिए था। इसलिए वह नसली और राष्ट्रीय भेदभावो से उत्पन्न समस्त प्रकार के अनुदार भावो का विरोधी है।"

इस्लाम और राष्ट्रीयता *

१९२० मे घटना-प्रवाह ने बुद्धि और कल्पना को अधिक स्वच्छद होने का अवकाश ही नहीं दिया था। महात्मा गाधी ने खिलाफत समस्या को केवल उसकी सरलता और व्यावहारिकता मे देखा और उठ खडे हुए। उन्होने इससे अधिक सोचने की आवश्यकता ही न समझी कि मुसलमानो की माग सत्य और न्याय के विरुद्ध नहीं है और यदि हिन्दुओ ने उनका साथ दिया तो इससे दोनो समुदायो मे सौहार्द और एकता की भावना प्रबल हो जाएगी। वस्तुत देश को उसकी तात्कालिक परिस्थिति मे इससे अधिक प्रयास की आवश्यकता भी न थी। गाधी जी अत्यत तीव्र गति से उठे और इसके पूर्व कि चेतना को 'यदि और परन्तु' मे उलझने का अवकाश मिले उन्होने कार्य आरम्भ कर दिया। परिणाम यह हुआ कि कुछ महीनो मे एक सार्वजनिक आदोलन खडा हो गया। खिलाफत की माग हिन्दू-मुसलमानो की सयुक्त माग बन गई। सैकडो-हजारो हिन्दुओ ने इसमे वैसी ही गहरी और नि स्वार्थ रुचि ली जैसी स्वय मुसलमान ले रहे थे, बल्कि कहा जा सकता है कि कुछ हालतो मे स्वय मुसलमानो से भी उनके कदम आगे थे।

परन्तु जब व्यावहारिक गतिविधि का काल समाप्त हो गया तो प्रतिक्रिया होनी आरभ हो गई। वही बात जो कुछ दिन पूर्व एक सर्वाधिक लोकप्रिय कार्य था अब सदिग्ध और तर्क-वितर्क का विषय बन गया और मानसिकता ने नाना प्रकार के प्रश्न उठाने आरम्भ कर दिये। जिस समय हजारो की सख्या मे लोग कारावास जा रहे थे ताकि तुर्की के साथ न्याय किया जाए, उस समय भी यह बात उन्हे न सूझी कि इस माग मे जो इतनी उत्तेजना है वह हिन्दोस्तानी राष्ट्रीय हितो से मेल खाती है या नही ? किन्तु अब प्रत्येक व्यक्ति इसी चिता से चितित है और कोई लेखनी ऐसी नही है जिसकी नोक पर यह प्रश्न न हो।

एक ओर तो वह लोग है जो कटुआलोचना की दृष्टि से इस समस्या पर विचार कर रहे है, दूसरी ओर मुसलमान लेखक है और चूकि स्वय उनके सामने भी कोई सुस्पष्ट वास्तविकता नही है इसलिए कुछ विलक्षण अतिशयोक्तिपूर्ण तर्क-वितर्क मे व्यस्त हैं। कुछ वे लोग है जिन्होने 'अल-हिलाल' के पिछले अको पर इस प्रकार के वक्तव्य पढे थे कि इस्लाम की व्यापक दृष्टि देशभक्ति की समीचीनता को स्वीकार नही कर सकती।

चूकि भारतीय सदर्भ और उस बात के कहे जाने के अवसर पर उनकी दृष्टि नही है इसलिए इसका अर्थ वह यह समझते है कि इस्लाम 'राष्ट्रीयता' का विरोधी है और किसी मुसलमान को 'राष्ट्र-प्रेमी' नही होना चाहिए। कुछ ऐसे लोग हैं जो हिन्दुस्तानी मुसलमानो की राजनैतिक विमुखता से अत्यधिक रुष्ट है। जब वह देखते हैं कि बाहर की इस्लामी समस्याओ के

---

* इस लेख का चयन 'इस्लाम और राष्ट्रीयता' से किया गया है जो अल-हिलाल मे पुन प्रकाशित हुआ था। यह लेख जून १९२७ ई०-दिसम्बर १९२७ के अक मे प्रकाशित हुआ था। इस पत्र के सपादक अर्ब्दुरज्जाक मलीहाबादी थे किन्तु उपर्युक्त लेख के समान ही मौलाना ने इस पत्र मे अनेक उच्चकोटि के लेख लिखे थे।

लिए उनमे कितनी उत्सुकता उत्पन्न हो जाती है, जबकि उतना स्वय अपने देश के लिए उत्साह उनमे नही होता तो वह सोचते है कि मुसलमानो की मानसिकता ही इस स्थिति का कारण है। अत वह कहते है कि अब इस मानसिकता को उन्हे तिलाजलि दे देनी चाहिए।

न तो इस्लाम की व्यापक दृष्टि का यह अर्थ है कि वह राष्ट्रीय भावना के साथ जुड नही सकती और न तो राष्ट्रीयता के लिए इस बात की आवश्यकता है कि व्यर्थ मे इस्लामी मानसिकता की विस्तृत परिधि को सकुचित किया जाए। यह दोनो स्थितिया अतिक्रमण है और हर बात के समान यहा भी वास्तविकता को उसके छोरो पर नहीं बल्कि उसे मध्य मे ढूढना चाहिए। वह 'मध्यम मार्ग' क्या है ? इस लेख का अभिप्राय उसी मध्यम मार्ग की खोज है। चूकि समस्या अत्यधिक विस्तृत है अत आवश्यक है कि उसे कुछ भागो मे विभक्त कर दिया जाए।

सामाजिक जीवन और उसका विकासक्रम

'राष्ट्रीयता' क्या है ? यह मनुष्य के सामाजिक जीवन की चेतना और उसकी अवधारणाओ की एक विशिष्ट स्थिति का नाम है। यह मनुष्यो के किसी एक समूह को दूसरे समूह से भिन्न करती है और उसके द्वारा मनुष्य की एक बडी बहुसख्या पारस्परिक रूप से सबद्ध होकर जीवन व्यतीत करती है और सामाजिक जीवन के सघर्ष मे सलग्न होती है। अत इसके पूर्व की स्थिति मे इस्लामी आदेशो और आह्वानो पर दृष्टिपात किया जाए तो स्वय मनुष्य की स्थिति पर प्रकाश डालना चाहिए कि उसके सामाजिक सबधो की मानसिकता और उसकी अवधारणाओ का स्वरूप क्या है।

मनुष्य दीर्घकाल तक जिस स्थान पर रहता है स्वभावत उसके प्रति अधिक ममत्व का अनुभव करने लगता है। इस ममत्व के कारण एक से अधिक हैं। पहले तो यह कि उस स्थान की भौगोलिक विशेषताओ के साथ उसकी जीवनचर्या कुछ इस प्रकार घुल-मिल जाती है कि वहा के प्रत्येक कण और स्थिति के साथ उसके जीवन की कोई न कोई स्थिति सबद्ध हो जाती है और उसके मन मे उस स्थान के लिए आकर्षण उत्पन्न हो जाता है। दूसरे जो अनुभव उसे निरन्तर होते रहते हैं वह स्वत ही उसकी पाशविक प्रवृत्ति को प्रभावित करते हैं। जिन वस्तुओ से उसका निरन्तर सबध रहता है उनसे वह स्वभावत अधिक निकट का सबध अनुभव करता है। तीसरे स्थान और निवास के साथ नस्ल और परिवार के भी समस्त सबध जुड जाते है। जिस स्थान पर मनुष्य का जन्म हुआ हो और जहा उसका पालन-पोषण हुआ हो वही उसके समस्त नातेदार तथा चिरपरिचित आदमी होते हैं और इसलिए उनके प्रति मोह की स्मृति वहा के कण-कण मे व्याप्त हो जाती है। इस प्रकार मनुष्य ने परिवार के पश्चात् निवासस्थान और आज देश के सबध का भी अनुभव किया है और शनै -शनै उसकी गहराइया बढती गई हैं और अततोगत्वा यह उसकी प्रेम-भावना का केन्द्र तथा भौगोलिक भूभाग के प्रति आसक्ति की धुरी बन गए।

देशभक्ति 'नगर राज्य' के मानवीय सबधो के एक विशिष्ट विकासक्रम का नाम है। जब सभ्यता अधिक उन्नत हो गई और उसमे विशालता आई तो असख्य बस्तिया और नगर बस गये तथा मनुष्य के पारस्परिक सबध अधिक व्यापक हुए। 'नगर राज्य' की भावना भी व्यापक होनी आरम्भ हुई और अब मनुष्य न केवल उस स्थान को जहा वह रहता हो और जहा उसका जन्म हुआ हो बल्कि उस समस्त क्षेत्र को अपनी जन्मभूमि समझने लगा जिसके किसी कोने मे वह निवास करता था। फिर शनै -शनै इस घेरे मे और विस्तार हुआ। छोटे-छोटे भूभागो के स्थान

पर पृथ्वी के बडे-बडे भाग इसमे सम्मिलित हो गए और यहा तक कि अब सकल जगत ही मातृभूमि बनता जाता है।

वशानुगत सामूहिक अनुभव ने लोगो की बडी सख्या को नस्ल की इकाई मे समाहित कर दिया। अब निवास-स्थान और भूभाग की एकता स्पष्ट हो गई और इस इकाई ने नस्ली घेरे से अधिक विस्तृत घेरा अपने चारो ओर बना लिया। यह घेरा विभिन्न कबीलो को एक-दूसरे से सबद्ध करता है और उनमे एकता की भावना उत्पन्न करता है। 'देश भक्ति' के उपरान्त, सामूहिक चेतना का दूसरा चरण राष्ट्रीयता का है। यह मानवीय सबधो का अधिक विस्तृत घेरा प्रस्तुत करना है और क्षुद्र हितो को समष्टि के हितो के अधीन करके एक उत्कृष्ट एकता उत्पन्न करता है।

सामाजिक जीवन का यही भाव एक ऐसा वृत्त है जो पिछले तमाम घेरो से अधिक व्यापक है और मनुष्यो की बहुत बडी सख्या इसमे सिमट आती है।

भौगोलिक विभाजन-रेखा पर पहुच कर इस प्रकार के विस्तार के समस्त चरण समाप्त हो जाते है और वह गन्तव्य स्थान सामने आ जाता है जो इस वास्तविकता का अन्तिम चरण है तथा जहा पहुच कर यह विकासक्रम पूर्णता को प्राप्त हो जाता है। यह मजिल 'मानव बन्धुत्व' और 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की मजिल है। यहा पहुच कर मनुष्य अनुभव करता है कि पारस्परिक सबधो, भू-भागो की समस्त सीमाओ और सहचर की जिन भावनाओ को उसने सुरक्षित रखा था उनमे से कोई भी वास्तविक और स्वाभाविक नही है। वास्तविक नाता केवल एक ही है और वह यह है कि सपूर्ण मानवजाति एक ही परिवार की सदस्या है और प्रत्येक मनुष्य दूसरे मनुष्य का भाई है। इस चरण पर पहुचकर मनुष्य की सामाजिक चिन्तन की यात्रा समाप्त हो जाती है और नस्ली एकता, देशगत एकता और सामुदायिक एकता का स्थान अवनी और अबर के स्वामी परमेश्वर द्वारा प्रदत्त मानवीय एकता पूर्णरूपेण और अनावृत्त रूप मे व्यक्त हो जाती है।

मनुष्य ने पहले भूमि के उस टुकडे को सब कुछ समझा था जिसमे उसका जन्म हुआ था। अब भी जब वह जन्म लेता है तो घर की चारदीवारी ही उसकी दुनिया होती है। उसने वसुधरा पर फैली सृष्टि पर दृष्टिपात किया और उसमे से उसके नानारूपो को दीर्घकालोपरान्त पहचान सका। उसने आकाश की ओर देखा और हजारो-लाखो वर्षोपरान्त इस सत्य से परिचित हो सका कि सूर्य का एक सूर्यमडल है और स्वय पृथ्वी भी उसी मडल का एक अग है।

इस्लाम और नस्ल तथा मातृभूमि संबंधी संकीर्णता

इन बिन्दुओ पर विचार करने के पश्चात् हमे अब उस दिव्य आदर्श की ओर अपना ध्यान केन्द्रित करना चाहिए जिस ओर इस्लाम ससार को ले जाना चाहता था। वह गन्तव्य स्थान क्या था और वह उद्देश्य क्या था? वह गतव्य स्थान 'मानवतावाद' का अवलबन था जो विकासक्रम की प्रक्रिया की पूर्ति का द्योतक था। छठी शताब्दी ईस्वी मे जब इस्लाम का आविर्भाव हुआ तो तब तक दुनिया ने 'कबीलो' और 'जन्मभूमि' के प्रति प्रेम के चरण को पार नही किया था। जब इस्लाम का जन्म हुआ था तो अरब कबीलो मे विभक्त थे। प्रत्येक कबीला अपनी नस्ली राष्ट्रीयता की परिधि मे सकुचित था और एक विस्तृत घेरे को स्वीकार करने के लिए तत्पर नही था। दभ और आत्मश्लाघा, मानव के लिए घृणा और निरादर के वीभत्स भाव तथा विजेता बननेऔर दूसरो को पराधीन करने की आकाक्षा उनके मन मे बहुत गहरी थी और

दृढता से बैठी हुई थी। किसी अन्य जाति के इतिहास मे इसके समतुल्य स्थिति का पाया जाना कठिन है। इस जाति का प्रत्येक सदस्य इस बात को अस्वीकार करता था कि उसके सकुचित ससार के अतिरिक्त भी किसी को गौरव-गरिमा और सम्मान प्राप्त हो सकता है और उसके कबीले से कही अधिक हो सकता है। सदेह मे प्राणियो की हत्या कर दी जाती थी ताकि कबीले की मान-मर्यादा निष्कलक रहे। यह सब बाते इतनी प्रसिद्ध है कि इनका विवरण प्रस्तुत करने की आवश्यकता नही है। हमजा की शक्तिशाली कविता आज भी अपनी नस्ल और वशावली के प्रति दभ के उद्दड भाव सबमे उद्वेलित कर देती है। इस प्रकार के भावो की अभिव्यक्ति जिस प्रकार इस्लाम-पूर्व की अरब कविता मे हुई है उसकी तुलना दुनिया की किसी अन्य भाषा की कविता से नही की जा सकती। अवधारणा और उस पर गर्व करने, कुटुब-कबीले, नस्ल, जन्मस्थान की परिधि मे सकुचित रहने की भावना को अरबी कविता का अतिवाद कहा जाता है। अतिवाद का प्रथम आधार था अरबवाद अर्थात् उन समुदायो पर अरबो की श्रेष्ठता की स्वीकृति जो अरब नही थे और द्वितीय स्थान पर स्वय एक अरब कबीले की श्रेष्ठता। प्रत्येक कबीला स्वय अपने नस्ली श्रेष्ठता के दर्प मे तल्लीन था।

अरब भू-भाग से बाहर की दुनिया भी नस्ल और देश के अतिरिक्त अन्य उदार अवधारणा से अनभिज्ञ थी। रोम की सभ्यता ने रोमी राष्ट्रीयता की आधारशिला रखी थी परन्तु वह भी नस्ल और जन्मभूमि की भावना पर आधारित थी। एक बार जब रोम के एक नागरिक को मिसिली के राजा ने पकडवा लिया और उस पर कोडे मारे जाने का आदेश दिया तो प्रत्येक कोडे की चोट पर वह चीख उठता था कि "मै रोम का निवासी हूँ।" रोम के विख्यात वक्ता सिसरो ने इस राजा के विरुद्ध बोलते हुए कहा था कि "एक रोम निवासी को चबूतरे के मध्य मे डाल दिया गया था और उस पर कोडे बरसाए गये थे। वह पीडा से चीख नही रहा था और न ही उस चोट की उसे शिकायत थी जो कोडो की मार से उसे लग रही थी, वह तो केवल इतना ही कहता था कि "मै रोम निवासी हूँ।" ऐ विधायको ! आघात सहन करने वाले को इस बात का विश्वास था कि वह स्वय को रोम निवासी घोषित करके उन समस्त दु खो और निरादर से स्वय को मुक्ति दिला सकता है क्योकि कुछ दिन पहले तक किसी व्यक्ति के लिए रोम निवासी होना सुरक्षा और सम्मान की विश्वसनीय जमानत थी। इसे सिसरो के विधि सबधी भाषणो मे सर्वश्रेष्ठ भाषण समझा जाता है। सिसरो ने रोमन निवासी होने के तथ्य पर बल दिया था, उसने यह नहीं कहा था कि वह व्यक्ति एक मनुष्य था। उसे रोमनवाद की चिता थी, मानवतावाद की नही।

परन्तु इस्लाम इन्ही बिन्दुओ पर रुका नहीं। उसने इन समस्त सबधो और उनके आधारो को अस्वीकार किया जो मानवीय ज्ञान और अवधारणाओ की सीमाबद्धता के कारण प्रचलित हुए थे। उसने नस्ल, जन्मभूमि, राष्ट्र, वर्ण और भाषा के कृत्रिम सबधो को अस्वीकार कर दिया। उसने मनुष्य का आह्वान एकमात्र मानवीय सबध की ओर, भ्रातृत्व के स्वाभाविक बधनो की ओर किया।

समस्त पृथ्वी पर फैले हुए मनुष्यो के लिए आवश्यक था कि वह स्वय को विभिन्न क्षेत्रो और गुटो मे विभाजित करे। इस प्रकार विभक्त होने के पश्चात् यह बात भी अनिवार्य थी कि कोई उपाय ऐसा हो कि एक गुट दूसरे गुट से भिन्न हो जाए। कोई अफ्रीकी है, अरब है, कोई आर्य जाति का या मगोल जाति का है। यह सब इकाइया केवल साधन मात्र थी। इस प्रकार समूहो को मान्यता प्राप्त हो गई परन्तु इस विभाजन मे न तो कोई भेद है और न ही यह

वास्तविक है। वास्तविक विशेषता एक है जो मनुष्य के कर्मों और उसके प्रयासों से उत्पन्न है। समस्त जाति का स्तर एक ही है और उनका मान-सम्मान भी एक जैसा ही है। ईश्वर किसी व्यक्ति को श्रेष्ठता प्रदान नही करता, केवल वही व्यक्ति महान बनता है जो सम्मान के योग्य होता है और स्वय अपने कर्मों और प्रयत्नो से विशेषता प्राप्त करता है।

"जो बढकर खुद उठा ले हाथ मे मीना उसी का है।"

(जो स्वय हाथ बढा कर उठा ले, मदिरा का प्याला उसी का होता है।)

सपूर्ण मानवजाति एक ही कुटुम्ब है और उसकी एक ही नस्ल है तथा समस्त मानव एक-दूसरे के भाई हैं। यदि वस्तुत कोई भिन्न नस्ल नही है और समस्त नस्ले एक ही है तथा जन्मभूमिगत भेद भी नही है, क्योंकि हम सब एक ही धरती के निवासी है तो एक समुदाय दूसरे से पृथक् क्यो है? एक ही कुटुम्ब के सदस्यो मे और उनके पारस्परिक सबधो मे भेद नही है तो वह एक-दूसरे के साथ अजनबियो जैसे क्यो रहते है?

इस सबध मे इस्लाम के मूलभूत सिद्धात इतने सुविख्यात हैं कि यहा उनकी चर्चा करना आवश्यक नही है। यहा केवल कुरान की उन अवधारणाओं की ओर सकेत करना मेरा उद्देश्य है जो मानव की एकता को घोषित करती है और उन समस्त आयतो को रेखाकित करना है जिनमे मनुष्य की वास्तविक एकता को प्रकाशित किया गया है। भेदभाव, पथ-भ्रष्टता और ईश्वरीय नियमो से दूरी का फल है।

इस्लामी अवधारणा मे मानवीय एकता और भ्रातृत्व की वास्तविकता को कितनी महत्ता प्राप्त थी, यह बात हजरत मुहम्मद की उस अनुनय-विनय से प्रमाणित है जो वह पाच समय की अपनी नमाजो मे किया करते थे– ऐ ईश्वर ! तू हमारा और समस्त सृष्टि का पालनहार है, मै साक्षी हू कि तू ही ससार का पोषक है। तेरे अतिरिक्त अन्य कोई नही है। ऐ ईश्वर, हमारे और समस्त सृष्टि के पालनहार ! मैं साक्षी हू कि मोहम्मद इसके अतिरिक्त और कुछ नही है कि वह तेरा सेवक है और तेरा दूत है ! ऐ ईश्वर, हमारे और समस्त सृष्टि के पालनहार ! मै साक्षी हू कि तेरे समस्त सेवक आपस मे भाई-भाई है। उन्होने कितने ही भेदभाव उत्पन्न कर रखे हो लेकिन तूने उन सबको मानवता के एक ही सबध से सबद्ध कर दिया है।"

मनुष्य के विश्वव्यापी भ्रातृत्व के मार्ग मे चार बाते सबसे बडी रुकावट थी—नस्ल, जन्मभूमि, वर्ण और भाषा। इन्ही चार भेदो के आधार पर अलग-अलग समुदाय बनाये गये थे और मानवता का एक वृत्त अगणित छोटे-छोटे वृत्तो मे बट गया था। इस्लाम ने न केवल चारो बातो को नकारा बल्कि इनके प्रतिकूल इतनी सुस्पष्ट घोषणा कर दी कि किसी प्रकार के सदेह के लिए स्थान न रहे। नस्ल के सबध मे स्पष्टत कह दिया कि 'सबकी नस्ल एक ही है", जन्मभूमि के सबध मे कह दिया कि "अरब हो या अन्य देश का निवासी हो सब एक ही ईश्वर की बनाई वसुधरा के रहने वाले है।" 'भाषा' और 'वर्ण' के सबध मे निर्णय कर दिया कि यह विधाता के विधान और उसकी सत्ता के प्रतीक है। किसी स्थान की जलवायु एक प्रकार का वर्ण उत्पन्न करती है और कही की जलवायु दूसरा रग। कही मनोभाव की अभिव्यक्ति के लिए एक विशेष प्रकार की भाषा उत्पन्न हो गई है और कही अन्य प्रकार की। परन्तु यह भिन्नताए मनुष्य की अस्मिता और उसके पारस्परिक भेद-भाव के आधार नही है।

फिर इसके साथ ही इस्लाम ने आचरण की जो अपनी व्यवस्था की उसके प्रत्येक अश की रूपरेखा इस प्रकार प्रस्तुत की कि उसके साथ **राष्ट्र और नस्ल की पृथकता का सान्निध्य हो ही नही सकता। दिनचर्या और पूजा-पद्धति मे ऐसी बाते रख दी गईं कि सदैव मानव को एकता**

और समानता का व्यावहारिक रूप प्राप्त होता रहे। नमाज, जकात (धर्मकर), रोजा (तीस-दिवसीय व्रत), हज (निर्धारित तिथियो मे कअबे की परिक्रमा) सबमे यही आत्मा कार्यरत है। यह मनुष्य के कार्य और उसके व्यवहार मे मानवीय एकता प्रदर्शित करने की एक पूर्ण व्यवस्था है जो अपने प्रत्येक सदस्य को विवश कर देती है कि वह इस वास्तविकता को स्वीकार करे, उसके सम्मुख नतमस्तक हो जाए, उसके प्रति विश्वास और निष्ठा की साकार मूर्ति बन जायें।

इस्लाम का आह्वान 'मानवता' और 'मानव भ्रातृत्व' का आह्वान था। इसलिए उसकी दृष्टि इन समस्त भेद-भावो से विमुख थी जो नस्ल और जन्मभूमि के भेद से उत्पन्न हो गए थे। इसलिए आवश्यक है कि सार रूप मे नस्ल और जन्मभूमि की अतिक्रमणता की भी व्याख्या कर दी जाए ताकि स्पष्ट हो जाए कि इस्लाम की आस्था जिस बात की विरोधी है, वह स्पष्टतया और निश्चित रूप से क्या है?

दो बाते है। एक नस्ल और जन्मभूमि की सुरक्षा, दूसरे नस्ल और जन्मभूमि के कारण मतभेद। इस्लाम की आत्मा भेदभाव की विरोधी है, सुरक्षा की विरोधी नही है। परन्तु कठिनाई यह है कि जब कभी इस प्रकार का कोई वृत्त बनता है तो उसका प्रारम्भ सुरक्षा की भावना से होता है किन्तु आगे चल कर सुरक्षा भेदभाव का रूप धारण कर लेती है। पहले मनुष्यो का एक समूह जन्मभूमि और जातीयता का वृत्त इसलिए बनाता है ताकि उसके अदर रहकर दूसरो के आक्रमणो से अपनी रक्षा करे। यह राष्ट्रीयता 'सुरक्षात्मक' राष्ट्रीयता है। परन्तु जिस समय तक यह घेरा बना रहता है, राष्ट्रीय सुरक्षा का स्थान राष्ट्रीय श्रेष्ठता ले लेती है और जन्मभूमिगत दर्प का भाव उत्पन्न हो जाता है तथा 'सुरक्षोन्मुखी राष्ट्रीयता' अकस्मात एकाधिकार सत्ता और अधिकार का रूप धारण कर लेती है। अब राष्ट्रीयता अपना बचाव ही नही करती, दूसरो पर आक्रमण करना भी चाहती है। साथ ही नस्ली और राष्ट्रीय श्रेष्ठता का उन्माद दूसरे मनुष्यो से पृथकता और उनके प्रति तिरस्कार की भावना भी उत्तेजित करता है। परिणाम यह होता है कि विभिन्न राष्ट्रीय वृत्तो मे द्वद्व आरभ हो जाता है और मानवता के समस्त उच्चादर्श क्षीण होकर रह जाते है।

इस स्थिति का समाधान केवल यही था कि सकुचित वृत्तो का यथासभव बनना ही रोक दिया जाता। जब कभी कोई तग घेरा बनेगा तो चूकि यह वास्तविक मानवीय घेरे के विस्तार मे से ही कट-छट कर बनेगा इसलिए आवश्यक है कि उदारता के स्थान पर सकीर्णता उत्पन्न हो। इस्लाम ने इसीलिए इन तमाम तग घेरो को प्रोत्साहित नही किया।

'राष्ट्रीयता' अपने साधारण अर्थो मे यद्यपि पहले से विद्यमान थी किन्तु वर्तमान युग मे राष्ट्रीयता से तात्पर्य सामूहिक विचारो और भावनाओ से है। वह वस्तुत योरोपीय आधुनिकयुगीन सस्कृति की उपज है, जिसका जन्म मनुष्य की स्वतत्रता और मानवीय अधिकारो की रक्षा के लिए हुआ था किन्तु अब यह उन्ही के लिए भयानक सकट बन गई है।

मध्य युग के पश्चात् जब योरोप ने करवट बदली और नवीन सस्कृति का विकास हुआ तो उसके साथ-साथ एक नवीन प्रकार के समाज का भी आविर्भाव हुआ। यह वह समय था जब एक ओर ज्ञान-विज्ञान और स्वतत्रता की आत्मा का समस्त योरप मे प्रचार-प्रसार हो रहा था और दूसरी ओर निरकुश शासको का अत्याचार और विदेशी आधिपत्य की बर्बरता अपनी समस्त पुरातन परपराओ सहित उद्दडतापूर्वक जमी हुई थी। परिणाम यह हुआ कि एक नवीन सघर्ष प्रारम्भ हो गया। एक ओर राजसत्ता और उसके अगणित दावे थे और दूसरी ओर ज्ञान-विज्ञान

तथा स्वतत्रता द्वारा जनित नवीन सिद्धात और नवीन आकाक्षाए थी। राजसत्ता के सम्मुख जब जन-साधारण का स्वतन्त्रता-प्रेम भाव आवेग मे आया तो स्वत एक अत्यत प्रभावशाली और सशक्त पारिभाषिक शब्द प्रचलित हो गया। यह शब्द पहले से विद्यमान था परन्तु इसके मनोरजक अर्थ से लोग अनभिज्ञ थे। अब यह अर्थ प्रत्येक व्यक्ति के सामने आ गया। यह शब्द 'राष्ट्र' था और इसके उद्घाटित रहस्य के फलस्वरूप 'राष्ट्र' अथवा 'राष्ट्रीयता' की उत्पत्ति हुई है। दुर्भाग्यग्रस्त चौदहवे लुईस के कथनानुसार राजसत्ता का दावा था कि "सत्य और शक्ति मै हू।" जनता अब इसे स्वीकार करने को तत्पर न थी। प्रश्न उठ खडा हुआ कि यदि राज-परिवार और सत्ता की उत्तराधिकारिता सत्य और शक्ति का उचित आधार नही है तो फिर कौन है। वह कौन-सी शक्ति है जिसके सम्मुख राजसत्ता को भी नतमस्तक होना चाहिए। इस प्रश्न का उत्तर यह मिला कि 'राष्ट्र' है। केवल 'राष्ट्र' ही प्रत्येक प्रकार के अधिकार और सत्ता का स्रोत है। केवल 'राष्ट्र' ही को यह अधिकार प्राप्त है कि वह अपने ऊपर शासन करे।

यह तो उस 'राष्ट्रीयता' के गुण थे ,परन्तु इसके साथ हमे इसके दुर्गुणो पर भी दृष्टिपात करना चाहिए

(१) यह सब जो कुछ हुआ केवल योरप मे हुआ और योरप-निवासियो मे हुआ, योरप की सीमा से बाहर के लिए न तो मानवीय स्वतत्रता की घोषणा प्रभावशाली हो सकी और न ही ऐसा लगता है कि राष्ट्रीय अधिकारो की अवधारणा। प्राचीन रोमी सिद्धातानुसार योरप ने निर्णय कर लिया कि दुनिया उच्च और निम्न जातियो मे विभक्त है। स्वतत्रता और अधिकार के सपूर्ण सिद्धात उच्च राष्ट्र के लिए है न कि निम्न राष्ट्र के लिए। योरप और अमरीका इस श्रेष्ठ ससार का अर्ध भाग है। शेष ससार निम्न राष्ट्रो का भाग है। अत उसे कोई अधिकार नही कि वह उस मानवीय स्वतत्रता और राष्ट्रीय अधिकार की माग करे जो उच्च और श्रेष्ठ मनुष्यो के लिए सुरक्षित है।

(२) फ्रास उस समय अपने देश मे स्वतत्रता की तृतीय क्राति की तैयारी कर रहा था उस समय किसी फ्रासीसी के मन मे यह विचार उत्पन्न भी नही हुआ कि स्वतत्रता की अमीर अब्दुल-कादिर-जजाएरी और उसके दुर्भाग्यग्रस्त राष्ट्र को भी आवश्यकता है या नही जिसे फ्रास ने अपने सैन्य बल से दासता स्वीकार करने पर विवश कर दिया है? आज फ्रास की स्वतत्रता प्रचारक 'राष्ट्रीयता' सीरिया मे जो कुछ कर रही है वह दुनिया के सामने है। इग्लिस्तान कहता है कि वह छोटे राष्ट्रो का रक्षक है, स्वतत्रताप्रेमियो का सहायक है, देशभक्तो का आश्रयदाता है। परन्तु ऐसा सब कुछ किन परिस्थितियो मे होता है और किनके लिए होता है? निश्चय ही उसने रूस से भागने वालो को आश्रय दिया, फ्रास के निर्वासितो के लिए अपने द्वार खोल दिए, यूनान की स्वतत्रता के लिए अपना राष्ट्रकवि अर्पित कर दिया, इटली के मैजिनी को अपने यहा रहने की सुविधा दे दी और योरप मे क्राति के अगणित नक्शे लदन की गलियो और मकानो मे बनाए गए। परन्तु पूर्वी देशो और एशिया के लिए इसकी यह 'स्वतत्रताप्रिय' राष्ट्रीयता क्या निर्णय करती रही? वह रूस और आस्ट्रिया के पीडितो को आश्रय देता रहा किन्तु स्वय उसकी बर्बरता और परभूमिलोलुपता से पीडित व्यक्तियो के लिए उसके पास शरण देने का क्या उपाय था? इसके उत्तर की आवश्यकता नही क्योकि आज पूर्वी देशो और एशिया का प्रत्येक क्षेत्र अपनी दुर्गति की कथा द्वारा इसका उत्तर दे रहा है।

आवश्यक था कि इस स्थिति के प्रति प्रतिक्रिया भी उत्पन्न हो। १९वी शताब्दी अभी अधिक आगे नही बढी थी कि इस प्रतिक्रिया के लक्षण परिलक्षित होने लगे। समाज के निम्न

वर्गो ने देखा कि स्वतत्रता और समानता के लिए इतने कोलाहल के पश्चात् भी वास्तविक स्वतत्रता और समानता नियमित रूप से अनुपस्थित है। वर्तमान राष्ट्रीय व्यवस्था, जो स्वतत्रता और समानता के आधार पर स्थापित हुई थी, अब स्वत स्वतत्रता और समानता के मार्ग मे अवरोधक हो गई है। आधुनिक युग से पूर्व दुनिया मे अत्याचार करने की क्षमता और विशेषाधिकार केवल कुछ व्यक्तियो और कुछ परिवारो को प्राप्त थे किन्तु यह अब बडे समूहो के अधिकार-क्षेत्र मे आ गए है। परिणामत समानता और न्याय की यह विरोधी शक्तिया पहले के समान अब घनीभूत है, केन्द्रीयभूत नही है, फिर भी जहा तक मानवीय स्वतत्रता और समानता का सबध है मानवता अब भी उसी प्रकार उससे वचित है जैसे पहले थी।

इससे भी अधिक यह हुआ कि पूजीवाद की शक्ति ने अब पहले से भी कही ज्यादा सत्ता प्राप्त कर ली है। पहले मनुष्य पर जो अधिकार और प्रभुता की जो शक्ति राज परिवार और सामती परपराये प्राप्त कर सकती थी, अब वह समस्त सत्ता कुछ महीनो और वर्षो मे एक पूजीपति केवल अपने धन के बल पर प्राप्त कर लेता है और दुनिया के युद्ध और शाति तथा देशो और राष्ट्रो की स्वाधीनता और पराधीनता की लगाम तुरन्त उसके हाथो मे चली जाती है।

१९वी शताब्दी के 'समाजवाद' का बीजारोपण इसी के विरुद्ध प्रतिक्रिया का फल था। अब यह बढते-बढते 'साम्यवाद' तक पहुच गया है और न केवल योरपीय राष्ट्रीय व्यवस्था बल्कि सपूर्ण सामाजिक व्यवस्था को ही उलट देना चाहता है।

योरप का विश्वयुद्ध राष्ट्रीयता की इस व्यवस्था की विफलताओ की सबसे बडी घोषणा थी। पाच वर्षो तक रक्तपात करने और आग से खेलने के पश्चात् जब दुनिया पुन सचेत हुई तो जीवन और शाति की खोज पुन आरभ हो गई। उन सभी लोगो ने, जिनकी चेतना राष्ट्रीय राजव्यवस्था के स्वार्थो से प्रदूषित न थी, अनुभव कर लिया कि पिछली व्यवस्था अब दुनिया को दीर्घकाल तक सतुष्ट नही रख सकती। **योरप के दार्शनिको और चितको का एक बडा दल उभर कर आया है जो राष्ट्रीयता की इस भीषणता से ऊब गया है और 'राष्ट्रीयता' के स्थान पर** 'मानवता' की विशालता की खोज कर रहा है। नाना प्रकार की नवीन अवधारणाए और नवीन योजनाए बुद्धि विकसित कर रही है—"दुनिया की सामाजिक व्यवस्था का नवनिर्माण" और 'मानवजाति का बधन रहित विस्तार।" किन्तु इस समय तो यह चिन्तन का अधिक महत्त्वपूर्ण और रोचक विषय मात्र है।

यदि दुनिया के वर्तमान चितन पर उसकी समग्रता मे दृष्टिपात किया जाए तो स्पष्टत दिखाई पडता है कि एक ऋतु का अत हो रहा है और दूसरी का आगमन होने ही वाला है। हम जिस युग मे रह रहे है उसमे यदि भावी इतिहासकार सक्राति काल के लक्षण ढूढे तो आश्चर्य नही। कहा नही जा सकता कि नई ऋतु का सदेश क्या होगा? परन्तु यह अवश्य है कि दुनिया इस समय तक सामाजिक घेरो मे घिरी रही है और उससे एक अधिक विस्तृत घेरे की ओर वह पग बढाएगी। क्या वह 'मानवता और 'मानवीय भ्रातृत्व' की मजिल होगी? क्या दुनिया उस शिखर तक पहुच गई है जिस तक अब से १३ सौ वर्ष पूर्व इस्लाम ने उसे पहुचाना चाहा था, **किन्तु वह नही पहुच सकी थी? इसका उत्तर केवल भविष्य ही दे सकता है। परन्तु इस समय इसके** उत्तर की आवश्यकता नही है। हमे इस समस्या का समाधान करना है कि वर्तमान परिस्थितियो मे हमे क्या करना चाहिए? अर्थात् जहा तक 'राष्ट्र' और 'राष्ट्रीयता' का सबध है, हमारी कार्यनीति क्या होनी चाहिए? यह बात तो निश्चित है कि शाति की स्थापना और राष्ट्रीयता के सुधार के लिए न केवल इस्लामी समुदाय को बल्कि समस्त समुदायो को इस्लामी दृष्टिकोण के अनुकूल ही आचरण करना पडेगा।

भाग २

ख्याति का चरमशिखर : १९१६–१९४७

धर्म, राजनीति और साहित्य

क़ौल-ए-फ़ैसल
निर्णायक अधिमत

"इस्लाम इस बात की अनुमति नही देता कि मुसलमान स्वाधीनता के अभ्यर्पण के पश्चात् जीवित रहे। उन्हे या तो स्वाधीन रहना चाहिए या मिट जाना चाहिए। इस्लाम मे इनके अतिरिक्त अन्य किसी तीसरे मार्ग के लिए स्थान नही है।"

क़ौल-ए-फ़ैसल *

मेरी इच्छा न थी कि कोई मौखिक या लिखित वक्तव्य यहा प्रस्तुत करू। यह एक ऐसा स्थान है जहा हमारे लिए न तो किसी प्रकार की आशा है, न अभियाचना है, न शिकायत है। यह एक माड है जिसे पार किए बिना हम गन्तव्य स्थान तक नही पहुच सकते। इसलिए थोडी देर के लिए अपनी इच्छा के विरुद्ध यहा हमे दम लेना पडता है। यह बात न होती तो हम सीधे जेल चले जाते।

यही कारण है कि पिछले दो वर्षो के भीतर मैने सदैव इस बात का विरोध किया कि कोई असहयोग आन्दोलनकारी किसी प्रकार भी न्यायालय की कार्यवाही मे भाग ले। अखिल भारतीय कांग्रेस समिति, केन्द्रीय खिलाफत कमेटी और जमीअत-उल-उलमा-ए-हिन्द ने यद्यपि इसकी अनुमति दे दी है कि जनसाधारण की शिक्षा के हेतु लिखित वक्तव्य दिया जा सकता है किन्तु व्यक्तिगत रूप मे मै लोगो को यही परामर्श देता रहा हू कि मौन रहने को ही प्राथमिकता दे। मै **समझता हू कि जो व्यक्ति इसलिए वक्तव्य देता है कि वह अभियुक्त नही है, यद्यपि उसका उद्देश्य जनसाधारण का शिक्षण हो, फिर भी वह सदेहो से परे नही है। हो सकता है कि अपने** बचाव की एक हल्की सी इच्छा और सच्चाई के सुने जाने की एक क्षीण आशा उसके अन्तस्तल मे काम कर रही हो, हालाकि असहयोग का मार्ग नितात स्पष्ट और दुविधारहित है किन्तु वह इस सबध मे सदिग्धता भी सहन नही कर सकता।

पूर्ण निराशा, इसलिए पूर्ण परिवर्तन का दृढ़ संकल्प

असहयोग' वर्तमान स्थिति मे पूर्ण निराशा का परिणाम है और इसी निराशा से पूर्ण परिवर्तन का सकल्प उत्पन्न हुआ है। एक व्यक्ति जब सरकार से असहयोग करता है तो जैसे वह इस बात का उद्घोष करता है कि वह सरकार के न्याय और उसकी सत्यप्रियता से निराश हो चुका है। वह अन्यायी शक्ति के औचित्य को नकारता है और इसलिए परिवर्तन का इच्छुक है। **अत जिस बात से वह इतना हताश हो चुका है कि परिवर्तन के अतिरिक्त अन्य उपाय उसे नही सूझता, वह कैसे उस शक्ति से किसी तरह का न्याय पाने की आशा कर सकता है?**

इस सैद्धातिक तथ्य के प्रति यदि उपेक्षादृष्टि रखी जाए तब भी वर्तमान स्थिति मे अभियोग से मुक्ति की आशा रखना एक व्यर्थ कष्ट भोग से अधिक कुछ नही है। यह अपनी

---

* २१ दिसम्बर, १९२१ ई० को मौलाना आजाद कलकत्ता मे गिरफ्तार किए गए। उन्होने मुकदमे की कार्यवाही मे भाग नही लिया किन्तु २४ जनवरी १९२२ ई० को एक लिखित वक्तव्य प्रस्तुत किया जिसका शीर्षक कौल-ए-फैसल (निर्णायक अधिमत) है। इन्हे ९ फरवरी को एक वर्ष का परिश्रम सहित दण्ड दिया गया और अलीपुर जेल मे रखा गया। न्यायालय से जाने से पूर्व उन्होने मुस्कुराते हुए मजिस्ट्रेट से कहा था— यह दड बहुत हल्का है और मेरी आशा से अत्यधिक कम है।

अभिज्ञता को नकारना होगा। सरकार के अतिरिक्त कोई भी बुद्धि रखने वाला इस बात से इकार नहीं कर सकता कि वर्तमान परिस्थितियो में सरकारी न्यायालय से न्याय की कोई आशा नही है। इसलिए नही कि उसमे ऐसे व्यक्ति सम्मिलित है जिन्हे न्याय करना रुचिकर नहीं बल्कि इसलिए कि यह ऐसी व्यवस्था पर आधारित है जिनमे रहकर कोई न्यायाधीश उन अभियोगियों के साथ न्याय नही कर सकता जिनके साथ स्वय सरकार न्याय करना पसद न करती हो।

मै यहा स्पष्ट कर देना चाहता हू कि 'असहयोग' का सबोधन केवल सरकार, सरकार की व्यवस्था और वर्तमान शासनिक तथा राष्ट्रीय सिद्धातो से है, व्यक्तियो से नही है।

इतिहास साक्षी है कि जब कभी सत्ताधारी शक्तियो ने स्वतत्रता और सत्य के विरुद्ध हथियार उठाए है तो न्यायालयो ने सबसे अधिक सुविधाजनक और अमोघ हथियार का काम दिया है। न्यायालय का अधिकार एक शक्ति है और वह न्याय और अन्याय दोनो के लिए उपयुक्त हो सकती है। न्यायनिष्ठ सरकार के हाथ मे तो यह सत्य और न्याय का उत्तम साधन है किन्तु अत्याचारी और निरकुश सरकारो के लिए इससे बढकर प्रतिशोध और अन्याय का अन्य उपकरण भी नही है।

विश्व इतिहास के सबसे बडे अन्याय युद्धस्थल के पश्चात् न्यायालय के भवनो मे ही हुए है। दुनिया के पुण्यात्मा धर्मसस्थापको से लेकर वैज्ञानिक अनुसधानकर्ताओ और आविष्कारको तक कोई पुनीत और सत्यनिष्ठ समूह नही है जो अभियुक्तो के समान न्यायालय के सम्मुख खडा न किया गया हो।

एक विलक्षण किन्तु भव्य स्थान

न्यायालय के अन्यायो की सूची बडी ही लम्बी है। इतिहास आज तक इस पर प्रलाप करने से मुक्त नहीं हो सका। हम इसमे हजरत मसीह जैसी पुण्यात्मा को देखते हैं जो अपने युग के विदेशी न्यायालय के सम्मुख चोरो के साथ खडे किए गए थे। हमको इसमे सुकरात दृष्टिगोचर होते है जिनको केवल इसलिए विष का प्याला पीना पडा कि वह अपने देश के सबसे अधिक सत्यवादी व्यक्ति थे। हमको इसमे फ्लोरेस के सत्यआसक्त गैलेलियो का नाम मिलता है जो अपने ज्ञान और निरीक्षण को इसलिए न झूठला सका कि तत्कालिक न्यायालय की दृष्टि मे उन्हे प्रकट करना अपराध था। हमने हजरत मसीह को मानव कहा है क्योकि मेरे विश्वासानुसार वह एक पुण्यात्मा थे जो सदाचार और प्रेम का आसमानी सदेश लेकर आए थे। परन्तु करोडो मनुष्यों के विश्वासानुसार तो वह इसमे भी बढकर है 'फिर भी अभियुक्तो का यह कटहरा कैसा विलक्षण किन्तु भव्य स्थान है जहा सबसे अच्छे और सबसे बुरे दोनो प्रकार के मनुष्य खडे किए जाते हैं ! इतनी महान विभूति के लिए भी यह स्थान अनुचित नही।

ईश्वर की स्तुति और आभार

इस स्थान के वैभवशाली और गूढ इतिहास पर जब मै विचार करता हू और देखता हू कि इसी स्थान पर खडे होने का सौभाग्य मुझे प्राप्त हुआ है तो अनायास मेरी आत्मा ईश्वर की स्तुति करने और आभार प्रकट करने मे तल्लीन हो जाती है और केवल ईश्वर ही जान सकता है कि मेरे मन के आनन्दोल्लास की क्या दशा होती है? मैं अभियुक्तो के इस कटहरे मे महसूस करता हूँ कि मै बादशाहो के लिए ईर्ष्या का पात्र हू।

वस्तुत मेरी इच्छा न थी कि वक्नव्य दू। परन्तु ६ जनवरी को जब मेरा मुकदमा न्यायालय मे प्रस्तुत हुआ तो मैने देखा कि सरकार मुझे दण्ड दिलाने के सबध मे अत्यन्त विवश और आतुर है, जबकि मैं ऐसा व्यक्ति हू जिसे उसकी इच्छा और विचार के अनुसार सबसे पहले और सबसे अधिक दण्ड मिलना चाहिए।

पहले मेरे विरुद्ध दण्ड प्रक्रिया सहिता की सशोधित धारा १७ (२)[1] के अन्तर्गत अभियोग चलाया गया था। परन्तु जब उसका ऐसा प्रमाण प्रस्तुत न हो सका जैसा आजकल अभियोग सिद्धि के लिए पर्याप्त समझा जाता है तो विवशत ये धारा वापस ले ली गई। अब धारा १२४-अ[2] के अन्तर्गत मुकदमा चलाया गया है। लेकिन दुर्भाग्यवश यह भी उद्देश्यपूर्ति के लिए पर्याप्त नही है।

यह देखकर मेरी राय बदल गई है। मैने महसूस किया कि जो कारण वक्तव्य न देने का था वही अब इस बात की माग करता है कि चुप न रहू और जिस बात को सरकार जानते हुए भी प्रमाणित नही कर सकती उसे स्वत पूर्णतया स्वीकार करके अपनी लेखनी से लिख दू।

'अपराध' का प्रतिग्रहण

हिन्दोस्तान की वर्तमान नौकरशाही एक वैसी ही शासनिक सत्ता है जैसी सत्ता देश और राष्ट्र की क्षीणावस्था के कारण बलशाली मनुष्य सदैव प्राप्त करते रहे है। स्वभावत यह सत्ता राष्ट्रीय जागरण के विकास क्रम और स्वतत्रता तथा न्याय के सघर्ष को घृणास्पद समझता है क्योकि इसका अनिवार्यत परिणाम अन्यायनिष्ठ सत्ता का विनाश है और कोई भी अपने अस्तित्व के विघटन को पसद नही कर सकता, यद्यपि न्याय दृष्टि से वह कितना ही आवश्यक क्यो न हो। यह जीवन सघर्ष का एक सग्राम होता है जिसमे उभय पक्ष अपने-अपने हितो के लिए सघर्ष करते है। राष्ट्रीय जागरण चाहता है कि अपना अधिकार प्राप्त करे। आधिपत्य प्राप्त शक्ति चाहती है कि अपनी जगह से न हटे। कहा जा सकता है कि पहले पक्ष के समान ही दूसरा पक्ष भी निदनीय नही है क्योकि वह भी अपने बचाव के लिए हाथ-पाव मारता है, यह दूसरी बात है कि उसका अस्तित्व न्याय-विरुद्ध हो। हम स्वभावगत गुणो से तो इकार नही कर सकते? वास्तविकता यह है कि दुनिया मे नेकी के समान बुराई भी जीवित रहना चाहती है, चाहे वह स्वय कितनी ही निदनीय क्यो न हो।

हिन्दोस्तान मे भी यह स्पर्धा आरम्भ हो गई है। इसलिए यह कोई असाधारण बात नही है कि नौकरशाही की दृष्टि मे स्वतत्रता और अधिकारप्राप्ति का सघर्ष अपराध हो और वह उन लोगो को कठोर दड का पात्र समझे जो न्याय के नाम पर उसके अन्यायपूर्ण अस्तित्व के विरुद्ध युद्ध कर रहे है। मै स्वीकार करता हू कि मैं न केवल इसका अपराधी हूँ बल्कि उन लोगो मे से हू जिन्होने इस अपराध का बीजारोपण अपने देशवासियो के हृदयो मे किया है और उसके सिचन के लिए अपना सम्पूर्ण जीवन अर्पित कर दिया है। मै भारतीय मुसलमानो मे पहला व्यक्ति हू जिसने सन् १९१२ मे अपने समुदाय का आह्वान इस अपराध कर्म के लिए किया था और तीन वर्ष के अन्दर उस दास्ताग्रस्त प्रवृत्ति से उन्हे विमुख कर दिया था जिसमे सरकार ने अपने कुटिल छलछदो द्वारा उन्हे प्रवृत्त कर रखा था। अत यदि सरकार मुझे अपने विचारानुसार दोषी समझती

१ धारा १७ (२)

२ १२४-अ

है और इसलिए दड दिलाना चाहती है तो मैं स्वच्छ मन से स्वीकार करता हूँ कि यह कोई आशातीत बात नही है जिसके लिए मुझे शिकायत हो।

गिरफ्तारी का वास्तविक कारण

१७ नवम्बर के पश्चात् दुनिया की उन समस्त वस्तुओ मे से जो चाही जा सकती है सरकार द्वारा वह यह थी कि २४ नवम्बर को जब राजकुमार कलकत्ते पहुचे तो हडताल न हो और जो बर्बरतायुक्त मूर्खता दड प्रक्रिया सहिता १९०८ के सशोधित कानून के लागू करने में हुई है वह एक दिन के लिए ही स्वीकार कर ली जाए। सरकार सोचती थी कि मेरी और श्री सी० आर० दास की उपस्थिति इसमे बाधक है इसलिए कुछ समय तक दुविधाग्रस्त रहने और सोच-विचार करने के पश्चात् हम दोनो गिरफ्तार कर लिए गए।

मै पिछले दो वर्षो के अन्दर बहुत कम कलकत्ता मे रह सका हू। मेरे सपूर्ण समय का अधिकाश भाग खिलाफत आन्दोलन के केन्द्र-सचालित कार्यों मे लगा है या देश के निरतर दौरो मे।

बहुधा ऐसा हुआ कि महीने दो महीने के पश्चात् कुछ दिनो के लिए कलकत्ता आया और बगाल प्रातीय खिलाफत कमेटी के कामो की देखभाल करके फिर बाहर चला गया।

लेकिन अकस्मात बगाल सरकार के तत्कालीन अत्याचारो और १८-क की विज्ञप्ति की सूचना बम्बई मे मिली तो मेरे लिए असभव हो गया कि ऐसी स्थिति मे कलकत्ते से बाहर रहू। मैने महात्मा गाधी से परामर्श किया। उनकी भी यही राय हुई कि मुझे समस्त कार्यक्रम स्थगित करके कलकत्ता चला जाना चाहिए। अधिक चिता हमे इस बात की थी कि कही ऐसा न हो कि सरकार की क्रूरता और बर्बरता लोगो को निरकुश न कर दे और धैर्य तथा सहनशीलता के प्रतिकूल कोई कदम वह उठा बैठे।

मैं पहली दिसम्बर को कलकत्ता पहुचा। मैने अत्याचार और सहनशक्ति दोनो की पराकाष्ठा के दृश्य देखे।

मैने देखा कि १७ नवम्बर की स्मरणीय हडताल से विवश होकर सरकार उस आदमी के समान हो गयी है जो आवेग और आक्रोश मे आपे से बाहर हो जाए और जिसके लिए क्रोधवश कुछ भी कर डालना असभव न हो। सन् १९०८ के अपराध अधिनियम के सशोधन के अन्तर्गत समस्त राष्ट्रीय स्वयसेवी सस्थाए 'अवैधानिक भीड' घोषित की गई है, सार्वजनिक सभाए बिल्कुल निषिद्ध कर दी गई है, कानून केवल पुलिस की मनमानी का नाम है। वह 'अवैधानिक दलो' की जॉच-पडताल करने के सबध मे और सदेह के आधार पर जैसी कार्यवाही चाहे कर सकती है।

इसकी तुलना मे लोगो ने भी सहनशीलता और दृढता दोनो की जैसे पूर्ण प्रतिज्ञा कर ली है। स्पष्टत दिखाई पडता है कि न तो लोग अपने मार्ग से विचलित होगे और न हिसा का मुकाबला करेगे।

इन परिस्थितियो मे मेरे लिए कर्तव्यमार्ग आदि से अत तक स्पष्ट था। मैने अपने सम्मुख दो वास्तविकताए अनावृत देखी—एक यह कि सरकार की सपूर्ण शक्ति कलकत्ते मे केन्द्रित हो गई है। इसलिए जय-पराजय का प्रथम निर्णय यही होगा। दूसरी यह कि हम कल तक पूर्ण स्वतत्रता के लिए सघर्ष कर रहे थे किन्तु वर्तमान परिस्थिति ने बता दिया कि स्वतत्रता के हमारे मूलभूत आधार तक सुरक्षित नही हैं। बोलने की स्वतत्रता और एकत्रित होने की आजादी मनुष्य

के जन्मसिद्ध अधिकार है। इनको पद्दलित करना विख्यात दार्शनिक मिल के शब्दो मे "मानवता की सर्वजनीन हत्या से कुछ ही कम" कहा जा सकता है, किन्तु इन्हे निस्सकोच और खुलमखुल्ला कुचला जा रहा था। अत मैने बाहर के सारे कार्यक्रम स्थगित कर दिए और निर्णय कर लिया कि उस समय तक कलकत्ता मे ही रहूगा जब तक दो बातो मे से कोई एक बात पूर्ण न हो जाए या सरकार अपनी विज्ञप्ति और अपने आदेश वापस ले ले या मुझे गिरफ्तार कर ले।

दो वास्तविकताएं

सत्य यह है कि इन विगत दिनो ने एक साथ दोनो वास्तविकताए इतिहास के पृष्ठो के लिए उपलब्ध करा दीं। यदि एक ओर सरकार के मुखडे से दावो और दिखावे के सारे अवगुठन हट गए तो दूसरी ओर देशीय शक्ति भी एक कठोर परीक्षा मे तप कर पूर्णत निखर गई। दुनिया ने देख लिया कि यदि सरकार हर प्रकार की अपनी क्रूरता एव हिसा मे नितात निर्लज्ज और निरकुश है तो देश मे भी धैर्य और सहनशक्ति प्रतिदिन विकसित होती जा रही है। जिस प्रकार हमेशा यह झूठा साबित किया गया है वैसे आज भी इसका अवसर प्राप्त है कि इसे नकारा जा सकता है, किन्तु कल यह इतिहास के लिए एक अत्यन्त शिक्षाप्रद वृत्तान्त होगा। इससे भविष्यत् को मार्ग दर्शन मिलेगा कि नैतिक मनोबल द्वारा बचाव भौतिक शक्ति के आक्रमणात्मक दर्प को चूर्ण कर सकता है ? और यह कैसे हो सकता है कि केवल सहनशक्ति और बलिदान के द्वारा हिसक हथियारो का मुकाबला किया जाए। मै इतना अवश्य जानता हूँ कि इन दोनो पक्षो मे से किस पक्ष के अन्दर उस महामानव की शिक्षा खोजी जाए जो बुराई के विरुद्ध धैर्य और क्षमा की शिक्षा देने आया था ? सरकार मे या देश मे ? मै सोचता हूँ कि नौकरशाही के पदाधिकारी उसके नाम से अपरिचित न होगे। उसका नाम 'मसीह' था।

इतिहास-दर्शन हमे बतलाता है कि मूर्खता और अदूरदर्शिता हमेशा पतनोन्मुख शक्तियो के सहचर होते है। सरकार ने सोचा कि आतक द्वारा वह खिलाफत-आन्दोलन और स्वराज-आन्दोलन को कुचल देगी तथा दिनाक चौबीस की हडताल रुक जायेगी। लेकिन तुरन्त ही सरकार को ज्ञात हो गया कि क्रूरता और हिसा जब राष्ट्रीय जागृति के समकक्ष होती है तो वह कोई घातक वस्तु नही रह जाती।

प्रतिग्रहण

मैं स्वीकार करता हू कि मैने न केवल इन्ही दो अवसरो पर बल्कि गत दो वर्षो के अन्दर अपने असख्य भाषणो मे यह और इसी आशय से प्रेरित इससे कही अधिक स्पष्ट और सुनिश्चित वाक्य कहे है। ऐसा कहना मेरे धर्मानुसार मेरा कर्तव्य है। मै कर्तव्य-पालन से इसलिए मुह नही मोड सकता कि वह १२४ (अ) के अन्तर्गत अपराध समझा जायेगा। मै अब भी ऐसा ही कहना चाहता हू, और जब तक बोल सकता हू ऐसा ही कहता रहूगा। यदि मै ऐसा न कहू तो अपने आपको ईश्वर और उसके भक्तो के समक्ष घोरतम पापाचार मे लिप्त समझूगा।

निस्सदेह मैने कहा है कि "वर्तमान सरकार अन्यायी है" किन्तु यदि मैं यह न कहूँ तो और क्या कहूँ ? मै नही जानता कि मुझसे यह आशा की जाए कि एक वस्तु को उसके वास्तविक नाम से न पुकारू ? मै काले को श्वेत कहने से इन्कार करता हू।

मैं कम से कम और मधुर से मधुर शब्द जो इस बारे मे बोल सकता हूँ यही है। ऐसा सत्यवचन जो इससे सक्षिप्त हो, मेरी जानकारी मे कोई नही।

मैं निश्चय ही यह कहता रहा हूँ कि हमारी कर्तव्यनिष्ठा के सम्मुख दो ही मार्ग है—सरकार अन्याय और अधिकारापहरण न करे। यदि वह ऐसा नही कर सकती हो तो मिटा दी जाए। मै नही जानता कि इसके अतिरिक्त और क्या कहा जा सकता है? यह तो मानवीय विश्वासो की **इतनी पुरानी सच्चाई** है कि केवल पहाड और समुद्र ही इसके समवयस्क हो सकते है। जो चीज बुरी है उसे या तो ठीक हो जाना चाहिए या मिट जाना चाहिए। तीसरी बात क्या हो सकती है? मै जब इस सरकार की बुराई पर सदेह नही करता तो निश्चय ही यह प्रार्थना नही कर सकता कि वह सुधरे भी नही और उसकी आयु मे वृद्धि भी हो।

मेरा और मेरे करोडो देशवासियो का ऐसा विश्वास क्यो है? मै कहना चाहता हूँ कि मेरा यह विश्वास इसलिए है कि मैं हिन्दुस्तानी हूँ, इसलिए है कि मै मुसलमान हूँ, इसलिए है कि मै मनुष्य हूँ।

मै मानता हूँ कि स्वाधीनता हर व्यक्ति और प्रत्येक राष्ट्र का जन्मसिद्ध अधिकार है। कोई मनुष्य या मनुष्य निर्मित नौकरशाही यह अधिकार नही रखती कि ईश्वर के भक्तो को अपना दास बनाये। पराधीनता और दासता के कैसे भी रोचक नाम क्यो न रख लिए जाए लेकिन वह दासता ही है और ईश्वरीय आदेश उसके अधिनियमो के विरुद्ध है। मै वर्तमान सरकार को न्यायोचित सरकार नही स्वीकार करता। अत मै अपना देशगत, धर्मगत, और मनुष्यगत कर्तव्य समझता हूँ कि उसकी पराधीनता से देश एव राष्ट्र को मुक्ति दिलाऊँ।

'सुधारो' और शनै -शनै 'अधिकार विस्तार का कुविख्यात छलछद मेरे इस स्पष्ट और सुनिश्चित विश्वास मे कोई भ्रम उत्पन्न नही कर मकता था। स्वतत्रता मनुष्य का जन्मसिद्ध अधिकार है और किसी मनुष्य को अधिकार नही कि वह अधिकारो को सीमाबद्ध करे और उन्हे टुकडो मे विभक्त करे। यह कहना कि किसी राष्ट्र को उसकी स्वतत्रता शनै -शनै मिलनी चाहिए बिल्कुल ऐसी ही बात है जैसे कहा जाए कि स्वामी को उसकी सम्पत्ति और ऋणी को दिया जाने वाला ऋण उसको टुकडे-टुकडे करके देना चाहिए।

यदि कोई व्यक्ति हमारी सम्पत्ति अपहृत करके बहुत अच्छे और सुकृत्य कार्य करे तो उसके कामो की अच्छाइयो के कारण उसका अपहरण उचित नही हो जाता।

न्यूनाधिक्य और गुणवत्ता की दृष्टि से बुराई को विभाजित किया जा सकता है किन्तु गुण और अवगुण के सबध से वह केवल एक ही प्रकार की होती है, अर्थात् इस दृष्टि से वह विभक्त हो सकती है कि वह कितनी बुरी है और किस प्रकार से बुरी है? इस दृष्टि से उसका विभाजन नही हो सकता कि वह अच्छी है या बुरी है? हम यह कह सकते है कि 'अधिक बुरी चोरी' और 'कम बुरी चोरी' लेकिन यह तो नही कह सकते 'अच्छी चोरी' और 'बुरी चोरी'? अत मै नौकरशाही की अच्छाई और उसके औचित्य का किसी स्थिति मे भी अनुमान नही कर सकता क्योकि वह अपने आप मे एक निष्प्रयोजन कार्य है।

मै मुसलमान हूँ और मुसलमान होने के नाते भी मेरा धार्मिक कर्तव्य यही है। इस्लाम किसी ऐसे शासन को युक्तियुक्त नही मानता जो किसी व्यक्ति का हो और या जो कुछ वेतनभोगी पदाधिकारियो की नौकरशाही के हाथ मे हो। इस्लाम स्वाधीनता और जनतत्र की एक पूर्ण व्यवस्था है जो मानव जाति को उसकी अपहृत स्वतत्रता वापस दिलाने के लिए आया था। यह स्वतत्रता सम्राटो, विदेशी शासको, स्वार्थी धार्मिक नेताओ और समाज के बलशाली

दलो ने हडप कर रखी है। वो समझते थे कि 'बाहुबल' और 'प्रभुता' ही वास्तविकता है। परन्तु इस्लाम ने अपने उदय काल मे ही घोषणा की कि शक्ति वास्तविकता नही है बल्कि स्वय स्वत्व अधिकार है और ईश्वर के अतिरिक्त किसी मनुष्य के लिए शोभनीय नही है कि ईश्वर-जनो को शासित करे और दास बनाए। उसने भेदभाव और श्रेष्ठता के समस्त राष्ट्रीय और नस्ली चिह्नो को बिल्कुल ही मिटा दिया और दुनिया को बतला दिया कि सारे मनुष्य बराबर है और सबके अधिकार समान है। वश, जाति, वर्ण, श्रेष्ठता के माप नही है बल्कि श्रेष्ठता का मापदड केवल कर्म है और सबसे बडा वही है जिसके कर्म सबसे अच्छे है "मनुष्यो, देखो हमने तुम्हे स्त्री और पुरुष के रूप मे बनाया है और तुम्हे समुदायो एव कबीलो मे विभक्त किया है ताकि तुम एक दूसरे को जान सको। विधाता की दृष्टि मे उसी व्यक्ति का चरित्र श्रेष्ठ है जिसका आचरण शुद्धतम है।"

इस्लाम के पैगम्बर और उनके उत्तराधिकारियो का शासन पूर्णतया जनतात्रिक था और समुदाय के मत पर एक मात्र निर्भरता, प्रतिनिधित्व एव निर्वाचन के तत्त्वो से इसका गठन हुआ था। यही कारण है कि इस्लामी पारिभाषिक शब्दावली मे जैसे व्यापक और श्रेष्ठ शब्द इस प्रकार के विचारो का बोध कराने के लिए उपलब्ध हैं वैसे कदाचित ही दुनिया की किसी अन्य भाषा मे पाए जाये। इस्लाम ने 'सम्राट' की प्रभुता और उसके व्यक्तित्व से इन्कार किया है और केवल गणतत्र के एक प्रमुख का पद स्वीकार किया है परन्तु उसको भी 'खलीफा' की उपाधि दी है जिसका शाब्दिक अर्थ है प्रतिनिधित्व। इस प्रकार उसका अधिकार केवल प्रतिनिधित्व करने का है। इससे अधिक अन्य अधिकार उसे अप्राप्य है।

जब इस्लाम मुसलमानो का यह कर्तव्य निर्धारित करता है कि वह ऐसे इस्लामी शासन को भी न्याययुक्त स्वीकार न करे जो समुदाय के मतदान और निर्वाचन द्वारा स्थापित न हो तो फिर स्पष्ट है कि मुसलमानो के लिए एक विदेशी नौकरशाही के सबध मे आदेश क्या हैं ? यदि आज हिन्दुस्तान मे एक शुद्ध इस्लामी शासन स्थापित हो जाए किन्तु उसकी व्यवस्था भी वैयक्तिक शासन पर आधारित हो, या कतिपय शासको की नौकरशाही उसका आधार हो तो मुसलमान होने के कारण उस समय भी मेरा धर्म यही होगा कि उसको अत्याचारी कहूँ और परिवर्तन का आग्रह करूँ।

मैं स्वीकार करता हूँ कि यह व्यवस्था इसके पश्चात् स्थापित न रह सकी। पूर्वी रूमी शासन और ईरानी साम्राज्य के वैभवशाली वृत्तान्तो ने मुसलमान शासको को पथभ्रष्ट कर दिया। इस्लामी खलीफा के स्थान पर जो बहुधा फटे-पुराने कपडो से एक साधारण व्यक्ति के समान तन ढकता था, मुसलमान शासको ने (रूमी सम्राटो की उपाधि) और किस्रा (ईरान का सम्राट नौशेरवॉ) बनने-को प्रधानता दी। फिर भी इस्लामी इतिहास का कोई युग भी ऐसे मुसलमानो से रिक्त नही रहा है जिन्होने खुल कर तात्कालिक शासक के अत्याचारो और उसकी निरकुशता का विरोध न किया हो और उन समस्त कष्टो और सघर्ष की यातना को सहर्ष न झेला हो, जिनका सामना इस पथ के पथिको को करना पडता है।

एक मुसलमान से यह आशा रखना कि वह सत्य का उद्घोष न करे और अत्याचार को अत्याचार न कहे, ठीक ऐसी ही बात है जैसे यह कहा जाए कि वह इस्लामी जीवन त्याग दे। यदि तुम किसी व्यक्ति से इस बात का आग्रह करने का अधिकार नही रखते कि वह अपना धर्म त्याग दे तो निश्चय ही एक मुसलमान से यह माग भी नही कर सकते कि वह अत्याचार को अत्याचार न कहे क्योकि दोनो बातो का अभिप्राय एक ही है।

यह तो इस्लामी जीवन-पद्धति का वह तत्त्व है जिसे पृथक् कर देने के पश्चात् दूसरो से उसे भिन्न करने वाली उसकी बडी विशेषता विनष्ट हो जाती है। यही कारण है कि इस्लामी धर्माचरण की पुस्तक (कुरान) मे मुसलमानो को बताया गया है कि वो विधाता की भूमि मे 'साक्षी' है।

अर्थात् वह सत्य का साक्ष्य प्रस्तुत करने वाले है। एक समुदाय के रूप मे यही उनका सामुदायिक कर्तव्य है और यही उनका सामुदायिक चरित्र है जो उन्हे अतीत और भविष्य के समस्त समुदायो से भिन्न करता है। इस सबध मे इस्लाम के पैगम्बर के असख्य प्रवचनो मे से एक प्रवचन यह है कि "सदाचार का उद्घोष करो। दुराचार को रोको। यदि ऐसा न करोगे तो होगा यह कि तुम्हारे शासक अत्यत दुराचारी बन जायेगे और ईश्वरीय प्रकोप तुम्हे घेर लेगा। तुम प्रार्थना करोगे कि यह शासक टल जाये किन्तु तुम्हारी प्रार्थना स्वीकार न होगी।"

परन्तु इस कर्तव्य का निर्वाह कैसे हो? इस्लाम ने तीन विभिन्न परिस्थितियो मे इसकी तीन विभिन्न श्रेणिया बतलाई है। इस्लाम के पैगम्बर ने कहा है कि "तुम मे से जो व्यक्ति बुराई की बात देखे तो उसे चाहिए कि वह स्वय उसे दूर कर दे। यदि ऐसा करने मे सक्षम न हो तो मौखिक रूप से उसकी घोषणा करे। यदि ऐसा करने का भी सामर्थ्य अपने मे न पाये तो अपने मन मे ही उसको बुरा समझे। परन्तु यह अतिम अवस्था धर्मनिष्ठा की दुर्बल श्रेणी है।" (मुस्लिम-पैगम्बरी प्रवचनो के सग्रहकर्ता) हिन्दुस्तान मे हमे यह क्षमता प्राप्त नही है कि अपने हाथो से सरकार की बुराइया दूर कर दे। इसलिए हमने दूसरी श्रेणी को उपयोगी समझा है जिसकी दक्षता प्राप्त है अर्थात् वाणी द्वारा इस बुराई की घोषणा करते है।

इसलिए इस्लाम पूर्णरूपेण निर्भीकता और निर्वेद का आह्वान है। कुरान पदे-पदे कहता है कि "मुसलमान वह है जो विधाता के अतिरिक्त किसी से त्रस्त न हो। प्रत्येक स्थिति मे सच्ची बात कहे।"

इस्लाम के पैगम्बर ने कहा है कि "उस व्यक्ति की उत्तम मृत्यु होती है जो किसी आततायी शासन के सम्मुख सत्याभिव्यक्ति करे और उसके परिणामस्वरूप प्राणो की बलि दे" (अबुदाऊद-रसूल के प्रवचन को उद्धरित करने वाले) पैगम्बर जब किसी व्यक्ति को इस्लाम मे दीक्षित करते तो उसे एक प्रण यह करना होता था कि "मै सर्वदा सत्य की घोषणा करूगा, चाहे कही भी रहूँ और किसी भी परिस्थिति मे रहूँ" (बुखारी और मुस्लिम—रसूल के प्रवचनो के सग्रहकर्ता)।

जिन मुसलमानो के धार्मिक कर्तव्यो मे यह बात सम्मिलित है कि मरना स्वीकार कर ले किन्तु सच बोलने से मुँह न मोडे उनके लिए धारा १२४-अ का अभियोग निश्चय ही कोई अधिक भयानक वस्तु नही हो सकती, जिसका अधिक से अधिक दड आजीवन कारावास है।

प्रारम्भिककालीन मुसलमानो की सत्यवादिता की स्थिति यह थी कि राजधानी की एक वृद्धा महिला तात्कालिक खलीफा से सबके सामने खुलकर कह सकती थी कि "यदि तुम न्याय न करोगे तो तुम्हारे बाल नोच लिए जाएगे।" परन्तु खलीफा राज्य-द्रोह का अभियोग चलाने के स्थान पर विधाता के प्रति आभार प्रकट करता था कि समुदाय मे ऐसी सत्यवादी वाणिया विद्यमान है! शुक्रवार की नमाज के लिए एकत्रित लोगो के सम्मुख जब खलीफा मस्जिद की पीठिका पर अभिभाषण करने खडा होता और कहता कि "सुनो और आज्ञापालन करो" तो कोई व्यक्ति खडा हो जाता और कहता कि "न तो सुनेगे और न आज्ञापालन करेगे।" क्यो? "इसलिए कि तुम जो परिधान धारण किये हो वह तुम्हारे हिस्से के कपडे से अधिक का बना हुआ

है और यह चोरी है।'' इस पर खलीफा अपने बेटे को साक्षी के रूप मे प्रस्तुत करता है। बेटा सब को बताता है कि मैने अपने हिस्से का कपडा भी अपने पिता को दे दिया था और उससे ही यह वस्त्र बना है।

समुदाय का यह व्यवहार उस खलीफा के साथ था जिसके तेज और प्रताप ने मिस्र तथा ईरान के सिहासनो का ध्वस कर दिया था। फिर भी इस्लामी शासन मे कोई धारा १२४-अ न थी।

'हज्जाज' और 'रीडिंग'

हम मुसलमानो का जब अपनी जातीय शासन के साथ (जिनकी आज्ञा का पालन इस्लामी धर्माचार की दृष्टि से हमारे लिए अनिवार्य है) ऐसा व्यवहार रहा है तो फिर एक विदेशी शासन के कारिन्दे हम से क्या आशा रखते है ? ''क्या हिन्दुस्तान की विधिवत स्थापित'' सरकार हमारे लिए उस सरकार से भी अधिक सम्माननीय है जिसकी आज्ञा का पालन इस्लामी आचार सहिता के अनुसार हमारे लिए अनिवार्य है ? क्या इगलिस्तान की बादशाहत और लार्ड रीडिग द्वारा उसका प्रतिनिधित्व अब्द-उल-मलिक की खिलाफत और हज्जाज **बिन-यूसुफ** द्वारा उसके प्रतिनिधित्व मे भी हमारे लिए अधिक आदरणीय हो सकती है ? यदि हम 'विदेशी तथा अमुस्लिम''और ''जातीय और मुस्लिम'' का वैभवशाली तथा इस्लामी धर्माचार द्वारा निर्दिष्ट भेद को उपेक्षित कर दे तो भी हम से केवल यही आशा की जा सकती है कि जो कुछ हज्जाज बिन यूसुफ और खालिद कसरी के शासन के सबध मे हम कह चुके है वही बात 'चेम्सफोर्ड' और 'रीडिग' के शासन के बारे मे भी कहे। हमने उनसे कहा था कि ''विधाता से डरो क्योकि तुम्हारे अत्याचार से धरती भर गई है।'' यही हम आज भी कहते है।

वास्तविकता यह है कि आज हम अपनी दुर्बलता और विवशता के कारण हिन्दुस्तान मे जो कुछ कर रहे है वह वस्तुत हमे अपने समुदाय के शासको के अत्याचार के विरोध मे करने को कहा गया था, यह एक विदेशी आधिपत्य और अपहरण के विरुद्ध करने का कार्य न था। यदि बरतानिया सरकार के सदस्य इस तथ्य को समझते तो उन्हे स्वीकार करना पडता कि मुसलमानो की उदारता और क्षमाशीलता सीमा को लाघ चुकी है। इससे अधिक बरतानिया के लिए वह इस्लाम को नही छोड सकते।

इस्लाम ने शासको के अत्याचार के विरोध मे दो प्रकार के आचरणो का आदेश दिया है क्योकि परिस्थितिया भी दो भिन्न प्रकार की है एक अत्याचार विदेशी आधिपत्य और पराधीनता का है और एक बर्बरता स्वय मुसलमान शासको की है। पहले के लिए इस्लाम का आदेश है कि सशस्त्र सघर्ष किया जाए। दूसरे के लिए आदेश है कि विरोध मे शस्त्र न उठाए जाये किन्तु ''निर्दिष्ट आचारो' और 'सत्य'' की जहा तक भी हो सके हर मुसलमान घोषणा करता रहे। पहली स्थिति मे शत्रुओ के हाथो मरना पडेगा। दूसरी स्थिति मे नृशस शासको के हाथो तरह-तरह की यातनाये झेलनी पडेगी। मुसलमानो को दोनो स्थितियो मे दोनो प्रकार के बलिदान करने चाहिए और दोनो का फल सफलता तथा विजय है।

इसलिए गत् १३ शताब्दियो मे मुसलमानो ने दोनो प्रकार की आहुतिया दी है। विदेशी शासको का विरोध करते हुए प्राणाहुति दी है और अपने लोगो के अत्याचारो के विरुद्ध धैर्य और सुदृढता का भी प्रदर्शन किया है। जिस प्रकार पहली स्थिति के 'सामरिक सघर्ष' मे वह अनुपम है उसी प्रकार दूसरी स्थिति मे उनका 'नागरिक सघर्ष' भी अद्वितीय है।

हिन्दुस्तान मे आज मुसलमानो ने दूसरे प्रकार की कार्य-पद्धति को अपनाया है जबकि

उनको सामना करना पड रहा है विदेशी शासन का। उनके लिए सामरिक सघर्ष का समय आ गया था। परन्तु उन्होने 'नागरिक सघर्ष' का मार्ग अपनाया। उन्होने अहिसानिष्ठ' रहने का निर्णय करके इस बात को स्वीकार कर लिया है कि वह हथियार से मुकाबला न करेगे, अर्थात् वही कार्य करेगे जो उन्हे मुसलमान शासको के अत्याचार के मुकाबले मे करना चाहिए। निश्चय ही इस कार्य-पद्धति मे हिन्दुस्तान की विशिष्ट परिस्थितियो का भी हाथ है। परन्तु सरकार को सोचना चाहिए कि इससे अधिक दुर्भाग्यग्रस्त मुसलमान और क्या कर सकते है ? हद तो यह है कि विदेशियो के अत्याचार के विरोध मे वह बात कर रहे है जो उन्हे अपनो के विरुद्ध करनी थी।

मैं सच कहता हूँ। मुझे इसकी राई बराबर भी शिकायत नही कि दण्डित करने के लिए मुझ पर अभियोग चलाया गया है। यह बात तो होनी ही थी परन्तु परिस्थिति मे यह परिवर्तन मेरे लिए बडा ही कष्टदायक है कि एक मुसलमान से सत्य-साक्ष्य को छोडने की आशा की जाती है और कहा जाता है कि वह अन्याय को केवल इसलिए अन्याय न कहे क्योकि धारा १२४-अ के अन्तर्गत मुकदमा चलाया जाएगा।

मुसलमानो के सम्मुख सत्यवादिता का जो उदाहरण उनका सामुदायिक इतिहास प्रस्तुत करता है वह यह है कि एक अत्याचारी शासक के सम्मुख एक निर्भीक मनुष्य खडा है। उस पर आरोप यही है कि उसने शासक के अत्याचार की घोषणा की। इसी अपराध के कारण उसका अग-प्रत्यग काटा जा रहा है। परन्तु जब तक जिह्वा नही कट जाती वह यही कहती रहती है कि शासक नृशस है। यह घटना खलीफा अब्द-उल-मलिक के समय की है जिस का राज्य अफ्रीका से सिध तक फैला हुआ था। तुम धारा १२४-अ के दड की तुलना इस दड से कर सकते हो ?

मै इस दुखदायी और **विषादपूर्ण** तथ्य से इन्कार नही करता कि परिस्थिति से इस परिवर्तन का दायित्व स्वय मुसलमानो पर भी है। उन्होने इस्लामी जीवन-पद्धति के समस्त गुण विलुप्त कर दिए और पराधीनता और दासता की जीवन-पद्धति के समस्त अवगुणो को आत्मसात् कर लिया। उनकी वर्तमान स्थिति से बढकर दुनिया मे इस्लाम के लिए अन्य सकट नही है। मैं जब यह पक्तिया लिख रहा हूँ तो मेरा मन लज्जा और दुख से यह सोच कर जीर्ण-शीर्ण हो रहा है कि इसी हिन्दुस्तान मे वह मुसलमान भी विद्यमान है जो अपनी निष्ठा की दुर्बलता के कारण खुल्लमखुल्ला अत्याचार की पूजा कर रहे है।

परन्तु मनुष्यो के कुकर्मो से किसी आदर्श की वास्तविकता को मापा नही जा सकता। इस्लाम की शिक्षा उसकी पुस्तक मे उपलब्ध है। वह किसी भी स्थिति मे इस बात को उचित नही ठहराती कि आजादी खोकर मुसलमान जीवन व्यतीत करे। मुसलमानो को मिट जाना चाहिए या स्वाधीन रहना चाहिए। तीसरा कोई मार्ग इस्लाम मे नही है।

परन्तु मै स्वीकार करूगा कि गत दो वर्षो के अन्दर कोई प्रभात और कोई सध्या ऐसी नही बीती जिसमे मैने 'खिलाफत' और 'पजाब' से सबद्ध सरकार के अनाचारो की घोषणा न की हो। मै स्वीकार करता हूँ कि मैने सदैव यह बात कही है कि जो सरकार इस्लामी खिलाफत को विनष्ट कर रही हो और पजाब पर ढाये गए अपने अत्याचारो के लिए न तो लज्जित हो और न ही उसके निराकरण के लिए कोई सतोषजनक उपाय कर रही **हो,** ऐसी सरकार के लिए किसी भारतवासी के मन मे वफादारी नही हो सकती। सरकार के स्थान पर वह रण-क्षेत्र मे एक विरोधी पक्ष मात्र है।

मैंने १३ दिसम्बर सन् १९१७ को (जब मै राची मे भारत सरकार के आदेश पर नजरबन्द रखा गया था) लार्ड चेम्सफोर्ड को एक विस्तृत पत्र लिखा था जिसमे स्पष्ट कर दिया

था कि खिलाफत और अरबद्वीप के सबध मे इस्लामी आदेश क्या है ? मैने लिखा था कि यदि बरतानिया सरकार इस्लामी खिलाफत और इस्लामी देशो के सबध मे दिए गए अपने वचन के प्रतिकूल कब्जा जमा बैठती है तो इस्लामी धर्मशास्त्र की दृष्टि से हिन्दुस्तानी मुसलमान एक **अत्यधिक असमजस मे पड जायेगे। उनके सामने केवल दो ही मार्ग है—या इस्लाम का साथ दे या** बरतानिया सरकार का। वह इस्लाम का साथ देने के लिए विवश होगे।

अन्ततोगत्वा वही हुआ। सरकार वचनबद्ध न रह सकी। उन वचनो का भी पालन आवश्यक न समझा गया जो भारत सरकार ने २ नवम्बर सन् १९१४ की अपनी घोषणा मे दिये थे और वह वादा भी धोखा सिद्ध हुआ जो इगलिस्तान के प्रधानमत्री मिस्टर लायड जार्ज ने ५ जनवरी १९१८ को हाउस आफ कामस' मे दिये गए अपने भाषण मे किया था। सज्जनो के लिए वचनपालन न करना धूर्तता है किन्तु शक्तिशाली शासको के लिए कोई भी बात अनैतिक नहीं है।

इस परिस्थिति ने मुसलमानो के लिए अत्यधिक दुविधात्मक स्थिति उत्पन्न कर दी। **इस्लामी धर्मशास्त्र के अनुसार कम से कम बात जो उनके कर्तव्यो मे सम्मिलित थी** वह यह थी **कि ऐसी सरकार की सहायता करने से हाथ खीच ले** और उसके साथ सहयोग न करे। **मुसलमानो को विश्वास हो गया है कि यदि** वह न्याय चाहते है तो उसका मार्ग केवल एक ही है **वह है स्वराज प्राप्ति।**

अत इस सबध मे मेरी मान्यता अत्यत स्पष्ट है। वर्तमान सरकार केवल एक अनौचित्यपूर्ण नौकरशाही है, वह करोडो मनुष्यो की इच्छा और आकाक्षा को केवल नकारती है, वह सदैव न्याय और सच्चाई पर अपने मान-सम्मान को प्राथमिकता देती है। वह अमृतसर के **जलियावाला बाग के बर्बरतापूर्ण सार्वजनीन** हत्या को नैतिक कार्य समझती है, वह इस आदेश को अन्यायपूर्ण नही मानती कि मनुष्य पशुओ के समान पेट के बल चलाए जाए, वह निरपराध लडको को केवल इसलिए कोडो की मार खा-खाकर निश्चेत हो जाने देती है कि वह एक मूर्ति के **समान 'यूनियन जैक' की वन्दना नही करते। वह तीस करोड मनुष्यो की निरन्तर याचनाओ के** पश्चात् भी इस्लामी खिलाफत को आक्रात करने से नही रुकती, वह अपने समस्त वादो को तोड देने मे कोई बुराई नही समझती।

मैं यदि ऐसी सरकार को 'अत्याचार' या 'निरकुश' न कहूँ और यह न कहूँ ' या ठीक हो **जाओ या मिट जाओ" तो क्या इसे 'न्यायी' कहूँ और कहूँ** "न तो ठीक हो और न ही मिटो ?"

मै लगातार १२ वर्षो से अपने देशवासियो और अपने समुदाय को स्वतत्रता और अधिकार मागने की शिक्षा दे रहा हूँ। मेरी आयु १८ वर्ष की थी जब मैने इस विषय पर लिखना और बोलना आरम्भ किया था। मैने जीवन का उत्तम भाग अर्थात् युवावस्था केवल इसी **उद्देश्योन्माद मे बिता दिया। मैं इसी के लिए चार वर्ष तक नजरबन्द रखा गया किन्तु बन्दी जीवन** मे भी मेरा हर प्रभात और हर सध्या इसी बात के प्रचार-प्रसार मे व्यतीत हुई। राची की दीवारे इस बात की साक्षी है जहा मैने नजरबदी की अवधि बिताई है। यह तो मेरा नित्य का जीवनलक्ष्य है। मै केवल इसी एक काम के लिए जी सकता हूँ—"मेरी आराधना-वन्दना, मेरा त्याग-बलिदान, मेरा जीवन-मरण निश्चय ही विधाता के लिए है जो सकल सृष्टि का पालनहार है।"

मैं इस 'अपराध' को कैसे अस्वीकार कर सकता हूँ जबकि मै हिन्दुस्तान के इस अन्तिम 'इस्लामी आन्दोलन' का आह्वान करता हूँ जिसने हिन्दुस्तानी मुसलमानो के राजनैतिक दृष्टिकोण मे एक महान क्राति उत्पन्न कर दी है और अन्ततोगत्वा उन्हे वहा तक पहुँचा दिया है जहा वह

आज दिखाई पड रहे है, अर्थात् उनमे से प्रत्येक व्यक्ति मेरे इस अपराध मे सम्मिलित हो गया है। मैने सन् १९१२ मे एक उर्दू पत्रिका 'अल-हिलाल' निकाली जो इस आन्दोलन की मुख्य पत्रिका थी और जिसके प्रकाशन का उद्देश्य पूर्णत वही था जिसका स्पष्टीकरण मैं उपरोक्त पक्तियो मे कर चुका हूँ। यह एक वास्तविकता है कि 'अल-हिलाल' ने तीन वर्ष के अन्दर भारतीय मुसलमानो की धार्मिक और राजनैतिक मानसिकता को अत्यत नवीन गतिशीलता प्रदान कर दी। पहले वह अपने हिन्दू भाइयो की राजनैतिक गतिविधियो से न केवल पृथक् थे बल्कि उसके विरोध मे नौकरशाही द्वारा एक उपकरण के रूप मे प्रयुक्त होते थे। सरकार की भेद-भाव पैदा करने वाली नीति ने उन्हे इस भ्रम मे फसा रखा था कि देश मे हिन्दुओ की सख्या बहुत अधिक है इसलिए हिन्दुस्तान यदि स्वतत्र हो गया तो हिन्दूराज स्थापित हो जाएगा। परन्तु 'अल-हिलाल' ने मुसलमानो को सख्या की जगह धर्मनिष्ठा पर निर्भर होने का निर्देश दिया और बिना किसी भय के हिन्दुओ से हाथ मिलाने के लिए उन्हे प्रोत्साहित किया। इसी से वह परिवर्तन उत्पन्न हुए जिनका परिणाम आज का खिलाफत और स्वराज का सयुक्त आन्दोलन है। नौकरशाही ऐसे आन्दोलन को अधिक समय तक सहन नही कर सकती थी। इसलिए पहले अल-हिलाल' की जमानत जब्त की गई और जब 'अल-ब्लाग' के नाम से उसे पुन प्रकाशित किया गया तो १९१६ ई० मे भारत सरकार ने मुझे नजरबद कर दिया।

मै बताना चाहता हूँ कि 'अल-हिलाल' "पूर्णत स्वतत्रता या मृत्यु का निमत्रण था"।

चार वर्ष पश्चात् पहली जनवरी सन् १९२० को मै मुक्त किया गया। उस समय से पुन गिरफ्तार होने के क्षण तक मेरा पूरा समय इन्ही उद्देश्यो के प्रचार-प्रसार मे लगा है। २८-२९ फरवरी १९२० ई० को इसी कलकत्ते के टाउन हाल मे खिलाफत काफ्रेस का अधिवेशन हुआ था और मुसलमानो ने निराश होकर अपनी अतिम घोषणा कर दी थी

"यदि बरतानिया सरकार ने खिलाफत सबधी मागो की ओर अब भी कोई ध्यान नही दिया तो मुसलमान अपने धर्मशास्त्र के अनुसार विवश हो जायेगे कि आज्ञापालन के सारे सबधो को तोड दे।" मै ही इस अधिवेशन का अध्यक्ष था।

मैंने अपने लम्बे अध्यक्षीय अभिभाषण मे वह सारी बाते सविस्तार कह दी थीं जो और इन दो भाषणो मे प्रस्तुत की गई हैं जो न्यायालय के सम्मुख हैं।

मैंने इसी अभिभाषण मे उस इस्लामी धर्मादेश का भी स्पष्टीकरण कर दिया था जिसके अनुसार मुसलमानो का धार्मिक कर्तव्य है कि वर्तमान स्थिति मे 'असहयोग' करे अर्थात् सहयोग और सहायता से हाथ खीच ले, यही 'सबध विच्छेद है' जिसने आगे चलकर 'असहयोग आन्दोलन' का रूप धारण कर लिया और महात्मा गाधी जी ने उसका नेतृत्व किया। इसी अधिवेशन मे वह प्रस्ताव पारित हुआ था जिसमे इस्लामी शास्त्राचार के अनुसार मुसलमानो के लिए सेना मे नौकरी करना अनुचित बताया गया था क्योकि सरकार इस्लामी खिलाफत और इस्लामी देशो के विरुद्ध युद्ध कर रही है। कराची अभियोग इसी प्रस्ताव के आधार पर चलाया गया। मै बारम्बार पत्रो मे लिखकर और भाषणो मे घोषणा कर चूका हूँ कि यह प्रस्ताव सबसे पहले मैने ही तैयार किया था और मेरी ही अध्यक्षता मे यह तीन बार पारित हुआ है—सबसे पहले कलकत्ते मे फिर बरेली और लाहौर मे। अत 'इस अपराध' के दड का भी प्रथम अधिकारी मै ही हूँ।

मैंने इस अभिभाषण मे सवर्धन करने के पश्चात् इसे पुस्तक का रूप दे दिया जो अग्रेजी अनुवाद सहित कई बार प्रकाशित हो चुकी है। यह मेरे 'अपराधो' की एक लिखित दस्तावेज है।

मैंने गत दो वर्षो के अन्दर अकेले और महात्मा गाधी के साथ सम्पूर्ण भारत का बार-बार दौरा किया। कोई नगर ऐसा नही है जहा मैने खिलाफत, पजाब, स्वराज और असहयोग पर बार-बार भाषण न दिए हो और वह सारी बाते न कही हो जो मेरे इन दो भाषणो मे दिखलाई गई है।

दिसम्बर सन् १९२० मे भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस के साथ ही अखिल भारतीय खिलाफत कान्फ्रेस का भी अधिवेशन हुआ। अप्रैल सन् १९२१ मे जमीअत-उल-उलमा का बरेली मे सम्मेलन हुआ। गत अक्टूबर मे यू० पी० प्रान्तीय खिलाफत कान्फ्रेस आगरा मे आयोजित हुई। नवम्बर मे अखिल भारतीय उल्मा (धर्माचार) कान्फ्रेस का अधिवेशन लाहौर मे हुआ। इन समस्त अधिवेशनो का भी मै ही अध्यक्ष था। परन्तु इनमे भी सारे वक्ताओ ने जो कुछ कहा और अध्यक्षीय भाषणो मे मैंने जो विचार व्यक्त किए उन सबमे वह सारी बाते विद्यमान थी जो इन दो भाषणो मे दिखलाई गई है। मै तो यह भी स्वीकार करता हूँ कि इनसे कही अधिक सुनिश्चित और स्पष्ट विचार व्यक्त किए गए थे।

यदि मेरे इन दो भाषणो मे कही गई बाते धारा १२४-अ के अन्तर्गत अपराध है तो मै नही समझता कि केवल पहली और पद्रह जुलाई को किए गए अपराधो का ही चयन क्यो किया गया है ? मै तो यह अपराध इतनी बार कर चुका हूँ कि वस्तुत इनकी गणना करना मेरे लिए असभव हो गया है। मुझे कहना पडेगा कि गत वर्षो के अन्दर मैंने १२४-अ के अन्तर्गत किये जाने वाले अपराधो के अतिरिक्त और कोई काम ही नही किया है।

हमने स्वतत्रता और अधिकार मागने के इस सग्राम मे 'अहिसा और असहयोग' की नीति अपनाई है। हमारे विरुद्ध बाहुबल अपनी समग्र नृशसता और क्रूरता तथा रक्तपातात्मक साधनो सहित खडा है किन्तु हमे केवल ईश्वर का आश्रय है और अपने आत्मोत्सर्ग तथा अपने दृढ धैर्य पर विश्वास है। महात्मा गाधी के समान मेरा यह विश्वास नही है कि किसी भी परिस्थिति मे भी हथियारो का मुकाबला हथियारो से नही करना चाहिए। इस्लाम ने जिन स्थितियो मे इसकी अनुमति दी है मैं उसे ईश्वरीय नियम और न्याय तथा नैतिकता के अनुकूल समझकर उस पर विश्वास रखता हूँ। परन्तु साथ ही हिन्दुस्तान की स्वतत्रता और तत्कालीन सघर्ष के लिए महात्मा गाधी ने जो नीति निर्धारित की है उससे पूर्णतया सहमत हूँ और उसकी सत्यता पर पूर्ण विश्वास रखता हूँ। मुझे विश्वास है कि हिन्दुस्तान को अहिसात्मक सघर्ष द्वारा विजय प्राप्त होगी और उसकी विजय नैतिक बल तथा अध्यात्मशक्ति की विजय की प्रतीक होगी।

मैंने प्रारभ मे, जैसा कि लिख चुका हूँ, अपनी बात को समाप्त करते हुए भी उसी को दोहराऊगा। आज सरकार जो कुछ हमारे साथ कर रही है वह कोई असाधारण बात नही है जिसके लिए विशेष रूप से उसकी निन्दा की जाए। राष्ट्रीय चेतना का विरोध करना और दमन करना सारे सत्तापहरणकारी शासनो की मनोवृत्ति होती है और हमे यह आशा नही रखनी चाहिए कि हमारे लिए मानवीय प्रकृति परिवर्तित हो जायेगी। यह प्रवृत्तिगत दुर्बलता व्यक्ति और समष्टि दोनो मे समान रूप से पाई जाती है। दुनिया मे कितने व्यक्ति है जो अपने आधिपत्य मे आई हुई वस्तु केवल इसलिए लौटा देगे कि वह उनकी नही है। फिर एक पूरे महाद्वीप के सबध मे ऐसी आशा क्यो की जा सकती है। शक्ति कभी किसी बात को केवल इसलिए नही मान लेती कि वह उचित और तर्कसगत है। वह तो स्वय भी बाहुबल का प्रयोग किये जाने की प्रतीक्षा करती है और जब वह शक्ति दिखाई पड जाती है तो अनुचित से अनुचित माग के आगे भी झुक जाती है।

हमे ज्ञात है कि यदि स्वाधीनता की हमारी उत्कठा और अपना अधिकार लेने की हमारी इच्छा सच्ची और दृढ सिद्ध हुई हो तो यही सरकार जो आज हमे अपराधी ठहरा रही है कल देशभक्त विजेता के रूप मे हमारा स्वागत करने पर बाध्य होगी।

मुझ पर राजद्रोह का आरोप लगाया गया है। लेकिन मुझे 'राजद्रोह के अर्थ समझ लेने दो।" क्या 'राजद्रोह' स्वतत्रता के लिए उस सघर्ष को कहते हैं जो अभी सफल नही हुआ है? यदि ऐसा है तो मै अपना अपराध स्वीकार करता हूँ। लेकिन साथ ही साथ इस बात का भी स्मरण करना चाहता हूँ कि इसी का सम्मानसूचक नाम देशभक्ति भी है—यदि वह सफल हो जाए। कल तक आयरलैड के **शस्त्रधारी** नेता राजद्रोही थे लेकिन आज डी वेलरा और ग्रैफित्य के लिए महान बरतानिया कौन सी उपाधि देने का प्रस्ताव करती है?

अत जो कुछ आज हो रहा है उसका निर्णय कल होगा। न्याय अमर रहेगा, अन्याय मिटा दिया जाएगा। हम भविष्यत् के निर्णय पर विश्वास रखते है।

परन्तु यह बात स्वाभाविक है कि बदलियो को देखकर वर्षा होने की प्रतीक्षा की जाए। हम देख रहे है कि मौसम मे परिवर्तन के समस्त चिह्न परिलक्षित हो रहे हैं। दु ख तो उन आखो पर होता है जो देख कर भी इन सकेतो को मानने के लिए नहीं है।

मैने इन्ही भाषणो मे, जो मेरे विरुद्ध प्रमाणरूप मे न्यायालय मे प्रस्तुत किये गए है, कहा था कि 'स्वतत्रता का बीज कभी फल-फूल नही सकता जब तक दमन-शमन के पानी से उसका सिचन न हो।"

परन्तु सरकार ने इसका सिचन आरम्भ कर दिया है।

मैने इन्ही भाषणो मे कहा था कि "खिलाफत के प्रचारको की गिरफ्तारियो पर दु खी क्यो हो? यदि तुम वस्तुत न्याय और स्वतत्रता के अभिलाषी हो तो जेल जाने के लिए तत्पर हो जाओ।"

मै मजिस्ट्रेट के सबध मे भी कुछ कहना चाहता हूँ। अधिक से अधिक दड देने का जो अधिकार उसे प्राप्त है वह दड निस्सकोच मुझे दे दे। मुझे शिकायत या दु खानुभूति नही होगी। मेरा झगडा तो पूरे शासन-तत्र से है, उसके किसी एक पुर्जे से नही। मै जानता हूँ कि जब तक शासनतत्र नहीं बदलेगा पुर्जे अपनी कार्य-पद्धति नही बदल सकते।

मै अपना वक्तव्य सत्य की वेदी पर बलि होने वाले इटली के विख्यात शहीद गार्डीनो ब्रुना के कथन पर समाप्त करता हूँ जो मेरी ही तरह न्यायालय के कटहरे मे खडा किया गया था

"अधिक से अधिक जो सजा दी जा सकती है वह निस्सकोच मुझे दे दो। मै विश्वास दिलाता हूँ कि दण्डादेश लिखते हुए जितना कम्पन तुम्हारे मन मे होगा उसका शताश कपन भी निर्णय सुनकर मेरे मन मे न होगा।"

मिस्टर मजिस्ट्रेट! अब मै न्यायालय का अधिक समय न लूगा। यह इतिहास का एक रोचक और शिक्षाप्रद अध्याय है जिसको लिखने मे हम दोनो समान रूप से व्यस्त है। हमारे भाग्य मे अपराधियो का यह कटहरा आया है, तुम्हारे भाग्य मे मजिस्ट्रेट की वह कुर्सी। मै स्वीकार करता हूँ कि इस कार्य के लिए वह कुर्सी भी उतनी ही आवश्यक वस्तु है जितना यह कटहरा। आओ, इस स्मरणीय और अतीत की गाथा बनने वाले कार्य को शीघ्र समाप्त कर दे। इतिहासकार प्रतीक्षा कर रहा है और भविष्य कब से हमारी राह ताक रहा है। हमे यहा जल्दी-जल्दी आने दो और तुम भी जल्दी-जल्दी निर्णय करते रहो। अभी कुछ समय तक यह काम चलता रहेगा और यह कार्यक्रम उस समय तक चलता रहेगा जब एक दूसरे न्यायालय का

द्वार खुल जाएगा। यह ईश्वरीय विधि का न्यायालय है। समय उसका न्यायाधीश है। वह फैसला लिखेगा और उसका निर्णय ही अन्तिम फैसला है।

तरजुमान-उल-क़ुरान

क़ुरानानुवाद

कहो : वह ही केवल और एकमात्र ईश्वर है :
वह ईश्वर जिस पर सभी निर्भर हैं !
वह न किसी को जन्म देता है और न ही उसका जन्म होता है;
और उस जैसा अन्य कोई नहीं है।

(कुरान : ११२ : १-४)

समर्पण

सभवत दिसम्बर १९१८ ई० की घटना है जब मैं राची मे नजरबन्द था। रात्रि की नमाज से निवृत्त होकर मस्जिद से निकला तो मुझे महसूस हुआ कि कोई व्यक्ति पीछे आ रहा है। मुड के देखा तो एक आदमी कम्बल ओढे खडा था

आप मुझसे कुछ कहना चाहते है?

हा श्रीमान्! मै दूर से आया हूँ।

कहा से?

सीमापार से।

यहा कब पहुचे?

आज सध्या समय पहुँचा। मै अत्यन्त निर्धन आदमी हूँ। कधार से पैदल चलकर कोएटा पहुँचा। वहा अपनी जन्मभूमि के ही कुछ व्यापारी मिल गए थे। उन्होने मुझे नौकर रख लिया और आगरा पहुचा दिया। आगरे से यहा तक पैदल चलकर आया हूँ।

खेद है कि तुमने इतना कष्ट सहन क्यो किया?

इसलिए कि कुरान-शरीफ के कुछ अशो को समझ लूँ। मैने 'अल-हिलाल' और 'अल-बलाग' का एक-एक अक्षर पढा है।

यह व्यक्ति कुछ दिनो तक मेरे पास ठहरा और फिर अकस्मात् वापस चला गया। वह चलते समय मुझसे इसलिए नही मिला कि उसे आशका थी कि कही मैं उसे वापसी के खर्चे के लिए रुपया न दूँ, और वह नही चाहता था कि इसका भार मुझ पर डाले। उसने निश्चय ही वापसी मे भी अपनी यात्रा का बडा भाग पैदल तय किया होगा।

मुझे उसका नाम याद नही। मुझे यह भी ज्ञात नहीं है कि वह जीवित है या नही, यदि मेरी स्मरण-शक्ति ने धोखा न दिया होता तो मैं यह पुस्तक उसके नाम समर्पित करता।

अबुल कलाम

कलकत्ता

१२ दिसम्बर १९३१ ई०

तरजुमान-उल-कुरान *

प्रथम संस्करण की प्रस्तावना

सन् १९१६ मे जब मेरी साप्ताहिक पत्रिका 'अल-बलाग' के पृष्ठो पर 'कुरानानुवाद' और उसके 'भाष्य' के प्रकाशन की घोषणा की गई तो इस बात का अनुमान भी मैने नही किया था कि एक ऐसे कार्यक्रम की घोषणा कर रहा हूँ जो १५ वर्ष तक स्थगित रहेगा और इसके प्रति देशवासियो की उत्सुकना तथा इसके लिए उनकी प्रतीक्षा एक असहनीय भार बन जाएगा एव मेरी कुठाओ का एक **विषादपूर्ण** उदाहरण सिद्ध होगा। परन्तु जो घटनाए घटी उन्होने तुरन्त बतला दिया कि इसी स्थिति के सम्मुख मुझे नतमस्तक होना है।

निष्कासन

अभी इस विज्ञापन को कुछ महीने ही बीते होगे कि ३ मार्च सन् १९१६ ई० को बगाल सरकार ने सुरक्षा अध्यादेश के अन्तर्गत मुझे बगाल की सीमा से तुरन्त बाहर चले जाने का आदेश दिया और यह आदेश इतना आकस्मिक था कि अल-बलाग प्रेस का प्रबध करने और परियोजित ग्रथो के लेखन तथा उनके प्रकाशन का समस्त कार्यक्रम अवरुद्ध हो गया।

इसके पूर्व इसी अध्यादेश के अन्तर्गत देहली, पजाब, यू० पी० और मद्रास की सरकारे अपने-अपने प्रातो मे मेरा प्रवेश निषिद्ध कर चुकी थी। इसलिए अब केवल बिहार और बम्बई के ही दो प्रात रह गए थे जहा मै जा सकता था। मैंने राची का चयन किया। मेरा विचार था कि कलकत्ते से निकट रहकर कदाचित इन ग्रथो के लेखन और प्रकाशन का काम जारी रख सकूँ।

सन् १९१५ मे जब मैने यह कार्य करने का सकल्प किया था तो तीन बाते एक साथ मेरे सम्मुख थी—कुरानानुवाद, उसका भाष्य तथा भाष्य की भूमिका। मैने सोचा था कि यह तीन पुस्तके कुरान को समझने और उसके अनुशीलन की तीन विभिन्न आवश्यकताए पूर्ण कर देगी। सर्वसाधारण की शिक्षा के लिए अनुवाद, अनुशीलनकर्ताओ के लिए भाष्य, उच्चस्तरीय विद्वानो के लिए भूमिका।

'अल-बलाग' मे जब कुरानानुवाद और उसके भाष्य के प्रकाशन की घोषणा की गई थी तो पाच पारो (खडो) का अनुवाद पूर्ण हो चुका था, सूर आले इमरान तक भाष्य लिखा जा चुका था और स्मरणार्थ टिप्पणिया लिपिबद्ध हो चुकी थी। इस विचार से कि अल्प काल मे अधिक से अधिक कार्य पूर्ण हो जाए, मैने लेखन के साथ मुद्रण भी आरभ कर दिया था। मेरा विचार था कि इस प्रकार साल भर के अन्दर अनुवाद पूर्ण भी हो जाएगा और छप भी जाएगा तथा भाष्य का भी प्रथम खड प्रकाशित हो जाएगा। प्रत्येक सप्ताह के लिए अपने कार्यक्रम को मैने इस प्रकार नियोजित कर दिया था कि तीन दिन 'अल-बलाग' के सम्पादन मे लगाता था, दो दिन अनुवाद मे और दो दिन भाष्य लेखन मे।

३ मार्च १९.१६ ई० को जब मैने कलकत्ते से प्रस्थान किया तो भाष्य के छ फार्म मुद्रित हो चुके थे और अनुवाद की किताबत (मुद्रणार्थ सुलेखन) होने लगी थी। मैने अब प्रयत्न किया कि मेरी अनुपस्थिति मे प्रेस चलता रहे और कम से कम भाष्य और अनुवाद का कार्य होता रहे। १९१६ मे जब प्रेस को पुन चलाने की व्यवस्था हो गई तो मै पाण्डुलिपियो के सम्पादन मे सलग्न हो गया ताकि उन्हे प्रेस भेज सकूँ।

नजरबदी

परन्तु ८ जुलाई १९१६ को अकस्मात् भारत सरकार ने मेरी नजरबदी के आदश दे दिए और इस प्रकार अनुवाद और भाष्य के प्रकाशन की आशा का भी अत हो गया। नजरबदी के पश्चात् कोई अवसर शेष नही रहा कि बाह्य जगत से किसी प्रकार का सपर्क रख सकूँ।

अब मै केवल अनुवाद और भाष्य का प्रारूप तैयार करने और उन्हे लिखने का ही कार्य कर सकता था। नजरबदी की १९ धाराओ मे से कोई धारा भी मुझे यह कार्य करने से नही रोकती थी। मै इस बात से सतुष्ट हो गया। इतना भी नही बल्कि मैने सोचा कि यदि जीवन की सारी आजादियो से वचित होने पर भी लिखने-पढने की स्वतत्रता प्राप्त है और अपने चितन-मनन की उपलब्धियो को सुरक्षित रखने के लिए स्वतत्र हूँ तो जीवन की सुख-सुविधाओ मे से किसी बात से वचित नही हूँ। मैं इस दशा मे सपूर्ण जीवन व्यतीत कर सकता हूँ। परन्तु इस स्थिति को तीन महीने भी नहीं बीते थे कि ज्ञात हो गया कि इस आनदकुज मे भी मुझे पुन कठिन परीक्षा से गुजरना था।

पुन· तलाशी और पाण्डुलिपियों की जब्ती

नजरबदी के आदेश जिस समय लागू किए गए थे तो मेरे निवासस्थान की तलाशी भी ली गई थी और जितनी भी दस्तावेजे मिली थी जाच-पडताल करने वाले अधिकारियो ने उन्हे अपने अधिकार मे ले लिया था। उन्ही मे अनुवाद और भाष्य की पाण्डुलिपिया भी थी, किन्तु जब जाच-पडताल के पश्चात् ज्ञात हुआ कि इनमे कोई चीज आपत्तिजनक और सरकार के लिए उपयोगी नही है तो दो सप्ताह के बाद वह दस्तावेजे वापस दे दी गई।

परन्तु जब जाच-पडताल के निष्कर्ष भारत सरकार को सूचित किए गए तो वह स्थानीय सरकार के निर्णय से सहमत नही हुई। वहा विचार किया गया कि स्थानीय सरकार ने कागजो को वापस दे देने मे शीघ्रता की है और अत्यन्त सभाव्य है कि पूर्ण सावधानी से इनकी जाच न की गई हो। उस समय भारत सरकार के जाच विभाग का सर्वोच्च अधिकारी सर चार्ल्स क्लेवलैड था। अनेक कारणो से, जिन पर विचार करने का यह अवसर नही है, वह मेरे प्रति विशेषतया द्वेषभाव रखता था। वह पहले कलकत्ता आया और दो सप्ताह तक पूछताछ करता रहा और फिर राची आया। मेरे घर की पुन तलाशी ली गई। तलाशी के पश्चात् कहा गया कि जो कागजात पिछली तलाशी के अवसर पर जब्त किये गए थे अब वह भारत सरकार के परीक्षणार्थ भेजे जाएगे। अत समस्त कागज, यहा तक कि प्रकाशित पुस्तके भी ले ली गई। इनमे न केवल अनुवाद और भाष्य की पाण्डुलिपि थी बल्कि कुछ अन्य रचनाओ की पूर्ण और अपूर्ण पाण्डुलिपिया भी थी। जिस समय यह घटना घटी उस समय आठ पारो तक अनुवाद पूर्ण हो चुका था। सुर निसा तक भाष्य लिखा जा चुका था किन्तु अब उनका एक पृष्ठ भी मेरे पास नही था। फिर भी मैंने नवे

पारे से अनुवाद का कार्य करता रहा और १९१८ ई० तक इसे पूर्ण कर दिया। यदि प्रारम्भिक आठ पारो का अनुवाद वापस मिल जाता तो कुरान का आद्योपात अनुवाद पूर्ण हो जाता।

मैंने कागजो की वापसी के लिए पत्र-व्यवहार किया लेकिन उत्तर मिला कि न तो तुरत वापस दिए जा सकते है और न यही बताया जा सकता है कि कब तक वापस किए जाएगे। चूकि कागजो की वापसी की निकट भविष्य मे प्रत्यक्षत कोई आशा नही थी और पता न था कि आगे चलकर क्या स्थिति उत्पन्न होगी इसलिए उचित यही लगा कि उन पारो का भी पुन अनुवाद करके पुस्तक को पूर्ण कर लिया जाए। यह कार्य सरल न था। एक लिखित चीज को पुन लिपिबद्ध करना मन और मस्तिष्क पर बोझ बन जाता है। फिर भी मैने कुछ महीनो के परिश्रम के पश्चात् इन भागो को भी पुन पूर्ण कर लिया।

इस विचार से कि पाण्डुलिपि इतनी सुपठनीय हो जाए कि यदि किसी अन्य व्यक्ति को दी जाए तो शोधन मे सुविधा हो, मैंने उर्दू टाइपराइटर मगा कर उसे टकित कराना आरभ कर दिया और दिसम्बर १९१९ ई० मे इसका अर्धांश से अधिक भाग टकित हो चुका था।

परन्तु २७ दिसम्बर १९१९ ई० को सरकार ने मुझे मुक्त कर दिया और परिणामत इसके मुद्रण तथा प्रकाशन के मार्ग मे बाधक समस्त बाधाए दूर हो गई। लेकिन इस समय देश मे एक राजनैतिक विस्फोट के लिए लावा तैयार हो रहा था और जहा तक मुसलमानो का सबध है 'अल-हिलाल' ने जो राजनैतिक आह्वान किया था वह कोने-कोने से प्रतिध्वनित होने लगा था। मेरे लिए सभव न था कि समय की पुकार से स्वय को दूर रखता। परिणाम यह हुआ कि कारावास से मुक्त होते ही असहयोग आन्दोलन के कार्यो मे व्यस्त हो गया और दीर्घकाल तक इतना अवकाश ही नही मिला कि किसी दूसरी ओर देख सकता। परन्तु १९२१ ई० मे जब देश के कोने-कोने से कुरान के अनुवाद के लिए माग आरभ हुई तो मुझे उसके प्रकाशन के लिए तत्पर हो जाना पडा। चूकि टाइप की लिखाई इसके लिए उचित नही समझी गई थी इसलिए हस्तलिखित सुलेख की व्यवस्था की गई। पहले मूल पाठ को लिखाया गया और तत्पश्चात् अनुवाद का लिखना आरभ किया गया। नवम्बर १९२१ ई० मे मूलपाठ की किताबत (मुद्रणार्थ सुलेख) समाप्त हो चुकी थी और अनुवाद की लिखाई आरम्भ हो गई थी। परन्तु महाकाल ने अपना निर्णय सुना दिया जो अब भी मेरे प्रतिकूल था।

गिरफ़्तारी और समस्त पाण्डुलिपियो की दुर्दशा

१९२१ ई० के अत मे असहयोग आन्दोलन की गतिविधिया अपनी चरमसीमा पर पहुच गई थी और अब अनिवार्य था कि सरकार भी अपने समस्त साधनो का उपयोग करे। २० नवम्बर १९२१ ई० को सर्वप्रथम बगाल सरकार ने कदम उठाया और उन समस्त सगठनो को अवैधानिक घोषित कर दिया जो असहयोग आदोलन के कार्यो मे सलग्न थे। इस कार्यवाही ने काग्रेस को अवैधानिक सस्था घोषित करने का मार्ग प्रशस्त कर दिया है और १० दिसबर, सन् १९२१ ई० को कुछ अन्य बगाली सहयोगियो सहित मुझे गिरफ्तार कर लिया गया।

इस बार मेरी गिरफ्तारी से प्रेस के प्रबध मे बाधा उत्पन्न नही हो सकती थी क्योकि पुस्तके पूर्ण हो चुकी थीं और मैंने पूरी व्यवस्था कर ली थी कि मेरी अनुपस्थिति मे भी नित्यकर्मानुसार कार्य चलता रहे। परन्तु गिरफ्तारी के पश्चात् जो घटना घटी वह इस कहानी का दु खात है। इसके कारण न केवल कुरान के अनुवाद और उसके भाष्य का प्रकाशन स्थगित हो गया बल्कि मेरे साहित्यिक जीवन की आकाक्षा की ही इति हो गई।

गिरफ्तारी के पश्चात् जब सरकार को आभास हुआ कि मेरे विरुद्ध अभियोग चलाने के लिए पर्याप्त सामग्री उपलब्ध नही है तो उसे अतिरिक्त सामग्री एकत्र करने की चिता हुई और इसलिए तीसरी बार मेरे घर और मुद्रणालय की तलाशी ली गई। तलाशी के लिए जो लोग आए, उनमे कोई ऐसा व्यक्ति न था जो उर्दू या अरबी अथवा फारसी का ज्ञाता हो। जो भी लिखित साम्रगी इनके हाथ लगी उसे उन्होने अपने उद्देश्यपूर्ति के लिए उपयोगी समझा और निर्णय कर लिया कि इसमे कोई न कोई सरकार-विरोधी बात अवश्य होगी। मेरी पाडुलिपियो को वे अपने साथ ले गए। यहा तक कि मुद्रण के लिए लिखी हुई कुरान की सारी कापियो को भी तोड-मरोड कर पाडुलिपियो के ढेर मे मिला दिया।

सयोगवश उस समय किसी व्यक्ति ने माग नही की कि कागजो को क्रमबद्ध करके वह ले जाए और नियमानुसार सूची पर साक्षियो के हस्ताक्षर हो जाए तथा विवरण सहित उनकी रसीद दी जाए। पूछ-नाछ अधिकारी अपने साथ एक छपा हुआ परिपत्र लाए थे और उस पर केवल यह लिखकर कि विभिन्न प्रकार की हस्तलिखित सामग्री ली गई है, वह परिपत्र थमा कर चले गए।

१५ महीने के पश्चात् जब मै कारावास से मुक्त हुआ तो सरकार से कागजो की माग की। दीर्घकाल तक पत्र-व्यवहार के पश्चात् कागज मिले किन्तु इस अवस्था मे मिले कि सपूर्ण पाण्डुलिपिया छिन्न-भिन्न हो चुकी थी।

पूछ-नाछ अधिकारियो ने जब उन्हे अपने अधिकार मे लिया था तो यह पाडुलिपिया विभिन्न सकलनो के रूप मे थी और अलग-अलग बडलो मे बधी हुई थी। इनमे पूर्ण और अपूर्ण विभिन्न रचनाओ के अतिरिक्त बहुत बडी मात्रा मे स्मृति-टिप्पणिया भी थी किन्तु जब यह कागज वापस मिले तो यह बिखरे हुए पृष्ठो के ढेर मात्र थे और आधे से अधिक पृष्ठ या तो नष्ट हो चुके थे या जगह-जगह से फट कर टुकडे-टुकडे हो गए थे। यह धैर्य और सहनशक्ति मेरे जीवन की सबसे बडी परीक्षा थी किन्तु मैंने प्रयत्न किया कि इसमे भी खरा उतरू। यह सब से अधिक कडुवा घूट था जो परिस्थितियो ने मुझे पिलाया था किन्तु मैंने बिना किसी तुच्छ पूर्वापत्ति के इसे पी लिया। हा, इससे इकार नही करता कि आज भी इसकी कडुवाहट मेरे गले मे शेष है।

राजनैतिक जीवन की कुतूहलता और साहित्यिक जीवन की एकाग्रता एक जीवन मे एकत्रित नही हो सकती और रूई तथा अग्नि के बीच सधि असभव है। मैने चाहा कि दोनो को एक साथ एकत्रित करू। मै हठपूर्वक एक ओर वैचारिक सपदा एकत्रित करता रहा और दूसरी ओर नीड-भस्मकारी-चपला को भी नियत्रण देता रहा। मै परिणाम जानता था। इसलिए मुझे शिकायत करने का कोई अधिकार न था।

अब कुरान के अनुवाद और भाष्य को रूप देने का कोई दूसरा उपाय इसके अतिरिक्त सभव न था कि पुन परिश्रम किया जाए, किन्तु इस घटना के पश्चात् चित्त कुछ इतना मलिन हो गया कि अनेक प्रयत्न किये किन्तु उसने साथ न दिया। मैंने महसूस किया कि इस विपत्ति का घाव इतना हल्का नही है कि तुरत भर जाए।

चित्तवृत्ति मे जो विचार रह-रह कर विघ्न उत्पन्न करता था वह यह था कि एक चीज को लिख चुकने के पश्चात् उसे पुन कैसे लिखा जाए। वास्तविकता यह है कि एक लेखक के लिए इससे अधिक दुष्कर कार्य कोई अन्य नही है। वह हजारो नवीन पृष्ठ सुविधापूर्वक लिख डालेगा किन्तु एक विनष्ट पृष्ठ के पुन लिखने मे अपनी चित्तवृत्ति को नितात शिथिल पाएगा। चिन्तन और मन स्थिति की वह सक्रियता जो गत परिश्रमो के व्यर्थ हो जाने के कारण समाप्त हो जाती है, उसे पुन सक्रिय बनाना अत्यत दुष्कर होता है। इस स्थिति का अनुमान केवल वही लोग लगा

सकते है जिन्होने ऐसी दुर्भाग्यपूर्ण परिस्थितियो का सामना किया हो। जब मैंने टामस कारलाएल के जीवन-वृत्तात मे पढा था कि उसने फ्रासीसी क्राति पर अपनी सुविख्यात पुस्तक पुन लिखी थी और आलोचको ने उसे सर्जनात्मक क्षमता की एक अद्भुत उपलब्धि स्वीकार किया था तो मै नही समझ सका था कि इसमे असाधारण बात क्या है। परन्तु इस विपत्ति के पश्चात् मुझे ज्ञान हो गया कि यह न केवल असाधारण है बल्कि इससे भी कुछ अधिक है और वस्तुत कारलाएल की सर्जनात्मक महानता का इससे बढ कर अन्य कोई दूसरा प्रमाण नही हो सकता।

कई वर्ष बीत गए किन्तु मै अपने आपको इस कार्य मे सलग्न न कर सका। बहुधा ऐसा हुआ कि अनुवाद और भाष्य के बचे-खुचे पृष्ठ मैने निकाले किन्तु जैसे ही विनष्ट कागजो पर दृष्टि पडती चित्त की मलिनता उभर आती और दो-चार पृष्ठ लिख कर छोड देना पडता।

परन्तु एक ऐसे कार्य की अधिक समय तक उपेक्षा करना मेरे लिए सभव न था जिसके सबध मे मेरा विश्वास था कि वह मुसलमानो के लिए उस काल का सबसे अधिक आवश्यक कार्य है। जितना समय बीतता जाता था, उस आवश्यक कार्य मे विघ्न का आभास मेरे लिए असहनीय होता जाता था। मै महसूस करता था कि यदि यह कार्य मेरे द्वारा सपन्न न हो पायेगा तो शायद दीर्घकाल तक इसके पूर्ण होने की आशा भी न की जा सके।

सन् १९२७ ई० लगभग समाप्त हो रही थी कि अकस्मात् बहुत दिनो से शिथिल चित्त गतिवान हो उठा और जिस ग्रथि ने चित्त के निरन्तर प्रयासो को विफल कर दिया था, वह अकस्मात् मनोद्रेक के प्रवाह से स्वत खुल गई। काम आरम्भ किया तो प्रारम्भ मे कुछ दिनो तक मनोभाव शिथिल रहा किन्तु जैसे ही अभिरुचि और चिन्तन के दो-चार मादक प्याले पिये तो चित्त के समस्त अवरोधक तत्त्व दूर हो गये और फिर तो ऐसा मालूम होने लगा कि इस कौतूहलमय जगत पर मलिनता और उन्मादकता की कभी छाया भी नही पडी थी। इतना ही नही, बल्कि कहना चाहिए कि नवीन प्रयासो की मादकता बीती विभावरी के आनन्दोल्लास से भी कही अधिक उन्मादक हो गई। मन और आत्मा के कार्य-व्यापार की कुछ विलक्षण स्थिति है। या तो हाल यह था कि निरतर प्रयास किया किन्तु चित्त की कुठा दूर न हुई या अब स्वत वह इस प्रकार प्रवाहित हुआ कि लेखनी रोकना भी चाहूँ तो नही रोक सकता।

कार्य पुन आरम्भ हो गया और इस विचार से कि सूर फातेहा का भाष्य अनुवाद के लिए भी आवश्यक है, मैने सर्वप्रथम इसकी ओर ध्यान दिया और फिर अनुवाद की प्रक्रिया प्रारम्भ हुई। परिस्थितिया अब भी प्रतिकूल थी। स्वास्थ्य दिन-प्रतिदिन क्षीण हो रहा था, राजनैतिक कार्य सदैव की भाति बाधा उत्पन्न कर रहे थे। फिर भी न्यूनाधिक कार्य होता रहा और २० जुलाई सन् १९३० ई० मे जब मै मेरठ के जिला जेल मे था—को अतिम सूर के अनुवाद से मै निवृत्त हो गया।

अनुवाद और भाष्य के सिद्धात

कुरान के उद्देश्यो और अर्थो को जिन सिद्धातो और अवधारणाओ के अतर्गत रूपातरित करने की घोषणा की गई थी, उससे पूर्व-परिचित होने के कारण पुस्तक पढने की लालसा लोगो मे जाग्रत होना स्वाभाविक है। इस प्राक्कथन के लिखने के समय तक मेरा भी यही विचार था कि इस सबध मे एक सक्षिप्त भूमिका पुस्तक मे सम्मिलित की जायेगी परन्तु अब जब प्राक्कथन लिख रहा हूँ तो इन सिद्धातो और अवधारणाओ को समेटना चाहा तो ज्ञात हुआ कि विषयगत जटिलताए और विश्लेषणात्मक गहराइया ऐसी नही है, जिनका विवरण प्रस्तुत हो सके और जिनका परिसीमन किया जा सके। प्रत्येक प्रस्तुत तर्क के स्पष्टीकरण के लिए पृथक्

भूमिकाए और टिप्पणिया आवश्यक है और वर्ण्य-विषय के प्रत्येक अश की परिधि इतनी दूर-दूर **तक फैली हुई है कि न तो वह समेटी जा सकती है और न ही सक्षेप मे सकेतो द्वारा साधारणतया उन अशों का अनुशीलन किया जा सकता है। इस विचार के भार से मुक्त होकर और उन** कठिनाइयो तथा अवरोधो की ओर सकेत करके उन कठिनाइयो को बता देता हूँ, जो इस मार्ग मे बाधक थी ताकि अनुमान किया जा सके कि इस मामले की साधारण स्थिति क्या थी और कुरान के अनुशीलन पर जो कदम उठाया गया है वह क्या रूप धारण करने जा रहा है।

रह गए कुरान के अनुवाद के भाष्य सिद्धात तो उनके लिए भाष्य की भूमिका की प्रतीक्षा करनी चाहिए जो कुरान की अनुवाद-श्रृखला की दूसरी पुस्तक है और जिसकी पुरातन पाण्डुलिपियो के उद्धार और सपादन मे आजकल व्यस्त हूँ।

अनुशीलन और मूल्याकन का साधारण मापदड

विभिन्न कारणो से, जिन्हे प्रकाशित करने का यहा अवसर नही है, अतीत मे कुरान के अनुशीलन मे शताब्दियो से ऐसे कारण विकसित होते रहे और ऐसे प्रभाव पडते रहे जिनके फलस्वरूप शनै-शनै कुरान का तत्त्वज्ञान दृष्टि से ओझल होता गया और धीरे-धीरे उसके अध्ययन तथा अर्थबोध का एक अत्यत निम्नस्तर स्थापित हो गया। यह बात भी केवल अर्थबोध तक ही सीमित नहीं रही, बल्कि हर बात मे हुई, यहा तक कि उसकी भाषा, उसके शब्दो, उसके समासो और उसकी रमणीयता के लिए भी दृष्टि-बोध का कोई उच्च स्तर शेष नही रहा।

प्रत्येक युग के लेखक की रचना उसके अपने युग के बौद्धिक वातावरण की उपज होती है और इस विषय के केवल वही मनीषी अपवाद होते है जिनके कालभेदी पज्ञा को प्रकृति का वरदान प्राप्त हो और उन्हे साधारण श्रेणी से उन्हे पृथक कर दिया हो। अत हम देखते है कि इस्लाम की प्रारभिक शताब्दियो से लेकर आज तक जितनी मात्रा मे भाष्यकार उत्पन्न हुए उनकी भाष्य-पद्धति एक पतनशील चितन के स्तर की अटूट श्रृखला है जिसकी हर कडी अपने पूर्व की कडी से अधिक निम्नस्तरीय है और उसकी प्रत्येक पूर्वस्थिति को अधिक उच्च स्थान प्राप्त है। इस प्रकार हम जितना ऊपर की ओर बढते जाते है, वास्तविकता अधिक स्पष्ट होती जाती है, अधिक उच्च-स्तरीय होती जाती है और अपने नैसर्गिक रूप मे अभिव्यक्त होती जाती है तथा जितना-जितना नीचे उतरते जाते हैं स्थिति इसके विपरीत होती जाती है।

यह वस्तुस्थिति वस्तुत मुसलमानो के मानसिक पतन का स्वाभाविक परिणाम थी। उन्होने जब देखा कि कुरान की ऊचाइयो का साथ नही दे सकते तो प्रयत्न किया कि कुरान को उसकी ऊचाइयो से इतना नीचे उतार ले, जितना वह उनकी नीचाइयो का साथ दे सके।

अब यदि हम चाहते है कि कुरान को उसके वास्तविक स्वरूप मे देखे तो आवश्यक है कि पहले वह सारे अवगुठन हटाए जाए जो विभिन्न युगो और विभिन्न स्रोतो के बाह्य प्रभावो ने उसके मुखमडल पर डाल दिए है। फिर आगे बढे और कुरान की वास्तविकता स्वय कुरान ही के पृष्ठो मे खोजे।

तत्त्वज्ञान के बोध में बाधक कुछ कारण और प्रभाव

यह विरोधी प्रभाव जो एक के बाद दूसरे एकत्रित होते रहे, दो-चार नही हैं, बल्कि असख्य हैं और प्रत्येक अश मे व्याप्त है। यह सभव नही कि उनका सक्षिप्त वर्णन प्रस्तुत किया जा सके किन्तु मैंने भाष्य की भूमिका मे प्रयत्न किया है कि कुछ सिद्धातो और उनके कुछ

प्रकारो के अन्तर्गत उन्हे समेट लूं। इस सबध मे निम्नलिखित अवधारणाए विचारणीय है

(१) ज्ञानगर्भित ग्रथ अपने रूप-स्वरूप, अपनी शैली, अपनी वर्णन-पद्धति, सबोधन के अपने ढग, तर्क-वितर्क की अपनी प्रणाली मे हमारे द्वारा निर्मित और निर्धारित पद्धतियो के अधीन नही है और न ही उन्हे इनके अधीन होना चाहिए। वह अपनी हर बात मे अद्वितीय और विलक्षण नैसर्गिक पद्धति अपनाते है और यही वह मौलिक भेद है जो ईश्वर द्वारा भेजे गए नबियो (दूतो) की सहज मार्गदर्शन पद्धति को मनुष्य द्वारा निर्मित ज्ञान-विज्ञान की तार्किक पद्धतियो से भिन्न कर देती है।

कुरान जब अवतरित हुआ तो उसका सबोधन जिस समूह से था वह ऐसा ही सरल था और सभ्यता द्वारा निर्मित और रूपायित साचो मे उसका मानस अभी नही ढला था, वह अपने सरल और सहज प्राकृतिक चिंतन स्तर पर सतुष्ट था। परिणाम यह हुआ कि कुरान अपने स्वरूप और बोधगम्यता मे जैसा था वैसे ही ठीक-ठीक उस समय के समूह के मन मे उतर गया और उसे कुरान को बोधगम्य करने मे तथा उससे परिचय प्राप्ति मे किसी प्रकार की कठिनाई का आभास नही हुआ। सहाबा (रसूल के सहचर) प्रथम बार कुरान की कोई आयत या सूर सुनते ही उसके तत्त्व को प्राप्त कर लेते थे।

परन्तु प्रारभिक युग अभी समाप्त भी नही हुआ था कि रोम तथा ईरान की सभ्यता की हवाए चलने लगी और तत्पश्चात् यूनानी ज्ञान-विज्ञान के अनुवाद के कारण मनुष्य द्वारा निर्मित कला एव विज्ञान के नियमो का युग आरम्भ हो गया। परिणाम यह हुआ कि जैसे-जैसे ज्ञान-प्राप्ति की निर्मित पद्धति की ओर जिज्ञासा बढती गई, कुरान की नैसर्गिक पद्धति से मानस अपरिचित होता गया। शनै -शनै वह समय आ गया कि कुरान की हर बात मनुष्य द्वारा निर्मित और उसके द्वारा रूपायित पद्धतियो के साचे मे ढाली जाने लगी। चूँकि इन साचो मे कुरान का ज्ञान ढल नही सकता था इसलिए विभिन्न प्रकार के उलझाव पैदा होने लगे और फिर जितने प्रयत्न सुलझाने के किए गए उलझाव और अधिक बढते गए।

स्वाभाविक स्थिति से जब दूरी हो जाती है और कृत्रिम सिद्धातो के प्रति तन्मयता हो जाती है तो फिर चिंतन दृष्टि इस बात पर सहमत नही होती कि किसी बात को उसकी प्राकृतिक सहजता मे देखे। ऐसे व्यक्ति सहजता के साथ सौदर्य और गरिमा के योग का अनुमान कर ही नही सकते। यह लोग जब किसी बात को उच्च और भव्य दिखाना चाहते है तो प्रयत्न करते है कि अधिक से अधिक स्वनिर्मित और स्वरूपायित पद्धति द्वारा विकार उत्पन्न करे। यही घटना कुरान के साथ घटी पूर्ववर्तियो का विवेक कृत्रिम पद्धतियो मे नही ढला था इसलिए वह कुरान के सरल तत्त्व को तुरन्त पहचान लेते थे। किन्तु परवर्तियो की चिन्तनधारा में यह बात अरुचिकर समझी जाने लगी कि कुरान अपने सहज रूप में प्रस्तुत हो, सिद्धान्त-निर्माण की उनकी अभिरुचि इस बात पर सन्तुष्ट नहीं हो सकती थी। उन्होंने कुरान की हर बात के लिए कृत्रिम सिद्धान्तो के वसन सिलने आरम्भ कर दिये और उनके द्वारा बनाए गए यह वसन शरीर पर ठीक नही उतर सकते थे। इसलिए हठपूर्वक इस वसन को पहनाना चाहा। परिणाम यह हुआ कि सत्य और औचित्य का प्रश्न न रह गया और हर बात औचित्यविमुख तथा गूढ रहस्य बन कर रह गई।

कुरान के भाष्यो का प्रथम युग वह है जब इस्लामी ज्ञान-विज्ञान के ग्रथो का पाठ-निर्धारण और वर्गीकरण का कार्य आरम्भ नही हुआ था। इस्लामी वाङ्मय का दूसरा युग पाठ-निर्धारण करने और उसे लिपिबद्ध करने से आरभ होता है और इसके विभिन्न प्रकार के आचरण और इसकी विभिन्न श्रेणिया परिलक्षित होती है। हम महसूस करते है कि अभी दूसरा

युग आरम्भ भी नही हुआ था कि सिद्धात-वसन क़ुरान को पहनाने का कार्य आरम्भ हो गया था। लेकिन यह स्थिति चरम शिखर पर उस समय पहुची जब दर्शन और विज्ञान के प्रचार-प्रसार का अतिम चरण पूर्ण हुआ। यही समय है जब इमाम फखरूद्दीन राजी ने महाभाष्य लिखा और उन्होने पूर्ण प्रयत्न किया कि कुरान का स्वरूप उस कृत्रिम सिद्धात के वसन से मुसज्जित हो जाए। यदि इमाम राजी की दृष्टि इस तथ्य पर न होती तो उनका पूर्ण भाष्य अनावश्यक होता, उसका दो-तिहाई भाग निश्चय ही निराधार हो जाता। यह बात अवश्य याद रहे कि कृत्रिम सिद्धात के साचे जितने टूटते जाएगे कुरानी तथ्य उतने ही उभरते आएगे। कुरान की वर्णन-पद्धति के सबध मे लोगो को जितनी मात्रा मे कठिनाइयो का अनुभव करना पडा, वह केवल इसलिए कि कृत्रिम सिद्धातो मे वह तन्मय हुए और प्राकृतिक नियमो का ज्ञान शेष न रहा।

कुरान के विभिन्न अशो और आयतो के औचित्यपूर्ण बोध के सबधो मे सारे प्रपच केवल इसलिए हैं, क्योकि प्राकृतिक सिद्धातो से दूरी हो गई और कृत्रिम सिद्धात हमारे अन्तस्तल मे प्रविष्ट हो गए। हम चाहते हैं कि कुरान को भी एक ऐसी सकलित पुस्तक के रूप मे देखे जैसी पुस्तको का सकलन हम करते है।

कुरान की भाषा के सबध मे वाद-विवाद का जितना ढेर लगा दिया गया है वह केवल इसलिए है कि प्राकृतिक सिद्धातो को समझने की हममे क्षमता नही रह गयी।

कुरान की अलकृत भाषा शैली हमारी अनुभूति के लिए जितनी सहज है उतनी ही हमारी बुद्धि के लिए जटिल क्यो हो रही है? केवल इसलिए कि अप्राकृतिक सिद्धातो का स्वनिर्मित मापक हमारे हाथ मे है। हम चाहते है कि इसी से कुरान की अलकारयुक्त भाषा को भी मापे। कुरान की तार्किक पद्धति का स्पष्टीकरण क्यो नही होता, उसकी समस्त तर्क-शैली और सारे दृष्टात लुप्त क्यो हो गए है, जिन्हे उसने ज्ञानमर्म भडार की सज्ञा दी है? इसलिए कि कृत्रिम सिद्धातो के प्रति मोह ने हमे न्यायिक शैली का साचा प्रदान किया है। हम चाहते है कि कुरान की वर्णन-पद्धति और उसमे प्रयुक्त दृष्टातो को भी बुद्धि की कसौटी पर कसे। कुरान के जिस अश के भाष्य पर दृष्टि डाले, इसी वास्तविकता का अनुभव होगा।

(२) जब किसी ग्रथ के सबध मे यह प्रश्न उठ खडा हो कि उसका अर्थ क्या है तो फिर स्वत उन लोगो के अर्थबोध को प्राथमिकता दी जायेगी जिन्होने स्वय पुस्तक पढने का श्रेय प्राप्त करके अर्थ ग्रहण किया हो। कुरान तेईस वर्षो मे शनै -शनै अवतरित हुआ। जितने अशो मे वह अवतरित होता जाता था, रसूल के पुनीतात्मा सहचर उन्हे सुनते थे, नमाजो मे दोहराते थे और उनके बारे मे जो कुछ पूछना होता था, स्वय इस्लाम के पैगम्बर से पूछ लेते थे। इनमे से कुछ व्यक्ति विशेष रूप से कुरान को समझने मे श्रेष्ठ सिद्ध हुए और स्वय इस्लाम के पैगम्बर ने उनके अर्थबोधो का समर्थन किया। धार्मिक मान्यता के कारण ही नही, बल्कि उनके स्वाभाविक और नैसर्गिक होने के कारण उस अर्थबोध को परवर्ती लोगो के अर्थबोध पर प्राथमिकता मिलनी चाहिए। परन्तु दुर्भाग्यवश ऐसा नही समझा गया। परवर्तियो ने अपने-अपने युग के बौद्धिक प्रभाव के अतर्गत नई-नई चेष्टाए प्रारम्भ कर दी और पूर्ववर्तियो के सुस्पष्ट अर्थापन्न के विपरीत प्रत्येक क्षेत्र मे अपना चमत्कार दिखाने लगे। कहा गया कि "पूर्ववर्ती सुदृढ निष्ठावान हैं किंतु ज्ञान-क्षेत्र मे परवर्तियो द्वारा अपनाई गई पद्धति सशक्त है।"

दूसरा परिणाम यह हुआ कि दिन-प्रतिदिन तथ्य लुप्त होते गए और अनेकानेक सदर्भ जो सुस्पष्ट थे, उलझते-उलझते नितात प्रपचपूर्ण बन गए। भीषण अत्याचार यह हुआ कि पहले एक सदिग्ध पहलू को लिया गया और बढते-बढते वह दूर तक निकल गए। फिर जब कठिनाइयो से

दो-चार हुए तो नित नवीन तर्क-वितर्कों और चेष्टाओ के भवन निर्मित करने लगे। पाठ्यशुद्धियो, टीकाओ, टिप्पणियो, वर्जनाओ और अन्याश्रय की प्रणाली यहा भी प्रचलित हुई। उसने और अधिक उलझाव उत्पन्न किए और कुछ स्थितियो मे तो परदो की इतनी तहे डाल दी कि एक के पश्चात् एक परदा उठाते चले जाओ और वाछित वस्तु प्राप्त नही होती।

इस बात का अनुमान कराने के लिए कुरान का कोई एक अश ले लो। पहले उसकी व्याख्या सहचरो और आज्ञाकारियो की परपरा मे ढूढो, फिर परवर्ती भाष्यकारो की ओर चलो और दोनो की तुलना करो। स्पष्टत दिखाई पड जायेगा कि सहचरो और पूर्ववर्तियो की व्याख्या मे बात अत्यत सुस्पष्ट थी और परवर्ती अनावश्यक सूक्ष्मताधर्मी अनुशीलन ने उसे कुछ से कुछ बना दिया और प्रपच खडा कर दिया।

उदाहरणत सूर बकर के प्रारभिक आयतो के सबध मे हजरत-अब्दुल्ला-बिन-अब्बास और इब्न-मसऊद का कहना है कि

(१) **अखी** (भ्राता) से तात्पर्य अरब के निष्ठावान है

और

अख़ी से अभिप्राय उन लोगो से है जिन पर ईश्वरीय पुस्तके अवतरित हुई है। इब्ने जरीर ने भी इसका यही भाष्य किया है। परन्तु परवर्ती भाष्यकार इस पर सतुष्ट नही हुए और उन्होने नाना-प्रकार के प्रपचपूर्ण वाद-विवाद उत्पन्न कर दिये। परिणाम यह निकला कि पहले तो–

"अर्थ विकृत हुआ, फिर कुरान ने मानव को जिन तीन जन-समूहो मे विभक्त करके जिस बात पर बल दिया था उसका मपूर्ण गुण नष्ट हो गया।

(३) नये-नये मुसलमान होने वाले समुदायो मे प्रचलित कथाये और उनकी परपराये पहले दिन से ही फैलना शुरू हो गई थी। इनमे से इसराईली (यहूदियो) कथाओ **को** अनुसधानकर्ताओ ने सदैव पृथक् करना चाहा किन्तु वास्तविकता यह है कि इन तत्त्वो के प्रभाव गुप्त रूप से दूर-दूर तक फैल चुके थे और वह निरन्तर भाष्यरूपी शरीर मे प्रविष्ट रहे।

(४) एक ओर तो सहचरो और परवर्तियो की परपरा की उपेक्षा की गई, दूसरी ओर भाष्य-परपरा के असावधान विद्वानो ने एक अलग सकट उत्पन्न कर दिया और प्रत्येक बात **जिसका सबध पैगम्बर के किसी न किसी सभासद से जोड दिया गया और उसे पूर्ववर्तियो का भाष्य समझ लिया।**

(५) इस स्थिति का सबसे अधिक दु खद परिणाम यह निकला कि कुरान की तर्क-पद्धति दूर की कौडी लाने वाले ज्ञान के गोरखधधे मे लुप्त हो गयी। स्पष्ट है कि कुरान के समस्त वर्णनो की धुरी और उसके बिन्दु उसकी तर्क-पद्धति ही है। इसके उपदेश और उसका दृष्टिकोण, उसकी कथाए, उसका धर्मज्ञान और उसके आदेश, उसके उद्देश्य तथा शास्त्र सब इसी बात से सबद्ध थे। यह एक बात क्या कम हुई कि कुरान का सभी कुछ कम हो गया –

ईश्वर द्वारा प्रेषित नबियो के कहने का ढग यह नहीं होता कि तर्क-वितर्क के आधार पर वह अपने दृष्टिकोण की भूमिका तैयार करे, फिर उसके सबध मे सबोध्य को वाद-विवाद मे उलझाना आरभ कर दे। वह प्रत्यक्षत मार्गदर्शन और अपनी ओर बुलाने की स्वाभाविक पद्धति **ग्रहण करते हैं। उसे प्रत्येक मस्तिष्क भावनाधीन हो आत्मसात कर लेता है, प्रत्येक हृदय नैसर्गिक रूप** से स्वीकार कर लेता है। परन्तु हमारे भाष्यकारो को दर्शन और तर्क के मोह ने इस योग्य ही न रखा कि किसी तत्त्व को उसके सरल और सहज रूप मे देखे और स्वीकार कर ले। उन्होने पुण्यात्मा नबियो की अत्यधिक महिमा इसमे समझी कि उन्हे तर्कशास्त्री बना दे और कुरान की

समस्त महत्ता इस बात मे उन्हे दिखाई दी कि उसकी हर बात अरस्तू के दर्शन के ढाचे मे ढली हुई निकले। इस साचे मे वह ढल नही सकती थी। परिणाम यह हुआ कि कुरान की शैली और उसके दृष्टान्तो का समस्त सौदर्य और उसकी रमणीयता नाना प्रकार की कृत्रिमता मे लुप्त हो गई। तात्विकता तो कम हो ही चुकी थी किन्तु वह बात भी न बन पाई जो यह लोग बनाना चाहते थे। शकाओ और आपत्ति उठाने के असख्य द्वार खुल गये। उनके खोलने मे तो इमाम राजी का हाथ सशक्त था किन्तु बद करने मे वह अपनी क्षमता प्रदर्शित न कर सके।

(६) यह कठिनाई केवल कुरान की वर्णन-शैली मे ही उत्पन्न नही हुई, बल्कि उसके अग-अग मे फैल गई। तार्किक और दार्शनिक वाद-विवाद ने नाना प्रकार के नवीन पारिभाषिक शब्द प्रस्तुत कर दिये। अरबी शब्दकोश के शब्द उन पारिभाषिक अर्थो मे प्रयुक्त होने लगे। स्पष्ट है कि कुरान का वर्ण्य विषय यूनानी दर्शन नही है और न कुरान के अवतरण के समय अरबी भाषा इन पारिभाषिक शब्दो से परिचित थी। अत जहा कही कुरान मे वे शब्द आए हैं, उनके अर्थ वह नहीं हो सकते जो पारिभाषिक शब्द-निर्माण के पश्चात् निर्धारित किये गए हैं। परन्तु अब उनके पारिभाषिक अर्थ ही प्रचलित होने लगे और इसके आधार पर नाना प्रकार के रूढ वाद-विवाद उत्पन्न कर दिये गये और ऐसे अर्थ ग्रहण किए गए जिनका कुरान के किसी प्रथमयुगीन श्रोता को अनुमान भी न हुआ होगा।

(७) इसी बीज के यह भी पत्ते और फल हैं कि समझा गया है कि कुरान को प्रचलित ज्ञानावेक्षण का साथ देना चाहिए। प्रयत्न किया गया कि पतली बतलीनूसी (यूनान के विद्वान बतलीनूस से सबद्ध) पद्धति उस पर चिपकाई जाए, ठीक उसी तरह जिस प्रकार आजकल के बुद्धिजीवियो की भाष्य-पद्धति यह है कि वर्तमान खगोलशास्त्र की समस्याओ को कुरान पर आच्छादित किया जाए।

(८) प्रत्येक पुस्तक और उपदेश के कुछ केन्द्रबिन्दु होते है और उसकी समस्त विवरणिका उन्ही के चारो ओर घूमा करती है। जब तक यह केन्द्रबिन्दु समझ मे न आये, वृत्त की कोई बात समझ मे नहीं आ सकती। कुरान का भी यही हाल है। उसके भी कुछ केन्द्रीभूत उद्देश्य और मान्यताए है और जब तक वह ठीक-ठीक बुद्धिगम्य न कर ली जाये, उसकी कोई बात उचित रूप से समझी नही जा सकती।

उपर्युक्त कारणो से जब उसके केन्द्रीभूत उद्देश्य का प्रकाशन प्राय लुप्त हो गया तो स्वभावत उसका प्रत्येक अश इससे प्रभावित हुआ। उसका कोई वक्तव्य, कोई अभिप्राय, कोई प्रमाण, कोई सभाषण, कोई सकेत, कोई सारतत्त्व ऐसा न रहा जो इस प्रभाव से सुरक्षित है। खेद है कि सक्षिप्तत बात कहने के कारण उद्धरण प्रस्तुत करने सभव नही है और बिना उद्धरण के वास्तविकता प्रकाशित नही हो सकती। उदाहरणत आले-इमरान की आयत के—अभिप्राय को देखो कि क्या-क्या निराधार विवाद नही उठाए गए। यहूदियो के सबध मे इसकी उक्ति कि

"किन-किन दिशाओ मे नही निकल गये" का भाष्य किस प्रकार किया गया है और किस प्रकार कथन के देश-काल और उसके सदर्भ की स्पष्टत उपेक्षा कर दी गई है।

(९) कुरान के सम्यक् ज्ञान के लिए अरबी शब्दो और साहित्य की उचित मर्मज्ञता पहली शर्त है। किन्तु विभिन्न कारणो से, जिनको सविस्तार व्याख्यायित करने की आवश्यकता है, यह पाण्डित्य क्षीण होता गया और यहा तक कि वह समय आ गया, जब अर्थबोध मे असख्य उलझाव केवल इसलिए पड गए क्योकि अरबी भाषाज्ञान के प्रति अभिरुचि शेष नही रही और

जिस भाषा मे कुरान अवतरित हुआ था, उसके मुहावरो और कथन-शैली से नितान्त दूरी उत्पन्न हो गई।

(१०) प्रत्येक युग के चितन का प्रभाव समस्त ज्ञान-विज्ञानो के समान भाष्यो को भी प्रभावित करता रहा है। निस्सदेह इस्लामी इतिहास की यह गौरवपूर्ण घटना हमेशा स्मरण रहेगी कि सत्यनिष्ठ विद्वानो ने समय के राजनैतिक प्रभावो के सम्मुख हथियार नही डाले और कभी यह बात सहन नही की कि इस्लाम की मान्यताए और धर्मशास्त्र उनके प्रभावाधीन है। परन्तु समय का प्रभाव केवल राजनीति के द्वार से ही प्रविष्ट नही होता, उसके मनोवैज्ञानिक प्रभावो के असख्य द्वार है और जब वह खुल जाते है तो किसी के बद किए बद नही हो सकते। उनके हस्तक्षेप से मान्यताए और धर्म-कर्म सुरक्षित रखे जा सकते थे और सत्यनिष्ठ विद्वानो ने सुरक्षित रखे भी किन्तु मस्तिष्क सुरक्षित नही रहे। यहा आवश्यकता उदाहरणो की है किन्तु उदाहरणो के लिए विस्तार की आवश्यकता थी और सक्षिप्तता की माग इसकी अनुमति नही देती।

(११) हिजरी पचाग की चौथी शताब्दी के पश्चात् इस्लामी ज्ञान-विज्ञान के इतिहास का साहसपूर्ण निर्देशनकाल समाप्त हो गया और कुछ अपवादो के अतिरिक्त वह साधारणतया अनुसरण का मार्ग हो गया। इस भयकर रोग ने भाष्यरूपी शरीर मे भी पूर्णत प्रवेश प्राप्त कर लिया। प्रत्येक व्यक्ति जो भाष्य करने का इच्छुक होता था, किसी अपने से पहले के भाष्यकार का ग्रथ अपने समुख रख लेता था, फिर आखे बद करके उसके पीछे-पीछे चलता रहता था। यदि तीसरी शताब्दी हिजरी मे किसी भाष्यकार से कोई गलती हो गई है तो आवश्यक है कि नवी शताब्दी हिजरी के भाष्यो तक वह निरतर अनुकृत होती चली जाए। किसी ने इस आवश्यकता का अनुभव नही किया कि कुछ क्षणो के लिए अनुकरण की प्रवृत्ति से मुक्त होकर अन्वेक्षण करे कि वास्तविक स्थिति क्या है। शनै -शनै भाष्यकारिता का उत्साह इतना घट गया कि पूर्व लिखे हुए भाष्य पर टीका-टिप्पणी कर देने से अधिक आगे बढ सके। बैजावी और जलालैन की टिप्पणिया देखो। एक पूर्व निर्मित भवन के लीपने-पोतने मे किस प्रकार सर्जन शक्ति व्यर्थ गवाई गई है।

(१२) युग की कुरुचि ने भी हर प्रकार से चितन विकार को आश्रय दिया है। हम देखते है कि अतिम चरण मे पठन-पाठन के लिए वही भाष्य लोकप्रिय हुए जो पुरातन आचार्यो की विशेषताओ से नितात रिक्त थे। काल की यह मनोवृत्ति प्रत्येक शास्त्र और कला को प्रभावित करती रही है। जो काल जर्जजानु पर सकाकी को और सकाकी पर तफ्ताजानी को प्राथमिकता देता था, निश्चय ही उसके दरबार से बैजावी और जलालैन को ही मान्यता मिल सकती थी।

(१३) प्रचलित भाष्यो को उठा कर देखो। जिस अश के भाष्य मे विभिन्न मत विद्यमान होगे वहा यह विद्वान बहुधा उसी मत को प्राथमिकता देगे जो सबसे अधिक त्रुटिपूर्ण और सदर्भ से दूर होगा, जिन मतो को उद्धरित करेगे उनमे यदि औचित्यपूर्ण मत विद्यमान होगा तो उसकी उपेक्षा कर देगे।

(१४) सदेह और **विघ्नत्व** का बडा द्वार तफसीर बिल-राय (मतानुसार भाष्य) से खुल गया जिसके भय से सहचरो और पूर्ववर्तियो की आत्माए सिहर उठती हैं।

तफसीर बिल-राय (मतानुसार भाष्य) का अभिप्राय समझने मे लोगो को भ्रम हुआ। *तफसीर बिल-राय के निषेध का उद्देश्य यह न था कि कुरान के अर्थबोध मे बुद्धि और प्रज्ञा से* काम न लिया जाए। यदि यह उद्देश्य हो तो फिर कुरान का पठन-पाठन ही निरर्थक हो जाए।

स्वय कुरान की स्थिति यह है कि वह आदि से अत तक प्रज्ञा और चितनशीलता का निमत्रण है।

(१५) वस्तुत तफ्सीर बिल-राय मे 'राय' शब्द अपने शाब्दिक अर्थ मे प्रयुक्त **नही है बल्कि 'राय' इस्लामी धर्म का पारिभाषिक शब्द है और इससे अभिप्राय ऐसे भाष्य** से है जो इसलिए न किया जाए कि स्वय कुरान क्या कहता है बल्कि इसलिए किया जाए कि पूर्वाग्रह किस बात की माग करता है। और किस प्रकार कुरान को खीचतान कर पूर्वाग्रहीत मतानुसार अर्थापन्न किया जा सकता है।

उदाहरणत जब धार्मिक मान्यता के सबध मे विवाद आरम्भ हुए तो कुरान-मीमासा के विभिन्न सम्प्रदाय उत्पन्न हो गए। प्रत्येक सम्प्रदाय के प्रवर्तक ने चाहा कि अपने सम्प्रदाय के मतानुसार कुरान की अर्थगर्भिता का स्पष्टीकरण करे। सूफियो को लीजिए, वह इस बात की खोज मे न थे कि कुरान क्या कहता है बल्कि उनकी समस्त चेष्टा इस हेतु थी कि किस प्रकार उसे अपने सम्प्रदाय का अनुमोदक सिद्ध कर दे। इस प्रकार का भाष्य मतावलबी भाष्य था।

या उदाहरणत धर्मशास्त्र के सप्रदायो के अनुयायियो मे जब शियामत और तहजब के विचार उत्पन्न हुए तो अपनी मान्यताओ के समर्थन मे वह कौरानिक आयतो को खीचने-तानने लगे, इसकी कोई चिन्ता उन्हे नहीं थी कि अरबी शब्द के सुस्पष्ट अर्थ, कुरान की कथन-शैली का नैसर्गिक आग्रह क्या है और बुद्धि तथा प्रज्ञा का स्पष्ट निर्णय क्या कहता है। प्रयत्न यह था कि किसी न किसी प्रकार कुरान को अपने इमाम (सप्रदाय प्रवर्तक) के सप्रदाय के अनुकूल उसे बनाये। भाष्य की यह पद्धति मतो पर आधारित भाष्य है।

या उदाहरणत सूफियो का एक दल रहस्य और आभ्यतर की खोज मे दूर तक निकल गया और फिर अपनी मान्यताओ और विवेचनो पर कुरान को ढालने लगा और कुरान का कोई **आदेश, उसकी कोई मान्यता अर्थ-विकार से न बची। यह भाष्य मतो पर आधारित भाष्य था।**

या उदाहरणत कुरान की कथन-शैली को तर्क-वसन से सुसज्जित करने का प्रयास। जहा कही 'आकाश' और 'ग्रहो' तथा 'तारो' के शब्द आ गए वहा यूनानी खगोलशास्त्र की **मतो पर आधारित भाष्य है।**

या उदाहरणत आजकल हिन्दुस्तान और मिस्र के नवीन मतावलबियो और नवीन चितन के पोषको ने यह पद्धति अपनाई है कि ज्ञान और उन्नति के वर्तमान मानक सिद्धातो को कुरान के आधार पर प्रमाणित करे या ज्ञान-विज्ञान के आधुनिक अनुसधान से इसे सबद्ध किया जाए, जैसे कि कुरान केवल इसलिए अवतरित हुआ है कि जो बात कोपरनिकस और न्यूटन या डार्विन **और एच जी वेल्स ने बिना किसी ईश्वरीय पुस्तक के जिन रहस्यो को मालूम कर लिया उन्हे कुछ** शताब्दी पहले पहेलियो के समान दुनिया के कान मे फूक दे और फिर शताब्दियो तक वह दुनिया की समझ मे भी न आए, यहा तक कि आधुनिक युग के भाष्यकारो का जन्म हो और **तेरह सौ वर्ष पूर्व की पहलेलिया वह बूझे। निश्चय ही यह भी मतो पर आधारित भाष्य है।**

वास्तविकता की खोज

यह कुछ सकेत है जिन्हे साररूप मे प्रस्तुत करने की आवश्यकता थी। समय की कमी के कारण इन्हे सक्षेप मे बताना पडा अन्यथा इस बात की व्याख्या सविस्तार होनी चाहिए। कम से कम इन सक्षिप्त सकेतो से इस बात का अनुमान कर लिया जा सकता है कि मार्ग की कठिनाइयो और बाधाओ का क्या स्वरूप है और किस प्रकार एक-एक करके अवगुठनो को हटाना है और पदे-पदे बाधक तत्त्वो से निपटना है। रुकावटे किसी एक अश मे ही नही हैं और कठिनाइया

किसी एक द्वार से ही नही आई है। एक साथ प्रत्येक घाटी का सर्वेक्षण और प्रत्येक अश के सबध मे चिन्तन-मनन होना चाहिए, तब कही जाकर खोए हुए तथ्य का पता मिल सकता है। जहा तक मेरे बस मे था, मैने चेष्टा की है कि इन कठिनाइयो के प्रति अपने दायित्व मे सफल होऊ। मै इस प्रयत्न मे कहा तक सफल हुआ हूँ, इसका निर्णय मै स्वय नही कर सकता। हा, यह कहने का साहस कर सकता हूँ कि कुरान के अध्ययन और उसके सबध मे चितन का एक नवीन मार्ग अवश्य खुल गया है और विद्वान इस मार्ग को उन समस्त मार्गो से भिन्न पायेगे जिन पर आज तक वह चलते रहे थे।

कुरानानुवाद का उद्देश्य और स्वरूप

कुरान के पठन-पाठन की तीन विभिन्न आवश्यकताए है और मैंने उन्हे तीन पुस्तको मे विभाजित कर दिया है। भाष्य-भूमिका, भाषा-शैली, मीमासा और कुरानानुवाद। भाष्य-भूमिका, कुरान के उद्देश्यो के सैद्धातिक विवेचन का सकलन है और प्रयत्न किया गया है कि कुरान के उद्देश्य और उसके व्यापक सिद्धात समग्ररूपेण एकत्रित हो जाए। भाषा-शैली, और भाष्य-चितन अध्ययन के लिए है और कुरानानुवाद कुरान के व्यापक शिक्षण और प्रचार के लिए है।

अतिम पुस्तक सबसे पहले प्रकाशित की जा रही है, क्योकि अपने उद्देश्य और स्वरूप की दृष्टि से यह सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण और आवश्यक है तथा भाष्य और भूमिका का वास्तविक आधार भी यही है।

इसकी रचना मे अभिप्राय यह है कि कुरान के उद्देश्यो को समझने और उसके सबध मे चिनन के लिए एक ऐसी पुस्तक तैयार हो जाए जिसमे भाष्य-ग्रथो जैसा विवरण तो न हो किन्तु वह सब कुछ हो जो कुरान को ठीक-ठीक समझ लेने के लिए आवश्यक है। इस दृष्टि से जो लेखन-शैली अपनाई गई है आशा है कि विद्वान उसे औचित्यपूर्ण समझेगे और रचना के सिहावलोकन मात्र से ही इसकी आवश्यकता का आभास कर लेगे। सर्वप्रथम यह चेष्टा की गई है कि कुरान का अनुवाद उर्दू मे इस प्रकार प्रस्तुत हो जाए कि व्याख्या के लिए किसी अन्य आधार का आश्रय न लेना पडे, वह स्वय व्याख्यायित हो। फिर यथास्थान टिप्पणियो का प्रयोग किया गया है जो जैसे-जैसे सूरतो के अनुवाद आगे बढते है उनके साथ-साथ वह बराबर जुडती जाती है और जहा कही आवश्यकता पडती है वहा अर्थ को अधिक सुस्पष्ट कर देती है। इनसे अर्थ की व्याख्या होती है, जो बात साररूप मे कही गई है उसका विवरण यह प्रस्तुत करती है, उद्देश्यो और कारणो पर पडे पर्दे उठाती है, तर्क को पुष्ट करती है और साक्ष्य को प्रकाशित करती है, औचित्यपूर्ण कार्यो और निषेधात्मक कार्यो को सग्रहित और क्रमबद्ध करती हैं और अधिक से अधिक कम शब्दो मे अत्यधिक ज्ञान-सपदा मे वृद्धि करती हैं, यह जैसे कुरान के पाठ्य के लिए चितन-मनन का प्रकाश-स्तभ हो, जो कुरान की उक्ति के अनुसार निष्ठावान स्त्री-पुरुषो के सम्मुख स्वय उद्‌दीप्त हो जाएगा (५७ १२)। यह टिप्पणिया चलती रहती हैं और कही साथ नही छोडती है।

इस तथ्य पर दृष्टि रहे कि कुरानानुवाद की टिप्पणिया व्याख्या और स्पष्टीकरण के एक अतिरिक्त साधन के रूप मे है अन्यथा कुरान का सुस्पष्ट अर्थ समझने के लिए मूल पाठ्य का अनुवाद पूर्णतया पर्याप्त है।

मैने प्रयोग की दृष्टि से सूर बकर का अनुवाद एक १५ वर्ष के लडके को पढने के लिए दिया जो उर्दू की सरल पुस्तके पढ लेता था। फिर प्रश्न करके उसे जाचा। जहा तक अर्थ समझ लेने का सबध है, वह एक स्थान पर भी न रुका और समस्त प्रश्नो का उत्तर देता गया। फिर मैने

एक-दूसरे व्यक्ति पर प्रयोग किया जिसने वृद्धावस्था मे लिखना-पढना सीखा है, अभी उसकी क्षमता इससे अधिक नही थी पर वह उर्दू की शैक्षणिक पत्रिकाए सरलतापूर्वक पढ लेता था। यह तीन जगह तीन फारसी शब्दो पर भटका किन्तु अर्थबोध मे उसे भी किसी कठिनाई का अनुभव नही हुआ। मैने उन शब्दो को उनसे कुछ अधिक सरल शब्दो से बदल दिया।

टिप्पणियो की क्रमबद्धता का प्रश्न अनुवाद मे मूल की आत्मा की सुरक्षा से कम कठिन न था। देखने मे तो इनके लिए अधिक जगह नहीं निकल सकती थी और टिप्पणिया अपना महत्त्व खो देती यदि उनकी सख्या एक विशेष मात्रा से कम या अधिक हो जाती। परन्तु साथ ही साथ यह आवश्यक था कि कोई महत्त्वपूर्ण स्थान अपूर्ण न रह जाए और कौरानिक उद्देश्य और उसके अर्थबोध की समस्त आवश्यकताए स्पष्ट हो जाए। अत पूर्ण सावधानी के अतर्गत ऐसी कथन-शैली अपनाई गई है जिसमे शब्द कम से कम हो किन्तु सकेतो द्वारा अधिक से अधिक बात कहने मे वह सक्षम हो। लोग जिस बात की कमी पाएगे वह केवल अर्थ-विस्तार है किन्तु इससे अर्थबोध मे किसी अभाव का आभास नही होता। एक-एक शब्द, एक-एक सूर, एक-एक स्थान, एक-एक आयत की घाटियो की यात्रा इन्होने की है और पडाव पर पडाव पार करती रही है। भाष्यो और पुस्तको का जितना प्रकाशित एव अप्रकाशित सग्रह विद्यमान है मै कह सकता हूँ कि उसके अधिकाश भाग पर मै दृष्टिपात कर चुका हूँ और कौरानिक-विधा के समस्त विवेचनो और उसे समझने की समस्त चेष्टाओ का कोई कोण ऐसा नही है, जिसकी यथासभव बुद्धि ने उपेक्षा की हो और मेरी गवेषणा ने उसके प्रति आलस्यभाव रखा हो। ज्ञान और चितन के मार्ग मे आजकल प्राचीन और अर्वाचीन की विभाजन-रेखा खीची जाती है किन्तु मेरे लिए यह विभाजन-रेखाए निरर्थक हैं। जो कुछ प्राचीन है, वह मुझे थाती रूप मे मिला है और जो कुछ अर्वाचीन है उसकी प्राप्ति के लिए अपना मार्ग मैने स्वय निर्धारित किया है। समकालीन आधुनिक मार्ग भी वैसे ही मेरे देखे-भाले है जिस प्रकार प्राचीन मार्गो पर मै यात्रा करता रहा हूँ।

मेरी दृष्टि मे प्रवृत्ति मार्ग और निवृत्ति मार्ग एक जैसे है। शिक्षा और सामाजिक प्रभाव ने जो कुछ मुझे दिया था, मैंने पहले दिन से ही उस पर सतुष्ट होने से इकार कर दिया और अनुकरणप्रियता के बधन को किसी प्रकार अपने मार्ग का अवरोधक होने नही दिया और जिज्ञासा की तृष्णा ने किसी मैदान मे भी मुझे ठहरने नही दिया

"मेरे मन की कोई निष्ठा ऐसी नही है जिसमे सदेह के कटक पूर्णतया न चुभ चुके हो और मेरी आत्मा की कोई आस्था ऐसी नही है जो इकार की समस्त परीक्षाओ से न गुजर चुकी हो। मैंने विष की घूट भी प्रत्येक प्याले से पीए है और विष उतारने के उपचार भी प्रत्येक प्याले से किये है और प्रत्येक चिकित्सालय के विष उतारने की औषधि का भी सेवन किया है। मैं जब अतृप्त था तो मेरे होठो की तृष्णा दूसरो के समान न थी और जब तृप्त हुआ तो मेरी तृप्ति का स्रोत भी प्रचलित मार्ग के अनुसार न था।"

इस दीर्घकालीन गवेषणा और मनन के पश्चात् कुरान को जैसा कुछ और जितना कुछ समझ सका हूँ, मैने इस पुस्तक के पृष्ठो पर अकित कर दिया है

"यह कोई मनगढत कथा नही है, बल्कि विद्यमान पुनीत-ग्रथो को प्रमाणित करने का प्रयास है और यह हर बात की विस्तृत व्याख्या है तथा यह उन व्यक्तियो के लिए जो निष्ठावान् है एक दिग्दर्शन है और मेरी कृपा-दृष्टि है। (१२ १११)"

अबुल कलाम

मेरठ जिला जेल।
१६ नवबर १९३० ई०

द्वितीय संस्करण की प्रस्तावना

मनुष्य के जीवनाभाव और थकन का सबसे बडा प्रमाण यह है कि उसके कार्य कभी भी परिपूर्ण नहीं हो सकते। वह आज एक कार्य समाप्त करके उठता है और समझता है कि उसे पूर्ण कर चुका किन्तु फिर दूसरे दिन देखता है तो स्वय उसके दृष्टिकोण का माप बदल जाता है और ज्ञात होता है कि नाना प्रकार की त्रुटिया रह गई थी। प्रत्येक लेखक जो अपने पिछले लेखन पर दृष्टि डालेगा इस कथन की सच्चाई को मालूम कर लेगा।

मैंने कुरानानुवाद के प्रथम खड पर अब कई वर्ष के पश्चात् दृष्टि डाली तो इसी बात का अनुभव हुआ। परिणाम यह हुआ कि पुन पूरे भाष्य और अनुवाद का सशोधन करना पडा और उसने एक दूसरा ही रगरूप धारण कर लिया।

इस सबध मे निम्नलिखित परिवर्तन विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं

(१) सूर फातेहा के भाष्य मे जगह-जगह नए अर्थों का सवर्धन किया जो प्रथम सस्करण मे उपेक्षित रह गए थे। इनसे भाष्य का आकार लगभग ड्योढा हो गया है।

अधिक सवर्धन कुरान के 'ब्रह्मज्ञान' के विवेचन मे किया गया है।

ईश्वर के गुणो की बात एक अत्यत गूढ और जटिल समस्या है। इसके विवेचन और उसके प्रति दृष्टिकोण की सीमा एक और तत्त्व-मीमासा से जा मिली है तो दूसरी ओर धर्म से, दोनो ने समानरूपेण उसे अपने चितन का विषय स्वीकार किया है। यही कारण है कि विद्या और विचारधारा के हर युग मे धर्माचार्यो से अधिक दार्शनिको के प्रयासो ने इसमे भाग लिया है और हिन्दुस्तान, यूनान, स्कन्देनेविया के दर्शनशास्त्रो तथा मध्ययुगीन दार्शनिक-विवेचनो का एक भारी सग्रह उपलब्ध हो गया। मुसलमानो के बीच जब अद्वैतवाद और मीमासा के विवादो ने सिर उठाया तो इसी विषय पर सर्वाधिक तर्क-वितर्क हुआ और विभिन्न सप्रदाय उत्पन्न हो गए। हदीस (वचनावली) के समर्थको और मुस्लिम दार्शनिको के उस सप्रदाय का जन्म हुआ जिसकी मान्यता थी कि मनुष्य बुराई-अच्छाई स्वय करता है और उसमे ईश्वर का कोई हाथ नही होता। मत-मतातर का सबसे बडा मतभेद इसी द्वार से प्रविष्ट हुआ था।

बहुत-सी उन समस्याओ मे से एक यह भी है जो विद्यार्थी-जीवन काल मे मेरे लिए अत्यधिक शका और चिता का कारण बनी थी और मै दीर्घकाल तक आश्चर्यचकित और भ्रमित रहा। अततोगत्वा जब वास्तविक स्थिति प्रकाशित हुई तो ज्ञात हुआ कि मीमासको का दिग्दर्शन इस सबध मे कुछ लाभदायक नहीं हो सकता, बल्कि गतव्य स्थान से और अधिक दूर कर देता है। विश्वास और सतोष का यही एक मार्ग है जो कुरान के आदि रूप मे ग्रहण किया गया है और जिससे परवर्तियो के अनुयायियो ने विमुख होना स्वीकार नही किया।

इस गवेषणा और अभिव्याख्यान ने अतत जिन निष्कर्षो तक पहुँचाया था वह सक्षेपत इस स्थान पर स्पष्ट कर दिए गए हैं।

दर्शन और मीमासा मे यह वाद-विवाद अत्यत जटिल है और पारिभाषिक शब्दो की गुत्थियो मे उलझे हुए है। मेरी चेष्टा रही है कि इन गुत्थियो को खोल सकू। मै समझता हू कि अब यह विचार इतना स्पष्ट तो हो ही गया है कि जो महानुभाव इस्लामी ज्ञान-विज्ञान की कला और पारिभाषिक शब्दावली से परिचित नहीं हैं वह भी इसमे रुचि ले सकेगे। जहा कही दर्शन और मीमासा के अरबी पारिभाषिक शब्द आ गए है वहा अग्रेजी पारिभाषिक शब्दावली भी प्रस्तुत कर दी गई है ताकि आधुनिक युग के दार्शनिक-विवादो मे अभिरुचि रखनेवालो को अर्थबोध मे कठिनाई न हो।

(२) 'ब्रह्मज्ञान' के विवाद मे विश्व के धर्मो के विश्वासो की अवधारणाओ का भी उल्लेख हुआ था। परन्तु प्रथम सस्करण मे केवल इस ओर सकेत मात्र किए गए थे क्योकि विवाद के क्षेत्र को अधिक विस्तार देना मुझे स्वीकार न था किन्तु अब इस स्थान पर पुन दृष्टि डाली गई तो महसूस हुआ कि विवेचन अपूर्ण रह गया है और आवश्यक है कि व्याख्या को एक विशेष सीमा तक बढने दिया जाए। अत यह भाग पुन लिखा गया और जिस सीमा तक जाने का अवसर मिल सकता था व्याख्या और विवरण पर नियत्रण के पाश को ढीला कर दिया गया है।

(३) प्रथम सस्करण मे ग्रथ को केवल अध्यायो मे विभक्त करना पर्याप्त समझा गया था, अब जगह-जगह टिप्पणी के शीर्षक भी बढा दिए गए है। इस सवर्धन से अर्थ समग्ररूपेण इस प्रकार क्रमबद्ध हो गए हैं कि दृष्टि डालते ही इनका सार मालूम किया जा सकता है।

(४) पूरे अनुवाद पर पुन विचार किया गया और इस संबंध मे यह वास्तविकता सम्मुख रही कि अधिक से अधिक स्पष्टीकरण के साथ सक्षिप्तता से भी सबध-विच्छेद न होने पाये। इसके अतिरिक्त जहा तक मूल पाठ्य के शब्दार्थ का अनुसरण किया जा सकता है उसे सुरक्षित रखा जाए। जिन महानुभावो की दृष्टि अनुवाद के पिछले सस्करण पर पड चुकी है वह अब इसका अध्ययन करेगे तो हर दूसरी-तीसरी पक्ति मे कोई न कोई परिवर्तन उन्हे अवश्य महसूस होगा।

(५) अनुवाद की व्याख्यात्मक टिप्पणियो मे भी जगह-जगह सवर्धन किए गए है। अपनी समग्रता मे यह सस्करण पिछले सस्करण से विशेष रूप से भिन्न हो गया है। मैं सोचता हू कि जिन महानुभावो की दृष्टि पिछले सस्करण पर पड चुकी है, वह भी इससे प्रभावित हुए बिना नही रह सकते। वह प्रथम चित्र था यह द्वितीय चित्र है।

अबुल कलाम

अहमद नगर दुर्ग का कारावास
७ फरवरी १९४५ ई०

अल-फ़ातेहा : प्रारंभ

तरजुमानुल कुरान

अल-फ़ातेहा : प्रारंभ *

मक्का में अवतरित ७ आयतें

ईश्वर के नाम से जो कृपालु और दयावान है।

(१) हर प्रकार की स्तुतिया ईश्वर के लिए ही हैं जो समस्त सृष्टि का पालनहार है।

(२) जो दयालु है और उसकी दया-दृष्टि समस्त सृष्टि को अपने वरदानो से समृद्ध कर रही है।

(३) जो उस दिन का स्वामी है जिस दिन अपने कर्मो का परिणाम लोगो को मिलेगा।

(४) (ऐ ईश्वर !) हम केवल तेरी ही वदना करते है और केवल तू ही है जिससे (अपनी समग्र आवश्यकताओ के लिए) सहायता मागते है।

(५) (ऐ ईश्वर !) हम पर (कल्याण) का सीधा मार्ग खोल दे।

(६) वह मार्ग जिस पर वह लोग चले जिनको तूने कृपालु बनाया है।

(७) न कि उनका मार्ग जिनको असतोष प्राप्त हुआ और न उनका मार्ग जो भटक गए हो।

सूर फातेहा कुरान की सबसे बडी सूर है। इसलिए 'फातेह-उल-किताब' (पुस्तक का प्रारभ) के नाम से पुकारी जाती है। जो बात अधिक महत्त्वपूर्ण होती है स्वभावत प्रथम और महत्त्वपूर्ण स्थान पाती है। यह सूर कुरान की समग्र सूरो मे विशेष महत्त्व रखती है। इसलिए स्वाभाविक ही है कि इसका उचित स्थान कुरान के प्रथम पृष्ठ पर ही निर्धारित किया गया है। स्वय कुरान ने इसका उल्लेख ऐसे शब्दो मे किया है जिससे इसकी महत्ता स्पष्ट होती है

"(ऐ पैगम्बर !) यह सच है कि हमने तुम्हे प्रतिदिन दोहराई जाने वाली सात आयते (पक्तिया) और महान कुरान प्रदान किए है (१५ ८७)।"

हदीसो (वचनावली) और जीवनचर्या से यह बात सिद्ध हो चुकी है कि इस आयत मे (सात दोहराई जाने वाली पक्तियो या आयतो) से अभिप्राय इसी सूर से है क्योकि यह सात आयतो का सग्रह है और सदैव नमाज मे दोहराई जाती है। यही कारण है कि इस सूर को 'सबअ-अल-मसानी' (बार-बार दुहराई जाने वाली सात आयते) भी कहते है। यही स्रोत इसे अन्य सज्ञाये भी देते है। जैसे उम्म-उल-कुरान (कुरान का केन्द्रबिन्दु), अत कज (कोशागार) और असास-उल-कुरान (कुरान का पूर्ण आधार) आदि अभियान से इसकी विशेषताए ज्ञात होती है।

अरबी मे 'उम्म' का प्रयोग सारी ऐसी वस्तुओ के लिए होता है, जो एक प्रकार से समानधर्मी होती है या बहुत-सी वस्तुओ मे प्रधान और महत्त्वपूर्ण होती है अथवा फिर कोई ऐसी उच्च-पदासीन वस्तुए होती है, जिसके अधीन उसके बहुत से अनुयायी हो। अत सिर के मध्य भाग को उम-उल-रईस कहते हैं क्योकि वह मस्तिष्क का केन्द्र है, सेना के झण्डे को उम्म कहते है क्योकि समस्त सेना उसी के नीचे एकत्रित हाती है। मक्का को उम्म-उल-कुरा कहते थे

क्योंकि कअबा के स्थित होने और हज के कारण समस्त अरब निवासियो के एकत्र होने की यही जगह थी। इसलिए इस सूर को उम्म-उल-कुरान कहने का अभिप्राय यह हुआ कि यह एक ऐसी सूर है जिसमे कुरान के प्रतिपाद्य विचार इसमे पूर्णतया प्रस्तुत है और यह उसका केन्द्रबिन्दु है तथा इस कारण कुरान की तमाम सूरतो मे उसका अपना महत्त्वपूर्ण और प्रथम स्थान है।

इस के अतिरिक्त एक से अधिक खलीफाओ (पैगम्बर के उत्तराधिकारी) की उक्ति से ज्ञात होता है कि इस सूर की यह विशेषता रसूल के जीवनकाल मे साधारणत लोकप्रिय थी। इस हदीस (वचनावली) मे कहा गया है कि स्वय रसूल ने अबी-बिन-तब्रा को यह सूर प्रदान की और **कहा कि 'इसके समान कोई सूर नही है।' एक दूसरी उक्ति मे इसे 'महानतम सूर' कहा गया है और 'सर्वश्रेष्ठ सूर' भी उन्होने इसे कहा है।**

इस सूर के प्रतिपाद्य विचारो का सिहावलोकन करते ही यह बात स्पष्ट हो जाती है कि इसमे और कुरान के अन्य अशो मे सार रूप होने और विवरण रूप होने का सबध उत्पन्न हो गया है, अर्थात् कुरान के समस्त सूरो मे सद्धर्म के जो उद्देश्य सविस्तार बताए गए हैं वही सूर-फातेहा मे साररूप मे उपस्थित है। यदि कोई व्यक्ति कुरान मे से और कुछ न पढ सके और केवल इस सूर के विचारो को आत्मसात् कर ले तो भी वह सद्धर्म और आस्तिकता के मौलिक उद्देश्य को प्राप्त कर लेगा क्योकि इसमे कुरान का समस्त विश्वात्मवाद उपलब्ध है।

इसके अतिरिक्त यदि इस पहलू पर विचार किया जाए कि इस सूर को जो रूप दिया गया है वह वदना का है और उसे प्रतिदिन उपासना-प्रार्थना का एक अनिवार्य अग बना दिया गया है तो इसकी यह विशेषताए और अधिक महत्त्व वाली हो जाती है तथा स्पष्ट हो जाता है कि इसकी सारगर्भिता और विवरणात्मकता मे बहुत महान प्रयोजन निहित है। इससे अभिप्राय यह था कि कुरान की विस्तृत वाणी का एक सक्षिप्त और सीधा-सा सार भी हो जिसे प्रत्येक मनुष्य सुविधापूर्वक आत्मसात् कर ले और फिर सदैव अपनी प्रार्थनाओ और उपासनाओ मे उसे दोहराता रहे ताकि यह उसके धार्मिक जीवन के विधान, आस्तिकता की मान्यताओ का सार और आध्यात्मिक अवधारणाओ का मूल उद्देश्य हो जाए। यही कारण है कि हर मुसलमान के लिए इस सूर का पढना और सीखना अनिवार्य कर दिया गया और बुखारी और मुस्लिम के अनुसार इस्लामी उपासना-पद्धति इसके पाठ्य के बिना अपूर्ण है।

प्रश्न यह उठता है कि सपूर्ण इस्लाम का सारतत्त्व क्या है? जितना भी विचार क्यो न किया जाए इन चार बातो के अतिरिक्त अन्य कोई और बात दिखाई न देगी। प्रथम यह कि गुणयुक्त ब्रह्म के सबध मे ठीक-ठीक अवधारणा आवश्यक है क्योकि मनुष्य को सुस्थिरता के मार्ग मे जितनी ठोकरे लगी है, वह इसी गुण सबधी अवधारणा के कारण ही लगी है। द्वितीय यह कि इसका जीवन के सबध मे कार्य-कारण सिद्धात पर बल है अर्थात् जिस प्रकार ससार मे हर वस्तु का एक प्राकृतिक और स्वाभाविक गुण है उसी प्रकार मानव-कर्मों के भी वास्तविक गुण और परिणाम है। अच्छे कर्म का परिणाम अच्छाई है और बुरे कृत्यो का बुराई। तृतीय बात यह है कि इस्लाम के अनुसार मनुष्य का जीवन इसी ससार मे समाप्त नहीं हो जाता, मरणोपरात भी जीवन है और जिसमे कर्मों का लेखा-जोखा होने वाला है। चतुर्थ मान्यता यह है कि इस्लाम कल्याण और आनद के मार्ग से परिचित कराता है।

अब विचार करो कि इन बातो का साराश कितनी कुशलता से एकत्रित कर दिया गया है। एक ओर यह इतनी अत्यधिक सक्षिप्त है कि इसमे गिनती के शब्द है और दूसरी ओर ऐसे **नपे-तुले शब्द हैं कि उनसे अर्थ पूर्णत प्रकाशित हो जाता है और अर्थबोध मे चमत्कार उत्पन्न हो**

गया है, किन्तु साथ ही वर्णन-शैली अत्यत सीधी-सादी है। इसमे किसी प्रकार का विकार नही है, किसी प्रकार का उलझाव नही है। यह बात याद रखनी चाहिए कि दुनिया मे जो बात जितनी अधिक यथार्थ के निकट होती है वह उतनी ही अधिक सहज और प्रभावशाली भी होती है। स्वय प्रकृति की यही स्थिति है कि वह किसी प्रसग मे भी उलझी हुई नहीं है। उलझाव जितना भी उत्पन्न होता है, कृत्रिमता और सकोच से उत्पन्न होता है। अत जो बात सच्ची और वास्तविक होगी, आवश्यक है कि वह सीधी-सादी और आकर्षक भी हो। आकर्षणोत्पत्ति की प्रक्रिया यह है कि जब कभी कोई ऐसी बात तुम्हारे सामने आ जाए तो मन-मस्तिष्क को किसी प्रकार का अजनबीपन महसूस न हो और वह इस प्रकार उसे आत्मसात् कर ले जैसे कि यह पहले से समझी-बूझी हुई बात थी।

अब इस बात पर विचार करो कि जहा तक मनुष्य की आस्तिकता और आस्तिक अवधारणाओ का सबध है, इससे अधिक सीधी-सादी बाते और क्या हो सकती हैं जिनका इस सूर मे उल्लेख किया गया है तथा फिर भी इससे अधिक सरल और आकर्षक वर्णन-शैली क्या दूसरी हो सकती है? सात छोटे-छोटे बोल हैं, और प्रत्येक बोल चार-पाच शब्दो से अधिक के नही है और प्रत्येक शब्द सुस्पष्ट है तथा मोहक अर्थो का नगीना है जो अगूठी मे जड दिया गया है। ईश्वर को मबोधित करते हुए उसे इस सूर मे, उसके उन गुणो मे पुकारा गया है जिनकी विभूति दिन-रात मनुष्य को दिखाई पडती रहती है, यद्यपि अपने अज्ञान और असावधानी के कारण उन पर वह चितन-मनन नही करता। इसके पश्चात् उसके प्रति भक्ति-भावना की स्वीकृति है, उसके वरदानो के प्रति आभार है और जीवन के दुष्कर्मो मे बच कर मद्‌मार्ग पर चलने की याचना है। कोई दुरूहता नही, कोई विलक्षण बात नही, कोई विचित्र रहस्य नहीं। हम बार-बार यह सूर पढते रहते है और शताब्दियो से इसके शब्दार्थ मानवजाति के सम्मुख हैं किन्तु ऐसा ज्ञात होता है कि जैसे हमारी धार्मिक अवधारणा की यह एक अत्यत साधारण-सी बात है किन्तु यही साधारण बात जिस समय तक दुनिया की समझ मे नही आई थी, इससे अधिक ज्ञानातीत और शका समाधान से रिक्त अन्य कोई बात भी न थी। दुनिया मे वास्तविकता और सच्चाई की हर बात की यही स्थिति है। जब तक वह सामने नही आती तो मालूम होता है कि इससे अधिक गूढ बात और कोई नही है। जब वह सामने आ जाती है तो ज्ञात होता है कि इससे अधिक सुस्पष्ट और सहज बात और क्या हो सकती है?

दुनिया मे जब कभी ईश्वरीय पुस्तक के रूप मे मार्गदर्शन प्राप्त हुआ है तो उसने केवल यही नही किया कि मनुष्य को नई-नई बाते सिखाई हो क्योकि आस्तिकता के सबध मे कोई अनोखी बात सिखाई ही नही जा सकती। उसका काम केवल यह रहा है कि मनुष्य की अध्यात्मनिष्ठा को ज्ञान और स्वीकृति का ठीक-ठीक द्योतक बना दे और सूर फातेहा की यही विशेषता है। इस सूर ने मानवता की आध्यात्मिक अवधारणाओ को एक ऐसे अर्थापत्र से सुशोभित किया है कि प्रत्येक विश्वास, प्रत्येक चितनधारा, प्रत्येक भाव अपने रूप और गुण सहित अभिव्यक्त हो गया है और चूकि यह वास्तविकता को चरितार्थ करती है इसलिए जब कभी एक मनुष्य ईमानदारी से उस पर विचार करेगा तो अकस्मात् कह उठेगा कि इसका हर बोल और इसका हर शब्द उसके मन-मस्तिष्क की स्वाभाविक आवाज है।

सद्धर्म की मान्यताओ पर पुन विचार कीजिए। यद्यपि अपनी प्रकृतिधर्मिता मे वह इससे अधिक कुछ नही है कि एक आस्तिक मनुष्य की सीधी-सादी प्रार्थना है। परन्तु किस प्रकार उसके प्रत्येक शब्द और अभिव्यक्ति के उसके प्रत्येक माध्यम से सद्धर्म का कोई न कोई

महत्त्वपूर्ण उद्देश्य प्रकाशित हो गया है और इस प्रकार उसके शब्द अत्यत महत्त्वपूर्ण अर्थो और उसकी रहस्यात्मकता की रक्षा कर रहे है।

ब्रह्म सबधी अवधारणा के बारे मे मनुष्य की एक बडी गलती यह रही है कि वह इसे प्रेमाश्रित होने के स्थान पर भयोत्पादक और त्रासयुक्त वस्तु बना लेता था। सूर फातेहा के सबसे पहले शब्द ने ही इस चिरकालीन पथभ्रष्टता का अत कर दिया है।

इसका आरभ "ईश्वर-स्तुति की स्वीकृति से होता है।" 'हाद' अथवा 'स्तुति' का अभिप्राय सर्वोत्कृष्ट प्रशसा से होता है, अर्थात् उत्कृष्ट गुणो की सराहना को स्तुति कहते हैं। सराहना उसी के सौदर्य की हो सकती है जिसमे सुन्दरता का गुण विद्यमान हो। अत 'स्तुति' के साथ भीषणता और आतक का गुण उसमे समाहित नही हो सकता क्योकि जो स्तुत्य होगा वह विकारयुक्त नही हो सकता। 'स्तुति' के पश्चात् ईश्वर के सृष्टिव्यापी स्वामित्व, उसकी करुणाशीलता और न्यायशीलता का उल्लेख किया गया है और इस प्रकार ब्रह्म के गुणो का एक व्यापक 'रूप' प्रस्तुत कर दिया गया है जो मनुष्य को वह सब कुछ दे देता है जिसकी मानवता के विकास के लिए आवश्यकता है और उन समस्त भ्रष्टाचारो से उसे सुरक्षित कर देता है जो इस मार्ग मे उसके सम्मुख उपस्थित हो सकते है।

'रब्ब-बिल-आलमीन' (सर्वलोक महेश्वर) मे ईश्वर के सर्वलोक महेश्वर होने की स्वीकृति है जो प्रत्येक व्यक्ति, प्रत्येक समुदाय और प्रत्येक जाति, प्रत्येक देश, अस्तित्व के प्रत्येक कण के लिए है और इसलिए यह स्वीकृति उन समस्त सकीर्ण दृष्टिकोणो का अत कर देती है जो ससार के विभिन्न सप्रदायो और नस्लो मे उत्पन्न हो गई थी और प्रत्येक समुदाय अपनी जगह समझने लगा था कि ईश्वरीय वरदान और उसकी अनुकम्पाए केवल उसी के लिए हैं, किसी अन्य समुदाय का उनमे भाग नही है।

इसके पश्चात् सूर मे 'मालिक-ए-यौमिद्दीन' (कर्म-प्रतिफल-प्राप्ति-दिवस-अधिष्ठाता) का उल्लेख हुआ है।

कर्म प्रतिफलन को 'दीन' का पर्यायवाची स्वीकार करके यह तथ्य प्रकाशित कर दिया गया है कि कर्मो का फल मनुष्य के कर्मो का स्वाभाविक परिणाम है और उसका गुण है तथा यह समझना उचित नही है कि ईश्वर के प्रकोप और उसका प्रतिशोध मनुष्यो को यातना देने के हेतु है क्योकि 'दीन' का अर्थ कर्मफल है और पापाचार के लिए दण्ड है।

महेश्वर और करुणानिधान कहने के पश्चात् 'मालिक-ए-यौमिद्दीन' (कर्मफल-प्राप्ति-दिवस) के उल्लेख से यह तथ्य प्रकाशित कर दिया गया है कि यदि सृष्टि मे करुणा और सौदर्य के साथ उसके रचयिता के प्रकोप और उसकी तेजस्विता भी अपना अस्तित्व रखती है तो यह इसलिए नही कि सृष्टि के पालनहार मे प्रकोप और प्रतिशोध का गुण है, बल्कि यह इसलिए है कि वह न्यायी है और उसके विवेक ने हर वस्तु के लिए एक ऐसी विशिष्ट प्रकृति निर्धारित की है जिससे विशिष्ट परिणाम निकलते है। कुरान के अनुसार न्याय करुणा का विरोधी तत्त्व नही है बल्कि यह पूर्णतया करुणा ही है।

इस सूर मे यह नही कहा गया कि हम "तेरी उपासना करते है" बल्कि बल इस बात पर दिया गया है कि "केवल तू ही वह है जिसकी उपासना हम करते हैं" और "केवल तू ही वह है जिससे हम सहायता चाहते है।" इस कथन-शैली ने अद्वैतवाद मे निष्ठा के समस्त आधार पूर्ण कर दिए हैं और 'शिर्क' (अनेकेश्वरवाद) के सारे मार्ग अस्वीकृत कर दिए हैं।

अन्तिम बात यह है कि सदाचार और कल्याण के मार्ग को 'सिरात-उल-मुस्तकीम'

(सुपथ) की सज्ञा दी गई है—जिससे श्रेष्ठ और स्वाभाविक कोई अन्य प्रतिपादन इसका नही हो सकता था क्योकि कोई नही है जो सुपथ और कुपथ मे भेद न करता हो तथा प्रथम पथ का अभिलाषी न हो। इसके लिए एक ऐसी सीधी-सादी और जानी-बूझी हुई पहचान बता दी है जिसके पालन की क्षमता स्वभावत प्रत्येक मनुष्य मे विद्यमान है। यह केवल एक अमूर्त विचारमात्र नहीं है बल्कि ठोस वास्तविकता के रूप मे है। यह उन लोगो का मार्ग है जिन्हे पुरस्कृत किया गया है। किसी मनुष्य का देश या राष्ट्र चाहे कोई भी हो किन्तु उसने हमेशा देखा है कि जीवन के दो मार्ग स्पष्टत उसके सम्मुख विद्यमान हैं। एक मार्ग उन लोगो का है जो जीवन मे सफल रहे है और दूसरा उन लोगो का है जो विफल रहे है। अत इस सुस्पष्ट बात को कहने की उत्कृष्ट शैली यही हो सकती थी कि उसकी ओर सकेतमात्र कर दिया जाए। इससे अधिक कुछ कहना एक ज्ञात बात को अज्ञात बना देना था। यही कारण है कि इस तथ्य को प्रस्तुत करने के लिए प्रार्थना की विधा ग्रहण की गई है क्योकि यदि शिक्षण और आदेश देने की विधा अपनाई जाती तो इसका सारा प्रभाव विनष्ट हो जाता। प्रार्थना की विधा हमे बताती है कि हर उस मनुष्य की मन स्थिति क्या होती है और उसे क्या होना चाहिए जो आस्तिकता के मार्ग पर कदम उठाता है ? यह आस्तिकता के चितन-मनन का भावावेश है जो सत्याभिलाषी की वाणी से अनायास मुखरित हो उठता है।

सूरः फ़ातेहा का सारतत्त्व

अच्छा ! अब कुछ क्षणो के लिए इस सूर के अर्थो पर सपूर्णरूपेण दृष्टि डालिए और देखिये कि इसकी सात आयतो के अदर धार्मिक विश्वासो और अवधारणाओ की जो आत्मा निहित है वह किस प्रकार की मानसिकता उत्पन्न करती है।

यहा एक ऐसा व्यक्ति है जो ईश्वर के गुण-गान मे तल्लीन है परन्तु वह उस ईश्वर की स्तुति मे तन्मय नही है जो नस्लो, जातियो और धार्मिक सप्रदायो का इष्ट है बल्कि वह 'रब्ब-उल-आलमीन' (सर्वलोक महेश्वर) की स्तुति करता है जो समस्त सृष्टि का पालनहार है और इसलिए समस्त मानवजाति का समान-रूपेण पालन करता है और उसकी करुणा समानतया सबके लिए है। फिर भक्त उसे उसके गुणो सहित पुकारना चाहता है किन्तु उसके तमाम गुणो मे से केवल दया और न्याय ही के गुण उसे याद आते है जैसे कि ईश्वर की विभूति उसके लिए पूर्णतया दया और न्याय के रूप मे ही प्रकट है और जो कुछ भी वह ईश्वर के सबध मे जानता है वह दया और न्याय के अतिरिक्त कुछ और नही है। फिर वह नतमस्तक होकर उसकी भक्ति को शिरोधार्य करता है और कहता है कि केवल तू ही है जिसके सम्मुख भक्तिभाव से मेरा सिर झुक सकता है, वह केवल तू ही है जो हमारे सारे कष्टो और अभावो मे सहायक है। वह अपनी उपासना और सहायता-याचना दोनो को केवल एक ही तत्त्व के साथ सबद्ध कर देता है और इस प्रकार दुनिया की सारी शक्तियो, हर प्रकार के सत्ताधारियो से सबध-विच्छेद कर लेता है। अब किसी चौखट पर उसका सिर झुक नही सकता, अब किसी शक्ति से वह त्रस्त नही हो सकता, अब किसी के आगे वह हाथ नही फैला सकता। फिर वह ईश्वर से सुपथ पर चलने के सामर्थ्य की याचना करता है। परन्तु कौन-सा सीधा मार्ग है ? किसी विशेष नस्ल का सीधा मार्ग ? किसी जाति का सीधा मार्ग ? किसी विशेष धार्मिक समुदाय का सीधा मार्ग ? नही वह मार्ग जो ससार के समस्त धार्मिक आयामो और समस्त सत्यवादी मनुष्यो का सुसम्मत मार्ग है, चाहे वह किसी भी युग का हो और किसी भी जाति का हो। इस प्रकार वह वचना और पथ-भ्रष्टता के मार्ग से बचना चाहता है किन्तु यहा भी किसी विशेष नस्ल या जाति के उन मार्गो से बचना चाहता है जिन पर ससार के समस्त वचक और पथभ्रष्ट मनुष्य चल चुके है। इस प्रकार जिस बात की याचना वह करता है वह भी मानव मात्र की अत्यत व्यापक अच्छाई है और जिस बात से बचना चाहता है वह भी मानवता की विश्वव्यापी बुराई है।

विचार कीजिए कि धार्मिक अवधारणा का यह रूप मानव की मानसिकता का किस प्रकार का साचा प्रस्तुत करता है ? जिस मनुष्य का मन और मस्तिष्क ऐसे साचे मे ढल कर निकलेगा वह किस प्रकार का मनुष्य होगा ? कम से कम दो बातो से आप इन्कार नही कर सकते कि उसकी आस्तिकता ईश्वर की व्यापक करुणा और उसके सौदर्य की अवधारणा पर आधारित आस्तिकता होगी और किसी रूप मे भी वह नस्ल अथवा जाति या समुदायो का अनुयायी मनुष्य नही होगा, वह व्यापक मानवता का मानव होगा और कौरानिक शिक्षा की वास्तविक आत्मा यही है।

तज़किरा

चर्चा

"यदि कही भी ऐसे व्यक्ति है जो निष्कटक मार्ग पर चले तो मै उन्हे भाग्यवान कहूँगा। परन्तु इस बात को दुर्भाग्य नही समझता कि मै अपने वस्त्रो को काटो से फटने से बचाने के लिए फिसलती हुई रेत पर मुझे चलना पडा और उन श्रृखलाओ को तोडना पडा जिन्हे मैने अपने हाथो से बनाया था, अपनी मनोवृत्तियो के दीर्घकालीन वृत्तात को, अपनी आकाक्षाओ, अपनी आशाओ, अपनी इच्छाओ का गला घोटना पडा था ताकि उस स्थान पर मुझे सुख और शाति प्राप्त हो सके जहा आज मैं हूँ।"

तज़किरा

चर्चा *

मैं, जो एक बेघर यायावर, अपने युग और स्वय के लिए अजनबी, घायल भावनाओ पर पला-बढा, कुठाओ से परिपूर्ण, अतृप्त इच्छाओ का ढेर हूॅ, जिसका नाम अहमद है और जिसे अबुल कलाम पुकारा गया, १८८८ (१३०५ हिजरी) मे पैदा हुआ, उस दुनिया में आया जिसका अस्तित्व एक परिकल्पना है, एक अस्तित्वविहीनता से वह वास्तविकता का सादृश्य है और जीवित रहने के दोषारोपण सहित छोड दिया गया है।

> एक हगामा था और हमने अपनी आखे खोली अस्तित्वहीनता की नीद से। परन्तु जब हमने देखा कि वह अव्यवस्था वाली रात अभी खत्म नही हुई थी कि हम पुन ऊँघने लगे। मेरे पिता ने मुझे कालक्रमानुसार फीरोज भक्त ('बडे भाग्यशाली का') का नाम दिया

'दयालु ईश्वर ऊँचा भाग्य क्या है, अहकारी नियति क्या है ? मैने अपना आधा जीवन धर्मपरायणता के रास्ते मे फिसलकर लडखडाते और निढाल होकर बिताया। क्या मै यह मानू कि दूसरा आधा हिस्सा अब बीत रहा है जब मैं रुकता और आराम करता हूॅ। मेरे पास लक्ष्य की कोई सूचना नही है न ही मैं अपने पैरो को देखता हूॅ कि वे रास्ते पर है और लक्ष्य की तरफ बढ रहे है। जब मेरे पावो मे फुर्ती और साहस मे यौवन था, मेरा पूर्वनिर्धारित लक्ष्य और जोखिम के रास्ते की तलाश का द्वार बद ही रहा।

अब, मेरे पाव सुन्न हो रहे है, मेरा शरीर घायल है, मै विश्वास के साथ चल नही सकता, साहस ने मुझे क्षीण कर दिया है। और अब, जब कि लक्ष्य की लालसा ने मेरी आखे खोल दी है और लापरवाही को नीद आ गई है, यात्रा लबी मालूम पडती है और इसका अत धुधलके मे गुम होना लगता है, मेरा बटुआ खाली है और जिन साधनो की मुझे जरूरत है उपलब्ध नही हैं। चीजो को करने का समय बीत चुका है और प्रतिक्षण मै उत्पीडित हूॅ उस काफिले से बहुत दूर छूट गया हूॅ जिससे जुडने की मेरी इच्छा थी। मै उदास हूॅ और लक्ष्य-प्राप्ति की दृष्टि मे दु खी हूॅ। अब भी यदि मेरे पैर अपनी फुर्ती पा ले और मेरा साहस एक नया जीवन पा ले तो भी, फिजूल गवाया गया समय मै कैसे वापस पा सकता हूॅ। आशा का कारवा जो पहले ही दूर जा चुका है उनको लेने कैसे वापस आ सकता है जो अपनी लापरवाही से पीछे छूट गए हैं।

> मैने एक तरफ कदम रखा मेरे पैर के
> काटे को बाहर खीचने के लिए और ऊँट
> (जिस पर मेरा प्रिय बैठाया) दृष्टि से ओझल हो गया,

---

* मौलाना ने अपने मित्र फजलुद्दीन के आग्रह पर राँची मे १९१६-१९१७ के दौरान अपनी नजरबंदी के समय **तजकिरा** (आत्मकथा) लिखा था। इसे आत्मकथा होना चाहिए था किन्तु मौलाना ने कुछ पृष्ठ ही अपने सबध मे लिखे है। इस लेख का चयन **तजकिरा** के उस भाग से किया गया है जिसका सबध आत्मकथा से है और जिसे अत्यत सुस्पष्ट वृत्तान्त समझा जाता है जो उन्होने अपने घनीभूत व्यक्ति अनुभवो के सबध मे लिखा है।

एक क्षण की लापरवाही के कारण मेरी
यात्रा सौ वर्षो के लिए लबी हो गई।

"आज या कल, मेरे ऊँचे भाग्य और अहकारी नियति का मामला हमेशा के लिए निर्धारित हो जाएगे, उस दिन जब प्रत्येक मुखडा चमकदार या काला होगा।" वास्तविक उन्नति है उस अवसर की उच्चता का उन्नयन और वास्तव मे वह आदमी भाग्यशाली है जो आने वाले दिन (फैसले का दिन) की कसौटी पर खरा उतरे। यदि किसी की किस्मत है 'ठडी बयार और सुगध,' 'परम आनद की प्रचुरता' और 'उन्नति' (कुरान मे इन पदो को स्वर्ग कहा गया है), तब किसी का भी भाग्य वास्तव मे महान है, उसकी नियति एक वाछनीय नियति है। परन्तु यदि कोई नम्रता **और निराशा के योग्य पाया जाए "जिनके चेहरे धूल से मैले हो गये है और जिनके सिर शर्म से लटके हुए है।" और वह "जहा किसी खुशी के समाचार के न होने का अपराध बोध हैं।"** तब दु:ख और विलाप के समाप्त होने की कोई आशा नही रह जाती। यहा तक कि अलेक्जेडर की विजय से और जमशेद का सिहासन भी इस तरह के नुक्सान की क्षतिपूर्ति नही कर सके।

यदि मै सुनिश्चित हूँ कि "तीन के साथ एकता प्राप्त की जा सकती है तो मै अपना दिल और अपना धर्म और बहुत कुछ भी दॉव पर लगा दूगा।" इन विचारो मे गोता लगा कर, किसी को भी सदमा लगेगा जब मौलाना आजाद फिर नियति और तारीख के मसले पर वापस आते है।

'मेरा पैतृक शहर दिल्ली है परन्तु मा पवित्र भूमि पर बसे शहर से थी, वह शहर जहा पैगम्बर देशातरित हुए, वह शहर जो उनके पैगम्बर होने का, रहस्योद्घाटन है (मदीना)। यह वह शहर है जहा प्यार के तीर्थयात्री एकत्र होते है, वे जो प्रार्थना के उल्लास मे रहते हैं यह उनका काबा है।

मेरा हृदय दिशाखोजी कपास की सुई की तरह
चारो ओर घूमता है। किसी प्रकार मै
इसकी स्थिति बदलता हूँ, सुई हमेशा
इष्ट की भौहो की ओर इगित करती है।

'और मेरे वास्तविक घर को मुझे क्या कहना होगा? हम सब अधिनायक के साथ एकमत है—"इस दुनिया मे पथ के पक्षियो की तरह जीवित रहो?" यात्रियो और घुमक्कडो के इस घर विहीन घर मे, सब एक ऐसे कारवॉ के सदस्य की तरह गुजर रहे है जिन्हे नही मालूम जाना कहा है, परतु समाप्ति पर सभी का अतिम विश्राम स्थल पूर्वनिर्धारित है और कुछ भाग्यशालियो के लिए यह एक उल्लास का घर है।

'पवित्र मक्का शहर मे किदवाह नाम से जाने वाले हिस्से मे बाब-अल-सलाम के पास काबा के समीप बजर घाटी मे मै पैदा हुआ और मेरा बचपन बीता था ।

'अब वह वर्ष १३३५ ए० एच० (१९१६ ई० स०) करीब आ रहा है, मेरे वर्षो के जहाजी बेड का जुलूस तीसवे चरण मे पहुँच गया है।

यह विकासचरण भी पलक झपकते बीत जायेगा और भविष्य मे क्या है मै नही जानता

कोई नही बताता मुझे कहा मेरी यात्रा
समाप्त होगी मै आडातिरछा भटका, उजाड के बाद
उजाड और उसके बाद भी अधिक उजाडपन
जिसे पार करना है।

"जब मै बीते जीवन पर मुडकर पीछे देखता हूँ तो यह धुध और धूल से अधिक दिखाई

नही देता और आगे का जीवन एक मृगतृष्णा से अधिक मालूम नही पडता। मेरी कलम झिझकती है, अभिव्यक्ति और व्याख्या का कठिन कार्य मेरे दिमाग को आतकित कर देता। यदि मैं लिखना चाहूँ कि मैने क्या अनुभव किया उन घटनाओ के बारे मे जो मेरे जीवन मे हुई, तो उसे कैसे कहूँ ? कोई एक धुधली दृष्टि के अनुभव या भव्य मृगतृष्णा को कैसे कह सकता है ? बुलबुले पानी पर तैरते है, धूल उडकर हवा मे मिल जाती है, तूफान पेडो को तोडे डालते है, बाढे इमारतो को बहा ले जाती हैं, मकडी सपूर्ण जीवन अपना जाल बुनती है, घोसला सजाने वाले पक्षी दुनिया के चारो कोनो से तिनके इकट्ठा करते है, बिजली (बादल की) घास के ढेरो से आख-मिचौली करती है, आग पुआल से—यदि आत्मकथाओ मे ऐसी चीजे आ रही हैं तो कृपया उन्हे रखिए। मेरे जीवन की कहानी उनमे से ही एक होगी पहले आधे भाग मे आशा की मुस्कान दूसरे आधे भाग मे हतोत्साह का विलाप।

आप प्रेम मे नहीं पडे या प्रेमी की यत्रणा
नही भोगी , कोई आपसे अलगाव का
दु ख कैसे बतायेगा ?

'एक बार मेरी आशा मूर्त हुई थी, अब मै निराशा की मूर्ति हूँ।
सक्षेप मे मेरी आखो और दिल की
कहानी यह है दिल के लिए कोई
विश्राम नही है और आखो मे कोई
नीद नही है।

'यदि कहानिया सुनने की आपकी इच्छा इसके बावजूद सतुष्ट नही हुई तो, मुझसे सुनिये मेरे तीस वर्ष कैसे गुजरे। बिजली और घास का बडा ढेर मिलकर कोई कहानी नही बनाते वह सब कहने के लिए एक पूरी रात का समय लगेगा। एक गुस्सैल चीख और एक दु ख भरी आह यह सब कुछ आदि भी है अत भी।

मेरे पडोसी ने मुझे कराहते सुना , उसने कहा,
खाकनी के पास इसकी दूसरी रात है।
एक भोर जो धुधली हो गई थी जैसे ही हमने देखा
एक ईद के समान जो वसत काल के समय आई
और गुजर गई इससे पहले कि वसत खत्म हो।

'दु खो की एक शाम थी जिसके अधकार मे आशा के जले सारे दीये डूब गए।
जबसे मेरे दुखी दिल की ज्वाला बाहर निकली
कोई दीप कही भी प्रकाश नही फैलायेगा।

'या, हमे कहना चाहिए, वे दो दिन थे, एक आशा का, दूसरा निराशा का, एक बनाने की अभिलाषा को तुष्ट करने मे बीता, दूसरा उस मलबे के ऊपर दु ख व्यक्त करने मे जिसे बनाया गया था। एक दिन घोसले के लिए तिनके इकट्ठे करने मे बीता, दूसरा मेरे परिश्रम के फल के राख होने पर न रुकने वाले आसू बहाने मे।

इस बाग मे, जहा बसत और शरद
एक दूसरे के साथ अनादिकाल मे लिपटे हुए
आलिगन कर रहे है। समय के पास

हाथ मे शराब का एक प्याला है और
सिर के ऊपर मौत।

अबू तालिब कलीम (पृ० १६५२) ने हममे से हर एक की आत्मकथा चार पक्तियो मे लिखी है,

यह दो दिन से अधिक नही जीवित रहने के लिए विश्वास करती है,
और, क्लीम, कैसे मै उन दो बीते दिनो को मिलाऊगा
एक मैने इसे और उसे जोडने मे बिताया,
दूसरा दिल को फाडने मे उनसे दूर होने के लिए जिनसे वह लिपटा रहा।

'और, सच मे सास लेने का कितना वक्त मिला इसके आने और जाने मे, कोई फर्क नही है। "वे कहते है वे वहा नही थे सिर्फ एक शाम या एक सुबह के लिए" या "उन्होने कहा, हम एक दिन के लिए या उसके बराबर ठहरे।" (गुफा के आदमी की तरह जिसका जिक्र कुरआन मे है, जो अनेको पीढियो तक गुफा मे ही छिपा जीवित रहा, बिना यह जाने कि समय कितना बीत गया)

मेरा बचपन एक सुखदायी सपना था
यह सचमुच तरस खाने जैसा था जिससे मै जल्दी जागा।

'जब मैने अपनी आखे खोली किशोरावस्था का उदय पहले ही हो चुका था, और मेरी दुनिया के उजाड मे हर काटा आकाक्षा और इच्छा की ओस सहित पुष्प के समान जिदादिल था। जब मैंने स्वय की ओर देखा, मैने देखा कि एक दिल खून की जगह पारे से भरा हुआ। जब मैने दुनिया की ओर देखा यह ऐसी दिखाई पडी जैसे सुबह (उषा) भ्रमित हो जाय और इसे दूर करने के लिए दोपहर का सूर्य न हो, असफलता या निराशा की कोई छाया नही हो जो इसकी सध्या का सकेत दे। आशा और चित्रमय घर का चकित कर देने वाला सपूर्ण प्राकृतिक वास केवल मेरे लिए था, मेरी आखो को आनदित और मेरे दिल की सतुष्टि के लिए हर एक एकात और कोना फैले विस्तार का हर एक इच मेरा और मेरी भूख की प्रतीक्षा मे हो। जिस रास्ते पर मै मुडा मैने वही परिचित पुकार सुनी (मेरी दिली इच्छा की पूर्ति की)। क्या यह मेरे खुशी पाने के इच्छुक दिल की धडकन थी जो प्रतिध्वनित हुई या एक राग था जो जिदगी हमारे भावो के साजो पर छेड रही थी, जवानी की लापरवाही का स्वर गुजाती हुई।

लापरवाही और मदमस्त आलाप उनके जादुई स्वर, मनोभावो से भरे प्याले, युवा पागलपन ने मुझे हाथ से पकडा, और मेरा दिल, स्वय को समर्पित प्यारा लगा, जिसने स्पदनो और इच्छाओ को दर्शा कर इसे लक्ष्य के रूप मे स्वीकार कर लिया था। विवेक बुद्धि और कारण पहले व्यर्थ कर दिये गये थे, परन्तु बाद मे वे भी मेरे साथ हो लिए। कोई रास्ता न था सिर्फ यह, कोई समय न था सिर्फ यह

अपराधी मत बनो, ओ साकी,
मै जवॉ हूँ और दुनिया जवॉ है मेरे साथ

जो भी रास्ता मैने अपनाया, बेडियॉ और फदे स्वय मेरे पैरो के आसपास लिपट गये। जो भी आश्रय मैने लिया विवेक बुद्धि की जेल मे पकडा गया। कोई इसे ऐसे चित्रित कर सकता है जैसे यह एक प्रकार की कैद थी, या कडियो को गिनना यदि वह केवल एक बेडी थी। मेरे पास केवल एक दिल था, परन्तु उस पर भी सैकडो दिशाओ से तीर आ आकर लगे .मेरी एक जोडी

आख को सैकडो दृश्य दिखाई दिये। हर लुभाने वाले दृश्य ने अपना तीर चलाया, विवेक के हर लुटेरे ने अपना फदा फेंक, हर मोहिनी रूप मे अपने प्यार के उच्चारण को मेरी ओर फेका, हर ली गई सास के साथ दृश्य ने मुझे पूर्णत बदी बनाया, विस्मयकारी रूप मेरी गर्दन के आस-पास आकर रुक गया

'यह ऐसा नही था कि मेरे चुनाव को शक्ति से वचित रखा गया, या कि मेरी आखो ने विवेक दृष्टि खो दी। बिजली मुझ पर झपझपाई,, रात के साये के पीछे से तारे जब मुझे झॉकते रहे, परतु वे पूरी तरह काले तूफान की चढाई की प्रचडता के अधकार का शमन या उसे प्रकाशित न कर सके।

'जब मै देवदारु की मनोहारी ऊँचाई से ईर्ष्या करता हूँ, मेरा हृदय श्रेष्ठता और प्रसिद्धि के लिए दीर्घकाल तक जलता रहा है। जब मैने विनम्र घास का कुचला जाना देखा मै शर्मिदा हुआ अपनी किचित् मानवीय समझ पर। जब सुबह की बहती हुई बयार ने मेरे हृदय को तरोताजा किया, मैं धर्मनिरपेक्षतावाद की अरुचि से भर उठा और अद्भुत और साहसिक जीवन के लिए लालायित हो उठा। कभी-कभी दृष्टि का प्रवाह वहा जाता जहा से तारतम्य शुरू होता है। बिना लक्ष्य और मकसद जाने मुझे इस तरह दूर ले जाया गया और प्रतिबध और बाध्यता से मेरी आखे भर आई आसुओ से जिसका विषय मै था जैसे मेरे हृदय के घाव थे। जब मैने देखा फूलो का मुस्कुराना मेरी आखो ने जवाब दिया भरपूर आसुओ के साथ, जब हर्षोन्माद मे वृक्ष झूमते और शाखाए नाचती, मै अपनी स्वय की निष्क्रियता और अनुभवहीनता को याद करता। सक्षेप मे, मेरी बेचैनी के **अनेक कारण थे** और मैने अपनी सपूर्ण शक्ति नही खोई थी। बिजलियॉ चमकी और बादलो की गर्जना भरी चेतावनी भी, परन्तु हाय मेरी नीद भी बहुत गहरी थी जिसके अधीन मै असावधान लेटा था जो एक चाबुक की फटकार चाहती थी।

यह था मै जो
इतना कमजोर था कि पूर्ण
प्रार्थना भी कर सके, आकाक्षाओ और
आशाओ को स्वीकार करने के दरवाजे स्वय हमेशा
खुले रहे।

'परन्तु मेरे लिए यह अच्छा है कि इसे साफ-साफ खोलकर घोषित करूँ कि मुझे क्या कहना है

'हमारी बरबादी का कारण है, स्वय के भुलक्कडपन के हगामे के बीच अत करण की आवाज पहुँचती है परतु कुछ कानो मे और यदि ऐसा होता है हमारे स्वय के हाथ धुत्त विवेक के नगाडो पर इतनी जोर से पडते हैं कि भर्त्सना की धीमी आवाज शोर मे डूब जाती है

'परतु इन सब तथ्यो और वास्तविक सच्चाइयो से महान है विश्व का यह सत्य
जो हमारे लिए सब कुछ करता है और
वह हमारी जरूरतो को देखता है

'हम अपने ऊपर स्वय विपत्ति लाते है। अगर हम सरोकारो पर चिता करते है। और एक विचित्र मित्रता और चित्रो की श्रृखला रास्ता देखती रही है उनका जो इस रास्ते पर फूँक-फूँक कर पैर रखते है (दैवीय इच्छा के सामने स्वय को अर्पित कर देते है)।

'तथापि रास्ता सभी के लिए एक सा है, चमत्कार बहुआयामी है और यदि विवेक नष्ट हो जाय तो यह उसी दृष्टि का परिणाम नहीं है।

तू हर दिल के साथ भिन्न-भिन्न रहस्य का अश है,
और हर याचक तेरे दरवाजे पर अपने आप हवा देता है।

कोई दस्तक देता है और दरवाजा उसके लिए नही खुलता, दूसरे के लिए फदे फेके जाते है ताकि उसे पकडा जा सके। खोजने और प्रयत्न के सिद्धात को झुठलाया नही जा सकता पर यदि उसे बिना पूछे चुना जाय, तो कौन है जो उसका हाथ पकडे?

'तत्काल ईश्वरीय कृपा सासारिक प्यार के रूप मे प्रकट होती है और आनद का सर्पिल रास्ता मुझे उसके राजमार्ग पर ले जाता है। जब कोई वस्तु जलती है, आग और लपटे जब फैलती है परिमाण मे वे बढती ही जाती हैं, बाढे धीरे-धीरे फैलती हैं परन्तु यह बिजली थी जिसकी एक चमक सी दिखाई दी और जब मैंने वहा देखा तो केवल राख का ढेर था।

वास्तव मे तीन चरण होते है इच्छा, प्यार और सच । यहा सकीर्ण, अशुद्ध, भौतिक अर्थ मे प्रेम से मेरा मतलब है, प्रेम को छोडकर सारी सृष्टि मे और कुछ नही है। यह वह स्तभ है जिसने स्वर्ग को ऊपर थाम रखा है, यह पृथ्वी की धुरी और सहारा है। वह सब जो दिखाई देता है प्रेम है वह सब जो छिपा हुआ है प्रेम है। हमारी दृष्टि दोषी होगी यदि हम एकता को पहचानने मे असमर्थ है, इसी ने एक वास्तविकता को अनेक नाम दे दिए है। यह चीजो को उनके स्वरूप मे देखने की असमर्थता है यह गलती कई गुना होगी जिससे अद्वितीय सुन्दरता की एकरूपता पर परदे पर परदे चले गये। अन्यथा

केवल एक दीया है प्रकाशित इस
घर मे, जिसके चारो तरफ,
जहा भी आप देखे, लोग बाते करने इकट्ठे हुए।

'कोई शक नही (मेरा भी प्रेम) यह भी एक गलती थी। परतु ऐसी गलती को हम क्या कहेंगे जो हमे प्रिय के पैरो पर गिराए? सब प्रयत्नो का अत उसके पास तक पहुँचना है। यदि भूले और मदहोशी हमे वहा तक ले जाती है तो तटस्थता और सादगी के हजारो तरीको को उस पर क्यो नही न्योछावर कर देना चाहिए?

यदि ईश्वर चाहे कि मै कृपण बनूँ,
सारा सतोष भेज दिया जाए गुमनामी के लिए।

सच तो यह है कि इस मार्ग पर चलने वालो की कार्यक्षमता पूर्णत निर्भर करती है मिलने और अलग होने, या टूटने और जुडने पर और समीपता एक चरण है जो प्राप्त किया जा सकता है तब जब दूरस्थता सहन की जा सके। तात्पर्य है सबके साथ अलग होकर एक मे मिलना, सबसे स्वय को दूर ले जाकर एक मे मिलना। यह दरवाजा तभी खुलेगा जब दूसरे/अन्य सभी जो पहले खुले थे बद हो जाए

प्यार की दृष्टि मे कोई स्वीकार्य है केवल तब जब
हजारो शर्ते पूरी हो गई हो
और पहला पछतावा है उस मनाए गए शाति और सतोष
के लिए।

उन सभी बधनो को तोडना है, सभी बेडियो को काटना है जो ईश्वर को छोडकर अन्य की पूजा करने के लिए बाध्य करे। यह करने के केवल दो ही रास्ते है, या तो कोई ताकतवर हाथ बाधाओ को हटाकर एक के बाद एक गाठो को खोलने का निश्चय करे, सब बेडियो को ढीला करे, अथवा कोई चमकाकर और आखो के पलक झपकने तक के समय मे ही पूरी

शक्ति से प्रहार कर सारे बधनो और बेडियो को टुकडे-टुकडे कर दे। तब कोई बाध्यता नहीं है कि दक्ष अगुलियॉ गाठो को खोले, टूटी कडियो की कोई गिनती नहीं। सूखी लकडी के बडे गट्ठे को जलाने हेतु किसी को हजारो चीजे करनी पडती हैं और तब केवल जरा सा धुआ उठता है। परन्तु हम जानते है कि बिजली अपनी आख की चमक मात्र से जला सकती है और हजारो घोंसले, सावधानी से एकत्र किए गए हजारो अनाज के ढेरो को पल भर मे स्वाहा कर सकती है।

मैंने पूछा आज कैसे मारेगे और जीवन दान करेगे
परमप्रिय ने मुझे एक नजर मारी और आगे
कोई उत्तर नहीं दिया।

पवित्र और लौकिक प्यार मे यह आम बात है। वे जुडकर एक होते और शेष से कट जाते हैं। तभी तो पवित्र प्यार का सबसे करीब का रास्ता लौकिक प्यार से होकर गुजरता है।

हमारा प्याला उस शराब से लबालब है जो नई है।

यह केवल सुख खोजने और प्यार मे ही नही है। बीच रास्ते के किसी घर जहा से पैर आगे बढने से मना करते हैं, बुत बन जाता है और यात्री बुतपरस्त बन जाता है। बीच रास्ते का घर गुलाब की क्यारियो मे (यथार्थ भक्ति की) मनको को गिनना या पैबद लगे कपडे (सूफी के) पहनने जैसा है

इसलिए मैंने ईश्वर को धन्यवाद दिया कि यह चरण (लौकिक प्यार का) वह नही था जहा मैं लबे समय तक ठहरा। एक वर्ष और पॉच महीनो मे मै इन सबके प्रयोग और पारपरिकता, एकात कोने अनदेखे किए या छोडे बिना सभी से परिचित हो गया । हर यात्री (लौकिक प्यार के इस पथ पर) को दो तरीकों मे से एक को अपनाना होगा, या तो तूती (गाने वाला पक्षी) का जैविक रुढिबद्ध और लक्ष्यहीन भ्रमण और बुलबुल का उडना या मोमबत्ती की तरह चुपचाप जलना । हम जानते हैं कि आग भडकाना अधिक आसान है अपेक्षाकृत एक भट्टी के समान ऊष्मा धारण करके दहकते रहना और स्वस्वामित्व और नियत्रण की परपरा और आवश्यकता को पूरा करना।

आवरणहीनता सुखदायक है परन्तु फटा और मुडातुडा गलाबद उन सबका अपना सौंदर्य है

'यदि लोग हैं जिन्होने जिदगी के उजाड मे रोने, विलाप करने मे बिताई, उन्होने वह किया जो करना था। मेरे जीवन मे हर मिनट हर घटा दबी हुई आह की यातना गुजरा, हजारो हगामे मेरी छाती मे रोष पैदा करते रहे और ऑसू जिन्हे ऑखो से निकलने का रास्ता नही मिला, मेरे हृदय की छोटी सी सीमा के अदर तूफान पैदा करते रहे।

यद्यपि देखने मे यह मामला (लौकिक प्यार का) दु खात है, वास्तव मे जीत का सारा आनद इस हार के पीछे छिपा हुआ है ।

अल्लाह की दयालुता का चमत्कारिक सकेत मुझे लबे समय तक मिलता रहा परन्तु मेरा हृदय सासारिक सुखो मे डूब हुआ असावधान बना रहा। बिना प्रतिफल के प्यार ने मेरे मायाजाल के अतिम झोके पर प्रहार किया और अचानक मेरी आखे खुल गई। मैने देखा सास ले रही दूसरी दुनिया का विलक्षण तमाशा। न वह आकाश, न वह पृथ्वी, यहॉ तक कि वह ब्रह्माड भी नहीं। यह वह व्यक्ति भी नही था। वह हाथ जो मुझे उस स्थिति मे रास्ता दिखाता रहा कही दिखाई नहीं दे रहा था। जब मैंने उसकी खोज की वह जा चुका था। जैसे कि वह एक दीया था जो जलता रहा जब तक मै चलकर रात के अधकार के आवरण से बाहर नही निकल

आया ,परन्तु जब भोर होने को आई इसकी कोई आवश्यकता नहीं थी इसलिए वह बुझ गया था।

दुनिया जिसके उपेक्षितो के मदिरालय की असावधानी की शराब मुझमे उडेल दी गई थी, जिनके दृश्य मेरी आखो को प्रलोभित करते रहे, मेरे कानो को जिनका राग अच्छा लगा, वही दुनिया अपने आप इस तरह रूपातरित हो गई कि अब उसका तुच्छ हिस्सा भी गभीरता और बुद्धिमत्ता का चित्रण लगता है और जो देखने वाली आखो और सीखने वाले दिमाग के लिए एक है। हर कण वार्तालाप के लिए इच्छुक था, हर पत्ता एक दस्तावेज था, फूलो ने अपने होठ खोले, पत्थरो ने उठकर स्वय के होने का अहसास कराया, नीचे गर्त मे पडी धूल बार-बार उठकर स्वय को मोतियो के समान बरसाने लगी, प्रश्नो के उत्तर देने के लिए स्वर्ग नीचे आ गया, पृथ्वी स्वय बहुधा अक्सर इतनी ऊपर चली जाती कि आकाश से तारो को तोड ले, देवदूतों ने हाथ फैला दिए सूर्य को लडखडाकर फिसलने से रोकने के लिए जो दीपक लेकर आया था, सारे आवरण दूर फैंक दिए गये थे, सारे पर्दे छेदो से छलनी हो गये थे, प्रत्येक भौंह ने एक सदेश दिया, हर आख मे कहने के लिए कहानियॉ थी।

'मूलत चाहे जो भी स्थिति रही हो, यह पूर्णता उससे भिन्न था जिसे मैने धीरे-धीरे प्राप्त किया। इस विशिष्ट मुद्दे से भिन्न मेरे विश्वास मे कुछ नही था। मेरे क्रिया-कलापो और आदतो, मेरी अभिरुचियो, मेरे विचारो और मतो, मेरे रास्तो जिनसे मैं अपने प्राकृतिक परिवेश को समन्वित कर सकता हूँ जो कुछ मेरे पास है प्रेम द्वारा स्वीकृत था।

ग़ुबार-ए-ख़ातिर

"पत्नी की बीमारी और मृत्यु"

"उसके मुख से दो शब्द ही निकल सके–खुदा हाफिज। यदि वह कहना भी चाहतीं तो इससे अधिक कुछ नही कह सकती थी जो उनके मुखारबिन्दु पर अकित भावरेखाए कह रही थीं। उनकी आखो मे आसू नहीं थे किन्तु उनमे झलकते भाव आसू मे भीगे थे।"

पत्नी का स्वर्गवास *

अहमदनगर दुर्ग
११ अप्रैल ४३ ई०

मित्रवर,

यह चार बजे का प्राय की तरह की सुबह नही है बल्कि रात्रि का अतिम पहर अभी आरभ हुआ है। प्राय की तरह १० बजे शय्या पर लेट गया था परन्तु नेत्र निद्रा-निमग्न न हुए। विवश होकर उठ बैठा, कमरे मे आया, प्रकाश किया और अपने नित्य के कार्यक्रमों मे व्यस्त हो गया। फिर सोचा कि लेखनी उठाऊँ और कुछ देर आपसे बाते करके जी का बोझ हल्का करूँ। इन आठ महीनो के बन्दी जीवन के दौरान ये छठी रात है जो इस प्रकार व्यतीत हो रही है और नही मालूम अभी और कितनी राते इसी तरह बीतेगी।

मेरी धर्मपत्नी कई वर्ष से रुग्ण चली आ रही थी। सन् ४१ ई० मे जब मै नैनी जेल में बदी था तो मुझे उनके बिगडते स्वास्थ्य की सूचना इस कारण से नही दी गई थी कि उससे मै चितित हो उठूगा। परन्तु कारावास से निकलने के पश्चात् ज्ञात हुआ कि उनकी यह समस्त अवधि न्यूनाधिक रुग्णावस्था में ही व्यतीत हुई थी। मुझे कारावास में उनके पत्र मिलते रहे। उनमे सारी बाते होती थीं किन्तु अपनी बीमारी का कोई उल्लेख नहीं होता था। बदीगृह से मुक्त होने के पश्चात् डाक्टरो से परामर्श किया गया तो उन सबका मत यही था कि जलवायु का परिवर्तन होना चाहिए। इसलिए वह राची चली गईं। राची मे आवास के कारण देखने मे तो स्वास्थ्यलाभ हुआ था, जूलाई मे वापस आई तो स्वास्थ्य की काति मुखडे पर वापस आ रही थी।

इस सम्पूर्ण अवधि मे मै अधिकाशत यात्रा करता रहा। समय की गति इतनी सत्वरता से बदल रही थी कि किसी एक स्थान पर दम लेने का अवकाश ही नही मिलता था। एक स्थान पर अभी पग धरा नही कि दूसरे स्थान पर जाने का कार्यक्रम निश्चित हो जाता।

जुलाई की अतिम तिथि थी कि मै तीन सप्ताह के पश्चात् कलकत्ता वापस हुआ और फिर चार दिन के पश्चात् अखिल भारतीय काग्रेस कमेटी के जलसे के लिए बबई चल पडा। यह वह समय था कि अभी तूफान आया नहीं था किन्तु तूफान के लक्षण हर ओर दिखाई देने लगे थे। सरकार की नीति के सबध मे नाना प्रकार की अफवाहे फैल रही थीं। एक बात जो विशेष रूप से फैली वह यह थी कि अखिल भारतीय काग्रेस कमेटी के जलसे के पश्चात् कार्यकारिणी के समस्त सदस्यो को गिरफ्तार कर लिया जाएगा और हिन्दुस्तान से बाहर किसी अज्ञात स्थान मे भेज दिया जाएगा।

---

* *जुलैखा बेगम का देहात ९ अप्रैल १९४३ ई० को हुआ। मौलाना ने अपने परममित्र नवाब सद्रयार जग को लिखे अपने उपर्युक्त पत्र में अपने उद्गारो को अभिव्यक्त किया है। यह उन बीस पत्रो मे से एक है जो उन्होने १० अगस्त १९४२ और १६ सितम्बर १९४३ की अवधि में अहमदनगर जेल से लिखे थे। मौलाना के निजी सचिव मुहम्मद अजमल खा ने इन्हे एकत्रित किया और नवाब सद्रयार जग को लिखे गए अन्य पत्रो के साथ **गुबार-ए-खातिर** (मालिन्यचित्त) नाम से १९४६ ई० मे पत्रो का सकलन प्रकाशित किया।*

यह बात भी कही जाती थी कि युद्ध के कारण आपात-स्थिति मे सरकार को आपातकालीन अधिकार दे दिए गए हैं और वह उनसे हर प्रकार का काम ले सकती है।[१]

इस प्रकार की गतिविधि पर मुझसे अधिक जलैखॉ की दृष्टि रहा करती थी और उसने काल की कुचाल गति का पूरी तरह अनुमान कर लिया था। इन चार दिनो के अदर जिन्हे मैने दो यात्राओ के बीच व्यतीत किए है, मै कामो मे इतना व्यस्त रहा कि हमे आपस मे बातचीत करने का अवसर बहुत कम मिला। वह मेरे स्वभाव को जानती थी। उसे पता था कि ऐसी स्थिति में मेरी खामोशी सदैव बढ जाती है और मुझे अच्छा नही लगता कि इस खामोशी मे विघ्न उत्पन्न हो। इसलिए वह भी मौन थी। परन्तु हम दोनों का यह मौन हमसे कुछ कह-सुन भी रहा था। हम दोनो निर्वाक्य रह कर भी एक-दूसरे की बाते सुन रहे थे और उनका आशय भली भाति समझ रहे थे। तीन अगस्त को जब मै बबई के लिए प्रस्थान करने लगा तो वह यथाव्यवहार द्वार तक बिदा करने के लिए आई।

मैंने कहा कि यदि कोई नवीन घटना न घटी तो १३ अगस्त तक वापस आ जाऊगा। उसने खुदा हाफिज कहने के अतिरिक्त कुछ और नही कहा। यदि वह कहना भी चाहती तो इससे अधिक कुछ नही कह सकती थी जो उसके मुखारबिन्दु पर अकित भावरेखाए कह रही थी। उनके नयन शुष्क थे किन्तु मुख पर अश्रु-धारा प्रवाहित थी।

पिछले २५ वर्षो के दौरान कितनी ही यात्राये मझे करनी पडी और कितनी ही बार गिरफ्तारिया हुई किन्तु मैंने उसे इतना उदास कभी नही देखा था। क्या यह भावुकता की क्षणिक दुर्बलता थी जो उसके स्वभाव को प्रभावित कर रही थी ? मैने उस समय ऐसा ही सोचा था किन्तु अब सोचता हूँ तो लगता है कि शायद उसे सकट या स्थिति का आभास होने लगा था। कदाचित् वह महसूस कर रही थी कि इस जीवन मे हमारी यह अतिम भेट है। वह मुझे खुदा हाफिज इसलिए नही कह रही थी कि मैं यात्रा पर जा रहा था बल्कि वह स्वय यात्रा करने वाली थी।

वह मेरे स्वभाव से भली-भाति परिचित थी। वह जानती थी कि ऐसे अवसरो पर यदि उसकी ओर से लेशमात्र भी व्याकुलता दिखाई जाएगी तो मुझे बहुत बुरा लगेगा और बहुत दिनो तक उसकी कटुता हमारे सबधो मे शेष रहेगी। सन् १९१६ ई० मे जब प्रथम बार गिरफ्तारी हुई थी तो वह अपने मन की आतुरता नही रोक सकी थी और मै बहुत दिनो तक उससे नाराज रहा था। इस घटना ने सदैव के लिए उसकी जीवन-पद्धति को बदल दिया और उसने पूर्ण प्रयास किया कि मेरे जीवन की गतिविधि का साथ दे। उसने केवल साथ ही नहीं दिया बल्कि पूरे साहस और पूर्ण दृढता के साथ हर प्रकार की दुष्कर स्थितियो को सहन किया। वह मानसिक दृष्टि से मेरे चितन और विश्वासो मे सम्मिलित थी और व्यावहारिक जीवन मे मित्र तथा सहायक थी। फिर क्या बात थी कि इस अवसर पर वह अपनी व्याकुलता पर नियत्रण न रख सकी ? सभवत यही बात थी कि उसके अतस्तल पर भविष्य की प्रतिच्छाया पडना आरभ हो गई थी।

गिरफ्तारी के पश्चात् कुछ समय तक हमे मित्रो और सबधियो से पत्र-व्यवहार का

१– गिरफ्तारी के पश्चात् जो वक्तव्य सूचनापत्रो मे प्रकाशित हुए उनसे ज्ञात होता था कि यह खबरें निराधार न थीं। सेक्रेटरी आफ स्टेट और वाइसराय का मत यही था कि हमें गिरफ्तार करके पूर्वी अफ्रीका भेज दिया जाए और इस आशय से कुछ व्यवस्था भी कर ली गई थी। परन्तु फिर राय बदल गई और अन्ततोगत्वा निश्चय हुआ कि हमे अहमदनगर दुर्ग मे सैनिक सरक्षण के अतर्गत रखा जाए और ऐसी कडी व्यवस्था की जाए कि हिन्दुस्तान से बाहर भेजने का जो लक्ष्य था वह यही पूर्ण हो जाए।

अवसर नही दिया गया था। फिर जब यह रोक हटा दी गई तो १७ सितबर को मुझे उसका पहला पत्र मिला और उसके पश्चात् बराबर पत्र मिलते रहे। मुझे पता था कि वह अपनी बीमारी का उल्लेख करके मुझे चितित करना स्वीकार नही करेगी। इसलिए घर के कुछ अन्य सबधियो से हाल-चाल मालूम करता रहता था। पत्र यहा साधारणत लिखी भेजे जाने वाली तिथि से १०-१२ दिन पश्चात् मिलते है। इसलिए कोई बात तुरत ज्ञात नही हो सकती। १५ फरवरी को मुझे एक पत्र मिला जो २ फरवरी को भेजा गया था। इसमे लिखा था कि उसका स्वास्थ्य ठीक नही है। मैने तार द्वारा अधिक हाल-चाल मालूम किया तो एक सप्ताह के पश्चात् उत्तर मिला कि चिता की कोई बात नही है। २३ मार्च को मुझे पहली सूचना उसके घातक रोग के सबध मे मिली। बबई सरकार ने तार द्वारा निरीक्षक को सूचना दी कि इस विषय का एक तार उसे कलकत्ते से मिला है। ज्ञात नहीं कि जो तार बबई सरकार को मिला वह किस तिथि का था और कितने दिनो के उपरात यह निर्णय किया गया कि मुझे इस बात से अवगत कराया जाए।

सरकार ने हमारे कारावास का स्थान अपनी जान मे गुप्त रखा है। इसलिए प्रारभ से ही यह कार्य-पद्धति अपनाई गई है कि न तो यहा से कोई तार बाहर भेजा जा सकता है, न बाहर से कोई यहा आ सकता है क्योकि यदि आएगा तो तार के कार्यालय के ही माध्यम से आएगा और ऐसी स्थिति मे कार्यालय के लोगो को यह भेद पता चल जाएगा। इस प्रतिबध का परिणाम यह है कि कोई भी बात कितनी ही शीघ्रता की हो किन्तु तार के द्वारा प्रेषित नही की जा सकती। यदि तार भेजना हो तो उसे लिख कर निरीक्षक को दे देना चाहिए। वह उसे डाक द्वारा बबई भेजेगा। वहा से परीक्षणोपरात उसे आगे भेजा जा सकता है। पत्र-व्यवहार पर नियत्रण रखने की दृष्टि से यहा बदियो को दो भागो मे विभाजित कर दिया गया है। कुछ के लिए केवल बबई का नियत्रण पर्याप्त समझा गया है। कुछ के लिए आवश्यक है कि उनकी सारी डाक दिल्ली जाए और जब तक वहा से स्वीकृति न मिल जाए वह आगे न बढाई जाए। मेरी डाक का सबध दूसरे प्रकार की व्यवस्था से है इसलिए मुझे कोई तार एक सप्ताह से पहले नही मिल सकता और न मेरा कोई तार एक सप्ताह से पूर्व कलकत्ता पहुच सकता है।

यह तार जो २३ मार्च को यहा पहुचा सैनिक गुप्त लिपि मे लिखा गया था। निरीक्षक इसे पढ नही सकता था। वह उसे सैनिक मुख्य कार्यालय मे ले गया। वहा सयोगवश कोई ऐसा व्यक्ति उस समय उपस्थित न था जो इसे पढ सके। इसलिए पूरा दिन इसकी गुप्त लिपि को पढने के प्रयास मे निकल गया। रात्रि को अक्षरो मे लिखी इसकी एक प्रतिलिपि मुझे मिल सकी।

दूसरे दिन सूचनापत्र आए तो उनमे भी इस बात की चर्चा थी। ज्ञात हुआ कि डाक्टरो ने स्थिति की सूचना सरकार को दे दी है और वह उत्तर की प्रतीक्षा मे हैं। फिर रोग के सबध मे चिकित्सको की सूचनाए प्रति दिन प्रकाशित होने लगी। निरीक्षक प्रतिदिन रेडियो से सुनता था और यहा कुछ मित्रो से इसकी चर्चा कर देता था।

जिस दिन तार मिला उसके दूसरे दिन निरीक्षक मेरे पास आया और उसने यह कहा कि यदि मै इस सबध मे सरकार से कुछ कहना चाहता हूँ तो वह उसे तुरत बबई भेज देगा और यहा के प्रतिबधो और निर्धारित नियमो के कारण इसमे कोई बाधा उत्पन्न नही होगी। वह स्थिति से अत्यत प्रभावित था और अपनी सहानुभूति का विश्वास मुझे दिलाना चाहता था। परन्तु मैने उससे स्पष्ट शब्दो मे कह दिया कि मै सरकार से कोई निवेदन नहीं करना चाहता। फिर वह जवाहरलाल के पास गया और उनसे इस सबध मे बात की। वह तीसरे पहर मेरे पास आए और बहुत देर तक इस बारे मे बातचीत करते रहे। मैने उनसे भी यही बात कही जो निरीक्षक से

कह चुका था। इसके पश्चात् ज्ञात हुआ कि निरीक्षक ने यह बात बबई सरकार की अनुमति से कही थी। जैसे ही घातक स्थिति की पहली सूचना मिली, मैने अपने मन को टटोलना आरभ कर दिया। मनुष्य का स्वभाव भी कुछ विलक्षण है। सारा जीवन हम इसकी देखभाल मे व्यतीत कर देते है फिर भी यह पहेली ही बना रहता है। मेरा जीवन प्रारभ से ही ऐसी परिस्थितियो मे बीता कि मन को धैर्यवान बनाने के अवसर जीवन मे आते रहे और जहा तक सभव था मैने धैर्य और दृढता प्रदर्शित करने मे कमी नही की।

फिर भी मैने अनुभव किया कि मन अशात हो गया है और उस पर नियत्रण रखने के लिए सघर्ष करना पडेगा। यह सघर्ष मस्तिष्क को नही किन्तु शरीर को थका देता है। शरीर अदर ही अदर घुलने लगता है।

उस समय मेरे मन और मस्तिष्क की जो स्थिति रही, मैं उसे छुपाना नही चाहता। मैने चेष्टा की कि इस स्थिति को सपूर्ण धैर्य और शांति के साथ सहन कर सकूँ। इस प्रयत्न मे मेरा बहिरग सफल हुआ किन्तु सभवत मेरा अतस्तल न हो सका। मैंने अनुभव किया कि अब मस्तिष्क बनावट और दिखावट की वही भूमिका प्रस्तुत करने लगा है जो भावनाओ और सवेदनाओ के सबध मे हम सदैव अनुभव करते है और अपने ऊपरी अस्तित्व को आभ्यतरिक अस्तित्व के समान नही बनने देते।

सबसे पहला प्रयत्न यह करना पडा कि यहा जीवनचर्या के जो कार्यक्रम निर्धारित किए जा चुके हैं, उनमे रुकावट न आने पाए। चाय और खाने के चार समय है जिन मे मुझे अपने कमरे से निकलना और कमरो की पक्ति के अतिम छोर के एक कमरे मे जाना पडता है। दिनचर्या मे समयसारिणी का मिनटो के हिसाब से पालन करने का मैं अभ्यस्त हो गया हूँ। इसलिए यहा भी उसके पालन की रीति प्रचलित हो गई और सभी साथियो को भी इसका साथ देना पडा। मैने इन दिनो मे भी अपने कार्यक्रमो को निरतर चलाए रखा। ठीक समय पर कमरे से निकलता रहा और खाने की मेज पर बैठता रहा। भूख नितात समाप्त हो चुकी है परन्तु मै अन्न के कुछ ग्रास गले से उतारता रहा। रात्रि के भोजन के पश्चात् कुछ देर तक प्रागण मे कुछ साथियो के साथ सगोष्ठी हुआ करती थी। इसमे भी कोई अतर नही आया। जितनी देर तक वहा बैठता था, जिस प्रकार बाते करता था और जिस तरह की बाते करता था, वह सब कुछ यथानियम होता रहा।

पत्र यहा बारह से एक बजे के बीच आया करते है। मेरे कमरे के दूसरी ओर सामने निरीक्षक का कार्यालय है। जेलर वहा से अखबार लेकर सीधा मेरे कमरे मे आता है। जैसे ही उसके कार्यालय से उसके निकलने और चलने की आहट आना आरभ होती थी, दिल धडकने लगता था कि पता नही आज कैसी सूचना पत्रो मे मिलेगी। परन्तु फिर मैं तुरन्त चौक उठता। मेरे सोफे की पीठ द्वार की ओर है। इसलिए जब तक कोई व्यक्ति अदर आकर सामने खडा न हो जाए वह मेरा मुख देख नही सकता। जब जेलर आता था तो मै यथानियम मुस्कराते हुए सकेत करता कि पत्र मेज पर रख दे और फिर लिखने मे तल्लीन हो जाता, जैसे बताना चाहता था कि पत्र पढने की कोई शीघ्रता नही है। मै स्वीकार करता हूँ कि यह समस्त बाह्याडबर दिखावे की एक भूमिका थी जिसका अभिनय मस्तिष्क का अहकार करता रहता था और वह इस कारण से यह अभिनय करता था कि कही उसके धैर्य और प्रतिष्ठा पर अधीरता और व्याकुलता का कोई धब्बा न लग जाए।

अततोगत्वा ९ अप्रैल को मेरे अवसाद का यह प्याला भर गया।

२ बजे निरीक्षक ने बबई सरकार का एक तार लाकर दिया जिसके द्वारा इस दुर्घटना की सूचना दी गई थी। इसके पश्चात् ज्ञात हुआ कि निरीक्षक को यह सूचना रेडियो के माध्यम से प्रात ही मालूम हो गई थी और उसने यहा कुछ मित्रो से इसकी चर्चा भी कर दी थी। परन्तु मुझे सूचना नहीं दी गई थी।

इस अवधि मे यहा के मित्रो का जो व्यवहार रहा उसके लिए मै उनका आभारी हूँ। प्रारभ मे जब रोगग्रस्त होने की सूचनाए आने लगी तो स्वभावतया उन्हे चिन्ता हुई। वे चाहते थे कि इस सबध मे जो कर सकते है करे किन्तु जैसे ही उन्हे मालूम हो गया कि मैने अपने व्यवहार के सबध मे एक निर्णय कर लिया है और मै सरकार से कोई निवेदन नही करना चाहता तो फिर सबने मौन धारण कर लिया और इस प्रकार मेरी दिनचर्या मे किसी तरह का हस्तक्षेप नहीं हुआ।

इस प्रकार हमारा २६ वर्षीय विवाहित जीवन समाप्त हो गया और मत्यु की दीवार हम दोनो के बीच खडी हो गई। हम अब भी एक-दूसरे को देख सकते हैं किन्तु इसी दीवार की ओट से। मुझे इन थोडे दिनो के अदर वर्षों की यात्रा करनी पडी है। मेरे सकल्प ने मेरा साथ नहीं छोडा किन्तु मै महसूस करता हूँ कि मेरे स्नायु शिथिल हो गए हैं।

यहा के प्रागण मे एक पुरानी कब्र है। पता नही किसकी है। जब से आया हूँ सैकडो बार उसे देख चुका हूँ। परन्तु अब उसे देखता हूँ तो ऐसा आभास होने लगता है मानो इसके प्रति स्नेह का एक नवीन भाव मन मे उत्पन्न हो गया हो। कल सध्या के समय देर तक उसे देखता रहा।

अब लेखनी रोकता हूँ। यदि आप मेरी बाते सुनते होते तो बोल उठते

'सौदा[१] खुदा के वास्ते कर किस्सा[२] मुख्तसर[३],
अपनी तो नीद उड गई तेरे फसाने[४] से।

ग़ुबार-ए-ख़ातिर

बन्दी जीवन और चाय का आनंद

इस जजीर की प्रत्येक कडी चाय के घूट और सिगरेट के कश के रसायन से बनी है और यह प्रक्रिया चल रही है। तनिक उस सौंदर्य के बारे मे सोचिए जो दोनो के ठीक-ठीक अनुपात मे उपयोग मे लाने से सतुलित रूप मे उत्पन्न होता है जब मेरे सिगरेट की अतिम चिगारी के रूप मे चाय की अतिम प्याली के साथ तबाकू समाप्त होती है।

बंदी जीवन और चाय का आनन्द *

अहमदनगर दुर्ग,
दिसम्बर १७, १९४३

मित्रवर,

समय वही है, परन्तु खेद है कि वह चाय उपलब्ध नही है जो मेरी इन्द्रियो को उत्तेजित और चिताग्रस्त मस्तिष्क को सतोष प्रदान किया करती है

फिर देखिए अन्दाजे[1] गुल अफशानी[2]-गुफ्तार[3]
रख दे कोई पैमाना[4]-ए-सहबा[5] मेरे आगे

(मेरे आगे कोई मदिरा का प्याला रख दे तो फिर देखे कि मेरे मुँह से बातो के फूल झडते है।)

वह चीनी चाय जिसका मैं अभ्यस्त था कई दिन हुए समाप्त हो गई और अहमदनगर व पूना के बाजारो मे कोई इस बहुमूल्य पदार्थ से परिचित नही।

हानि और लाभ की दुनिया मे कोई ऐश्वर्य नही जो किसी नैराश्य से सबद्ध न हो। यहा मदिरा का ऐसा कोई प्याला भरा ही नही गया जिसमे मिश्रण न हो। सफलता की मदिरा के पीछे सदैव विफलता का उन्माद लगा रहा और मधुमास की मुस्कान के पीछे हमेशा पतझड का रुदन होता रहा। अबुलफजल ने ठीक ही कहा है

"मदिरा का प्याला भरते ही खाली हो गया और जैसे ही कोई पृष्ठ पढ लिया गया वह उलट दिया गया।" *

मालूम नही कि इस बात की जटिलताओ और इसके रहस्यो पर आपका ध्यान कभी गया है या नही ? अपनी मन स्थिति की चर्चा क्या करूँ ? वास्तविकता यह है कि समय की बहुत सी समस्याओ के समान इस सबध मे भी मै कभी आम डगर से सहमत न हो सका। दुनिया के कुमार्गगमन पर सदैव सीना पीटता रहा।

चाय के सबध मे अपने समकालीनो से मेरा मतभेद केवल शाखाओ और पत्तियो के बारे मे नही हुआ कि समझौते की स्थिति उत्पन्न हो सकती, बल्कि सिरे से जड मे हुआ अर्थात् मतभेद आशिक नही, मूल सिद्धात का है।

---

१ अदाज = ढग, २ गुलअफशानी = फूल झाडना, ३ गुफ्तार = बात ४ पैमाना = चषक ५ सहबा = साकी

* नवाब सद्रयार जग को लिखे अपन कई पत्रो मे मौलाना ने चाय पीने के आनद के सबध मे लिखा है। बहुधा उन्ही पत्रों मे इन्होने जीवन के उन सुखो का उल्लेख किया है जो इन्हें कारावास मे प्राप्त होते हैं। प्रथम तो कवल ऐन्द्रिक सुख है और द्वितीय प्रकार का आनन्द मानसिक और दार्शनिक है। उपर्युक्त उद्धरण गुबार-ए-खानिर मे सकलित तीन पत्रो से लिए गए है और जिन का उल्लेख पाद-टिप्पणी १, २, ३ मे किया गया है।

*– गुबार-ए-खातिर, पृष्ठ १८९-१९१

चाय के सबध मे सबसे पहला प्रश्न स्वय चाय का प्रस्तुत होता है। मै चाय को चाय के लिए पीता हूँ। लोग चीनी और दूध के लिए पीते है। मेरे लिए वह साध्य है। उनके लिए साधन है। सोचिए मैं किस ओर जा रहा हूँ और दुनिया किधर जा रही है

चाय चीन की उत्पत्ति है और चीनियो के अनुसार पन्द्रह सौ वर्ष से उपयोग की जा रही है। परन्तु वहा कभी किसी को स्वप्न मे भी यह विचार नही हुआ कि इस सूक्ष्म तत्त्व को दुग्ध की विमलता से मिश्रित किया जा सकता है। जिन-जिन देशो मे उदाहरणत रूस, तुर्किस्तान, ईरान मे चीन से प्रत्यक्ष रूप से चाय पहुची वहा भी किसी को यह विचार नही हुआ। परन्तु सत्रहवी शताब्दी मे जब अग्रेज इससे परिचित हुए तो न जाने क्यो इन लोगो को क्या सूझी कि इन्होने दूध मिलाने की घृणित प्रथा प्रारभ की और चूकि हिन्दोस्तान मे चाय का रिवाज इन्ही के द्वारा हुआ इसलिए यह विकृति यहा भी फैल गई। शनै -शनै बात यहा तक पहुँच गई कि लोग चाय मे दूध डालने की जगह दूध मे चाय डालने लगे। ससार मे अत्याचार का आधार सीमित होता है, किन्तु जो आता है उसमे वृद्धि करता जाता है। अब अग्रेज तो यह कहकर अलग हो गए कि अधिक दूध नही डालना चाहिए। किन्तु अनाचार के बोये उनके बीज ने जो पत्ते और फल उत्पन्न किए है उन्हे कौन छाट सकता है। लोग चाय की जगह एक प्रकार का तरल हलुवा बनाते हैं खाने की जगह पीते है और हर्षित होते है कि हमने चाय पी ली। इन मूर्खो से कौन कहे कि

हाय कमबख्त, तूने पी ही नही।

मेरी चाय बहुत रुचिकर है। चीन की उत्तम प्रकार की है। रग इतना हल्का कि चाय का आभास ही न हो। अबुनिवास के शब्दो मे

"बोतल पारदर्शी है और मदिरा भी। दोनो एक जैसे हैं और अभेद्य है।"

इसकी सुगध इतनी तेज है कि सचमुच ही हर कप मुझे कानी के अत्यन्त नशीली मदिरा के चषक का स्मरण कराता है।

सभवत आपको नही मालूम कि चाय का मेरा अपना समारोह है। मैने चाय की सूक्ष्मता और मिठास को तबाकू की तेजी और कडुवाहट से मिश्रित करके एक रुचिकर मिश्रण तैयार करने का प्रयत्न किया है। चाय का पहला घूट लेते ही मै साधारणत एक सिगरेट सुलगा लिया करता हूँ। फिर इस विशिष्ट प्रक्रिया को इस प्रकार सपन्न करता हूँ कि थोडे-थोडे अन्तराल के पश्चात् चाय का एक घूट लूगा और इसी के साथ सिगरेट का भी एक कश लेता रहूगा। ज्ञानी इस प्रक्रिया को "क्रिया की एक स्थिर और अविरत श्रृखला कहेगे।" इस प्रकार इस प्रक्रिया की प्रत्येक कडी चाय के एक घूट और सिगरेट के एक कश के पारस्परिक मिश्रण से शनै -शनै ढलनी जाती है और कार्य-श्रृखला लबी होती रहती है। तनिक इन दोनो के सेवन के ठीक-ठीक अनुपातो के सौदर्य पर विचार कीजिए कि इधर कप अतिम बूद से रिक्त हुआ, उधर जलती हुई तबाकू ने सिगरेट की उस अतिम रेखा तक पहुच कर दम लिया,जहा तक वह पी जा सकती है।

---

१ अरबी का विख्यात प्राचीन कवि।

२ १९वीं शताब्दी का विख्यात फारसी कवि।

२—पत्र दिनाक ३ अगस्त, १९४२। मौलाना न बबइ जात हुए यह पत्र ट्रेन मे लिखा था। यह पत्र उस व्यक्ति तक न पहुँच सका जिसे लिखा गया था क्योकि छै दिन पश्चात् ९ अगस्त, १९४२ ई० को मौलाना गिरफ्तार कर लिए गए थ। गुबार-ए-खातिर, पृष्ठ ३६-३९

तेज और सूक्ष्म के मिश्रण से आनदोन्माद का जो सतुलित गुण प्रस्तुत होता है, उसका वर्णन कैसे करूं।

आप कहेगे, चाय की आदत स्वत एक इल्लत थी, फिर दूसरे नशे की वृद्धि क्यो की जानी चाहिए ? इस प्रकार की बातो से मिश्रण और परिवर्तन की पद्धति काम मे लाना, लतो पर लते बढाना, मादकता और उसके उतार की पुरानी कहानी को दुहराना है। मै स्वीकार करूगा कि यह स्वत निर्मित सभी आदते नि शक रूप से जीवन की गलतियो मे सम्मिलित है। लेकिन क्या कहूँ !जब कभी इसके इस पक्ष पर विचार किया तो मन इस बात पर सुतष्ट न हो सका कि जीवन को गलतियों से नितात निष्कलक बना दिया जाए। ऐसा ज्ञात होता है कि इस भवसागर मे जीवन को जीवन बनाए रखने के लिए कुछ न कुछ गलतियाँ जरूर करनी चाहिए। विचार कीजिए कि वह जीवन ही क्या हुआ जिसकी चादर पर कोई पाप का धब्बा न हो ? वह चाल ही क्या जो लडखडाहट से नितात मुक्त हो ? और फिर यदि चितन-मनन का एक पग और बढाइये तो सारी बात अततोगत्वा वहीं समाप्त हो जायेगी जहा कभी सिरास के ज्ञानी हाफिज [३] ने उसे देखा था

"आओ और देखो कि इस दुनिया का कौतूहल समाप्त नही हुआ।"

"न तो ऐसी पवित्रता से जैसी तुम्हारी है और न ऐसे पाप से जो मैंने किए हैं।"

यदि पूछिये कि कर्म की सफलता का मापदड क्या हुआ ? यदि यह पाप लिप्साये मार्ग मे रुकावट न समझी गई तो इसका उत्तर वही है जो सूफियो ने सदैव दिया है

हर बात का त्याग करो किन्तु सबसे परिचित भी रहो। अर्थात् निवृत्ति और प्रवृत्ति दोनों का समावेश इस प्रकार कीजिए कि पापाचार सम्पन्न हो, किन्तु मनुष्य उससे निर्लिप्त रहे। इस मार्ग मे काटो से उलझने से अवरोध उत्पन्न नही होता, अवरोध उत्पन्न होता है इसमे लिप्त हो जाने से। कुछ आवश्यक नहीं कि आप इस भय से सदैव अपना वस्त्र समेटे रहे कि कही भीग न जाये। भीगता है तो भीगने दीजिए, किन्तु आप के बाहुबल मे वह शक्ति अवश्य होनी चाहिए कि जब चाहा उसे इस प्रकार निचोड कर रख दिया कि पाप की एक बूद भी शेष न रही

तरदामनी[१] पे शैख हमारी न जाइयो,
दामन निचोड दे तो फरिश्ते[२] वजू[३] करे।

(ऐ शैख मेरे पाप लिप्त होने पर भ्रम मे न रहना, मै इतना पवित्र हूँ कि यदि अपने वस्त्र को निचोड दूँ तो पुनीत आत्माये उससे पवित्र होने के लिए प्रक्षालन करे।)

मैंने बदी जीवन को दो विरोधी दर्शनो से निर्मित किया है। इसमे एक अश वैराग्यवादियो का है और एक अनुरागवादियो का[४]। जहा तक परिस्थितियो की प्रतिकूलता का सम्बन्ध है वैराग्य से उनके घावो पर मरहम लगाता हूँ। जहा तक जीवन के सुखो का सबध है अनुरागवादियो का दृष्टिकोण अपनाता हूँ और प्रसन्नचित्त रहता हूँ। मैंने अपनी काक्टेल के चषक मे दोनो बोतले उडेल दी हैं। इस मिश्रण के बिना मेरी तृप्ति नहीं हो सकती थी। काक्टेल की यह विशिष्ट पद्धति हर उस व्यक्ति के बस का रोग नही है जो परिपक्व न हो। वरमॉथ और जिन का मिश्रण पीने वाले इस तेज मदिरा को सहन नही कर सकेगे।

आप कहेगे कि बदी-जीवन वैराग्य के लिए तो अनुकूल है क्योकि जीवन के सुख-दुख से बेपरवाह बना देना चाहता है। परन्तु अनुराग के ऐश्वर्य का वहा क्या अवसर है ? जो हतभाग्य

---

३ हाफिज, दीवान-ए-हाफिज

---

* १ तरदामनी =पापाचार, २ फरिश्ते =पुनीत आत्माए, ३ वजू =पवित्र होने के लिये प्रक्षालन।

४-पत्र दिनाक २७ अगस्त, १९४२, **गुबार-ए-खातिर** पृष्ठ ९७-१०३

बदीगृह से बाहर की स्वतत्रता मे भी जीवन की आनदोन्मादकता से वचित रहते है, उन्हें कारावास के वचनापूर्ण जीवन मे इसकी सामग्री कहा प्राप्त हो सकती है? किन्तु मैं आपको स्मरण कराऊगा कि मनुष्य का वास्तविक आनद मानसिक है। शरीर का नहीं है। मैं अनुरागवादियो से उनकी मानसिकता ले लेता हूँ, शरीर उनके लिए छोड देता हूँ। स्वर्गीय दाग ने नीतिप्रचारक से केवल उसकी जिह्वा ले लेनी चाही थी।

मिले जो हश्र[१] मे, ले लूँ जबान नासेह[२] की
अजीब[३] चीज है यह तूले मुद्दआ[४] के लिए।

कर्मों के लेखे-जोखे के बदले यदि नीति प्रचारक की जिह्वा जो मुझे मिल जाए तो मैं ले लूँ, क्योकि यह अभिप्रायो को विस्तारपूर्वक अभिव्यक्त करने के लिए अत्यन्त विलक्षण उपकरण है।

विचार कीजिए तो यह भी हमारी चेतना का एक भ्रम ही है कि आनद के उपकरणो को सदैव अपने से बाहर ढूँढते रहते हैं। यदि भ्रम का यह आवरण हटा कर देखे तो स्पष्टत दिखाई देगा कि वह हमसे बाहर नहीं है। स्वय हमारे अन्तस्तल मे ही विद्यमान है। हर्षोल्लास के जिन पुष्पो को हम चारो ओर ढूँढते हैं और नहीं पाते, वह हमारे मन के अभ्यतर के उपवनो मे ही सदैव हिलते और मुरझाते रहते हैं। परन्तु विडबना यह हुई कि हमे चारो ओर की सूचना है किन्तु स्वय अपना ही ज्ञान नही है

कही तुझको न पाया गर्चे हमने इक जहा ढूढा
फिर आखिर दिल ही मे पाया, बगल ही मे से तू निकला।

(हमने सारी दुनिया मे तुझे ढूँढा और न पाया। अन्ततोगत्वा तुझे अपने हृदय मे पाया और तू बगल ही से निकला।)

जगल का मयूर कभी उद्यान की खोज नहीं करता। उसका उपवन स्वय उसके पास मे विद्यमान रहता है। जहा कही अपना पर खोल देगा, विभिन्न रगो के पुष्पो का उद्यान विकसित हो जायेगा।

जेल की चार-दीवारी के भीतर भी सूर्य प्रत्येक दिन चमकता है और चादनी रातो ने कभी बदी और स्वतत्र मनुष्य मे भेद नही किया। अधेरी रातों मे जब आकाश मे तारो की रोशनी खिल जाती है तो वह केवल कारावास के बाहर ही नहीं चमकती। वो प्रतिबध और अवसाद मे पलने वालो को भी अपनी सुषमा का सदेश भेजती है। प्रात जब सूर्य की किरणे बिखेरता हुआ आएगा और सध्या जब क्षितिज की लालिमामय चादरे फैलाने लगेगी तो केवल ऐश्वर्य के प्रसादो के गवाक्षो ही से उनको नहीं देखा जायेगा। बदीगृह के सुराखो से लगी हुई ऑखे भी उन्हे देख लिया करती हैं। प्रकृति ने मनुष्य के समान कभी यह नही किया कि किसी को आनदित करे और किसी को उससे वचित रखे। वह जब कभी अपने मुखडे से अवगुठन उठाती है तो सब को समान रूपेण सौंदर्य के दर्शन के लिए आमन्त्रित करती है। यह दोष हमारा है कि हम दृष्टि उठाकर देखते नही और केवल अपने परिवेश मे ही खोये रहते है।

जिस बदीगृह मे प्रभात प्रत्येक दिन मुस्कराता हो, जहा हर रोज सध्या निशा की चादर

---

१ हश्र =कर्मों के लेखे-जोखे का दिन, २ नासेह =नीतिप्रचारक, ३ अजीब =विचित्र, ४ तूले मुद्दआ =अभिप्राय की विस्तृत अभिव्यक्ति।

ओढकर आती हो, जिसकी राते कभी सितारो से जगमगाने लगती हो, कभी चद्रमा की चादनी के सौदर्य की छटा से प्रकाशित रहती हो, जहा दोपहर प्रत्येक दिन चमके, क्षितिज हर रोज निखरे, पक्षी प्रत्येक प्रभात और सध्या को चहके, उसे बदीगृह होने पर भी आनदोल्लास की सामग्री से रिक्त क्यो समझ लिया जाय ? यहा ऐश्वर्य के उपकरणो का तो इतना आधिक्य है कि किसी कोने मे भी लुप्त नही हो सकता।

यदि प्रासाद और स्थान न हो तो हम किसी वृक्ष की छाया से काम चला ले। रेशम और मखमल का फर्श न मिले तो अपने आप उगी हुई हरी घास के फर्श पर जा बैठे। यदि विद्युत के प्रकाश के कुमकुम उपलब्ध नही है तो आकाश की कगीरो को कौन बुझा सकता है यदि ससार का समस्त कृत्रिम सौंदर्य ओझल हो जाए—सुबह अब भी प्रत्येक दिन मुस्कारायेगी। ज्योत्स्ना अब भी सदैव अपनी सुषमा बिखेरेगी। परन्तु यदि हृदय मे ही उत्साह और उमग न रहे तो ईश्वर के लिए बतलाइये कि इसका उपाय क्या हो ? उसके रिक्त स्थान को भरने के लिए किस चूल्हे के अगारे काम देगे

मुझे यह डर है, दिले जिन्द 'तू न मर जाए
कि जिन्दगानी इबारत[१] है तेरे जीने से

(ऐ जीवत हृदय मुझे आशका है कि कही तू मर न जाए क्योकि जीवन का तभी तक कोई अर्थ है जब तक तुझमे उत्साह और उमग हो।)

मैं आपको बतलाऊँ इस मार्ग मे मेरी सफलताओ का रहस्य क्या है ? मै अपने मन को कही भी दूर या अलग नहीं होने देता। कोई भी स्थिति हो, कोई स्थान हो, उसकी तडप कभी धीमी नही पडेगी। मैं जानता हूँ कि जीवन-जगत की समस्त महत्ता अभ्यतर की इसी मधुशाला के दम से है। यह उजडा कि मारी दुनिया उजड गई। ऐश्वर्य के समस्त बाह्य उपकरण मुझ से छिन जाये, किन्तु जब तक यह नही छिनता, मेरे जीवत आह्लाद की मादकता को कौन छीन सकता है।

आपको ज्ञात है, मै सदैव प्रात तीन से चार बजे के बीच उठता हूँ और चाय की कई प्यालियॉ पीकर आलस्य को दूर करता हूँ। प्याली चषक होती है और चाय प्रात पी जाने वाली मदिरा। यह समय सदैव मेरी दिनचर्या का अत्यधिक आनददायक समय होता है किन्तु बदीगृह के जीवन मे इसकी मादकता और आत्मविभोरता एक दूसरी ही स्थिति उत्पन्न कर देती है।

हॉ कोई व्यक्ति ऐसा नही होता जो उस समय निद्रामग्न आखे लिए हुए उठे और सुघडता से चाय बनाकर मेरे सामने रख दे। इसलिए स्वत अपने ही इच्छुक हाथो से काम लेना पडता है। मै उस समय पुरानी मदिरा की बोतल के स्थान पर चीनी चाय का ताजा डिब्बा खोलता हूँ और एक कलाकार जैसी लगन से चाय बनाता हूँ। फिर चषक और सुराही को मेज पर दाहिनी ओर जगह दूगा कि उसकी प्रधानता इसकी अधिकारी हुई। लेखनी और कागज को बाई ओर रखूगा क्योकि कार्य-प्रणाली मे उनका स्थान द्वितीय हुआ। फिर कुर्सी पर बैठ जाऊगा और कुछ न पूछिये कि बैठने ही किस लोक मे पहुँच जाऊगा। किसी मद्यप ने शाम्पेन और बोंडो की सौ साला पुरानी मदिरा मे भी वह आनद और मादकता कहा पाई होगी, जो मै चाय के इस प्रातकालीन प्रत्येक घूट से प्राप्त करता हूँ।

आपको ज्ञात है कि मैं चाय के लिए रूसी प्यालिया काम मे लाता हूँ। यह चाय की साधारण प्यालियो से बहुत छोटी होती है। यदि अरुचिकर ढग से पीजिये तो दो घूट मे चाय

१ इबारत =पहचान

समाप्त हो जाये। किन्तु ईश्वर न करे मै ऐसी रुचि-हीनता का प्रदर्शन क्यो करने लगा ? मै एक अभ्यस्त पीने वाले के समान ठहर-ठहर कर पीऊगा और छोटे-छोटे घूट लूगा। फिर जब पहली प्याली समाप्त हो जायेगी, मैं कुछ समय के लिए रुक जाऊगा और इस अतराल को जितना बढा सकूगा बढाऊगा ताकि इसके बाद की हर प्याली का अधिक से अधिक आनद ले सकू। फिर दूसरी और तीसरी प्याली के लिए हाथ बढाऊगा और दुनिया को, और हानि लाभ के उसके सारे कार्य-व्यापार को नितात विस्मृत कर दूगा। इस समय भी कि यह पक्तिया अनायास लेखनी की नोक से निकल रही है, मै उसी आनद-लोक मे हूँ, और नही जानता कि १९ अगस्त के प्रात काल के पश्चात् से ससार मे क्या हुआ और अब क्या हो रहा है।

मेरा दूसरा उल्लासपूर्ण समय दोपहर का होता है या अत्यन्त ठीक-ठीक कहूँ तो अपरान्ह का समय होता है। लिखते-लिखते थक जाता हूँ तो थोडे समय के लिए लेट जाता हूँ। फिर उठता हूँ, स्नान करता हूँ, पुन चाय पीने का आनद लेता हूँ और नई स्फूर्ति से युक्त होकर पुन अपने कार्यक्रमो मे तल्लीन हो जाता हूँ। उस समय आकाश की स्वच्छ नीलिमा और सूर्य की अनावृत चमक का जी भर कर आनद लूगा। हृदय के एक-एक द्वार और एक-एक खिडकी को खोल दूगा। मन चाहे कितना भी अवसादो और चिताओ से धूल-धूसरित क्यो न हो, किन्तु आकाश के उच्च ललाट और सूर्य की चमकती हुई मुस्कान देखकर वह फिर से ताजा होकर खिल पडता है।

ग़ुबार-ए-ख़ातिर

सगीत

उन रातो मे अपना सितार लेकर मै विशेष रूप से ताज चला जाता था। वहा मैं यमुना की ओर मुँह करके चन्द्रिका-युक्त छत पर बैठ जाता था। यह स्मारिका जब चादनी मे नहाने लगती थी तो मै अपने सितार पर एक राग छेड देता था और उसकी सगीतात्मकता मे पूर्णतया आत्मविभोर हो जाता था।

संगीत *

१६ सितम्बर, १९४३

शायद आप को ज्ञात नही कि एक समय मुझे सगीत के अध्ययन और अभ्यास का भी शौक रह चुका है। यह कार्य-व्यापार कई वर्षो तक चलता रहा था। इसका श्रीगणेश यू हुआ कि १९०५ ई० मे जब शिक्षा पूर्ण हो चुकी थी और शिक्षार्थियो को पढाने मे व्यस्त था तो पुस्तको का प्रेम मुझे बहुधा एक पुस्तक-विक्रेता खुदाबख्श के यहा ले जाया करता था जिसने वैलेजली स्ट्रीट पर मदरसा-कालिज के सामने दुकान ले रखी थी और अधिकाशत अरबी और फारसी की हस्तलिखित पुस्तको के क्रय-विक्रय का व्यापार किया करता था। एक दिन उसने फकीर उल्लाह सैफ खॉ की राग-दर्पण की एक अत्यत सुलिखित और चित्रित प्रति मुझे दिखाई और कहा कि इस पुस्तक का सबध सगीत-कला से है। सैफ खा औरगजेब के शासन-काल मे एक पदाधिकारी था और भारतीय सगीत के ज्ञान और अभ्यास मे निपुण था। उसने सस्कृत की एक पुस्तक का फारसी मे अनुवाद किया जो राग-दर्पण के नाम से विख्यात हुई। यह प्रति जो खुदाबख्श के हाथ लगी थी आसिफ जॉह के पुत्र नासिर जग शहीद के पुस्तकालय की थी और इसे अत्यत सुघडता से तैयार किया गया था। मै अभी इसकी भूमिका पढ रहा था कि मिस्टर डैनसम रॉस आ गए जो उस काल मे मदरसा-ए-आलिया के प्रधानाचार्य थे और ईरानी लहजे मे फारसी बोलने मे अत्यधिक रुचि रखते थे। यह देखकर कि एक अल्पायु लडका फारसी की एक हस्तलिखित पुस्तक का ध्यानपूर्वक अध्ययन कर रहा है, आश्चर्यचकित हुए और मुझसे फारसी मे पूछा—"यह किस लेखक की पुस्तक है"? मैंने फारसी मे उत्तर दिया कि शैफ खा की पुस्तक है और सगीत कला से सबद्ध है। उन्होने पुस्तक मेरे हाथ से ले ली और स्वय पढने का प्रयत्न किया। फिर कहा कि भारतीय सगीत-कला अत्यन्त जटिल कला है। क्या तुम इस पुस्तक के प्रतिपाद्य को समझ सकते हो? मैने कहा जो भी पुस्तक लिखी जाती है, इसलिए लिखी जाती है कि लोग उसे पढे और समझे। मै भी इसे पढूगा तो समझ लूगा। उन्होने हॅस कर कहा-'तुम इसे नहीं समझ सकते। यदि समझ सकते हो तो मुझे इस पृष्ठ का अर्थ समझाओ।' उन्होने जिस पृष्ठ की ओर सकेत किया था उसमे रागो का वर्गीकरण किया गया था। मैने शब्द पढ लिए किन्तु अर्थ कुछ समझ मे नही आया। लज्जित होकर चुप हो गया और अततोगत्वा कहना पडा कि इस समय इसका अर्थ नही बता सकता, गभीरतापूर्वक अध्ययन करने के पश्चात् बता सकूगा।

मैने पुस्तक ले ली और घर आकर उसे आद्योपात पढ लिया परन्तु ज्ञात हुआ कि जब तक सगीत की परिभाषिकी पर अधिकार न हो और किसी कला-निपुण से उनके अर्थ समझ न लिए जाए पुस्तक का प्रतिपाद्य समझ मे नही आ सकता। शिक्षार्थी जीवन मे ही इस बात का अभ्यस्त हो गया था कि जो भी पुस्तक हाथ आई उसका अवलोकन करते ही समस्त विषय पर अधिकार प्राप्त हो गया। अब जो यह बाधा उत्पन्न हुई तो मुझे अत्यधिक उलझन हुई। विचार

* यह उद्धरण सगीत के इतिहास और कला के सबध मे नवाब सद्रयार जग को अहमदनगर जेल से लिखे गए मौलाना के पत्र से लिया गया है।

हुआ कि किसी सगीतज्ञ से सहायता लेनी चाहिए, किन्तु सहायता ली जाए तो किससे ली जाए पारिवारिक मर्यादा कुछ ऐसी थी कि सगीत से प्रेम रखने वाले के साथ मिलना सरल न था। अतत मसीता खा की ओर मेरा ध्यान गया। इस पेशे का यही एक व्यक्ति था जो हमारे यहा आता-जाना था।

इस मसीता खा की चर्चा भी उल्लेखनीय है। यह अम्बाला जिले मे सोनीपत का रहने वाला था और व्यवसाय की दृष्टि से गायक घराने से सबध रखता था। गाने की कला मे उसने अच्छी तरह निपुणता प्राप्त की थी और यह कला दिल्ली और जयपुर के उस्तादो से अर्जित की थी। वह कलकत्ते मे वेश्याओ को सगीत सिखाया करता था।

तकरीब कुछ तो बहेरि मुलाकात चाहिये

स्वर्गीय पिताजी की सेवा मे दीक्षार्थ उपस्थित हुआ। उनका सिद्धात था कि इस प्रकार के लोगो को दीक्षित नहीं करते थे। किन्तु सुधार करने और उनकी ओर ध्यान देने का द्वार भी बद नही करते थे। कहते कि बिना दीक्षा के आते रहो, देखो ईश्वर की इच्छा क्या है। बहुधा ऐसा हुआ कि कुछ दिनो के पश्चात् लोग स्वत अपना व्यवसाय छोड कर पश्चाताप करने लगे। मसीता खा को भी यही उत्तर मिला।

स्वर्गीय पिताजी वीरवार के दिन प्रवचन समाप्त करने के पश्चात् जामा मस्जिद से घर आते तो पहले कुछ समय तक बैठक मे बैठते। फिर अदर जाते और उनके मुख्य मुरीद पालकी के साथ चलते हुए आ जाते और अपना-अपना निवेदन प्रस्तुत करके विदा हो जाते। मसीता खा भी प्रत्येक वीरवार के प्रवचन के पश्चात् उपस्थित होता और दूर फर्श के किनारे हाथ बाधकर खडा रहता। कभी स्वर्गीय पिताजी की दृष्टि पड जाती तो पूछ लेते, "मसीता खा क्या हाल है ?" निवेदन करता "आपकी कृपा-दृष्टि का आकाक्षी हूँ।" कहते—"हा, अपने मन की लगन में लगे रहो।" वह हर्ष-विभोर होकर पाव पर गिर जाता और अपने आसुओ की झडी से उन्हे भिगो देता। जौक ने कितनी सुन्दरता से इस बात को अभिव्यक्त किया है

हुए है तर गिरया[१]-ए-नदामत[२] से इस कद्र[३] आस्तीन व दामन
कि मेरी तर दामनी[४] के आगे अर्क-अर्क[५] पाक दामनी[६] है

(आस्तीन और दामन पश्चात्ताप के आसुओ से इतने भीग गए है कि मेरी पापलिप्ति के आगे पवित्रता लज्जित है) कभी निवेदन करता कि रात्रि की सगोष्ठी मे उपस्थिति का आदेश हो जाए। रात की सगोष्ठी मुख्य मुरीदो की शिक्षा-दीक्षा के लिए सप्ताह मे एक बार हुआ करती थी। मसीता खा को स्वर्गीय पिताजी टाल जाते, परन्तु उनके टालने का भी एक विशिष्ट ढग था। कहते कि अच्छी बात है। देखो, सारी बाते अपने समय पर हो रहेगी। आशा-निराशा के बीच मे लटका हुआ वह मनुष्य इतने ही मे प्रसन्न हो जाता और रुमाल से आसू पोछते हुए अपने घर की राह लेता।

उसकी हार्दिक श्रद्धा और तीव्र इच्छा रग लाये बिना न रही। स्वर्गीय पिताजी ने उसे दीक्षित कर लिया था और सगोष्ठी मे बैठने की अनुमति भी दे दी थी। उसे भी ऐसा दैवानुग्रह प्राप्त हुआ कि उसने वेश्याओ को सगीत सिखाना छोड दिया और बगाली जमीदार की सेवा पर सन्तुष्ट हो गया। मैने स्वर्गीय पिताजी को मसीता खा के बारे मे एक बार यह कहते सुना था कि

---

१ गिरया =रुदन, २ नदामत =पश्चाताप ३ कद्र =मात्रा, ४ तरदामनी=पाप-लिप्ति, ५ अर्क-अर्क =लज्जित,
६ पाकदामनी =पवित्रा

"जब कभी मै मसीता खा को देखता हूँ तो मुझे पीर चगी की कथा याद आ जाती है अर्थात् मौलाना रूमी वाले पीर चगी की।

परन्तु मेरा ध्यान उसी मसीता खा की ओर गया और उससे इस बात की चर्चा की। पहले तो उसे कुछ आश्चर्य सा हुआ किन्तु फिर जब बात पूरी तरह समझ मे आ गई तो वह बहुत प्रफुल्लित हुआ कि पीर के पुत्र की कृपा-दृष्टि उसकी ओर गई है। किन्तु अब कठिनाई यह उत्पन्न हुई कि इस योजना को कार्यान्वित कैसे किया जाए ? घर मे यहा **हिदाया** और **मिशकात** के पढने वालो का जमघट रहता था, सा, रा, गा, मा, के पाठ का अवसर न था और दूसरे स्थान पर विधिवत् जाना आशकाओ से रिक्त न था , फिर भी इस कठिनाई का एक समाधान निकाल लिया गया और एक विश्वसनीय व्यक्ति मिल गया जिसके घर पर उठने-बैठने का प्रबध हो गया। पहले तो सप्ताह मे तीन दिन निर्धारित किए गए थे , फिर प्रत्येक दिन अपरान्ह के समय जाने लगा। मसीता खा पहले से वहा उपस्थित रहता और दो-तीन घटे तक सगीत के ज्ञान और अभ्यास का कार्यक्रम चलता रहता।

मसीता खा की शिक्षा देने की केवल एक ही पद्धति रटी हुई थी जो इस कला के उस्तादो की प्रचलित पद्धति होती है। वही उसने यहा भी चलाया। किन्तु मैने उसे रोक दिया और प्रयत्न किया कि अपने ढग से इसका ज्ञान प्राप्त करू। सगीत वाद्यो मे अधिकाशत सितार पर ध्यान केन्द्रित हुआ और शीघ्र ही अगुलियॉ इससे परिचित हो गई। अब सोचता हूँ तो खेद होता है कि वह भी क्या युग था और मन मे क्या-क्या उत्साह थे। मेरी आयु १७ वर्ष से अधिक न होगी, किन्तु उस समय भी उत्साह यही था कि जिस मैदान मे कदम उठाइये पूरी तरह उठाइये और जहा तक मार्ग मिले बढते ही जाइये। कोई भी काम हो, किन्तु मै कभी इस बात से सहमत नही हुआ कि उसे अधूरा करके छोड दिया जाए। जिस गली मे भी कदम उठाया उसे पूरी तरह छान कर छोडा। पुण्य के कार्य किए तो वह भी पूरी तरह किए। पाप के कार्य किए तो उन्हे भी अधूरा न छोडा। रगरलियो का जीवन मिला था तो उसमे भी सबसे आगे रहे थे। त्याग और सदाचार का मार्ग मिला तो उसमे भी किसी से पीछे न रहे। हमेशा यही इच्छा रही कि जहा जाइये त्रुटिपूर्ण और अपरिपक्व लोगो की तरह न जाइये। सबध रखिये तो उस मार्ग मे निपुणता प्राप्त करिये।

इस प्रकार सगीत के मार्ग मे पाव रखा तो जहा तक राह मिल सकी, कदम बढाये जाने मे कमी नही की। सितार का अभ्यास चार-पाच वर्ष तक जारी रहा था, बीन से भी अगुलिया अपरिचित नही रही। किन्तु इससे अधिक अनुराग उत्पन्न न हो सका। फिर इसके पश्चात् समय आया कि यह कार्यक्रम नितात त्यक्त हो गया और अब तो बीते हुए दिनो की केवल कहानी शेष रह गई है। हॉ, उम्मीद पर से मिजराब का निशान बहुत दिनो तक नही मिटा था

अब जिस जगह दाग है, या पहले दर्द था।

इस रग-रूप के ससार मे एक कार्यप्रणाली मधुमक्खी की तरह है कि मधु पर बैठती है तो इस तरह बैठती है कि फिर कभी उठ नही सकती

कि पाव तोड के बैठे है पाएबद[1] तिरे।

और एक भ्रम की प्रणाली है कि हर फूल पर बैठे, बू-बास ली और उड गए

टुक[2] देख लिया, दिलशाद[3] किया, खुश काम[4] हुए और चल निकलें

इस प्रकार साहस-वर्ण-युक्त जीवन के उपवन का एक पुष्प यह भी था। कुछ देर के लिए

---

१ पाएबद =बधे हुए पैर, २ टुक =क्षणिक, ३ दिलशाद =मन प्रसन्न, ४ खुशकाम =आनन्दित,

हिदाया =धर्म शास्त्र की पुस्तक, **मिशकात** =हजरत मुहम्मद के प्रवचनो का सकलन।

रुक कर बू-बास ले ली और आगे निकल गए। सगीत मे अभिरुचि का उद्देश्य केवल यह था कि इससे भी अपरिचित न रहूँ, क्योकि व्यक्तित्व का सन्तुलन और चितन की सूक्ष्मता सगीत के बिना प्राप्त नही हो सकती। जब एक विशेष सीमा तक यह उद्देश्य पूर्ण हो गया तो फिर इसमे अधिक तल्लीनता केवल अनावश्यक थी, बल्कि निषेधात्मक क्षेत्र मे आ सकती है। परन्तु सगीत जो मेरे हृदय के एक-एक कोने मे रच-बस गया था, मन से निकाला नही जा सकता था और आज तक नही निकला

जाती है कोई कशमकश अन्दोहे इश्क की
दिल भी अगर गया तो वहीं दिल का दर्द था।

सौदर्य आवाज मे हो या मुखाकृति मे, ताजमहल मे हो या निशात-बाग मे, सौदर्य तो सौदर्य है और सौदर्य की अपनी स्वाभाविक माग है। खेद है उस हतभाग्य पर जिसके सवेदनारहित हृदय ने इस माग का उत्तर देना न सीखा हो।

मै आपसे एक बात कहूँ। मैंने बारम्बार अपने आप को टटोला है। मै जीवन मे प्रत्येक वस्तु के बिना प्रसन्न रह सकता हूँ किन्तु सगीत के बिना नहीं रह सकता। यह सुहावनी आवाज मेरे लिए जीवन का आश्रय है, मानसिक तनावो का हल और तन-मन के सारे रोगो का उपचार है। मुझे यदि आप जीवन के रहे-सहे सुखो से वचित कर देना चाहते है तो इस एक वस्तु से वचित कर दीजिए। आपका अभिप्राय पूर्ण हो जाएगा। यहा अहमदनगर के कारावास मे यदि किसी वस्तु का अभाव प्रत्येक सध्या को महसूस होता है तो वह रेडियो है।

जिन दिनो मेरा सगीत अभ्यास चल रहा था उस समय तल्लीनता और आत्मविभोरता की कुछ अविस्मरणीय घटनाए घटी। यद्यपि वे क्षणिक अनुभूतिया थी, किन्तु सदैव के लिए मेरे ऊपर अपना अमिट छाप छोड गई। उसी काल की एक घटना है कि सयोग से आगरा जाना हुआ। अप्रैल का महीना था और चादनी की ढलती हुई राते थी। जब रात की अतिम पहर आरम्भ होने को होता तो चद्रमा निशा का अवगुठन हटा कर अकस्मात् झाकने लगता। मैने विशेष रूप से सप्रयास ऐसी व्यवस्था कर रखी थीं कि रात्रि को सितार लेकर ताज चला जाता और उसकी छत पर यमुना की ओर मुख करके बैठ जाता। फिर ज्यो ही चादनी फैलने लगती सितार पर कोई गीत छेड देता और उसमे तल्लीन हो जाता। क्या कहू और किस तरह कहू कि कल्पना के कैसे-कैसे रूप इन्ही आखो के आगे आ चुके है।

रात का सन्नाटा, सितारो की छाव, ढलती हुई चादनी और अप्रैल की भीगी हुई रात, चारो ओर ताज की मीनारे सिर उठाये खडी थी, बुर्जिया निस्तब्ध बैठी थी। बीच मे चादनी से घुला हुआ मर्मर पाषाण का गुम्बद अपनी कुर्सी पर गतिहीन बिराजमान था, नीचे यमुना की रुपहली लहरे बल खा-खाकर दौड रही थी और ऊपर सितारो की अगणित दृष्टियॉ आश्चर्यचकित होकर ताक रही थी। प्रकाश और अधकार के इस मिले-जुले वातावरण मे सितार के पर्दो से अकस्मात् बिन बोल के विलाप उठते और वायु की लहरो पर बेरोक तैरने लगते हैं। आकाश से तारे झड रहे थे और मेरी रक्तस्रावी अगुलियो मे गीत।

कुछ समय तक वातावरण थमा रहता जैसे कि कान लगा कर चुपचाप सुन रहा है। फिर धीरे-धीरे प्रत्येक दर्शक गतिवान होने लगता। चाद बैठने लगता। यहा तक कि सिर पर आ खडा होता। सितारे आखे फाड-फाडकर ताकने लगते। वृक्षो की शाखाये भावविभोर होकर झूलने लगती। रात्रि के अधकारमय आवरण के भीतर से पचभूत की फुसफुसाहट स्पष्टत सुनाई देती।

५ कशमकश =द्वन्द्व, ६ अन्दोह =पीडा, ७ इश्क =प्रेम।

कई बार ताज की बुर्जिया अपने स्थान से हिल गई और कितनी ही बार ऐसा हुआ कि मीनारे अपने काधो को कम्पायमान किए बिना न रह सके। आप विश्वास करे या न करे, किन्तु यह बात सत्य है कि इस अवस्था मे बारम्बार मैने बुर्जियो से बाते की है। और जब कभी ताज के मौन गुबद की ओर दृष्टिपात किया है तो इसके ओठो को हिलता हुआ पाया है।

कांग्रेस अभिभाषण, १९२३

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस का विशिष्ट अधिवेशन

दिल्ली

"जब 'हिन्दूओं को बचाओ' और 'मुसलमानों को बचाओ' की स्थिति उत्पन्न हो गई हो तो राष्ट्र को बचाने की चिता कौन करे? प्रेस और मच धर्मान्धता और रुढिवाद को फैलाने में व्यस्त हैं और भोली-भाली तथा अनभिज्ञ जनता सडकों पर खून बहाने में व्यस्त है।"

कांग्रेस अभिभाषण, १९२३ *

जनता के प्रतिनिधिगण, देवियो और सज्जनो '

राष्ट्रीय सघर्ष के ऐसे सकटपूर्ण और निर्णयात्मक समय मे जिससे आज हम दो चार है, आप महानुभाव परिस्थितिवश विवश हुए कि वर्ष के अत से पूर्व इस राष्ट्रीय स्मारक स्थान मे एकत्रित हो और समय की कठिनाइयो का समाधान और मार्गदर्शन प्राप्त करे। यदि मैं कहूँ कि यह समय कार्य और उद्देश्य के सकट का है, ऐसा सम्मेलन है जिसका कोई उदाहरण इसके इतिहास मे उपस्थित नही तो मै समझता हूँ कि यह ऐसी बात होगी जो आप मे से प्रत्येक व्यक्ति अनुभव कर रहा है। तीन वर्ष हुए जब आप एक ऐसे ही एक विशिष्ट अधिवेशन मे कलकत्ते मे एकत्रित हुए थे, तो वह भी आप के इतिहास का एक महत्वपूर्ण क्षण था। परन्तु उस दिन की महानता राष्ट्रो के उन दिनो के समान थी जिनमे स्वतत्रता सग्राम की घोषणा की गई है और आज के दिन की महत्ता मे इतिहास के उन दिनो की झलक पाई जाती है जिनमे राष्ट्रो को सग्राम के निर्णयात्मक सकटो का सामना करना पडा है। उस दिन आप सग्राम के प्रारभ के लिए चितित थे, आज उसके परिणाम के लिए व्याकुल है। उस समय आपको यात्रा की जिज्ञासा थी , आज भटक जाने का भय उत्पन्न हो गया है। उस समय आप तट पर नौका के लिए विचलित थे किन्तु आज हाफिज के ज्वलत शब्दो मे "नौका एक तट से चल चुकी है किन्तु दूसरा किनारा अभी दूर है और तरगे घेरा डाल रही है।"

सज्जनो 'जब मैं देखता हूँ कि ऐसी सकटपूर्ण परिस्थिति मे अध्यक्ष पद के लिए आपने मेरा चयन किया है तो मुझे आपकी ओर से सम्मान और विश्वास पाकर एक ऐसा महान सदेश मिलता है जिसको मैं अपने अधिकारो का नही, बल्कि आपकी उदारता का ही परिणाम समझ सकता हूँ। यदि मै अपनी तुच्छ सेवा के द्वारा आपका ऐसा विश्वास प्राप्त कर सका हूँ तो मुझे विश्वास करना चाहिए कि यह मेरा देश और राष्ट्र की ओर से उस सेवा की स्वीकृति का एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण प्रमाण-पत्र है। मैं इस सम्मान के लिए आपका आभारी हूँ किन्तु उस दायित्व के लिए जो आपके विश्वास की पवित्र धरोहर है, आप ही से सहयोग और सहायता की प्रार्थना करता हूँ, निश्चय ही आज हमे एक अत्यन्त कठिन समय मे अत्यन्त दुष्कर कार्य करना है। परन्तु हमारा विश्वास डिगा नही है और यद्यपि हमे अपने उपायो की ओर से शकाये रही, किन्तु हमे अपने उद्देश्य की सच्चाई मे कोई सदेह नही है कि हमारी विनम्र चेष्टाए सत्य और न्याय के लिए हैं। हमे विश्वास है कि यह ईश्वर की धरती मे उसका सबसे अधिक प्रिय कार्य है और उसकी इच्छा यही है कि ऐसा हो। अत यह तो आवश्यक है कि हम अपने दु खो और त्रुटियो को स्वीकार करे, हम काल परीक्षा और मार्ग के खटको की ओर से चितित हो। हम कठिनाइयो

---

* १५ दिसम्बर १९२३ ई० को मौलाना ने काग्रस के विशिष्ट अधिवशन की अध्यक्षता की। ३५ वर्ष की आयु मे वह सबस कम आयु के काग्रेस के अध्यक्ष थ। उस समय हिन्दू-मुस्लिम साप्रदायिक मतभद उच्च शिखर पर पहुँच चुके थ। मौलाना क भाषण मे बल हिन्दू-मुस्लिम एकता पर है।

और बाधाओ की भीषणता से पूर्णतया आशकित रहे, किन्तु हमे परिणाम की ओर से कभी भयभीत नही होना चाहिए। हमे विश्वास रखना चाहिए कि ईश्वर की जिस कृपा की प्रारम्भिक आशाओ ने हमारा साथ दिया था, वह मध्यावधि की इस परीक्षा मे भी हमारी सहायक होगी और अततोगत्वा विजय भी हमारी ही लिखी हुई है।

समकालीन समस्या

यदि मैं समकालीन परिस्थितियों और समस्याओ पर प्रकाश डालता तब भी मै बात कहने के स्थान पर मौन धारण करना ही उचित समझता। हमारे लिए अब समय की कौन-सी बात है जो नही हो सकती है? और जिसकी चर्चा हम इसलिए कर सकते हैं कि इससे हमारे ज्ञान या अनुभूति के लिए कोई नई स्थिति उत्पन्न हो गई है? एक समय था जब भारतीय राष्ट्रीय मनोभाव की अभिव्यक्ति इस सीमा तक पहुँची थी कि उसने नौकरशाही के अन्यायो को आलोचना तक सीमित रखा। फिर टीका-टिप्पणी उपालम्भ मे परिवर्तित हुई और शिकायत ने विरोध और प्रश्न का रूप धारण कर लिया। अब अन्यायो की चर्चा न केवल अनावश्यक है बल्कि अपने कार्य और विश्वास मे सदेह करना है। वास्तविकता हमारे सम्मुख पूर्णतया स्पष्ट हो चुकी है। इसमे न तो वृद्धि हो सकती है, न किसी नए अवगुठन के हटने की प्रतीक्षा शेष है। हमे विश्वास है कि हमारे साथ जो कुछ हो रहा है, वह बराबर होता रहेगा, जब तक हम उसे स्वय न बदल देगे। हमारा मुकाबला व्यक्तियो और युगो से नही है कि जिनका परिवर्तन परिस्थितियो को प्रभावित करे। हमारा मुकाबला एक व्यवस्था से है जिसके सबध मे हमे विश्वास है कि उसकी मनोवृत्ति ही अन्यायपूर्ण है और यदि यह इस समय तक चलता रहा है तो इसलिए नही कि इसके भीतर उसकी अपनी शक्ति विद्यमान है बल्कि केवल इसलिए कि हमारी मूर्खता ने इसे टिकाये रखा। अत अन्याय इसका आचरण नहीं है बल्कि इसकी मनोवृत्ति है। तो हमे न तो आश्चर्यचकित होना चाहिए और न शिकायत करनी चाहिए। बल्कि यह चेष्टा करनी चाहिए कि वह बरकरार न रहे।

तुर्की की महान विजय

सज्जनो!

मुझे विश्वास है कि आज आप जिस बात की सबसे पहले आशा रखते होंगे यह है कि मैं आपके हर्षोल्लास को स्थापित करने का सम्मान प्राप्त करू। जो आपके राष्ट्रीय सघर्ष से एक विलक्षण किन्तु गौरवपूर्ण ढग से सबद्ध है और जिसमे आपके इतिहास की एक वैभवशाली गाथा निहित है। विधाता की यही इच्छा थी कि पूर्व के दो सुदूर स्थित देशो को न्याय और स्वतत्रता के नाम पर एक दूसरे से इस प्रकार एक साथ जोड दे कि एक के दु ख से दूसरे के मुख से आह निकले और एक की विजय मे दूसरे के लिए विजय और उपलब्धि का हर्ष हो। वे पूर्व के दो कौन से अलग अलग भू-भाग हैं जिनके समान न्याय और स्वतत्रता की खोज ने एक दूसरे को इतना निकट कर दिया है? यह हिन्दोस्तान है लेकिन ठीक उस समय जबकि उसे स्वय अपनी स्वतत्रता के दुष्कर मार्ग पर चलना था, इस्लामी खिलाफत और उसकी सरकार की आजादी और सार्वभौमिकता को भी अपनी स्वतत्रता के समान अपनी राष्ट्रीय माग स्वीकार किया, और यह तुर्की है और उसकी आधुनिक राष्ट्रीयता का जन्म है जिसकी क्रातिकारी विजयो का दुनिया ने एक जीवित चमत्कार के रूप मे दर्शन दिया है और जिसकी विजयी देशभक्ति की आत्मा पूर्व की समस्त भूमि के लिए जीवन और कर्मठता का एक नवीन सदेशवाहक बनकर विराजमान हुई है।

आधुनिक प्राच्य

हमे याद रखना चाहिए कि विश्व की उन निश्चित घटनाओ की जो महत्ता सदैव इतिहास के पृष्ठो पर अकित होती है वह कभी उन लोगो को कभी मालूम नही होती जो उन घटनाओं के नायक होते है। हम वस्तुत एक ऐसे क्रातिकारी युग से गुजर रहे है जो ठीक-ठीक उन युगो के समान है जिनमे विश्व के इतिहासकारो ने ससार की बडी-बडी क्रान्तियो के आधार-बिन्दुओ की खोज की। दुनिया तीव्र गति से नए परिवर्तन की ओर झुक रही है। उसकी सारी बाते जो कल तक अटल सत्य समझी जाती थी, अब कम्पायमान परिवर्तन है। इसके और अवधारणाओ के समान इसके मानचित्र की सीमाये और रेखाये भी कम्पायमान हैं। कितने ही उच्च शिखर है जो गिर-गिर कर पतनावस्था को प्राप्त हो रहे है और कितने ही ऐसे है नीचे से उठ-उठकर ऊचे हो रहे हैं। उत्थान अपने चरम बिन्दु से पतन का आरभ कर रहा है और निराशाओ का अधकार बढते-बढते वहा तक पहुँच चुका है जिसके पश्चात् प्रभात आरभ हो जाता है। कौन देख सकता है कि निकट भविष्य की झोली मे क्या है ? फिर भी जो कुछ हो रहा है, उसमे एक नवा प्राच्य की क्राति का दृश्य तो अत्यत स्पष्ट है जिसके लिए किसी को कहने की आवश्यकता नही। प्राच्य का वह जागरण जो चौथाई शताब्दी से केवल जागृति मात्र था अब जागृति के पश्चात् की अवस्था तय कर रहा है और महायुद्ध के द्वारा फैलाए हुए विनाश ने जीवन और गति की एक नवीन आत्मा प्राप्त करा दी है। गाजी मुस्तफा कमाल पासा के चमत्कारी हाथो ने केवल तुर्की के सुप्त भाग्य ही को नही जगाया बल्कि प्राच्य के द्वार को भी खटखटाया है। अब उसका गुजार एक ओर मध्य एशिया के मैदानो मे फैल रहा है, दूसरी ओर अफ्रीका, मरुभूमि स्थलो और तटो पर से चलकर हिन्द महासागर की तरगो को पार कर रहा है। कौन कह सकता है कि इसकी प्रतिध्वनि निकट भविष्य मे पूर्व के एक-एक कोने से ध्वनित न होगी।

सज्जनो,

हिन्दोस्तान प्राच्य के इस शानदार सघर्ष के साथ इसकी प्राकृतिक और भौगोलिक एकता को उपेक्षित या विस्मृत नही कर सकता। वह अपने सघर्ष को इससे सलग्न करता हुआ और एकता के उन समस्त भावो को महसूस कर रहा है जो एक भू-भाग के विभिन्न दलो मे काल, परिस्थितयो और उद्देश्यो की समानता स्वभावत उत्पन्न कर देती है। अत भारत पूर्व के हर उस राष्ट्र का स्वागत करता है जो न्याय और स्वतत्रता के लिए सघर्षरत हैं और प्रत्येक उस राष्ट्र पर खेद प्रकट करता है जो इस मार्ग मे अपने साथियो से पीछे हैं। वह मिस्र, सीरिया, फलिस्तीन, ईराक, मराकर और पूर्व के अन्य भू-भागो के समस्त देशभक्तो को विश्वास दिलाता है कि हिन्दुस्तान के कोटि-कोटि हृदय उनकी सफलता के लिए व्याकुल हैं। वे उनकी स्वतत्रता के लिए उससे कम प्रेम नहीं करते जितनी स्वय अपनी मातृभूमि की स्वतत्रता उनको प्रिय है।

कुस्तुन्तुनिया और यरवदा जेल

सज्जनो,

हम सब तुर्की की महान विजय की बधाई देते हुए कुस्तुन्तुनिया के भव्य खिलाफत भवन की ओर देख रहे है तो अनायास ही हमारा ध्यान हिन्दोस्तान के बदीगृह की ओर भी आकृष्ट हो जाता है जिसकी एक कोठरी में हिन्दोस्तान की महानतम विभूति बन्दी है। मैं विश्वास करता हू कि यदि तुर्की से बाहर कोई मनुष्य इसका अधिकारी है कि तुर्की की विजय पर उसे बधाई दी

जाए तो वह हिन्दोस्तान के महान नेता महात्मा गाधी हैं। महात्मा गाधी ने इस उद्देश्य के समर्थन मे उस समय आवाज उठाई जबकि स्वय तुर्की मे राष्ट्रीय सुरक्षा की कोई आवाज नहीं उठी थी। यह उनकी ही तथ्यग्राही दृष्टि थी जिसमे प्रारम्भ ही मे समस्या के समस्त विस्तार और गहराइयो का अनुमान कर लिया था और सारे हिन्दोस्तानीयों का आह्वान किया था कि यह केवल मुसलमानो ही की समस्या नही है बल्कि यह एक राष्ट्रीय समस्या है। सज्जनो ! हिन्दोस्तान ने महात्मा गाधी के नेतृत्व मे खिलाफत की माग के लिए जो सघर्ष किया वह वस्तुत इस युग की एक विशिष्ट और महत्त्वपूर्ण घटना है जिसके परिणामो पर इतिहास विचार करेगा। सम्भवत अभी इसका समय नहीं आया है कि हम इसके सारे परिणामो का अनुमान कर सके। फिर भी कुछ परिणाम तो ऐसे हैं जो बिना किसी तर्क-वितर्क के हम सब महसूस कर रहे है और जिनमें से प्रत्येक परिणाम इतना महान है कि केवल उसी के लिए यह सघर्ष हो सकता था।

खिलाफत आन्दोलन के कारण, बिना हिन्दोस्तान की स्वतन्त्रता के हिन्दू-मुस्लिम एकता की समस्या एक खडित स्वप्न के अतिरिक्त कुछ नही है, इसी के कारण उन कठिनाइयो पर विजय प्राप्त कर पाया जो दीर्घ काल से उसके मार्ग मे अवरोध उत्पन्न कर रही थीं।

हिन्दोस्तान का, सम्पूर्ण पूरब मे वह अन्तर्राष्ट्रीय सम्मान, जिसे पूर्व के आधुनिक जागृत समूह ने एक महत्त्वपूर्ण स्थान दिया, इसी का परिणाम है। यदि यह सघर्ष उत्पन्न न होता तो आज हिन्दोस्तान सारे एशिया और अफ्रीका मे क्या है? तुर्की और अरब की स्वतत्रता भारतीय सेनाओ के द्वारा ही पदाक्रात की गई थी। अत स्पष्ट है कि सपूर्ण प्राच्य की सपूर्ण घृणा और तिरस्कार का वह भागीदार बनता। अत जहा कहीं भी एक हिन्दोस्तानी दिखाई पड जाता अगुलिया उठती कि यह एक दुर्भाग्यशाली देश का निवासी है। यह केवल अपने दुर्भाग्य से ही सन्तुष्ट नही है बल्कि प्राच्य के स्वतत्र राष्ट्रो के लिए भी दुर्भाग्य का कारण है परन्तु आज स्थिति बिल्कुल बदल चुकी है। आज हिन्दोस्तान सर उठाकर यह कह सकता है कि उसके दामन पर विवशता ने जो कलक लगा दिया था, उसकी इच्छा और अधिकार ने उसे धो दिया है। यदि ऐसा हुआ था कि बिना अपनी इच्छा के हजारो हिन्दोस्तानी रण-क्षेत्र मे गये ताकि तुर्की और अरबो की स्वतत्रता के विरुद्ध सग्राम करे तो यह भी हो चुका है कि स्वय अपनी इच्छा से हजारो हिन्दोस्तानी जेल गए ताकि तुर्को और अरबो के प्रति न्याय किया जाए। आज प्राच्य के कोने-कोने से हिन्दोस्तान के लिए आदर और सम्मान प्रतिध्वनित हो रहा है। कुस्तुन्तुनिया मे उसका नाम इस प्रकार लिया जाता है कि जैसे कि वह प्राच्य की स्वतत्रता का नायक है। काहिरा के बाजारो से आवाजे आ रही है कि ऐ गाधी, ईश्वर तुझे विजयी करे। यह वस्तुत स्वाधीन राष्ट्रो के जैसा सम्मान जो पराधीन हिन्दोस्तान ने प्राप्त कर लिया तो निस्सदेह यह किसी खिलाफत आन्दोलन का ही फल है।

यह इन दोनो परिणामो से भी बढकर जो बात हमारे सामने आती है यह हिन्दोस्तान की उस स्वतन्त्र निष्ठा की मानसिक यात्रा है जो इस सघर्ष द्वारा उसे प्राप्त हो गई। किसी राष्ट्र के स्वतत्र होने के लिए पहली बात यह है कि वह अपने आपको पूर्णत स्वतत्रता का आकाक्षी सिद्ध कर दे। पराधीन राष्ट्रो मे न तो कोई आकाक्षा होती है और न ही इच्छा। यदि हिन्दुस्तान की तुर्की के लिए कोई इच्छा है जिसकी प्राप्ति के हेतु वह सघर्ष कर सकता है तो फिर वह अपनी स्वतत्रता के कार्य को भी सम्पन्न कर लेगा क्योकि स्वतत्रता की प्राप्ति वस्तुत राष्ट्र की इच्छा के विकास का ही नाम है।

समसामयिक कठिनाइयां

सज्जनो,

मैने अपने अभिभाषण के प्रारभ मे ही समसामयिक कठिनाइयो की चर्चा की थी। किसी भी राष्ट्रीय सघर्ष की सफलता के लिए सुसगठित एकता आवश्यक है और अनेकता सकट है।इस समय हममे एकता का अभाव है। और इसलिए हमे सकट का सामना करना है। परन्तु मैं सबसे पहले आपका ध्यान इन कठिनाइयो के स्वरूप और उनकी मात्रा की ओर आकृष्ट करूगा। यदि आप इनका ठीक-ठीक अनुमान न कर सके और इसमे लेशमात्र भी न्यूनाधिक हुआ तो आश्चर्य नही कि हमे एक दूसरे सकट से सामना करना पडे। आज हम एक ऐसे मध्यबिन्दु पर खडे है जिसका एक छोर हताशा है और दूसरा निराशा। यदि हमने सकट को उसके वास्तविक रूप से अधिक समझा तो वह हताशा की ओर हमे ले जाएगा। और यदि हमने इसे कम करके देखा तो इसमे निराशा की ओर बढ जाने का भय है। हमें न तो असावधान रहना चाहिए और न ही भयभीत, हमे मुकाबला करना चाहिए और विजयी होना चाहिए। परन्तु यह जब ही हो सकता है कि हम कठिनाइयो का ठीक-ठीक अनुमान कर ले। इस मार्ग मे हथियार और गोला बारूद के स्थान पर तराजू और बाट की आवश्यकता है।

सगठन की एकता की नियमावली

हमे चाहिए कि इस अवसर पर दुनिया के सामाजिक जीवन के उन प्राकृतिक नियमो को याद करे जो यद्यपि हमारे मानस-पटल पर अकित हैं किन्तु जिन्हे हम बहुधा भावुकतावश मस्तिष्क के ज्ञात तथ्यो से विस्मृत कर देते है।

हम गत्यात्मकता और जीवन के इस आश्चर्यजनक जगत के एक ऐसे ही जीव है जैसे अगणित और अज्ञात जीव इस समान गत्यात्मकता के साथ उत्पन्न होते रहे और आज भी इसके अकपाय मे फैले हुए है। जो कुछ एक बार हो चुका है वही सदैव होता है और जो एक के लिए हुआ है उसी का सामना सब को करना पडता है। वह समान है, सर्वागीण है, मिलता-जुलता है और अटल है। ईरान के दार्शनिक कवि उमर खैयाम के शब्दो मे "उसके जीवन की कहानी एक ही है जो सर्वथा नये-नये नामो और नये-नये रूपो मे दोहराई जा रही है।" और फ्रास के विख्यात कवि विक्टर ह्यूगो के सक्षिप्त शब्दो मे "विश्व की घटनाओ की गाथा यद्यपि निरतर है किन्तु केवल पुनरावृत्ति है।"

समानधर्मिता का नियम जिस प्रकार व्यक्तियो के लिए है ठीक-ठीक उसी प्रकार अन्य समाजो के लिए भी है। जब कभी किसी समुदाय का स्वभाव उसी प्रकार का होगा और वैसा ही परिवेश उसे प्राप्त होगा तो आवश्यक है कि तदनुरूप नियम अपना कार्य करे। राष्ट्रो का आदि और अत, उत्थान और पतन, निश्चेष्टता और जागृति, स्वाधीनता और पराधीनता, विजय और पराजय सब पर यही नियम लागू है। और जो कुछ एक राष्ट्र पर बीता है उसी तरह हर राष्ट्र पर बीतता है और प्रत्येक राष्ट्र को सामना करना पडता है। सामाजिक जीवन की यही आश्चर्यजनक एकरूपता है जिसको १३वी शताब्दी ईसवी के एक दार्शनिक इतिहासकार अब्दुल रहमान ईबने खदुल ने, जिसने सबसे पहले इतिहास दर्शन की आवधारणाओ और सिद्धातो को निरूपित किया था, इन शब्दो मे अकित किया है—यदि हम युगो और नामो का बधन तोड दे तो एक राष्ट्र और एक युग का इतिहास ठीक-ठीक प्रत्येक राष्ट्र और प्रत्येक युग के लिए काम दे सकता है।

क्योकि नामो और रूपो के परिवर्तन के अतिरिक्त राष्ट्रो की परिस्थिति मे और कोई परिवर्तन नही होता। इसी तथ्य को वर्तमान युग के विख्यात और फ्रासीसी लेखक डा० गस्ताव ली बॉन ने अधिक सारगर्भित और शास्त्रीय ढग से कहा है—जब हम सामाजिक जीवन का मनोविज्ञान इसी प्रकार रूपायित कर लेगे जिस प्रकार हमने वैयक्तिक जीवन को कर लिया है तो फिर हमारे लिए सभव हो जाएगा कि हम एक राष्ट्र और सभ्यता का इतिहास लिखकर उसे प्रत्येक राष्ट्र और सभ्यता के लिए उपयुक्त कर सके। यह फिर सहस्त्रवर्षीय पचाग के समान हमे प्रत्येक वर्ष समान रूप से काम दे सकेगा।

एक परीक्षा का चरण

आइये, एक क्षण के लिए ठहर कर देखे कि आज जो सकट हमारे सम्मुख है सामूहिक कर्मो के मनोविज्ञान मे उनका तात्विक स्वरूप क्या है? व्यक्ति चेतना जब सामूहिक चेतना मे परिवर्तित हो जाती है तो उसमे विवेक से अधिक भावुकता का तत्त्व क्रियाशील हो जाता है। अत यह केन्द्र बिन्दु भावुकता से उत्पन्न होता है न कि विवेक से। जब ऐसी स्थिति उत्पन्न हो जाती है तो कर्मठ सघर्ष आरम्भ होता है और वह सघर्ष अपनी शक्ति के अनुसार उभरती हुई और विरोधी शक्तियो से टकराता है, फिर या तो यह सघर्ष किसी निर्धारित सीमा तक पहुचने मे सफल हो जाता है या मार्ग के प्राकृतिक नियमो के अधीन उसे रुक-रुक कर चलना पडता है। इस अवरोध की भी विभिन्न स्थितिया है और विभिन्न नियम हैं किन्तु प्रत्येक स्थिति मे आवश्यक है कि किसी न किसी सीमा तक क्रिया-प्रतिक्रिया का नियम अपना प्रभाव डाले। इस अवस्था मे अकस्मात् एक अवसादपूर्ण और दु खपूर्ण स्थिति उत्पन्न होने लगती है जिसका सर्वाधिक प्रभाव सामूहिक चेतना पर पडता है। ऐसा ज्ञात होता है कि जैसे चूल्हे मे जल रहे पृष्ठो के बडल का बधन या तो ढीला पड गया है या खुल गया है। अब मतभेद प्रारम्भ होते है, पृथकता की हवाये चलने लगती है और राष्ट्रीय सघर्ष को एक कठिन परीक्षा का सामना करना पडता है। समष्टि की समस्त स्थितियो के समान यह स्थिति भी स्वाभाविक है इसलिए ज्ञान और विवेक इसमे बहुत कम परिवर्तन ला सकते है। व्यक्ति कितना ही चतुर और दुनिया के पिछले अनुभवो का ज्ञाता हो किन्तु अपनी भावनाओ को इन स्थितियो और परिणामो से नही रोक सकते। परन्तु यदि सघर्ष का मस्तिष्क और फेफडा सुरक्षित हो तो यह मन शारीरिक लक्षण मात्र होते है, सघर्ष के जीवन के लिए इससे सकट उत्पन्न नही होता। यह बहुधा एक अस्थायी अतराल होता है परन्तु कुछ स्थितियो मे यह कठिन समस्या बन जाता है और कभी-कभी एक भयकर गतिरोध का भी रूप धारण कर लेता है परन्तु जैसे ही वह अवधि समाप्त होती है जो इस उन्मादकता के लिए आवश्यक थी। वैसे ही निराशा का यह समसामयिक पट हट जाता है और सघर्ष पुन अपनी वास्तविक गति के साथ बढने लगता है और कुछ स्थितियो मे तो वह पहले से अधिक सुदृढ होता है क्योकि यह समसामयिक अतराल केवल ऊपर का था और गहराइयो की शक्तिया निरन्तर काम कर रही थीं, अब सघर्ष के दूसरे चरण मे नवीन शक्ति के साथ पिछली शक्तियो के मिश्रण से इसकी गति मे वृद्धि होती है।

ससार के समस्त परिवर्तनो और सघटनाओ के समान समूह की कर्मठता भी या समाप्त हो जाती है या क्रियाशील रहती है, बार-बार उत्पन्न नही होती। इसमे उतार-चढाव अवश्य होता

रहता है, हम भ्रमवश उतार को अत और चढाव को जन्म समझने लगते है। किसी राष्ट्रीय सघर्ष के अतराल को उसका अत समझ लेना ऐसा होगा जैसे समुद्र का उतार देखकर समझ लें कि वह फिर कल नही चढेगा।

हमारा राष्ट्रीय आन्दोलन ऐसे स्थगन या व्यवधान पर पहुच गया था। पर यह सघर्ष पूरे उत्साह के साथ अकेला टकरा रहा था। आदोलन अपने पूरे उत्साह के साथ अत्यन्त तीव्र गति से दौडा जा रहा था कि अकस्मात् बारदौली के निर्णय ने सकेत दिया कि यह थम जाय। वह अकस्मात् थम गया परन्तु स्वभावत उसे धक्का लगा और उससे वह समस्त परिणाम उत्पन्न हुए जो ऐसे अतराल मे स्वभावत उत्पन्न होते है। इसी का परिणाम है कि हमारा सगठन हिल गया है। ऐसा प्रनीत होता है जैसे एक बधी और लिपटी हुई वस्तु शीघ्रता से खुलती और बिखरती जा रही हो। आदोलन का गतिरोध, काग्रेस का मतभेद, हिन्दू-मुस्लिम एकता मे विघ्न, एकता की चेष्टाओ की विफलताए, यह सब इसी स्थिति का फल है।

सज्जनो, निश्चय ही एक परीक्षा है जिसमे हमे उत्साहपूर्ण सकल्पो सहित उत्तीर्ण होना पडेगा और आश्चर्य नही कि इसके लिए अत्यधिक सघर्ष करना पडे। फिर भी आशा करूगा कि आपके मन-मस्तिष्क को इससे अधिक कोई और बात प्रभावित नही करेगी। एक ऐसे व्यक्ति के लिए जो राष्ट्रो की मानसिकता और इतिहास का ज्ञाता हो, यह स्थिति नितात एक ऐसी साधारण बात है जैसे एक आदमी का दौडते-दौडते रुक जाय ताकि दम लेकर फिर दौडे।

हमे इसकी कदापि चिता नही करनी चाहिए कि हमारे विरोधी और कटुआलोचक इस स्थिति से भ्रम मे रहना चाहते है क्योकि हम जानते हैं कि वह एक ऐसी मन स्थिति मे है जिसमे शक्ति को केवल उसी समय स्वीकृति प्रदान की जाती है जब वह सामने आ जाए। परन्तु स्वय हमे नही चाहिए कि अपनी वास्तविक स्थिति के प्रति किसी प्रकार शकाग्रस्त रहे। क्या है, जो हमने खो दिया है? हमारे सघर्ष की समस्त बौद्धिकता पूर्णत शक्तिशाली है। उसकी जडे अभी तक हिली नही है। हम उसकी गत्यात्मकता क्षीण नही पाते? क्या हमे स्वय अपनी अनुभूतियो मे सदेह हो सकता है? क्या हम महसूस नहीं कर रहे है कि वह एक भावना के समान हमारे मन मे है, एक लक्ष्य की तरह हमारी दृष्टि मे है और वह आत्मा के समान हमारे शरीर की प्रत्येक धमनी मे प्रवाहित है।

सज्जनो,

मुझे अनुमति दीजिए कि मैं आज सबकी ओर से एक ऐसी घोषणा करूँ जो वस्तुत आप के विश्वास और आपकी ही अनुभूति का द्योतक है। मै पूर्ण विश्वास से घोषणा करता हूँ कि हमारा सघर्ष गतिमान है और बराबर चल रहा है तथा हम एक ऐसे गतिरोध की स्थिति मे हैं जिसमे निर्णयात्मक सग्राम ने जो बाधा उत्पन्न कर दी है किन्तु सग्राम रुका नहीं। हमारे लिए सावधानी, सक्रियता और प्रचलन की समस्याए उत्पन्न हो गई। परन्तु हम इस बात को पूर्णत अस्वीकार करते है कि गतिरोध या निराशा का कोई विकल्प हमारे सम्मुख है। मैने आपका ध्यान जब इस ओर आकर्षित किया कि निराशा का कोई कारण नही तो मुझे यह भी निवेदन करने दीजिए कि निश्चेष्टता का भी कोई कारण नही है। हमे अपने दैनिक जीवन की इस वास्तविकता को विस्मृत नहीं करना चाहिए कि रोग कितना ही महत्त्वहीन क्यो न हो किन्तु असावधानी और स्वास्थ्य मे नियमो की उपेक्षा उसे तुरन्त घातक बना सकती है। आज जो परीक्षा हमारे सम्मुख है

वह वस्तुत एक अस्थायी अतराल है। हम उसको अधिक बढने न दे। हम ऐसा क्यो कर सकते है ? समय की कठिनाइयो का उपचार क्या है ? इस सब का उत्तर हमे ज्ञात है किन्तु उस पर चलना दु खकर हो रहा है। हमे केवल एकता की आवश्यकता है और इसी की खोज मे हम आज यहा एकत्रित हुए है। आज का यह स्मरणीय दिवस इसलिए आया है कि हमे इस परीक्षा मे सफलतापूर्वक निकल जाने के लिए अत्यत बहुमूल्य अवकाश प्राप्त करा दे। हमने आज समस्त दुनिया की दृष्टियो को आमत्रित किया है कि वह हमारी परीक्षा के परिणाम का दृश्य देखे। क्या हम इस दिवस की स्मृतियो का उचित उपयोग करेगे ? इसका उत्तर हमे कुछ घटो मे ही देना है।

अहिंसात्मक असहयोग

मेरे लिए यह अनिवार्य है कि मै अपना निवेदन किसी मूल बिन्दु से आरम्भ करू। हमने लक्ष्य प्राप्ति के हेतु अहिसा और असहयोग के सिद्धातो को ग्रहण किया है। असहयोग का आधार वस्तुत दुनिया की वह सहज किन्तु विश्वव्यापी अवधारणा है कि हमे बुराई का साथ नही देना चाहिए और उसे अकेला छोड देना चाहिए ताकि वह फूल-फल न सके। ससार के समस्त नीति-शास्त्र समान रूप से इस सच्चाई को स्वीकार करते हैं। यदि इस सैद्धातिक परिभाषा मे बुराई शब्द को हानि मे परिवर्तित कर दिया जाए (और मेरे विचार मे दोनो को समानार्थक ही होना चाहिए) तो फिर यह मानव जाति की न केवल विश्वव्यापी अवधारणा रह जाती है बल्कि पाशविक मनोवृत्ति की एक स्वाभाविक दृष्टि बन जाती है और यहा भी धर्मों के स्वर हमारे कानो मे गुजार करते है। इस्लाम ने अपने अनुयायियो को 'असहयोग' का आदेश दिया है जिससे अभिप्राय यही है कि **जिन लोगों के कार्यों में तुम्हारा राष्ट्रीय अहित है तुम किसी प्रकार उनकी सहायक और बलशाली होने का साधन न बनो।** दूसरे धर्मो मे भी ऐसी ही उक्तिया विद्यमान हैं।

राष्ट्रो के राजनैतिक सघर्ष मे देखा जाए तो भी यह न केवल एक सर्वमान्य विश्वास है बल्कि सर्वमान्य क्रियाशीलता है। यह बात अत्यन्त स्पष्ट है कि दुनिया मे कोई राष्ट्र और समूह अपनी स्वतत्रता के अधिकार को सहयोग द्वारा प्राप्त नही कर सका है। प्रत्येक राष्ट्र ने अपने अधिकार सघर्ष करके प्राप्त किए हैं और सघर्ष लडना है तथा द्वन्द्वात्मकता है, सहयोग नही है।

कमजोर राष्ट्रो के लिए सविनय अवज्ञा सर्वाधिक तेज अस्त्र है। जब कभी निर्बल राष्ट्र सशस्त्र सघर्ष करने मे विफल हुए है तो उन्होने इसी पद्धति को अपने उद्देश्यो की रक्षा का एकमात्र उपाय पाया है। धर्म, नीति और राष्ट्रीयता का यह सर्वमान्य तत्त्व दुनिया की बहुत पुरानी वस्तु है। कष्ट सहन कर लो किन्तु सत्य से मुह न मोडो। कहा जा सकता है कि प्रत्येक धर्म और उपदेश की प्रारम्भिक दुर्बलता और विवशता मे केवल यही सिद्धात दृढता और धैर्य का साधन बना है।

हमे इसकी प्रतिछाया सुकरात के विष के प्याले मे दिखाई पडती है। यरोशलम के जारू पर हम इसे अकित पाते हैं और मक्के की गलियो मे भी इसका गुजार सुनाई दे चुका है। ईसाई धर्म की प्रारम्भिक दो शताब्दियॉ पूर्णत किसी का वृत्तात सुनाती हैं। रोम के सम्राट सेवरुस के शासनकाल मे जब ईसाई धर्म की मूल आधार-शिलाए बर्बरता और अत्याचार के तूफान से हिल रही थीं तो यही सिद्धात था जिसकी अमोघ शक्ति उसे थामे रही। उसी काल के शहीद तस्कूरिढ का एक लिखित वक्तव्य आज तक सुरक्षित है जो रोम के न्यायालय के सम्मुख प्रस्तुत किया गया था। उसके ये शब्द अमरीकी लेखक ड्रैपर की पुस्तक 'कानफलिक्ट बिटविन रिलीज एण्ड साइस' मे आप पढ सकते है।

'यद्यपि हमारे समुदाय को गठित हुए अधिक समय नही बीता किन्तु वह कौन सा स्थान है जहा हम विद्यमान नही हैं। नगर, द्वीप, प्रात, गढ, सैनिक, छावनी, राजदरबार, सीनेट कक्ष मे उस स्थान मे जो तुम्हारी सत्ता के प्रतीक है हम लोग बराबर पाये जाते है, तुम्हारे पूजा स्थानो के अतिरिक्त हमने तुम्हारे अधिकार मे कोई स्थान नही छोडा। सोचो यदि हम चाहे तो युद्ध का तूफान आ सकता है। परन्तु हमारा धर्म हमे सिखाता है कि बाधने से मारा जाना श्रेष्ठ है। इसलिए हम कष्ट सहते हैं किन्तु प्रतिकार नही करते।"

क्या इससे भी अधिक पूर्ण और प्रभावशाली अभिव्यक्ति अहिंसात्मक असहयोग की है ? हम चाहे तो १७०० वर्ष के इन पुराने शब्दो को ज्यो का त्यो आज भी प्रयुक्त कर सकते हैं।

काउंट लियो टालस्टाय

निश्चय ही यह बात कि राजनैतिक अधिकारो की प्राप्ति और अन्यायपूर्ण राज्य की व्यवस्था को पराजित करने के लिए इसे एक नियम के रूप मे ग्रहण किया जाए और सशस्त्र क्राति के स्थान पर केवल इसी पर सतोष कर लिया जाए तो यह एक ऐसा विचार है कि स्वभावत वर्तमान युग मे सर्वप्रथम रूस के सच्चे ईसाई शिक्षक काउट टालस्टाय ने अपने विश्वविख्यात उपदेशो मे अभिव्यक्त किया है और इस महामना का मस्तिष्क वस्तुत पाश्चात्य सभ्यता की आत्माविहीन भौतिकता, सामाजिक व्यवस्था की असहनीय असमानता, पूजीवाद का निरकुश दुराचार और रूस को चर्च के धार्मिक अत्याचार और गतिरोध के विरुद्ध एक जोरदार विरोध किया। टालस्टाय की क्रातिकारी अवधारणाओ के सबध मे अमरीका के भूतपूर्व राष्ट्रपति रूजवेल्ट ने टिप्पणी की थी (यह बात उसने एक बार 'अमरीकन आउटलुक' मे लिखी थी) कि "वह (टालस्टाय के विचार) निस्सदेह व्यवहार और सन्तुलन की सीमा पार कर गये हैं। फिर भी टालस्टाय के समस्त उपदेशो मे यह उपदेश एक ऐसा सन्तुलित उपदेश है जिसकी सरल व्यावहारिकता अत्यत स्पष्ट है और यह नि सदेह दुनिया को उसकी अत्यत महत्त्वपूर्ण खोज के लिए अत्यधिक स्पष्ट और सहज पता बतला देती है। टालस्टाय के उपदेशो की वास्तविक आत्मा यह थी कि मानवीय हत्या और युद्ध का अत होना चाहिए। जो शक्तिया न्याय और मानवीय अधिकारो के मार्ग मे बाधक हैं उनसे न तो शस्त्रो से जूझना चाहिए और न ही इसकी आवश्यकता है। उन्हे बल प्राप्त है उनके कारखानो से। और यदि लोग अपने सहयोग और सहायता द्वारा उनके फूलने-फलने का कारण न बने, तो वे एक क्षण के लिए भी टिक नही सकते।

महात्मा गांधी

दुनिया को सदैव उपदेश से अधिक व्यावहारिक नेतृत्व की आवश्यकता होती है। वास्तविकता और सच्चाई की कोई बात भी उसके लिए नई नही है परन्तु जो बात उसे नवीन महत्ता और सफलता प्रदान करती है वह सत्यनिष्ठा और व्यवहार है। यह बात कि स्वाधीनता के लिए लडना हमारा कर्तव्य है प्रत्येक व्यक्ति को ज्ञात है। परन्तु यह बात कि स्वाधीनता के लिए लडना चाहिए वाशिंगटन के जैसे कुछ व्यक्तियो ही को मालूम था।

यद्यपि टालस्टाय ने दुनिया का आह्वान इस सिद्धात की ओर किया था किन्तु ससार के कदम एक दूसरे ही व्यक्तित्व की प्रतीक्षा मे रुके हुए थे। एक ऐसा महान व्यक्तित्व जिसको

विधाता ने विशेष रूप से इसी कार्य के लिए चुन लिया हो जो महात्मा गाधी के रूप मे उपस्थित है। टालस्टाय से पूर्व भी दुनिया को असहयोग की सच्चाई ज्ञात थी किन्तु महात्मा गाधी से पूर्व उसकी व्यावहारिक शक्ति के रहस्य से वह अनभिज्ञ थी।

असहयोग का कार्यक्रम

असहयोग की जिस पद्धति को हिन्दोस्तान मे महात्मा गाधी के नेतृत्व मे स्वीकार किया गया है वह सिद्धातत यद्यपि वही है जिसकी चर्चा ऊपर की गई है किन्तु बहुत सी बातो मे यह उनसे भिन्न भी हो गयी है। पहले वह एक नैतिक प्रवचन था, अब वह एक राजनैतिक कार्यक्रम है। टालस्टाय के विचारों मे अवधारणाओ और सिद्धातो की ऐमी शक्ति थी जो एक ओर लोगो के तात्कालिक अधविश्वासो और कार्यप्रणाली की व्यवस्था से टकराती थी तो दूसरी ओर उनकी व्यावहारिक कठिनाइयो को दूर करना उसके लिए अत्यन्त दुष्कर था। किन्तु टालस्टाय के विचारो के वर्तमान रूप ने पूरे ससार को अपनी परिधि मे ले लिया। अब उसमे कोई बात ऐसी नही है जो किसी समुदाय के धार्मिक या राजनैतिक विश्वासो को परिवर्तित करना चाहती हो या इसमे ऐसी कठिनाई हो जिसे एक सीमित समय मे दूर नही किया जा सकता। अहिंसा असहयोग की मूल आत्मा है इस शर्त के साथ कि यदि अहिंसा को एक विश्वास के रूप मे स्वीकार न किया जा सकता हो तो उसे एक सुदृढ नीति के रूप मे ग्रहण कर लिया जाए। उन समस्त सबधो का विच्छेद हो जो हिन्दोस्तान की नौकरशाही को जमाये रखने के कारण है, नि सदेह यह असहयोग कार्यक्रम का मुख्य सिद्धात है। परन्तु इस सिद्धात के कार्यान्वित करने की परिधि को भी इस कार्यक्रम ने अत्यधिक सीमित कर दिया है। और इसे केवल इस प्रकार व्यवहार मे लाना चाहता है कि इसकी कठिनाइया कम से कम रह जाए। त्याग, इन्द्रिय निग्रह और अध्यात्म की उच्चता इसके युद्ध के मूल हथियार हैं, फिर भी वह इस सबध मे पूर्ण साहिष्णुता का प्रदर्शन करता है और चुनिदा लोगो से देश के लिए आदर्श प्रस्तुत करने के अतिरिक्त और किसी से ऐसी माग नही करता जिसकी पूर्ति देश की साधारण क्षमता के लिए अत्यन्त कठिन है। अपने वर्तमान रूप मे पूर्ण विश्वास के साथ कहा जा सकता है कि यह कार्यक्रम अधिकार-प्राप्ति के इच्छुक उन समस्त दलो के लिए एक ऐसा सविधान बन गया है जो अधिक से अधिक स्पष्ट तथा सरल है। इसलिए व्यावहारिक हो सकता है तथा दुनिया की निहत्थी शक्तियो को विजय का विश्वास दिला सकता है। इस कार्यक्रम मे न केवल सिद्धातगत सच्चाई को ध्यान मे रखा गया है बल्कि व्यवहार की भी समस्त कठिनाइयो पर दृष्टि रखी गई है।

कार्यक्रम की रूपरेखा

इस कार्यक्रम का मूल आधार यह है कि हम हिन्दोस्तान की वर्तमान सशक्त नौकरशाही से लडने के लिए बिना हथियार और अहिसात्मक सघर्ष के द्वारा ऐसी विजय प्राप्त कर सकते हैं कि वह सत्ताधारी हिन्दोस्तानी राष्ट्र की इच्छा के आगे हथियार डालने पर विवश हो जाए। प्रत्येक देश के समान हिन्दोस्तान को भी आज इस प्रश्न का उत्तर देना है। वह केवल यह है कि क्या राष्ट्र की इच्छा की प्रतिनिधि इस देश के निवासियो की स्वतत्र सरकार होगी या कोई ऐसी सरकार होगी जो सैन्य-बल द्वारा बनवाई गई हो।

यह बेहथियार सघर्ष किस प्रकार चलाया जाए? इस प्रश्न का उत्तर नि सदेह हमे एक

बात की ओर ले जाता है जो केवल आवश्यकता और तात्कालिक समस्या ही नही है बल्कि एक दृढ अवधारणा भी है। यह विचार कहता है कि हमे वर्तमान राज्यव्यवस्था के सहयोग से अलग हो जाना चाहिए क्योकि हमे ऐसी सत्ता का साथ नही देना चाहिए और इसलिए कि हम इससे अलग होकर उसे इस प्रकार गिरा सकते है कि वह हमसे लडने के अयोग्य हो जाए। इसकी यह माग कर्तव्य और आवश्यकता दोनो पर आश्रित है। वह धर्म, नैतिकता, अनुभव और इतिहास सबकी सर्वमान्य सच्चाई है। हमे उस अन्याय का उपादान नही बनना चाहिए जो हमारे साथ किया जा रहा है। इसमे कोई शका नही कि एक दिन के सूर्योदय और सूर्यास्त के भीतर हिन्दोस्तान का इतिहास पलटा जा सकता है यदि हम इस सत्ता से असहयोग करने पर सहमत हो गए हो। इस सहजता की समस्त कठिनाइया इसी प्रश्न मे निहित है। इस सग्राम मे जो युद्ध होते हुए भी युद्ध नही है पर समर जैसी कोई तैयारी है।

असहयोग आदोलन के कार्यक्रम ने अपने कार्य को दो स्वाभाविक भागो मे विभाजित कर दिया है। एक है युद्ध के लिए सामग्री उपलब्ध करना और दूसरा है स्वत युद्ध कार्य। युद्ध-सामग्री का अर्थ असहयोग की अन्तरात्मा द्वारा प्रेरित व्यक्ति और युद्ध का अर्थ हमारे सहनशील शक्ति और उसके नौकरशाही शासन के बीच मुकाबला यह शक्ति-परीक्षण जल्दी ही आगे आएगा या बाद मे।

असहयोग की मानसिकता

यह बात भी अपने आप यहा स्पष्ट हो गई कि असहयोग आदोलन की मानसिकता के सबध मे जो भ्रम फैलाए गए है वह कितने अविश्वसनीय है। कहा गया है कि वह पाश्चात्य सस्कृति और ज्ञान-विज्ञान के विरुद्ध एक चुनौती है। वह राजनैतिक सघर्ष के स्थान पर एक नवीन धर्म और नैतिकता का प्रवचन है और वह सन्यास की शिक्षा देकर सासारिक सघर्षो से विमुक्त करना चाहता है। परन्तु मैं पूर्ण विश्वास से कहता हूँ कि यह हमारे विचारो की ऐसी व्याख्या है जिसे हम स्वीकार नही करते।

वस्तुत किसी शिक्षा और समाज के प्रयत्न से असहयोग का प्रत्यक्षत सबध नही है। हिन्दोस्तान मे निस्सदेह पाश्चात्य सस्कृति और सभ्यता के गुणो और अवगुणो के सबध मे विभिन्न मत पाये जाते है। स्वय योरप और अमरीका की मानसिक शाति उद्वेलित होती है तो नये-नये सिद्धातो और विचारो की बात आती है। यह भी सत्य है कि टालस्टाय के समान स्वय महात्मा गाधी का भी इस सबध मे विशिष्ट दृष्टिकोण है किन्तु असहयोग आदोलन अपने लक्ष्य के अतिरिक्त अन्य कोई मत नही रखता। वह अपने समर्थको को न कोई धार्मिक अवधारणा प्रदान करता है और न ही सन्यास और तपस्या और न एक नवीन आश्रम निर्मित करना चाहता है। वह हर प्रकार से एक राजनैतिक आचार-सहिता है जिसका आधार वस्तुनिष्ठता और सच्चाई है। अत धर्म, नैतिकता, इतिहास सबकी आखे समान रूप से उसे पहचानती है। अपनी-अपनी भाषा मे उसका अभिधान करती है। असहयोग आदोलन कहता है कि सरकारी शिक्षा सस्थाये और वकालत को छोड दो, तो वह इसलिए नही कहता कि यूरोपीय ज्ञान-विज्ञान और विधि-विधान के प्रयोग का विरोधी है ,वह केवल यह बात इसलिए कहता है कि वह उस सत्ता का

विरोधी है जिसके अतर्गत वहा रहना और उसकी सहायता का उपादान बनना पडता है। यदि वह कहता है कि खद्दर पहन लो तो यह इसलिए नही है कि वह मूल्यवान वस्त्रो या किसी विशेष प्रकार की वेशभूषा का विरोधी है बल्कि इसलिए कहता है कि वह देशीय वेशभूषा को विदेशी वेशभूषा से श्रेष्ठ समझता है और इसलिए कहता है कि देश को अपनी स्वतत्रता और मुक्ति के लिए जीवन आचरण की सादगी और इन्द्रिय निग्रह की नैतिक आत्मा की आवश्यकता है।

प्रयोग की सफलता

मैं बिना किसी सकोच के यह कहने का साहस करता हूँ कि मेरे विचार मे यह कार्यक्रम न केवल सफल हुआ है बल्कि उसने अधिक से अधिक वह सफलता प्राप्त की है जिसकी आशा इस प्रकार के किसी कार्यक्रम से की जा सकती है। यदि अब से तीन वर्ष पूर्व यह सिद्धातमात्र था जिसकी सफलता तर्क-वितर्क द्वारा ही व्याख्यायित की जा सकती थी तो अब वह प्रयोग मे आया हुआ विश्वास है जिसकी सफलता परिलक्षित हो रही है।

राष्ट्रीय क्रातिया पहले ऊपरी तल पर नहीं होती बल्कि मन और मस्तिष्क की गहराइयो मे उत्पन्न होती है। इस आदोलन ने बारह महीने मे हिन्दोस्तान की मन स्थिति को परिवर्तित कर दिया है।

अनुशासन

अधानुसरण जिम प्रकार प्रगति और सफलता के मार्ग मे अवरोधक है उसी प्रकार आज्ञा-पालन प्रत्येक सामूहिक कर्म के लिए परम आवश्यक है। सभव है कि सेनानायक ने आदेश देने मे भूल की हो, सेनानी उसके विपरीत मत रख सकता है, मगर उसके विरुद्ध कदम नही उठा सकता। यदि हमारे सेनानायक का आदेश अनुचित ही क्यो न हो तो भी हमे चाहिए कि, उस अग्रेज रेजिमेट के समान जिसके विनाश का शोक गीत टैनिसन ने लिखा है, हम कट जाए किन्तु आज्ञा-पालन के पथ से विचलित न हो। एक अनुचित आदेश को झेल लेना इस बात से श्रेष्ठ है कि सपूर्ण सेना का अनुशासन ही विनष्ट हो जाए।

आज इडियन नेशनल काग्रेस हमारा एक मात्र सत्ताधारी दल है। इस युद्ध जैसी स्थिति मे हमे चाहिए कि चाहे काग्रेस का निर्णय हो या हमारे बडे से बडे नेता का मत हो, हमे क्षणिक मात्र के लिए भी उसका अधानुसरण नहीं करना चाहिए किन्तु साथ ही हमे अवज्ञाकारी भी नही होना चाहिए। जो दल परिवर्तन का विरोधी है वह इस ओर से सावधान नही है कि कहीं अनुसरण मात्र से गतिरोध की ओर कदम न बढ जाये और जो दल परिवर्तन का आग्रह करता है वह इस बात पर ध्यान नहीं देता कि एक साधारण से मतभेद के कारण हमे अपने सगठनगत अनुशासन से हटना चाहिए।

काउंसिलें (परिषदें)

परिस्थितियो के समस्त पक्षो पर विचार करने के पश्चात् मैं जिस निष्कर्ष पर पहुचा हूँ वह यह है कि वर्तमान स्थिति मे हमारे लिए बाहर रहकर काउसिलो का बहिष्कार करना कुछ उचित

नही हो सकता। जिस प्रकार पिछले चुनावो के अवसर पर हमारे लिए बायकाट आवश्यक था उसी प्रकार आज हमारे लिए यह सभव है कि जहा तक सभव हो, हम अधिक मात्रा मे निर्वाचन मे सफलता प्राप्त करे और काउसिलो और विधानसभा मे जाए और ऐसी कार्यनीति अपनाए कि यह स्थान भी हमारे सघर्ष का क्षेत्र बन जाए। मेरी तुच्छ राय मे हमारी भावी कार्यनीति यह होनी चाहिए कि एक ओर हमारा एक दल काउसिलो मे चला जाए और दूसरी ओर काउसिलो से बाहर भी हमारी गतिविधि जारी रहे।

हिन्दू-मुस्लिम एकता

मैंने आपका इतना समय बाह्य ढाचे की चर्चा मे ले लिया किन्तु अभी यह बात शेष है कि हमारे सघर्ष के मूल आधार की क्या स्थिति है। मेरा सकेत हिन्दू-मुस्लिम एकता की ओर है। यह हमारे भवन की वह प्रथम आधार-शिला है जिसके बिना न केवल हिन्दुस्तान की स्वतत्रता बल्कि हिन्दुस्तान की वह समस्त बाते जो किसी देश के जीवित रहने और उन्नति करने के लिए हो सकती है, नितात निराधार कल्पना है। केवल यही नही कि इसके बिना हमे राष्ट्रीय स्वतत्रता नही मिल सकती बल्कि इसके बिना हम मानव-प्रेम के मूल सिद्धात भी अपने अदर नही उत्पन्न कर सकते। आज यदि एक देवदूत आकाशाच्छादित बदलियो से उतर आये और कुतुबमीनार पर खडा होकर यह घोषणा कर दे कि स्वराज्य चौबीस घटे मे मिल सकता है, यदि हिन्दोस्तान हिन्दू-मुस्लिम एकता का आग्रह त्याग दे तो मै स्वराज्य को छोड दूगा किन्तु इस एकता को नही छोडूगा। स्वराज्य के मिलने मे विलम्ब हुआ तो यह हिन्दुस्तान की हानि होगी किन्तु यदि हमारी एकता जाती रही तो यह मानव जाति की हानि होगी।

देश की वर्तमान स्थिति

कौन है जिसके मन मे हिन्दोस्तान के प्रति लेशमात्र भी अनुराग हो और वो इस स्थिति को शात भाव से देख सके और इसे सहन कर सके। चार वर्ष हुए कि हमने राष्ट्रीय सम्मान और गौरव की एक अत्यन्त महान घोषणा की थी और दुनिया से कहा था कि वह हमारी स्वतत्रता की प्रतीक्षा करे। परन्तु ठीक उस समय जब दुनिया का ध्यान हमारे ऊपर केन्द्रित हो गया तो हम तत्पर हो गए है कि अपनी दासतापरक निर्लज्जता और अपने उन्मादपूर्ण रक्तपात की कथा उसके सम्मुख प्रस्तुत करे। वर्तमान स्थिति यह है कि स्वराज्य और खिलाफत के स्थान पर शुद्धि का नारा लगाया जा रहा है। एक ओर से कहा जा रहा है कि हिन्दुओ को मुसलमानो से बचाओ तो दूसरी ओर से कहा जा रहा है कि इस्लाम को हिन्दूवाद से बचाओ। जब हिन्दुओ को बचाओ और मुसलमानो को बचाओ की पुकार हो रही है तब राष्ट्र बचाने की चिन्ता कौन करे। प्रेस और मच धर्मान्धता और रूढिवाद को फैलाने में व्यस्त हैं और भोलीभाली तथा अनभिज्ञ जनता सडकों पर खून बहाने में व्यस्त है। अजमेर, मेरठ, सहारनपुर, आगरा और पलवल सभी जगह खूनी दगे हो चुके है और कौन कह सकता है कि आगे चलकर इसके कितने दु खद परिणाम होगे ?

सांप्रदायिक संगठन

अभी अधिक समय नही बीता जब मुसलमान एक समुदाय के रूप मे काग्रेस की राजनैतिक गतिविधियो मे भाग नहीं लेते थे। मुसलमानो की साधारणत भावना यह थी कि हिन्दोस्तान मे उनकी सख्या हिन्दुओ से बहुत कम है शिक्षा और सम्पत्ति मे उनसे पीछे है , इसलिए यदि वह किसी सयुक्त सघर्ष मे सम्मिलित होगे तो उसके अस्तित्व का हनन होगा। इसी अवधारणा का परिणाम था कि दीर्घ काल तक वह राष्ट्रीय आदोलन से पृथक् रहे और अपना पृथक् सामुदायिक सगठन बनाने मे प्रयत्नशील रहे।

परन्तु सभवत आप मे से वे समस्त महानुभाव जो गत बारह वर्षो के अदर मुसलमानो के सामाजिक परिवर्तनो का अध्ययन करते रहे होगे इस बात से परिचित होगे कि १९१२ ई० मे सर्वप्रथम इस मनोवृत्ति के विरुद्ध मैने आवाज उठाई थी। मैने अपने सहधर्मियो का ध्यान इस ओर आकृष्ट किया कि वह पृथकतावादी नीति पर चलकर स्वय को देश की स्वतत्रता के विरुद्ध उपयोग कर रहे है। उन्हे चाहिए कि अपने हिन्दू भाइयो पर विश्वास करे, काग्रेस मे सम्मिलित हो देश की स्वतत्रता को अपना लक्ष्य बनाए और साप्रदायिक सगठनो से परे हो जाए। उस समय मेरी यह पुकार मेरे समस्त सहधर्मियो को अनुचित लगी। पूरी शक्ति के साथ मेरा विरोध किया गया। परन्तु अनतोगत्वा वह समय अत्यन्त शीघ्र आ गया जब मुसलमानो ने इस वास्तविकता की सच्चाई को स्वीकार किया। मैं जब १९१६ ई० मे राची मे नजरबद था तो सुन रहा था कि मुसलमानो के दल के दल काग्रेस मे सम्मिलित हो रहे है।

जिस प्रकार मैंने १९१२ मे अपने समस्त सहधर्मियो की नीति के विरुद्ध आवाज उठाई थी और उनके विरोध का भय उन्हे सत्याभिव्यक्ति से न रोक सका था, ठीक उसी प्रकार आज भी मै अपना कर्तव्य समझता हूँ कि उन सारे भाइयो के विरुद्ध अपनी आवाज उठाऊ जो हिन्दू सगठन के आदोलन के सचालक है। मैं यह देखकर आश्चर्यचकित हो रहा हूँ कि जो मानसिक स्थिति उस समय मुसलमानो के राजनैतिक घटको की थी ठीक-ठीक वही मन स्थिति आज इन महानुभावो की हो रही है। वही तर्क आज भी हमे सुनाए जा रहे हैं। वही कार्य-कारण आज भी उनकी जिह्वा पर है। मुसलमानो का यह विचार इस नीति के साथ सबद्ध था कि उनकी जनसख्या कम है और यह आदोलन उन लोगों को भडकाना चाहता है जिनकी सख्या मुसलमानो से तीन गुना अधिक है। मै निसकोच स्पष्टत कहना चाहता हूँ कि आज हमे हिन्दोस्तान मे न किसी हिन्दू सगठन की आवश्यकता है न मुस्लिम सगठन की, हमे केवल एक सगठन की जरूरत है और वह है 'इडियन नेशनल काग्रेस'।

इन आदोलनो के कतिपय विश्वसनीय महानुभाव यह भी कहते है कि उनके आदोलन हिन्दू-मुस्लिम एकता के विरोधी नही है। इसीलिए वह सदैव लड मरने का प्रवचन देकर अत मे एकता और प्रेम का भी सदेश सुना देते है। इन महानुभावो से मैं कहूगा कि आपने हमे गलत मार्ग की ओर बुलाया है किन्तु अब मनुष्य की स्वाभाविक मनोवृत्ति को नकारने का निमत्रण न दीजिए। ईसा ने दुनिया से कहा कि शत्रुओ को क्षमा प्रदान करो किन्तु दुनिया आज तक मित्रो को भी क्षमा न कर सकी। क्या आप चाहते है कि एक ओर प्रतिशोध और जूझने की भावना भडका कर दूसरी ओर एकता और प्रेम की स्थिति भी उत्पन्न की जा सकती है?

इसी प्रकार मै शुद्धि आदोलन के सबध मे यही निवेदन करूगा कि हम कागज पर राजनैतिक सयुक्त सघर्ष और धार्मिक साप्रदायिक द्वन्द्व को दो विभिन्न स्थानो मे रख सकते है, किन्तु व्यवहार मे कोई ऐसा भेद स्थिर नही रह सकता। हमे सयुक्त राष्ट्रीयता की

आवश्यकता है और हम जानते है कि यदि हिन्दोस्तान मे एक ओर मलेच्छ और दूसरी ओर से काफिर की आवाज़े उठती रहेगी तो असभव है कि वह सहिष्णुता उत्पन्न हो सके जिसके बिना एकता स्थापित ही नही रह सकती।

इतिश्री

अन्य राष्ट्रो के ऐतिहासिक महत्त्व के दिनो के समान आज के इस उल्लेखनीय दिन के परिणाम भी अत्यन्त विरोधी रूपो मे निकल सकते हैं। हम या तो बहुत बडी सफलता प्राप्त कर सकते हैं या बहुत बडी विफलता भी हमारा भाग्य बन सकती है। हमारे सकल्प, हमारे साहस और हमारी देश-भक्ति के लिए आज यह बहुत बडी परीक्षा का दिन है। आइये ' इस पर विजय प्राप्त करे और अपने भाग्य के निर्माण मे सलग्न हो जाए।

महात्मा गांधी की ७८वीं वर्षगांठ

आकाशवाणी, देहली

"पजाब मे सहस्रो वर्षो से पॉच नदिया बह रही थी। अब गर्ग-गर्म रक्त की छठी नदी भी बहने लगी है। पानी की नदियो पर हमने ईट, पत्थर और लोहे के पुल बनाये थे। इस छठी नदी पर मनुष्य के शवो से पुल बनाया जा रहा है।"

महात्मा गांधी का जन्मदिन *

आज का दिन महात्मा गाधी की ७८वी वर्षगाठ का दिन है। आज उनकी आयु ७८ वर्ष की हो गई। इस ७८ वर्ष मे से उनके जीवन के पूरे ५० वर्ष शाति, मानव और मानवीय अधिकारो की सेवा और प्रचार मे व्यतीत हुए। वस्तुत यह गाधी जी की वर्षगाठ नही है, शाति और मानवता के लक्ष्यो की वर्षगाठ है। परन्तु आज जब हम मानवता के लिए शाति की यह वर्षगाठ मना रहे है तो हमारे चारो ओर क्या हो रहा है। स्वय शाति और मानवता की क्या दुर्गति हो रही है। जिस हिन्दुस्तान ने ससार को शाति और मानवतावाद का यह महानतम पुरुष दिया है, स्वय उसी हिन्दुस्तान मे किस प्रकार शाति को धूल-धूसरित किया जा रहा है। पजाब मे पानी की पाच नदिया हजारो वर्षो से बह रही थी, अब एक छठी नदी मनुष्य के गर्म-गर्म रक्त की बहने लगी है। पानी की नदियो पर हमने ईट-पत्थर और लोहे के पुल बनाये थे। इस छठी नदी का पुल अब मनुष्यो के शव से चुना जा रहा है। आज से ६०० वर्ष पूर्व जब तातारियो ने मुल्तान पर आक्रमण किया था तो अमीर खुसरो ने कहा था कि "पजाब अर्थात् मुल्तान मे पानी की पाच नदियो के साथ-साथ रक्त की भी पाच नदिया बहने लगी है।" उस समय सभवत यह उक्ति अतिशयोक्तिपूर्ण थी किन्तु आज यह एक वास्तविकता है। आज पूर्वी पजाब मे किसी मुसलमान के लिए शाति नही रही, इसी तरह पश्चिमी पजाब मे किसी हिन्दू और सिक्ख के लिए शाति दुर्लभ है। इसी दिल्ली मे जिसके एक भवन के अन्दर बैठा हुआ मै आपके कानो तक अपनी यह आवाज पहुचा रहा हू, दो सप्ताह तक जो कुछ होता रहा है उसकी स्मृति प्रत्येक लज्जाशील भारतवासी के हृदय को घावो से भर देती है। प्रश्न यह है कि हम अकस्मात क्या से क्या हो गये और अब हम जा किस ओर रहे है। अभी कल की बात है कि हम अपने देश की स्वतन्त्रता के लिए रो रहे थे और फिर समस्त ससार मे हिन्दुस्तान की राष्ट्रीय जागृति की धूम मच गई। क्या-क्या चित्र नही है जो हमने स्वतन्त्र भारत के नही बनाए, क्या-क्या स्वप्न नही है जो हमने राष्ट्रीय जीवन की नई उठानों के नही देखे। आज वो सब कहा हैं ? क्या हमारे मस्तिष्क के किसी कोने मे भी उसकी प्रतिछाया शेष रह गई है, क्या उनकी महक भी कोई दुर्भाग्यग्रस्त व्यक्ति इस वातावरण मे सूघ सकता है ? हमारी स्वतन्त्रता के विरोधियो ने सदैव कहा था कि हिन्दुस्तानियो के हाथ-पाव जब तक दासता के बधनो से बधे हुए है, उसी समय तक सुख-शाति है, जहा यह बधन टूटे तो ये एक-दूसरे की गर्दन काटना आरम्भ कर देगे। खुदा के लिए मुझे बतलाओ, यदि इस स्थिति को तुरन्त समाप्त न कर सके तो इसका परिणाम क्या होगा ? क्या यही परिणाम नही निकलेगा कि भारतीय स्वतन्त्रता के विरोधियो ने जो कुछ कहा था वह नितात सत्य था ? आज स्वतन्त्र भारत को जीवन के सबसे बडे सकट का सामना है, वो एक बडी गहरी खाई के किनारे खडा है। उसका भाग्य अधर मे झूल रहा है, या तो उसे गहरी खाई मे गिरना है

---

* २ अक्तूबर, १९४७ का महात्मा गाधी की ७८वी वर्षगाठ के अवसर पर मौलाना ने आकाशवाणी से यह वार्ता प्रसारित की थी। यह वार्ता प्रथम बार प्रकाशित हो रही है।

या छलाग मारकर सुरक्षित पार उतर जाना है। यदि हम चाहते है कि अपेन देश की स्वतन्त्रता को इस सकट से सुरक्षित निकाल ले जाए तो हमे चाहिए कि सर्वप्रथम ठीक-ठीक समझ ले कि सकट क्या है और फिर इससे देश को बचाने का उपाय करे। जो सकट आज हमारे सम्मुख है, वह देश मे अशाति और दुर्व्यवस्था का सकट है। देश की स्वतन्त्र सरकार की आयु अभी दो महीने की भी नही हुई है और वो देखने लगी हैं कि अशाति और अनुशासनहीनता का सकट शनै -शनै सिर उठा रहा है। साहसपूर्वक और देश की सपूर्ण शक्ति सहित यह सकट न दबाया गया तो कोई नही कह सकता कि यह कहा जाकर थमेगी ? यह एक वास्तविकता है कि पजाब के दोनो भागो मे अशाति की बाढ आई और दोनो स्थानो की सरकारे उसे रोक न सकीं। प्रश्न यह है कि अब हमे क्या करना चाहिए ? यह करना चाहिए कि सरकार की सपूर्ण शक्ति लगा कर पजाब मे एक और अधिक विनाश न होने दिया जाए और साथ ही साथ समस्त देश मे शाति और व्यवस्था बनाए रखी जाए या यह करना चाहिए कि पजाब को और अधिक विनष्ट होने के लिए छोड दिया जाए और देश के अन्य भागो की शाति और व्यवस्था को भी विनष्ट होने के लिए छोड दिया जाए। मुझे विश्वास है कि आप मे से कोई व्यक्ति भी ऐसा कहने का साहस नही कर सकेगा कि प्रथम उपाय के अतिरिक्त मुक्ति का कोई अन्य उपाय भी हो सकता है। यदि वास्तविक रूप से आप इस बात पर विश्वास रखते है तो आपका कर्तव्य है कि इस कार्य के लिए अपनी समस्त शक्ति लगा दीजिए। जहा तक सरकार का सबध है, उसने सुदृढ निर्णय कर लिया है कि किसी स्थिति मे भी अशाति और उपद्रवो को सहन नही करेगी और प्रत्येक उपद्रव जो सिर उठाएगा उसे अत्यन्त कडाई से मटियामेट करेगी। आपको भी चाहिए कि इस काम मे सरकार का हाथ बटाए और हर प्रकार की अशाति और दुर्व्यवस्था को रोकें। आप अपने इस कर्तव्य का निर्वाह कैसे कर सकते हैं, इसका विवरण मैं प्रस्तुत नही करूगा। यदि आप सच्चे मन की लगन के साथ तत्पर हो गये हैं तो आपको बतलाने की आवश्यकता नही कि देश की यह सेवा आपको किस प्रकार पूर्ण करनी चाहिए।

"जयहिन्द !"

दिल्ली के मुसलमानों के सम्मुख भाषण

जामा मस्जिद, देहली

"जामा मस्जिद की मीनारे आप से पूछती हैं। आपने अपनी गौरव-गाथा के पृष्ठो को कहाँ गुम कर दिया है? यह कल की ही तो बात है कि आप के सार्थवाह ने यमुना के तट पर वजू किया था और आज आप यहाँ रहने से भयभीत हैं?"

जामा मस्जिद का भाषण *

मेरे प्रियजनो, आप जानते हैं कि वह कौन सी बात है जो मुझे यहाँ ले आई है। मेरे लिए शाहजहाँ की ऐतिहासिक मस्जिद मे यह जनसभा कोई नई बात नहीं है। मैने यही से तुम्हे पिछले कई अवसरो पर सबोधित किया था, तब से लेकर अब तक हमलोगो ने विभिन्न उतारो और चढावो को देखा है। जब तुम्हारे मुखमण्डल पर चिन्तारेखा के स्थान पर सतोष था और तुम्हारे हृदयो मे असमजस की जगह विश्वास था। आज तुम्हारे मुखो पर क्षोभ और हृदयो मे शून्यता देखता हू तो मुझे अकस्मात पिछले कुछ वर्षो की भूली-बिसरी गति-विधिया याद आ जाती है। तुम्हे याद है, मैने तुम्हे पुकारा, तुमने मेरी जीभ काट ली, मैने लेखनी उठाई, तुमने मेरे हाथ काट दिए, मैंने चलना चाहा, तुमने मेरे पाव काट दिए, मैने करवट लेनी चाही, तुमने मेरी कमर तोड दी। यहा तक कि पिछले सात वर्षो मे जब कटु राजनीतिक खेल अपने उत्कर्ष पर थी, मैंने तुम्हे प्रत्येक खतरे के सकेत से बचाना चाहा। किन्तु तुमने न केवल मेरे आह्वान को ठुकरा दिया बल्कि भ्रातिलिप्त रहने वालो और सत्य को नकारने वालो की सारी पुरानी कहानिया फिर से दुहरा दी। परिणाम सामने है। आज उन्ही खतरो ने तुम्हे घेर लिया है जिनकी आशका तुम्हे सद्मार्ग से दूर ले गयी थी।

सच पूछो तो आज मै एक जडअस्तित्व से अधिक कुछ नही हू या परित्यक्त रुदन , मै अपनी ही मातृ-भूमि मे एक अनाथ हू। इसका तात्पर्य यह नही है कि जो स्थान-मैने पहले दिन अपने लिए निर्धारित किया था वहा मेरी उड्डयन शक्ति का अन्त कर दिया गया है, या मेरे नीड के लिए वहाँ जगह नही रही बल्कि मै यह कहना चाहता हू कि मेरे दामन को तुम्हारे लाछनो से शिकायत है।- मेरी भावनाए घायल नही हैं और मेरा मन दु खी है। सोचो तो सही, तुमने कौन सा मार्ग अपनाया, कहा पहुचे और अब कहा खडे हो, क्या यह भयातुर जीवन नही ? क्या तुम्हारी चेतना मे विषेप उत्पन्न नही हुआ है ? यह आतुरता तुमने स्वय ही उत्पन्न की है। ये तुम्हारे अपने कर्मो के ही फल है।

अभी उस बात को कुछ अधिक समय नही बीता जब मैने तुमसे कहा था कि द्वैराष्ट्र की अवधारणा आभ्यन्तरिक जीवन के लिए प्राणघातक रोग के समान है, उसको छोड दो। यह खम्भे जिन का तुमने सहारा लिया है अत्यन्त तीव्रता से टूट रहे है। लेकिन तुमने सुनी-अनसुनी कर दी और यह न सोचा कि समय और इसकी गति तुम्हारे लिए अपना नियम नही बदल सकती।

---

* २३ अक्तूबर, १९४७ ई० को मौलाना ने देहली के मुसलमानो के सम्मुख भाषण दिया था। उस समय बेघर हो चुके थे और अपनी राजनैतिक तथा राष्ट्रीय अस्मिता खो देने के कारण भयभीत थे। अपने पूर्वजो की धरती को छोडकर जाने की बात सोचने और पाकिस्तान रूपी मृगतृष्णा के पीछे भागने पर मौलाना ने उन्हे फटकारा था।

१ सकेत अबुजहल की ओर है जिसने रसूल के सत्यवचन को आजीवन नकारा है और सद्मार्ग से विमुख रहा।

२ तात्पर्य जुलेखा और पैगम्बर यूसुफ की अन्तर्कथा से है जिसमे हजरत यूसुफ पर आसक्त जुलेखा ने वासनातृप्ति के हेतु स्वय को समर्पित करना चाहा किन्तु जब हजरत यूसुफ इसके लिए तैयार नही हुए और कमरे से बाहर निकलने लगे तो पिछे मे उसने उनका दामन फाड दिया तथा उन पर बलात्कार करने का लाछन लगाया।

समय की गति थमी नही। तुम देख रहे हो कि जिन सहारो पर तुम्हे भरोसा था वो तुम्हे अनाथ समझकर भाग्य के हवाले कर गए। यह वह भाग्य है जिसका तुम्हारे मानस शब्दकोष के अभिप्रायो से भिन्न अर्थ है। उसके अनुसार साहस के अभाव का नाम ही भाग्य है।

अग्रेज की बिसात तुम्हारी इच्छा के विपरीत उलट दी गई और नेतृत्व की यह प्रतिमाए जो तुमने गढी थी वह भी धोखा दे गई, हालाकि तुमने यही समझा था कि यह बिसात चिरकाल के लिए बिछाई गई है और इन्ही प्रतिमाओ की पूजा मे तुम्हारा जीवन सफल है। मै तुम्हारे घावो को दुखाना नही चाहता हू और तुम्हारी व्याकुलता को और अधिक बढाना भी नही चाहता। लेकिन यदि अतीत मे झाककर देखो तो तुम्हारे लिए बहुत से रहस्यो का उद्घाटन हो सकता है। एक समय था जब मैने हिन्दुस्तान की स्वतन्त्रताप्राप्ति की आवश्यकता को प्रोत्साहित करते हुए तुम्हे पुकारा था

"जो होने वाला है उसके कोई समुदाय अपने अमगल से रोक नही सकता। हिन्दुस्तान के भाग्य मे राजनैतिक क्रान्ति लिखी जा चुकी है और पराधीनता की जजीरे बीसवी शताब्दी के स्वातन्त्र्य वातचक्र से कट कर गिरने वाली है। यदि तुमने समय के साथ-साथ कदम उठाने मे आनाकानी की और गतिरोधात्मक वर्तमान जीवन को अपनी जीवनचर्या बनाए रखा तो भविष्य का इतिहासकार लिखेगा कि तुम्हारे दल ने जो सात करोड मानवो का समूह था देश की स्वाधीनता के बारे मे वह मनोवृत्ति अपनायी जो धरती तल से लुप्त हो जाने वाली जातियो का आचरण हुआ करता है। आज हिन्दुस्तान का झडा अपने पूर्ण वैभव मे लहरा रहा है। यह वही झडा है जिसके आह्वान करने पर एक समय के शासकवर्ग तिरस्कारपूर्ण उपहास किया करते थे।"

यह ठीक है कि समय ने तुम्हारी आकाक्षानुकूल अगडाई नही ली। बल्कि उसने एक राष्ट्र के जन्मसिद्ध अधिकार के सम्मान मे करवट बदली और यही वह क्रान्ति है जिसकी एक करवट ने तुम्हे बडी हद तक भयभीत कर दिया है। तुम सोचते हो कि तुम से कोई अच्छी चीज छिन गई है और उसके स्थान पर बुरी वस्तु आ गई है। हा, तुम्हारी व्याकुलता इसीलिए है कि तुमने स्वय को अच्छी वस्तु के लिए तत्पर नही किया था और बुरी चीज को स्वर्ग का स्वादिष्ट भोजन समझ रखा था। मेरा आशय विदेशी दासता से है जिसके हाथो तुमने दीर्घकाल तक सत्तालोलुपता का खिलौना बनकर जीवन व्यतीत किया। एक दिन था कि हमारे समुदाय के पग किसी सघर्ष के शुभारम्भ की ओर बढे थे और आज तुम इस युद्ध के परिणाम से विचलित हो। तुम्हारी इस उतावली के सबध मे क्या कहूँ कि इधर यात्रा की खोज समाप्त नही हुई और उधर भटक जाने का भय उत्पन्न हो गया।

मेरे भाई, मैने राजनीति को वैयक्तिकता से सदैव अलग रखने की चेष्टा की है। मैने उन कटकपूर्ण घाटियो मे कदम नही रखा। यही कारण है कि मैने बहुत सी बाते अप्रत्यक्षरूप मे कही है। लेकिन मुझे आज जो कुछ कहना है उसे निर्भीक होकर कहना चाहता हू। अखड भारत का विभाजन मूलत गलत है। धार्मिक भेदभाव को जिस प्रकार हवा दी गई उसका अनिवार्यत परिणाम यही लक्षण और रूप थे जो हमने अपनी आखो से देखे और दुर्भाग्यवश कुछ स्थाना पर आज भी देख रहे हैं।

पिछले सात वर्षो की कथा दोहराने से कोई लाभ नही है और न इससे कोई अच्छा निष्कर्ष निकल सकता है। लेकिन हिन्दुस्तानी मुसलमानो पर जो विपत्ति आई है वह निश्चय ही मुस्लिम लीग के भ्रामक नेतृत्व की भयकर गलतियो ही का परिणाम है। मेरे लिए इसमे कोई नई बात नहीं है। पिछले दिनो ही से मैं इन परिणामो को देख रहा था।

अब हिन्दुस्तानी राजनीति की दिशा बदल चुकी है। मुस्लिम लीग के लिए यहा कोई स्थान नही है। अब यह हमारी अपनी बुद्धि पर निर्भर है कि हम किसी उचित दृष्टिकोण से सोच सकते है या नही। इसीलिए मैंने नवम्बर के दूसरे सप्ताह मे हिन्दुस्तान के मुसलमान नेताओ को दिल्ली बुलाने का निर्णय किया है। निमत्रण पत्र भेज दिए गए है। सत्रास की ऋतु अस्थायी है। मैं तुमको विश्वास दिलाता हू कि हमको हमारे अतिरिक्त कोई अन्य वशीभूत नही कर सकता। मैंने हमेशा कहा और आज फिर कहता हू कि दुविधा का मार्ग छोड दो, आशकाओ से हाथ उठा लो और अनुचित कर्मो का त्याग कर दो। यह अनोखा त्रिधारी खन्जर लोहे की उस दोधारी तलवार से अधिक घातक है जिसके घाव की कहानिया मैने तुम्हारे नवयुवको के मुख से सुनी हैं।

पलायन का यह जीवन जो तुमने हिजरत[३] के पुनीत नाम पर अपनाया है उस पर विचार करो, अपने मन को सुदृढ बनाओ और अपने मस्तिष्क मे सोचने की क्षमता उत्पन्न करो और फिर देखो कि तुम्हारे यह निर्णय कितने उतावलेपन से लिए गए हैं। आखिर कहा जा रहे हो और क्यो जा रहे हो?

यह देखो, जामा मस्जिद के उत्तुग मीनारे तुमसे उचककर एक प्रश्न करना चाहते है कि तुमने अपने इतिहास के गौरवपूर्ण पृष्ठो को कहा गुम कर दिया? अभी कल की बात है कि यमुनातट पर तुम्हारे सार्थवाहो ने वजू[४] किया था और आज तुम हो कि तुम्हे यहा रहते हुए डर लग रहा है जबकि दिल्ली तुम्हारे रक्त से सिचित है।

स्वजनो, अपने अन्दर एक मौलिक परिवर्तन उत्पन्न करो। जिस प्रकार कुछ समय पूर्व तुम्हारा उल्लास अनुचित था उसी प्रकार आज तुम्हारा यह भय और तुम्हारी यह निराशा भी अनुचित है। मुसलमान और कायरता या मुसलमान और उत्तेजना एक स्थान पर एकत्रित नही हो सकते। सच्चे मुसलमानो को न तो कोई लालसा डिगा सकती है और न कोई भय भयभीत कर सकता है। कुछ मानवीय आकृतियो के अगोचर हो जाने से डरो नही। उन्होने तुम्हे जाने के लिए ही इकट्ठा किया था। आज उन्होने तुम्हारे हाथ से अपना हाथ खीच लिया है तो यह कोई बुरी बात नही है। यह देखो कि तुम्हारे दिल तो उनके साथ ही प्रस्थान नहीं कर गये। यदि दिल अभी तक तुम्हारे पास है तो उसे उस ईश्वर की क्रीडास्थली बनाओ जिसने आज से तेरह सौ वर्ष पूर्व अरब के एक निरक्षर के माध्यम से अपनी वाणी सुनाई थी—"जिन्होने ईश्वर पर विश्वास किया और उस पर जम गए तो फिर उनके लिए न तो किसी प्रकार का भय है और न ही कोई दुख।"[५] हवाये आती है और चली जाती है। यह गर्म हवा सही किन्तु इसकी आयु कुछ अधिक नही है। अभी देखते-देखते यह विपत्तिकाल बीत जाने वाला है। यू बदल जाओ जैसे तुम पहले कभी इस स्थिति मे थे ही नही।

मै बातचीत मे पिष्टपेषण का अभ्यस्त नहीं हू। लेकिन मुझे तुम्हारी भ्रमित बुद्धि के कारण बार-बार यह कहना पडता है कि तीसरी शक्ति अपने दम्भ का पिटारा उठाकर जा चुकी है। जो होना था वह होकर रहा। राजनीतिक मानसिकता अपना पिछला साचा तोड चुकी है और अब नया साचा ढल रहा है। यदि अब भी तुम्हारा मन नही बदला और दिमागी पूर्वाग्रह समाप्त नही हुई तो फिर स्थिति कुछ भिन्न है। लेकिन यदि वस्तुत तुम्हारे अन्दर सच्चे परिवर्तन की इच्छा उत्पन्न हो गई तो फिर इस तरह बदलो जिस प्रकार इतिहास ने स्वय को बदल लिया है। आज भी जब हम क्रान्ति के एक चरण को पूरा कर चुके है हमारे देश के इतिहास मे कुछ

---

३ आत्मसुरक्षा के हेतु एक स्थान से दूसर स्थान को प्रस्थान। सकेत रसूल के द्वारा मक्के से मदीना प्रस्थान करने की ओर है।

४ नमाज के लिए विधिवत शरीर के निर्वस्त्र अवयवों का प्रक्षालन।

५ सकेत इस्लाम के पैगम्बर की ओर है।

पृष्ठ रिक्त हैं और हम इन पृष्ठो पर अकित होने का गौरव प्राप्त कर सकते हैं। परन्तु शर्त यह है कि हम इसके लिए तत्पर भी हो।

स्वजनो, तबदीलियो के साथ चलो, यह न कहो कि हम इस परिवर्तन के लिए तत्पर न थे, बल्कि अब तैयार हो जाओ। सितारे टूट गए किन्तु सूर्य तो चमक रहा है। उससे किरणे माग लो और उन अधेरी राहो मे बिछा दो जहा प्रकाश की अत्यधिक आवश्यकता है।

मैं तुमसे यह नही कहता कि तुम शासनिक सत्ता की पाठशाला से वफादारी का प्रमाण-पत्र प्राप्त करो और वही खुशामदी जीवन बिताओ जो विदेशी सत्ताधारियो के युग मे बिताया है। मै कहता हू कि जो कीर्तिमान स्तभ तुम्हे इस हिन्दुस्तान मे अतीत के स्मारक के रूप मे दिखाई पड रहे है वह तुम्हारे ही सार्थवाह के पदचिह्न है, उन्हे भुलाओ नही, उन्हे छोडो नहीं। उनके उत्तराधिकारी बन कर रहो और समझ लो कि यदि तुम भागने के लिए तत्पर नही हो तो फिर तुम्हे कोई शक्ति भगा नही सकती। आओ प्रण करो कि यह देश हमारा है, हम इसके लिए है और इसके मौलिक भाग्य-निर्णय हमारी आवाज के बिना अधूरे ही रहेगे।

आज भूकम्पो से डरते हो, कभी तुम स्वय एक भूकम्प थे, आज अन्धेरे से डरते हो, कभी तुम्हारा अस्तित्व प्रकाश का अधिकेन्द्र था ' बादलो ने यह गन्दला पानी बरसाया है, तुमने भीग जाने के भय से अपने पायचे चढा लिये है। वह तुम्हारे ही पूर्वज थे जो समुन्दरो मे उतर गए, पहाडो के वक्षस्थल को पदाक्रात कर डाला, विद्युतपात हुआ तो वह मुस्करा दिए, बादल गरजे तो अट्टहासो से गर्जन का उत्तर दिया, तूफान उठे तो उनका रुख मोड दिया, आधिया आई तो उनसे कहा तुम्हारा मार्ग यह नही है। यह निष्ठा और ईमान के निष्प्राण होने का द्योतक हैं कि सम्राटो की ग्रीवा पर हाथ डालने वाले आज स्वय अपनी गरदने मरोड रहे है और ईश्वर से इतना विमुख हो गए हैं कि जैसे उस पर कभी निष्ठा थी ही नही।

बन्धुओ ' मेरे पास तुम्हारे लिए कोई नया उपचार नहीं है। वही पुराना उपचार है जो वर्षो पहले का है। वह उपचार वही है जिसे मानवता के महानतम उद्धारक ने बताया था। वह उपचार कुरान की यह घोषणा है—"डरो मत और दुखी मत हो। निश्चय ही तुम्हारा पलडा भारी होगा यदि तुम निष्ठावान हो।"[६]

आज की सभा समाप्त हुई। मुझे जो कुछ कहना था वह सार रूप मे कह चुका हू। फिर कहता हू और बारम्बार कहता हू—अपनी इन्द्रियो पर नियन्त्रण करो, तुम स्वय अपनी परिस्थिति और अपनी दुनिया को निर्मित करना सीखो। यह मडी मे बिकाऊ वस्तु नही कि तुम्हें क्रय करके ला दू। यह तो मन की दुकान ही से सत्कर्मो की नकदी से ही सुलभ हो सकती है।

तुम्हें शान्ति मिले, ईश्वर की तुम पर दया हो और वह तुम्हारा कल्याण करे।

---

६ सकेत इस्लाम के पैगम्बर की ओर है।

कांग्रेस अभिभाषण, १९४०

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस,
रामगढ

"हमारे सहस्र वर्षो की सहचर भावना ने एक सामान्य राष्ट्रीयता को जन्म दिया है। इस प्रकार का सॉचा कृत्रिम रूप से निर्मित नही हो सकता। प्रकृति की अप्रत्यक्ष निहाई ने शताब्दियो मे इसे रूपायित किया है। यह साचा अब ढल चुका है और नियति ने इस पर अपनी मुहर लगा दी है।"

कांग्रेस अध्यक्षीय अभिभाषण *

मार्च १९४०

मित्रो,

१९२३ मे आपने मुझे इस राष्ट्रीय सभा का अध्यक्ष चुना था। अब १७ वर्ष पश्चात् दूसरी बार आपने यह सम्मान मुझे दिया है। राष्ट्रो के सघर्ष के इतिहास मे १७ वर्ष की अवधि कोई लम्बी अवधि नही है। परन्तु ससार ने अपने परिवर्तनो की गति इतनी तीव्र कर दी है कि अब पुरातन पद्धति काम नही दे सकती। इस १७ वर्ष मे एक के पश्चात् एक बहुत सी मजिले हमारे सामने आती रही। हमारी यात्रा दूर की थी और आवश्यकता थी कि हम विभिन्न चरणो से गुजरे। हम प्रत्येक मजिल मे ठहरे किन्तु रुके कही नही, हमने हर स्थान को देखा-भाला किन्तु हमारा मन कही भी नहीं अटका। नाना प्रकार के उतार-चढाव का हमे सामना करना पडा। किन्तु हर परिस्थिति मे हमारी दृष्टि सामने ही की ओर रही। दुनिया को हमारे सकल्पो के सम्बन्ध मे आशकाए रही हो, किन्तु हमे अपने निर्णयो के बारे मे कभी सन्देह नही हुआ। हमारा मार्ग मे कठिनाइयो से पूर्ण था। हमारे सम्मुख कदम-कदम पर बाधाए खडी थी। हम जितनी तीव्र गति से चलना चाहते थे, न चल सके हो किन्तु हमने आगे बढने मे कभी दुर्बलता नही दिखाई।

यदि हम १९२३ और १९४० के बीच की अपनी यात्रा पर दृष्टिपात करे तो हमे अपने पीछे बहुत दूर तक धूँधला-सा निशान दिखाई देगा। १९२२ मे हम अपने गन्तव्य स्थान की ओर बढना चाहते थे परन्तु मजिल हमसे इतनी दूर थी कि उसके मार्ग के चिह्न भी हमारी आखो से ओझल थे। लेकिन आज भाइयो, इस स्थान की ओर देखिए, न केवल मजिल का निशान स्पष्टत दिखाई दे रहा है बल्कि स्वय मजिल भी दूर नहीं है। हा, यह स्पष्ट है कि जैसे-जैसे मजिल निकट आती जाती है हमारे सघर्ष की परीक्षाए भी बढती जाती हैं। आज घटनाओ की तीव्र गति ने जहा हमे पिछले निशानो से दूर और अतिम मजिल के निकट कर दिया है, वही तरह-तरह की नई उलझने और कठिनाइया भी उत्पन्न कर दी हैं और एक अत्यत सकटपूर्ण चरण मे हमारा सार्थवाह गुजर रहा है। ऐसे चरणो की सबसे बडी परीक्षा उनकी विरोधी सम्भावनाओ मे होती है। बहुत सम्भव है कि हमारा एक उचित कदम हमे गन्तव्य स्थान से नितान्त निकट कर दे। और बहुत सम्भव है कि एक अनुचित कदम नाना प्रकार की नई कठिनाइयो मे उलझा दे।

एक ऐसे सकटपूर्ण समय मे आपने मुझे अध्यक्ष चुनकर अपने जिस विश्वास को अभिव्यक्त किया है वह निश्चय ही बडे से बडा विश्वास है जो देश के सेवा-मार्ग मे आप अपने एक साथी पर कर सकते थे। यह बहुत बडा सम्मान है, इसलिए बहुत बडा दायित्व है। मैं इस सम्मान के लिए

---

* मौलाना १५ फरवरी, १९४० को काग्रेस के अध्यक्ष निर्वाचित हुए थे। वह १५ मार्च, १९४० ई० को रामगढ पधारे और डॉ० राजेन्द्र प्रसाद तथा सरोजनी नायडू ने वहा उनका स्वागत किया। वर्षा के कारण निर्धारित समय से एक दिन पश्चात् काग्रेस का ५३वा अधिवेशन आयोजित हुआ। मौलाना ने उपस्थित जनसमूह के सम्मुख भाषण दिया और अपनी कार्यकारिणी समिति के सदस्या की घोषणा की।

आभारी हू। और इस दायित्व के भार वहन के लिए आपके सहयोग की आशा भी करता हू। मुझे विश्वास है कि जिस उत्साह के साथ आपने इस विश्वास की अभिव्यक्ति की है, वैसे ही उत्साह के साथ आपका सहयोग भी मेरा साथ देता रहेगा।

समय की वास्तविक समस्या

अब मै समझता हू कि मुझे किसी भूमिका के बिना असली समस्या पर आ जाना चाहिए। हमारे लिए समय का सबसे पहला और सबसे महत्त्वपूर्ण प्रश्न यह है कि तीन सितम्बर १९३९ की युद्ध घोषणा के पश्चात् हमने जो कदम उठाया है वह किस ओर जा रहा है ? और इस समय हम कहा खडे है ?

सम्भवत कांग्रेस के इतिहाम मे उसकी मानसिकता का यह एक नया रग था। १९३६ के लखनऊ अधिवेशन मे यूरोप की अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थिति पर एक लम्बा प्रस्ताव पारित करके उसने अपने दृष्टिकोण की स्पष्ट घोषणा कर दी। और तत्पश्चात् वह कांग्रेस की वार्षिक घोषणाओ का एक महत्त्वपूर्ण और आवश्यक अग बन गया। इस सम्बन्ध मे यह हमारा एक सोचा-समझा हुआ निर्णय था जो हमने दुनिया के सामने रख दिया।

इन प्रस्तावो के माध्यम से हमने दुनिया के सम्मुख एक ही समय मे दो बातो की घोषणा की थी

सबसे पहली बात यह है जिसे मैंने हिन्दुस्तानी राजनीति का एक नया रग कहा है, हमारा यह मानना है कि हम अपनी वर्तमान विवशता की स्थिति के बावजूद भी दुनिया की राजनैतिक स्थिति से अलग-थलग नही रह सकते। यह आवश्यक है कि अपने भविष्य का मार्ग प्रशस्त करते हुए हम केवल अपने चारो ओर ही न देखे बल्कि उससे बाहर की दुनिया पर भी दृष्टिपात करे। युग के असख्य परिवर्तनो ने देशो और राष्ट्रो को इस प्रकार एक दूसरे से निकट कर दिया है और चिन्तन और क्रियाओ की लहरे एक अनुभाग मे उभरकर इस तीव्रता के साथ दूसरे अनुभागो पर अपना प्रभाव डालना आरम्भ कर देती है कि आजकल की स्थिति मे यह सम्भव नही है कि हिन्दोस्तानी अपनी समस्याओ पर केवल अपनी चारदीवारी के अन्दर ही बन्द रहकर सोच सके। यह अनिवार्य है कि बाह्य परिस्थितियाँ हमारी परिस्थितियो पर तुरन्त प्रभाव डाले और यह भी अनिवार्य है कि हमारी परिस्थितिया और निर्णयो से दुनिया की परिस्थितियो और निर्णयो पर प्रभाव पडे। यही भावना थी जिसने इस निर्णय का रूप धारण किया। हमने इन प्रस्तावो द्वारा घोषणा की कि यूरोप मे जनतन्त्र वैयक्तिक और राष्ट्रीय स्वतन्त्रता के विरुद्ध नाजिज्म और फासिज्म के, जो प्रतिक्रियावादी आन्दोलन दिन-प्रतिदिन बलशाली होते जाते है, हिन्दोस्तान उन्हे दुनिया की उन्नति और शान्ति के लिए एक विश्वव्यापी सकट समझता है और उसका मन तथा मस्तिष्क उन राष्ट्रो के साथ है जो जनतन्त्र और स्वतन्त्रता की रक्षा मे इन आन्दोलनो के विरुद्ध सघर्षरत है। परन्तु जब फासिज्म और नाजिज्म के सकटो के विरुद्ध हमारा ध्यान जा रहा है तो हमारे लिए असम्भव था कि हम उस पुराने सकट को भुला देते जो इन शक्तियो से कही अधिक राष्ट्रो की शान्ति और स्वतन्त्रता के लिए घातक सिद्ध हो चुका है और जिसने वस्तुत इन नवीन प्रतिक्रियावादी आन्दोलनो को जन्म देने का समस्त वातावरण प्रस्तुत किया है। मेरा सकेत बरतानिया की साम्राज्यवादी शक्ति की ओर है। इसे हम इन नई प्रतिक्रियावादी शक्तियो के समान दूर से नही देख रहे, ये तो स्वय हमारे घर पर आधिपत्य जमाये हमारे सामने खडी है। अत हमने सुस्पष्ट शब्दो मे यह बात भी कह दी कि यदि योरप के इस नवीन सघर्ष ने युद्ध का

रूप धारण किया तो हिन्दोस्तान जो अपने स्वतन्त्र सकल्प और स्वतन्त्रता से वचित कर दिया गया है इस युद्ध मे कोई भाग नही लेगा। वह केवल इसी स्थिति मे इसमे हिस्सा ले सकता है जबकि उसे अपनी स्वेच्छा और रुचि से निर्णय करने की क्षमता प्राप्त हो।

वह नाजिज्म और फासिज्म का विरोधी है। किन्तु उससे भी अधिक बरतानिया के साम्राज्यवाद से घृणा करता है। यदि हिन्दोस्तान अपनी स्वतन्त्रता के स्वाभाविक अधिकार से वचित रहता है तो इसका स्पष्ट अर्थ यह है कि बरतानिया का साम्राज्यवाद अपनी समस्त परम्परागत विशेषताओ सहित जीवित है और हिन्दोस्तान किसी भी स्थिति मे तत्पर नही कि बरतानिया के साम्राज्यवाद की विजय मे सहायक हो।

यह दूसरी बात थी जिसकी घोषणा इन प्रस्तावो मे निरन्तर होती रही है।

यह प्रस्ताव काग्रेस के लखनऊ अधिवेशन से लेकर अगस्त १९३९ ई० तक स्वीकृत होते रहे है और 'लडाई के प्रस्तावो' के नाम से विख्यात है।

काग्रेस की यह समस्त घोषणाये बरतानिया सरकार के सामने थी कि अकस्मात् अगस्त १९३९ ई० के तीसरे सप्ताह मे लडाई के बादल गरजने लगे और ३ सितम्बर को लडाई भी आरम्भ हो गई।

अब मै इस अवसर पर एक क्षण के लिए आपको आगे बढने से रोकूगा और निवेदन करूगा कि तनिक पीछे मुडकर देखिये कि पिछले अगस्त को आपने किन स्थितियो मे देश को छोडा है।

बरतानिया सरकार ने भारत सरकार एक्ट १९३५ ई० को हिन्दोस्तान के सिर पर शक्ति के बल पर थोपा था और यथा-नियम दुनिया को यह विश्वास दिलाने का प्रयत्न किया था कि उसने हिन्दुस्तान को उसके राष्ट्रीय अधिकार का एक बहुत बडा भाग दे दिया है। काग्रेस का निर्णय इस सम्बन्ध मे दुनिया को ज्ञात है।

फिर भी काग्रेस ने उस समय तक मौन रहने का सकल्प किया और इस बात को स्वीकार कर लिया कि एक विशिष्ट अनुबध के साथ मत्रीपदो को स्वीकार कर ले। अत ११ प्रान्तो मे से आठ प्रान्तो मे उसके मत्रीमडल सफलतापूर्वक कार्य कर रहे थे और यह बात बरतानिया सरकार के हित मे थी कि इस स्थिति को जितने अधिक समय तक बनाए रखा जा सकता है, बनाए रखे। इसी के साथ परिस्थिति का एक दूसरा पक्ष भी था। जहा तक युद्ध के बाह्य रूप का सबध है हिन्दोस्तान सुस्पष्ट शब्दो मे नाजी जर्मनी के प्रति अपने विरोध की घोषणा कर चुका था। उसकी सहानुभूतिया जनतन्त्र प्रेमी राष्ट्रो के साथ थी और स्थिति का यह पक्ष भी बरतानिया सरकार के हित मे था। ऐसी स्थिति मे सम्भवत यह आशा की जा सकती थी कि यदि बरतानिया सरकार की पुरानी साम्राज्यवादी मानसिकता मे कुछ भी परिवर्तन हुआ है तो कम से कम कूटनीति की दृष्टि से ही वह इसकी आवश्यकता को अवश्य महसूस करेगी कि इस अवसर पर अपनी पुरानी पद्धति बदल दे और हिन्दोस्तान को ऐसा महसूस करने का अवसर प्रदान करे कि अब वह एक परिवर्तित वातावरण मे सास ले रहा है। परन्तु हम सब को ज्ञात है कि इस अवसर पर बरतानिया सरकार का व्यवहार कैसा रहा ? परिवर्तन की लेशमात्र प्रतिछाया भी उस पर पडती हुई दिखाई नही देती है। ठीक इसी प्रकार जैसी उसकी साम्राज्यवादी मानसिकता की डेढ शताब्दी से विशेषता रही है। उसने अपने व्यवहार का निर्णय कर लिया और किसी रूप मे और किसी भी सीमा तक भी हिन्दुस्तान को अपना मत व्यक्त करने का अवसर दिए बिना युद्ध मे उसके सम्मिलित हो जाने की घोषणा कर दी गई। इस बात तक की आवश्यकता नही समझी

गई कि उन प्रतिनिधि विधान सभाओ ही को अपना मत व्यक्त करने का एक अवसर दे दिया जाए, जिन्हे बरतानिया सरकार ने अपनी राजनैतिक दान-शीलता का प्रदर्शन करते हुए हिन्दुस्तान के सर थोपा है।

समस्त ससार के समान हमे भी विदित है कि इस अवसर पर बरतानिया साम्राज्य के समस्त देशो को अपने-अपने कार्यनीति का निर्णय करने का किस प्रकार अवसर दिया गया था। कनाडा, आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैंड, दक्षिण अफ्रीका और आइसलैंड ने युद्ध मे सम्मिलित होने का निर्णय अपनी-अपनी विधानसभाओ मे बिना किसी विदेशी हस्तक्षेप के किया था। इतना ही नही, बल्कि आइसलैड के युद्ध मे सम्मिलित होने के स्थान पर तटस्थ रहने के निर्णय से बरतानिया के किसी निवासी को आश्चर्य नही हुआ। मिस्टर डी० बलेरा ने बरतानिया के पडोस मे खडे होकर स्पष्ट कर दिया था कि जब तक अल्सटर समस्या का सन्तोषजनक समाधान नही होता वह बरतानिया की सहायता करने से इन्कार करता है।

परन्तु बरतानिया के उपनिवेशो के इस सम्पूर्ण नक्शे मे हिन्दुस्तान का स्थान कहा दिखाई दे रहा है? जिस हिन्दुस्तान को आज ये महत्त्वपूर्ण सुखद समाचार सुनाया जा रहा है कि उसे बरतानिया सरकार के दानी हाथो से शीघ्र किन्तु अज्ञात समय मे बरतानिया के उपनिवेशो का दरजा मिलने वाला है। उसके अस्तित्व को किस प्रकार स्वीकार किया गया? इस प्रकार से उसे विश्व-इतिहास की सम्भवत सबसे बडी होने वाली लडाई मे अचानक धकेल दिया गया है बिना इसके कि उसे ज्ञात भी न हो सका हो कि वह युद्ध मे भागीदार हो रहा है।

केवल यही एक घटना इसके लिए पर्याप्त है कि बरतानिया सरकार के वर्तमान दृष्टिकोण को हम उसके वास्तविक स्वरूप मे देख ले परन्तु नही, हमे उतावला नही होना चाहिए। हमारे सम्मुख और भी घटनाए घटित होने वाली है। वह समय दूर नही जब हम उस दृष्टिकोण को अधिक तथा और अधिक निकट और अधिक अनावृत रूप मे देखने लगेगे।

१९१४ मे जब इस युद्ध की पहली चिगारी बल्कान के एक कोने मे ज्वलित हुई थी तो इगलिस्तान और फ्रास ने छोटे राष्ट्रो के अधिकारो का नारा लगाना आरम्भ कर दिया था। उसके पश्चात् राष्ट्रपति विलसन के १४ सूत्री कार्यक्रम दुनिया के सामन आए और इनकी जो कुछ दुर्दशा हुई वह दुनिया को मालूम है। इस बार स्थिति भिन्न थी। विगत युद्ध के पश्चात् इगलिस्तान और फ्रास ने अपने विजयोन्माद के फलस्वरूप जो कार्य नीति ग्रहण की थी उसका अनिवार्यत परिणाम था कि एक नवीन प्रतिक्रिया आरम्भ हो जाए। वह प्रतिक्रिया प्रारम्भ हुई। उसने इटली मे फासिज्म और जर्मनी मे नाजिज्म का रूप धारण किया और बर्बर शक्ति के आधार पर निरकुश तानाशाही दुनिया की शान्ति और स्वतन्त्रता को चुनौती देने लगी। जब यह स्थिति उत्पन्न हुई तो स्वभावत दो नये गुट दुनिया के सम्मुख आ खडे हुए—१ जनतन्त्र और स्वतन्त्रता के पक्षपातियो का और दूसरा प्रतिक्रियावादी शक्तियो को अग्रसर करने वाला। इस प्रकार युद्ध का एक नया नक्शा बनना आरम्भ हो गया। मिस्टर चेम्बर लेन की सरकार जिसके लिए फासिज्म के पक्षधर इटली और नाजी जर्मनी से कही अधिक सोवियत सघ का अस्तित्व असहनीय था और जो उसे बरतानिया के साम्राज्य के लिए एक जीवित चुनौती समझती थी, तीन वर्षो तक इस क्रिया-कलाप का आनन्द लेती रही। इतना ही नही बल्कि उसने अपने कार्य-व्यवहार से स्पष्टत फासिज्म के समर्थको और नाजी शक्तियो को निरन्तर प्रोत्साहित किया। अबिसीनिया, स्पेन, आस्ट्रिया, यूगोस्लोवाकिया और अलबानिया का अस्तित्व एक के पश्चात् एक का दुनिया के मानचित्र से मिटता गया और बरतानिया सरकार ने अपनी बकबासी

नीति से उन्हे दफन करने मे बराबर मदद दी। परन्तु जब इस कार्यनीति का स्वाभाविक परिणाम अपनी चरम सीमा मे उभर आया और नाजी जर्मनी का पग निरकुश रूप से आगे बढने लगा तो बरतानिया सरकार नितान्त विवश हो गई। उसे रण-क्षेत्र मे उतरना पडा क्योकि यदि अब न उतरती तो जर्मनी की शक्ति बरतानिया के साम्राज्य के लिए घातक हो जाती। अब छोटे राष्ट्रो की स्वतन्त्रता के पुराने नारे का स्थान 'जनतन्त्र, स्वतन्त्रता और विश्व शान्ति' के नये नारो ने ले लिया और समस्त ससार इन ध्वनियो से गुजरित होने लगा। इगलिस्तान और फ्रास ने ३ सितम्बर की युद्ध-घोषणा इन्ही ध्वनियो के गुजन मे की और ससार की उन समस्त विचलित आत्माए, जो यूरोप की नवीन प्रतिक्रियावादी शक्तियो की बर्बरता और विश्व-व्यापी अशान्ति के अभिशाप से आश्चर्य चकित और भयभीत हो रही थी ने इन मोहक ध्वनियो पर कान लगा दिए।

कांग्रेस की मांग

३ सितम्बर १९३९ को युद्ध की घोषणा हुई और ७ सितम्बर को अखिल भारतीय काग्रेस कार्यकारिणी समिति की बैठक वर्धा मे हुई, ताकि परिस्थिति पर विचार किया जाए। कार्यकारिणी समिति ने इस अवसर पर क्या किया? काग्रेस की समस्त घोषणाए उसके सामने थीं जो १९३६ से लगातार होती रही थी। युद्ध-घोषणा के सम्बन्ध मे जो कार्य-नीति अपनाई गई थी वह भी उसकी दृष्टि से ओझल नही थी। निश्चय ही उसकी निन्दा की जा सकती थी। यदि वह कार्यकारिणी ऐसा निर्णय कर देती जो इस परिस्थिति का अनिवार्य परिणाम थी। परन्तु उसने सम्पूर्ण सावधानी के साथ अपने मन और मस्तिष्क पर अकुश लगाए रखा। उसके समय के उन तमाम आखो से जो तीव्र गति से चलने की माग कर रहे थे अपने को सुरक्षित कर लिया। उसने समस्या के तमाम पक्षो पर सम्पूर्ण शान्ति के साथ विचार करके वह कदम उठाया जिसे आज हिन्दुस्तान सिर उठाकर दुनिया से कह सकता है कि इस स्थिति मे उसके लिए वही एक ठीक कदम था। उसने अपने सारे निर्णय स्थगित कर दिये। बरतानिया सरकार से प्रश्न किया कि वह पहले अपने निर्णय से ससार को अवगत करा दे, जिस पर न केवल हिन्दुस्तान का बल्कि ससार की शाति और न्याय के समस्त उपदेशो का निर्णय निर्भर है। यदि इस युद्ध मे सम्मिलित होने का निमत्रण हिन्दुस्तान को दिया गया है तो उसे ज्ञात होना चाहिए कि वह लडाई क्यो लडी जा रही है? इसका उद्देश्य क्या है? यदि मानवीय हत्या की इस सबसे बडी त्रासदी का भी वही परिणाम निकलने वाला है जो पिछली लडाई का निकल चुका है और यह युद्ध वस्तुत इसलिए लडा जा रहा है कि स्वतन्त्रता, जनतन्त्र और शान्ति की एक नवीन व्यवस्था से दुनिया को परिचित कराया जाए, तो फिर निश्चय ही हिंन्दुस्तान को यह माग करने का अधिकार प्राप्त है कि स्वय उसके भाग्य पर उन उद्देश्यो का क्या प्रभाव पडेगा?

कार्यकारिणी समिति ने अपनी इस माग को एक विस्तृत घोषणा के रूप मे तैयार किया और चौदह सितम्बर १९३९ ई० को यह घोषणा प्रकाशित की। यदि मै आशा करू कि यह घोषणा हिन्दुस्तान के नवीन राजनैतिक इतिहास मे अपने लिए एक उचित स्थान की माग करेगा तो मुझे विश्वास है कि मै भविष्य के इतिहासकार से कोई अनुचित आशा नही कर रहा हू।

यह सत्य और औचित्य का एक सरल किन्तु ऐसा दस्तावेज है जिसे अस्वीकार नही किया जा सकता और न उसे शस्त्र बल का नग्न दर्प ही ठुकरा सकता है। यह बात यद्यपि हिन्दुस्तान मे उठी किन्तु वस्तुत यह केवल हिन्दुस्तान की ही आवाज न थी, यह विश्व-मानव की घायल

आकाक्षाओ की चीत्कार थी। पच्चीस वर्ष हुए कि ससार विनाश और हत्या के एक सबसे बडे अभिशाप मे, जिसे इतिहास की दृष्टिया देख सकी हैं, लिप्त की गई है और केवल इसलिए लिप्त की गई ताकि उसके तत्पश्चात् उससे भी कही अधिक एक अभिशाप उसके सम्मुख खडा हो जाएगा। निर्बल राष्ट्रो की स्वतन्त्रता शान्तिप्रिय निर्णयो की स्वायत्तता, शस्त्रो की सीमाबद्धता, अन्तर्राष्ट्रीय मध्यस्थता की स्थापना और इसी प्रकार के समस्त उच्च और मोहक उद्देश्यो के जादुई मत्रो ने आशुविश्वासी राष्ट्रो के कानो को प्रभावित किया, उनमे आशा उद्वेलित की गई। परन्तु अन्ततोगत्वा परिणाम क्या निकला ? प्रत्येक पुकार मिथ्या सिद्ध हुई। प्रत्येक रूप एक सपना निकला। आज फिर राष्ट्रो को खून और आग के सकट मे ढकेला जा रहा है। क्या औचित्य और वास्तविकता से हमे इतना निराश हो जाना चाहिए कि हम मृत्यु और विनाश की बाढ मे कूदने से पूर्व यह भी मालूम नही कर सकते कि यह सब कुछ क्यो हो रहा है ? और स्वय हमारे भाग्य पर इसका क्या प्रभाव पडेगा ?

बरतानिया सरकार का उत्तर और कांग्रेस का पहला क़दम

काग्रेस की इस माग के उत्तर मे बरतानिया सरकार की ओर से वक्तव्यो की एक श्रृखला आरम्भ हो गई। हिन्दुस्तान इगलिस्तान मे वक्तव्य दिए जाने लगे। इस श्रृखला की पहली कडी भारत के वायसराय की वह घोषणा थी जो १७ अक्तूबर को दिल्ली से प्रकाशित हुई। यह घोषणा जो सम्भवत भारत सरकार के सहकारी साहित्य के उलझे हुए ढग और थका देने वाली शैली के विस्तार का सबसे अच्छा नमूना है जिसके पृष्ठ के पृष्ठ पढे जाने के बाद केवल इतना ज्ञात हो पाता है कि युद्ध के उद्देश्य के जानने के लिए बरतानिया के प्रधानमत्री का एक भाषण पढना चाहिए। परन्तु इसमे केवल योरप की शान्ति और उसके अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धो के सुधार की चर्चा हुई है। 'जनतन्त्र' और 'राष्ट्रो की स्वतन्त्रता' के शब्द इसमे नही ढूढे जा सकते। जहा तक हिन्दुस्तान की समस्या का सबध है यह भाषण हमे केवल इतना बताता है कि बरतानिया सरकार ने १९१९ के कानून की भूमिका मे अपनी जिस नीति की घोषणा की थी और जिसका परिणाम १९३५ ई० के कानून के रूप मे निकला था, आज भी वही नीति उसके सामने है। इससे अधिक और बेहतर बात वह कुछ और नही कर सकती।

१७ अक्तूबर १९३९ को वायसराय की घोषणा प्रकाशित हुई और २२ अक्तूबर को उस पर विचार करने के लिए कार्यकारिणी समिति की बैठक वर्धा मे हुई। वह बिना तर्क-वितर्क के इस निष्कर्ष पर पहुची कि यह उत्तर किसी प्रकार भी उसे सन्तुष्ट नही कर सकता और अब उसे अपना वह निर्णय नि सकोच कर लेना चाहिए जो इस समय तक उसने स्थगित कर रखा था। जो निर्णय समिति ने किया वह उसके प्रस्ताव के शब्दो मे यह है

"इन परिस्थितियो मे समिति के लिए सम्भव नहीं कि वह बरतानिया सरकार की साम्राज्यवादी नीति को स्वीकार कर ले। समिति काग्रेस मत्रिमडलो को निर्देश देती है कि जो मार्ग हमारे सम्मुख खुल गया है उसकी ओर अग्रसर होते हुए एक प्राथमिक कदम के रूप मे अपने-अपने प्रान्तो की सरकारो से त्यागपत्र दे दे।"

फलत आठो प्रान्तो मे मन्त्रिमण्डलो ने त्यागपत्र दे दिया।

यह तो इस वृत्तान्त का आरम्भ था। अब देखना चाहिए कि यह अधिक से अधिक कहा तक पहुचता है ? भारत के वायसराय की एक विज्ञप्ति जो ५ फरवरी को दिल्ली से प्रकाशित हुई

और वह उस वार्तालाप का सार प्रस्तुत करती है जो महात्मा गाधी से हुई थी। और फिर गाधी जी का अपना वक्तव्य जो उन्होने ६ फरवरी को प्रकाशित किया था, इस वृतान्त की अन्तिम कडी समझी जा सकती है। इसका सार हम सबको ज्ञात है। बरतानिया सरकार इस बात की सम्पूर्ण इच्छा रखती है कि हिन्दुस्तान इतने अल्प काल मे जो परिस्थितियो के अनुसार सम्भव हो बरतानिया के उपनिवेशो का दर्जा प्राप्त कर ले और बीच के समय की अवधि जहा तक सम्भव हो कम की जाए। परन्तु वह हिन्दुस्तान का यह अधिकार मानने को तत्पर नही कि बिना बाह्य हस्तक्षेप के वह अपना सविधान स्वय अपने चुने हुए प्रतिनिधियो द्वारा बना सकता है और अपने भाग्य का निर्णय कर सकता है। दूसरें शब्दो मे बरतानिया सरकार हिन्दुस्तान के इस अधिकार को स्वीकार नही करती कि वह अपने सम्बन्ध मे स्वय निर्णय कर सके। वास्तविकता की एक स्पर्श से दिखावे का समस्त प्रबध किस प्रकार विनष्ट हो गया। पिछले चार वर्षो के जनतन्त्र और स्वतन्त्रता की सुरक्षा के नारे दुनिया मे गुजरित हो रहे थे। इगलिस्तान और फ्रास की सरकारो के अधिक से अधिक विश्वसनीय व्यक्ति इस सम्बन्ध मे जो कुछ कहते है वह अभी इतना धूमिल नही हुआ कि उसके स्मरण कराने की आवश्यकता पडे। परन्तु जैसे ही हिन्दुस्तान ने यह प्रश्न उठाया, वास्तविकता को नग्न रूप मे सामने आना पडा। अब हमे बताया जाता है कि राष्ट्रो की स्वतन्त्रता की रक्षा निश्चय ही इस युद्ध का उद्देश्य है किन्तु इसकी परिधि योरप की भौगोलिक सीमाओ से बाहर नहीं जा सकती। एशिया और अफ्रीका के निवासियो को यह साहस नही होना चाहिए कि वह इस ओर आशापूर्ण दृष्टि से देखे।

मिस्टर चेम्बरलेन ने २४ फरवरी को बरसिघम मे भाषण करते हुए इस वास्तविकता को और भी स्पष्ट कर दिया है। यद्यपि उनके भाषण मे पूर्व भी इस सम्बन्ध मे हमे कोई सन्देह न था। उन्होने हमारे लिए बरतानिया सरकार की स्पष्ट कार्यनीति के साथ स्पष्ट उक्ति भी प्राप्त करा दी है। वे युद्ध के बारे मे बरतानिया के उद्देश्यो की घोषणा करते हुए विश्व को यह विश्वास दिलाते है

"हमारी लडाई इसलिए है कि हम इस बात की जमानत प्राप्त कर ले कि योरप के छोटे राष्ट्र भविष्य मे अपनी स्वतन्त्रता को अनुचित अत्याचारो की धमकियो से नितान्त रिक्त पायेगे।"

बरतानिया सरकार का यह उत्तर इस अवसर पर यद्यपि बरतानी मुह से निकला है। किन्तु वस्तुत वह अपने तरह का शुद्ध बरतानी नही है बल्कि ठीक-ठीक योरपीय महाद्वीप की उस साधारण मानसिकता का उद्योतन कर रहा है जो लगभग दो शताब्दियो से ससार के सम्मुख रही है। अट्ठारहवी और उन्नीसवी शताब्दी मे मनुष्य के व्यक्तिगत और समष्टिगत स्वतन्त्रता के जितने सिद्धान्त स्वीकार किये गये है उन्हे मागने का विशेष अधिकार केवल योरपीय राष्ट्रो का समझा गया और योरप के राष्ट्रो के ही ईसाई धर्मावलम्बी योरप के सकुचित दायरे से यह बात कभी बाहर न जा सकी। आज बीसवी शताब्दी की मध्यावधि मे दुनिया इतनी बदल चुकी है कि विगत शताब्दी के चिन्तन और कार्य के मानचित्र इतिहास की पुरानी गाथाओ के समान सामने आते है और हमे उन चिह्नो के समान दिखाई देते है जिन्हे हम बहुत दूर पीछे छोड आये। लेकिन हमे स्वीकार करना चाहिए कि कम से कम एक चिह्न अब भी हमारे पीछे नहीं है और वह हमारे साथ-साथ आ रहा है। वह मानवीय अधिकारो के लिए योरप का विशिष्ट चिह्न है।

ठीक-ठीक स्थिति का ऐसा ही मानचित्र हिन्दुस्तान के राजनैतिक और राष्ट्रीय अधिकार ने प्रश्न मे भी हमारे सम्मुख प्रस्तुत कर दिया है। हमने जब युद्ध की घोषणा के पश्चात् यह प्रश्न

उठाया कि युद्ध का उद्देश्य क्या है और हिन्दुस्तान के भाग्य पर इसका क्या प्रभाव पडने वाला है तो हम इस बात से अनभिज्ञ न थे कि बरतानिया सरकार की नीति १९१७ और १९१९ मे क्या रह चुकी है। हम जानना चाहते थे कि १९३९ की इस दुनिया मे जो दिनो मे शताब्दियो की चाल से बदलती और पलटती हुई दौड रही है। हिन्दुस्तान को बरतानिया सरकार किस स्थान मे देखना चाहती है। इसका स्थान अब भी बदला है या नही ? हमे स्पष्ट उत्तर मिल गया कि नहीं बदला। वह अब भी साम्राज्यवादी दृष्टि मे कोई परिवर्तन उत्पन्न नही कर सकी है। हमे विश्वास दिलाया जाता है कि बरतानिया सरकार इस बात की अत्यधिक इच्छुक है कि जितनी जल्दी सम्भव हो हिन्दुस्तान उपनिवेशो का दर्जा प्राप्त कर ले। हमे ज्ञात था कि बरतानिया सरकार ने अपनी यह इच्छा व्यक्त की है, अब हमे यह बात भी ज्ञात हो गई कि वह इसकी 'अत्यधिक इच्छुक' है। परन्तु प्रश्न बरतानिया सरकार की इच्छा और उसकी इच्छा के विभिन्न चरणो का नही है। सीधा और स्पष्ट प्रश्न हिन्दुस्तान के अधिकार का है। हिन्दुस्तान को यह अधिकार प्राप्त है या नही कि वह अपने भाग्य का निर्णय स्वय करे ? इसी प्रश्न के उत्तर पर समय के सारे प्रश्नो का उत्तर निर्भर है। हिन्दुस्तान के लिए यह प्रश्न बुनियाद की वास्तविक ईट है। वह इसे नही हिलने देगा क्योकि यदि यह हिल जाए तो उसके राष्ट्रीय अस्तित्व का सम्पूर्ण भवन हिल जाएगा।

जहा तक युद्ध का प्रश्न है हमारे लिए स्थिति नितात स्पष्ट हो गई है। हम बरतानिया साम्राज्य का मुखौटा इस युद्ध मे भी उसी प्रकार स्पष्टत देख रहे है जिस प्रकार हमने पिछली लडाई मे देखा था। हम तैयार नही हैं कि इसकी विजय-पताका फहराने के लिए युद्ध मे भाग ले। हमारा मुकदमा बिल्कुल साफ है। हम अपनी पराधीनता की आयु बढाने के लिए बरतानिया साम्राज्य को अधिक शक्तिशाली और अधिक विजयी नही देखना चाहते है। हम ऐसा करने से स्पष्टत इन्कार करते हैं। हमारा मार्ग निश्चय ही इसके बिल्कुल विपरीत दिशा मे जा रहा है।

हम आज कहा खडे हैं ?

अब हम उस स्थान पर वापस आ जाए, जहा से हम चले थे। हमने इस प्रश्न पर विचार करना चाहा था कि ३ सितम्बर की युद्ध-घोषणा के पश्चात् जो कदम हम उठा चुके है वह किस ओर जा रहे है ? और आज हम कहा खडे हैं ? मै विश्वास करता हू कि इन दोनो प्रश्नो का उत्तर इस समय हममे से प्रत्येक व्यक्ति के हृदय मे इस प्रकार सुस्पष्ट होकर उभर आया होगा कि उसे अब केवल वाणी प्रदान करना ही शेष रह गया है। यह आवश्यक नही है कि आप के होठ हिले, मै आपके होठो को हिलता हुआ देख रहा हू। हमने अस्थायी सहयोग का जो कदम १९३१ ई० मे उठाया था उसे हमने युद्ध-घोषणा के पश्चात् वापस ले लिया। इसलिए स्वभावत हमारी दिशा अब असहयोग की ओर है। हम आज उस स्थान पर खडे है जहा हमे निर्णय करना है कि इस दिशा की ओर आगे बढे, या पीछे हो ? जब कदम उठा लिया जाए तो वह रुक नही सकता। अगर रुकेगा तो पीछे हटेगा। हम पीछे हटने से इन्कार करते है। हम केवल यही कर सकते हैं कि आगे बढे। मुझे विश्वास है कि मै आप सबके मन की आवाज अपनी आवाज के साथ मिला रहा हू जब मै यह घोषणा करता हू कि हम आगे बढेगे।

पारस्परिक सद्भावना

इस सम्बन्ध मे स्वभावत एक प्रश्न सम्मुख आ जाता है। इतिहास का निर्णय है कि

राष्ट्रो के सघर्ष मे एक शक्ति तभी अपना आधिपत्य छोड सकती है जब दूसरी शक्ति उसे ऐसा करने पर विवश कर दे। औचित्य और नैतिकता के उच्च सिद्धान्त व्यक्तियो की कार्यप्रणाली को बदलते रहे है किन्तु आधिपत्य रखने वाले राष्ट्रो के स्वार्थो पर कभी प्रभाव नही डाल सके। आज भी हम ठीक २०वी शताब्दी की मध्यावधि मे देख रहे है कि योग्य नवीन प्रतिक्रियावादी राष्ट्रो ने किस प्रकार मानव के व्यक्तिगत और राष्ट्रीय हितो की समस्त अवधारणाओ को विनष्ट कर दिया और न्याय तथा औचित्य के स्थान पर बर्बर शक्ति का तर्क ही निर्णयो के लिए मात्र तर्क रह गया है। परन्तु साथ ही जहा दुनिया चित्र का यह निराशापूर्ण पक्ष उभार रही है वही आशा का एक दूसरा पक्ष भी है जिसकी अपेक्षा नही की जा सकती। हम देख रहे है कि बिना भेदभाव के दुनिया के असख्य मनुष्यो की एक नवीन विश्वव्यापी जागृति भी है। जो अत्यन्त तीव्र गति से प्रत्येक दिशा मे उभर रही है। यह दुनिया की पुरातन व्यवस्था की निराशाओं से थक गई है। और औचित्य, न्याय तथा शाति की एक नवीन व्यवस्था के लिए व्याकुल है। दुनिया की यह नवीन जागृति जिसमे पिछले युद्ध के पश्चात् मानवीय आत्माओ की गहराई मे करवट बदलना आरम्भ कर दिया था अब प्रतिदिन मस्तिष्को मे.उभर रही है और मुखरित हो रही है। वह इस प्रकार उभर रही है कि सम्भवत इतिहास मे कभी नही उभरी। ऐसी स्थिति में क्या यह बात समझ की परिधि से बाहर थी कि इतिहास मे उसके पुरातन निर्णयो के विरुद्ध एक नवीन निर्णय की वृद्धि होती है? क्या सम्भव नही कि विश्व के दो बडे राष्ट्र जिन्हे परिस्थिति की गति ने आधिपत्य और पराधीनता के सम्बन्धो से जोड दिया था वह भविष्य मे औचित्य, न्याय और शाति के अन्तर्गत अपना नवीन सम्बन्ध जोडने के लिए तत्पर हो जाए? विश्व-युद्ध की निराशाए किस प्रकार एक आशापूर्ण नवीन जीवन में परिवर्तित हो जाती है औचित्य और न्याय के युग का एक नवीन प्रभात किस प्रकार एक नवीन सूर्योदय का सदेश देने लगता, मानवता की कैसी अनुपम और विश्वव्यापी विजय होती, यदि आज बरतानिया का राष्ट्र सिर उठाकर दुनिया से कह सकता कि उसने इतिहास मे एक नए उदाहरण की वृद्धि करने का कार्य सम्पन्न किया है।

निश्चय ही यह असम्भव नही है किन्तु ससार की समस्त कठिनाइयो से कही अधिक कठिन है।

समय के सम्पूर्ण फैले हुए तिमिर मे मानवीय प्रकृति का यही एक उज्ज्वल पक्ष है जो महात्मा गाधी की महान आत्मा को कभी थकने नही देता। वह पारस्परिक सद्भाव का जो द्वार उनके लिए खोल जाता है उसमे वह बिना अपने पक्ष को तनिक भी दुर्बल महसूस किए बिना नि सकोच कदम रखने के लिए तत्पर हो जाते है।

बरतानिया के मत्रिमडल के विभिन्न सदस्यो ने युद्ध के पश्चात् दुनिया को यह विश्वास दिलाने का प्रयास किया है कि बरतानिया साम्राज्य का पिछला युग समाप्त हो चुका और अब बरतानी राज्य केवल शाति और न्याय के उद्देश्यो के प्रति ही प्रतिबद्ध है। हिन्दुस्तान से अधिक और कौन सा देश हो सकता है जो आज किसी ऐसी घोषणा का स्वागत करता है। परन्तु वास्तविकता यह है कि जिन घोषणाओ के होते हुए भी बरतानिया साम्राज्य आज भी उसी प्रकार शान्ति और न्याय का मार्ग अवरुद्ध किए खडा है जिस प्रकार युद्ध से पहले था। हिन्दुस्तान की माग इस प्रकार समस्त दावो के लिए एक वास्तविक कसौटी थी दावे कसौटी पर कसे गये और अपनी सच्चाई का विश्वास हमे न दिला सके।

हिन्दुस्तान का राजनैतिक भविष्य और अल्पसंख्यक समुदाय

जहा तक युग की वास्तविक समस्या का सम्बन्ध है समस्या इसके अतिरिक्त कुछ भी नही है जो मैने सक्षेप मे आपके सामने प्रस्तुत कर दी है। गत सितम्बर मे जब युद्ध-घोषणा के पश्चात् काग्रेस ने अपनी मागे प्रस्तुत की तो उस समय उन मे से किसी व्यक्ति की कल्पना मे भी यह बात नही आई थी कि इस स्पष्ट और सहज माग मे जो हिन्दुस्तान के नाम पर की गई है और जिससे देश के किसी साम्राज्य और किसी दल को भी विरोध नही हो सकता, साम्प्रदायिकता का प्रश्न उठाया जा सकेगा। निश्चय ही देश मे ऐसे दल विद्यमान है जो राजनैतिक सघर्ष के मैदान मे नही जा सकते। वहा तक काग्रेस के कदम पहुच गये है जो प्रत्यक्ष कार्यवाही की कार्यप्रणाली से, राजनैतिक हिन्दुस्तान के बहुसख्यक समुदाय ने ग्रहण कर लिया है सहमत है। परन्तु जहा तक देश की स्वतन्त्रता और उसके जन्मसिद्ध अधिकार की स्वीकृति का सम्बन्ध है मानसिक जागृति अब उन प्राथमिक चरणो से बहुत दूर निकल चुकी है कि देश का कोई दल भी इस उद्देश्य से विरोध करने का साहस कर सके। वह दल भी जो अपने वर्ग के विशिष्ट स्वार्थो की रक्षा के लिए विवश है कि वर्तमान राजनैतिक स्थिति के परिवर्तन के इच्छुक न हो, समय के व्यापक वातावरण की माग मे विवश हो रहे है और उन्हे भी हिन्दुस्तान की राजनैतिक मजिल को स्वीकार करना पडता है। फिर भी जहा समय के परीक्षात्मक प्रश्न ने स्थिति के दूसरे पक्षो पर से पर्दे उठा दिए है वही इस पक्ष को भी अवगुठन रहित कर दिया है। हिन्दुस्तान और इगलैड दोनो जगह एक के पश्चात् दूसरे इस प्रकार के प्रयत्न किये गये है कि युग के राजनैतिक प्रश्न को साम्प्रदायिक समस्या के साथ जोड कर प्रश्न की वास्तविक स्थिति को सदिग्ध बना दिया जाए। बार-बार दुनिया को यह विश्वास दिलाने की चेष्टा की गई कि हिन्दुस्तान की राजनैतिक समस्या के समाधान के मार्ग मे अल्पसख्यक समुदायो की समस्या अवरोध उत्पन्न कर रही है।

यदि पिछले डेढ सौ वर्षो मे हिन्दुस्तान मे बरतानिया साम्राज्य की यह नीति रह चुकी है कि देशवासियो के आन्तरिक मतभेदो को उभार कर नए-नए घटको मे उन्हे विभाजित किया जाए और फिर इन घटको को अपने राज्य की सुद्रढता के हेतू काम मे लाए तो वह हिन्दुस्तान की राजनैतिक पराधीनता का एक स्वाभाविक परिणाम था और हमारे लिए अब निरर्थक है कि इसकी शिकायत से अपने मनोभावो मे कडवाहट उत्पन्न करे। एक विदेशी राज्य निश्चय ही इस देश की आन्तरिक एकता की इच्छुक नही हो सकती जिसकी आन्तिरिक मतभेद ही उस सरकार के अस्तित्व के लिए सबसे बडी जमानत है। परन्तु एक ऐसे युग मे जबकि दुनिया को यह विश्वास कराने की चेष्टाए की जा रही है कि बरतानिया साम्राज्य के हिन्दुस्तानी इतिहास का पिछला चरण समाप्त हो चुका है निश्चय ही यह कोई बडी आशा न थी .यद्यपि हम बरतानिया के राजनीतिज्ञो से यह आशा रखते थे कि कम से कम इस क्षेत्र मे अपनी नीति को वह पिछले युग की मानसिकता से बचाने का प्रयास करे। लेकिन ५ महीनो की घटनाओ की जो गति रह चुकी है उसने सिद्ध कर दिया कि अभी ऐसी आशाये रखने का समय नही आया, पर जिस काल के सम्बन्ध मे दुनिया को विश्वास दिलाया जा रहा है कि वह समाप्त हो गया, अभी उसकी समाप्ति शेष है।

इसके चरण चाहे कुछ भी रहे हो किन्तु हम स्वीकार करते हैं कि दुनिया के समस्त देशों के समान हिन्दुस्तान की भी अपनी आन्तरिक समस्याए है और इन समस्याओ मे एक महत्त्वपूर्ण समस्या साम्प्रदायिक समस्या है। हम बरतानिया सरकार से यह आशा नही रखते और हमें रखनी भी नही चाहिए कि वह इस समस्या के अस्तित्व को स्वीकार नहीं करेगी। यह समस्या

विद्यमान है और यदि हम आगे बढना चाहते है तो हमारा कर्तव्य है कि इसके अस्तित्व को स्वीकार करते हुए कदम उठाए। हम स्वीकार करते हैं कि हर कदम जो दूसरी उपस्थिति की उपेक्षा कर के उठेगा निश्चय ही एक अलग कदम होगा। परन्तु साम्प्रदायिक समस्या की उपस्थिति की स्वीकृति के अर्थ केवल यही होने चाहिए कि उसके अस्तित्व को स्वीकार किया जाए। उसके यह अर्थ नहीं होने चाहिए कि उसे हिन्दुस्तान के राष्ट्रीय अधिकार के विरुद्ध एक उपकरण के रूप मे उपयुक्त किया जाए। बरतानिया साम्राज्य सदैव इस समस्या को इसी उद्देश्य से उपयोग मे लाती रही है ,यदि अब वह अपने हिन्दुस्तानी इतिहास के पिछले युग को समाप्त करना चाहती है तो उसे मालूम होना चाहिए कि सर्वप्रथम पक्ष जिसमे हम स्वभावत उस परिवर्तन की झलक देखना चाहेगे वह यही पक्ष है।

कांग्रेस ने साम्प्रदायिक समस्या के सन्दर्भ मे अपने लिए जो जगह बनाई है, वह क्या है ? कांग्रेस का पहले दिन से दावा रहा है कि वह हिन्दुस्तान को समान रूप मे अपने सामने रखती है और जो हिन्दुस्तानी राष्ट्र के लिए उठाना चाहती है हमे स्वीकार करना चाहिए कि कांग्रेस ने यह दावा करके दुनिया को इस बात का अधिकार दे दिया है कि वह जितनी भी कठोर कटु आलोचना के साथ चाहे उसकी नीति की विवेचना करे और कांग्रेस का कर्तव्य है कि इस विवेचन मे अपने को उत्तीर्ण सिद्ध करे। मै चाहता हू कि समस्या के इस पक्ष को सामने रखकर हम आज कांग्रेस की नीति पर पुन दृष्टिपात करे।

जैसा कि मैने अभी आपसे कहा कि इस बारे मे स्वाभाविक रूप से तीन बाते ही सामने आ सकती है—साम्प्रदायिक समस्या की उपस्थिति, उसकी महत्ता, उसकी निर्णय पद्धति।

कांग्रेस का सम्पूर्ण इतिहास इस बात का साक्षी है कि उसने इस समस्या की उपस्थिति को सदैव स्वीकार किया है। उसने इसकी महत्ता को घटाने की चेष्टा नही की। उसने इसके निवारण के लिए वही पद्धति स्वीकार की जिससे अधिक सन्तोषजनक पद्धति कोई नही बताई जा सकती और यदि बताई जा सकती है तो उसकी प्राप्ति मे कांग्रेस के दोनो हाथ हमेशा बढे रहे और आज भी बढ रहे हैं।

इसकी महत्ता की स्वीकृति इससे अधिक हमारे मस्तिष्क पर क्या प्रभाव डाल सकती है कि हम इसे हिन्दुस्तान की राष्ट्रीय मनोकाक्षा की प्राप्ति के लिए सबसे पहला प्रावधान समझे ' मैं इस बात को एक ऐसे सत्य मे स्वीकार करूगा जो नकारी नही जा सकती और वह यह है कि कांग्रेस का विश्वास सदैव से ऐसा ही रहा है।

कांग्रेस ने सर्वथा इस सम्बन्ध मे दो मौलिक सिद्धान्त अपने सम्मुख रखे और जब भी कोई कदम उठाया तो इन दोनो सिद्धान्तो को स्पष्टत और अन्तिम रूप मे स्वीकार करके उठाया

(१) हिन्दुस्तान का जो भी सविधान भविष्य मे बनाया जाए उसमे अल्पसख्यको के अधिकारो और हितो की पूर्ण सुरक्षा होनी चाहिए।

(२) अल्पसख्यको के अधिकारो और हितो के लिए किन-किन सुरक्षाओ की आवश्यकता है? इसके निर्णायक स्वय अल्पसख्यक समुदाय हो न कि बहुसख्यक समुदाय। अत सुरक्षाओ का निर्णय उनकी अनुमति से होना चाहिए न कि बहुमत से।

अल्पसख्यको की समस्या केवल हिन्दुस्तान मे ही नही है, यह समस्या दुनिया के दूसरे देशो मे भी रह चुकी है। मैं आज इस स्थान से दुनिया को सम्बोधित करने का साहस करता हू। मैं जानता हू कि क्या इससे भी अधिक स्पष्ट और असदिग्ध नीति इस सबध मे ग्रहण की जा सकती है? यदि ग्रहण की जा सकती है तो वह नीति क्या है? क्या इस नीति मे कोई ऐसी

कमी रह गई है जिसके कारण कांग्रेस को उसका कर्तव्य याद दिलाने की आवश्यकता है ? कांग्रेस अपने कर्तव्य-निर्वाह की त्रुटियो पर विचार करने के लिए हमेशा तैयार रही है और आज भी तत्पर है।

मै उन्नीस वर्षो से कांग्रेस मे हू। इस पूरी अवधि मे कोई ऐसा निर्णय नही हुआ जिसके रूप देने मे मुझे सम्मिलित रहने का सम्मान प्राप्त न रहा हो। मै कह सकता हू कि इन १९ वर्षो मे एक दिन भी ऐसा कांग्रेस की विचार-पद्धति मे नही बीता जब उसने इस समस्या का निर्णय इसके अतिरिक्त किसी अन्य ढग से भी करने का विचार किया हो। यह केवल घोषणा ही न थी उसकी सुदृढ और सकल्पित कार्य-पद्धति थी। गत १५ वर्षो मे बार-बार इस कार्य-प्रणाली की कठिन से कठिन परीक्षण की स्थितिया उत्पन्न हुई किन्तु यह चट्टान अपनी जगह से कभी न हिल सकी।

आज भी इसने सविधान सभा के सम्बन्ध मे इस समस्या को जिस प्रकार स्वीकार किया है वह इसके लिए पर्याप्त है कि इन दोनो को अधिक से अधिक स्पष्ट रूप मे देख लिया जाए। स्वीकृति प्राप्त अल्पसख्यको को यह अधिकार प्राप्त है कि यदि वह चाहे तो केवल अपने मतो मे अपने प्रतिनिधियो को निर्वाचित करके उस सभा मे भेजे। उनके प्रतिनिधियो को कामो पर अपने सम्प्रदाय के मतो के अतिरिक्त और किसी के मत का बोझ न होगा। जहा तक अल्पसख्यको के अधिकारो और हितो की समस्याओ का सबध है निर्णय का आधार सविधान सभा का बहुमत नही होगा, स्वय अल्पसख्यको की अनुमति होगी। यदि किसी समस्या मे मतैक्य न हो सके तो किसी निष्पक्ष पचायत के द्वारा निर्णय कराया जा सकता है जिसे अल्पसख्यको ने भी स्वीकार कर लिया हो। अन्तिम प्रस्ताव केवल शका निवारण के हेतु हैं। अन्यथा इसकी बहुत कम सम्भावना है कि इस प्रकार की स्थितिया सामने आयेगी। यदि इस प्रस्ताव के स्थान पर कोई अन्य कार्यान्वयन योग्य योजना हो सकती है तो उसे ग्रहण किया जा सकता है।

यदि कांग्रेस ने अपनी कार्यप्रणाली के लिए यह सिद्धात स्वीकार कर लिए है और इस बात की पूरी कोशिश कर चुकी है, तथा कर रही है कि इस प्रणाली पर स्थिर रहे तो इसके पश्चात् अन्य कौन सी बात रह गई है कि जो बरतानिया के राजनीतिज्ञो को इस पर विवश करती है कि अल्पसख्यको के इन अधिकारो की समस्या को वह हमे बार-बार याद दिलाए ? और दुनिया को इस भ्रम मे डाले कि हिन्दुस्तान की इस समस्या के समाधान के मार्ग मे जो समस्या अवरोधक है वो अल्पसख्यको की समस्या है। यदि वस्तुत इस समस्या के कारण बाधा उत्पन्न हो रही है तो क्यो बरतानिया सरकार हिन्दुस्तान के राजनैतिक भाग्य की सुस्पष्ट घोषणा करके हमे इसका अवसर नही दे देती कि हम सब मिलकर बैठे और इस बात की स्वीकृति से इस समस्या का हमेशा के लिए निवारण कर ले ?

हममे भेदभाव उत्पन्न किये गये और हम पर दोष लगाया जाता है कि हममे मतभेद है। हमे मतभेदों के मिटाने का अवसर नही दिया जाता और हम से कहा जाता है कि हमे मतभेद मिटाने चाहिए। यह स्थिति है जो हमारे चारो ओर उत्पन्न कर दी गई है। यह बधन है जो हमे हर ओर से जकडे हुए हैं। फिर भी इस स्थिति की कोई विवशता भी हमे इस बात से नही रोक सकती कि प्रयत्न और साहस का कदम आगे बढाएँ क्योकि हमारा मार्ग समस्त कठिनाइयो का मार्ग है और हमे प्रत्येक कठिनाई पर विजय प्राप्त करनी है।

हिन्दुस्तान के मुसलमान और हिन्दुस्तान का भविष्य

यह हिन्दुस्तान के अल्पसख्यको की समस्या थी। परन्तु क्या हिन्दुस्तान मे मुसलमानो की स्थिति एक ऐमे अल्पसख्यक समुदाय की है जो अपने भविष्य को शकातुर और भय की दृष्टि से देख सकती है और वह समस्त आशकाए अपने सामने ला सकती है जो स्वभावत एक अल्पसख्यक समुदाय के मस्तिष्क को विचलित कर देती है।

मुझे ज्ञात नही कि आप लोगो मे कितने व्यक्ति ऐसे हैं जो मेरी उन रचनाओ को देख चुके हैं जिन्हे आज मे अट्ठाईस वर्ष पूर्व मैं 'अलहिलाल के पृष्ठो पर लिखता रहा हू। यदि कुछ व्यक्ति ऐसे भी उपस्थित हैं तो मै उनसे निवेदन करूगा कि वह उन बातो का स्मरण करे। मैने उस समय भी अपने इस विश्वास को अभिव्यक्त किया था और इसी प्रकार आज भी करना चाहता हू कि हिन्दुस्तान की राजनैतिक समस्या मे कोई बात भी इतनी अनुचित नही समझी गई जितनी यह बात कि हिन्दुस्तान के मुसलमानो की स्थिति एक राजनैतिक अल्पसख्यक की है और इसलिए उन्हे एक जनतात्रिक हिन्दुस्तान मे अपने अधिकारो और हितो की ओर से आशकित रहना चाहिए। इस एक मौलिक गलती ने असख्य भ्रमो के लिए द्वार खोल दिया। अनुचित बुनियादो पर अनुचित दीवारे चुनी जाने लगी। इसने एक ओर से स्वय मुसलमानो के लिए उसकी वास्तविक स्थिति को सदिग्ध बना दिया, दूसरी ओर दुनिया को एक ऐसे भ्रम मे डाल दिया जिसके पश्चात् वह हिन्दुस्तान को उसकी वास्तविक स्थिति मे नही देख सकती।

यदि समय होता तो मै आपको सविस्तार बतलाता कि इस अनुचित और कृत्रिम रूप को गत साठ वर्षो से किस प्रकार रूपायित किया गया है और किन हाथो ने इसे यह रूप दिया है? वस्तुत यह भी उसी फूट की उत्पत्ति है जिसका चित्र इडियन नेशनल काग्रेस के आदोलन के प्रारम्भ होने के पश्चात् हिन्दुस्तान के सरकारी मस्तिष्को मे बनना आरम्भ हो गया था और जिसका उद्देश्य यह था कि मुसलमानो को इस नवीन जागृति के विरुद्ध प्रयोग करने के लिए तत्पर किया जाए। इस चित्र मे दो बाते विशेष रूप से उभारी गई थी। एक यह कि हिन्दुस्तान मे दो भिन्न राष्ट्र रहते है—एक हिन्दू राष्ट्र है और एक मुसलमान राष्ट्र है। अत सयुक्त राष्ट्रीयता के नाम पर यहा कोई माग नही की जा सकती। दूसरी बात यह है कि मुसलमानो की सख्या हिन्दुओ की तुलना मे बहुत कम है अत यहा जनतात्रिक सस्थाओ की स्थापना का अनिवार्यत परिणाम यह निकलेगा कि हिन्दू बहुसख्यक समुदाय का राज्य स्थापित हो जायेगा और मुसलमानो का अस्तित्व सकटग्रस्त हो जायेगा। मैं इस समय अधिक विस्तार मे नही जाऊगा। मै केवल इतनी बात आपको याद दिला दूगा कि यदि इस समस्या का प्रारम्भिक इतिहास आप जानना चाहते है तो आपको एक भूतपूर्व वायसराय लार्ड डफरिन और पश्चिमी उत्तरी प्रान्त और अब सयुक्त प्रान्त के एक भूतपूर्व उपराज्यपाल सर आक्लैड कालविन के समय की ओर लौटना चाहिए।

बरतानिया साम्राज्य ने भारत-भूमि मे समय-समय पर जो बीज बोये है उसमे से एक बीज यह था जिसमे तुरन्त ही फूल-पत्ते निकल आए और हालाकि पचास वर्ष बीत चुके है किन्तु अभी तक उसकी जडो की नमी शुष्क नही हुई।

राजनैतिक बोलचाल मे जब कभी अल्पसख्यक शब्द बोला जाता है तो उससे अभिप्राय यह नहीं होता कि गणित के साधारण जोड-घटाने के नियम के अनुसार प्रत्येक ऐसी सख्या जो एक दूसरी सख्या से कम हो अनिवार्यत 'अल्पसख्यक' होती है और उसे अपनी सुरक्षा की ओर से विचलित होना चाहिए, बल्कि इससे अभिप्रेरित एक ऐसा कमजोर दल होता है जो

सख्या और योग्यता दोनो दृष्टियो से अपने को इस योग्य नही पाता कि एक बडे और शक्तिशाली समुदाय के साथ रहकर अपनी रक्षा के लिए आत्मविश्वास कर सके। इस स्थिति के लिए केवल यही पर्याप्त नही कि एक समुदाय की सख्या दूसरे दल मे कम हो बल्कि यह भी आवश्यक है कि सख्या अपने आप मे कम हो और इतनी कम हो कि उससे अपनी रक्षा की आशा नही की जा सकती हो। साथ ही इसमे सख्या के साथ गुण का प्रश्न भी उपस्थित होता है। कल्पना कीजिये कि एक देश मे दो समुदाय हैं। एक की सख्या एक करोड है, दूसरे की दो करोड है। अब, यद्यपि एक करोड दो करोड का आधा होगा और इसलिए दो करोड से कम होगा, किन्तु राजनैतिक दृष्टि से आवश्यक न होगा कि केवल इस आनुपातिक अन्तर के आधार पर हम उसे एक अल्पसख्यक स्वीकार करके उसके अस्तित्व को दुर्बल मान ले। इस प्रकार का अल्पसख्यक समूह होने के लिए सख्या के आनुपातिक अतर के साथ दूसरी प्रक्रियाओ की उपस्थिति भी आवश्यक है।

अब तनिक विचार कीजिए कि इस दृष्टि से हिन्दुस्तान मे मुसलमानो की वास्तविक स्थिति क्या है ? आपको अधिक समय तक सोचने की आवश्यकता न पडेगी। आप केवल क्षण मात्र मे जान लेगे कि आपके सम्मुख एक विशाल समुदाय अपनी इतनी बडी और फैली हुई सख्या के साथ सिर उठाए खडा है कि उसके सबध मे 'अल्पसख्यक' की कमजोरियो का आभास भी करना अपने को धोखा देना है।

मुसलमानो की कुल सख्या मुल्क मे आठ-नौ करोड है। वह देश के दूसरे समुदायो के समान सामाजिक और नस्ली घेरो मे बटी हुई नही है। इस्लामी जीवन की समानता और भ्रातृत्वपूर्ण एकता के सुदृढ सबधो ने उसे सामाजिक विघटन की दुर्बलताओ मे बडी सीमा तक सुरक्षित रखा है। यह सख्या निश्चय ही देश की सपूर्ण जनसख्या के एक-चौथाई से अधिक नही है। परन्तु प्रश्न सख्या के अनुपात का नही है, स्वय सख्या और उसकी गुणात्मकता का है। क्या मानवीय पदार्थ की इतनी विपुल राशि के लिए इस प्रकार की शकाओ का कोई उचित कारण हो सकता है कि वह एक स्वतत्र और जनतात्रिक हिन्दुस्तान मे अपने अधिकारो और हितो की रक्षा स्वय नही कर सकेगी ?

यह सख्या किसी एक ही क्षेत्र मे सिमटी हुई नही है बल्कि एक विशिष्ट अनुपात के साथ देश के विभिन्न भागो मे फैल गई है। हिन्दुस्तान के ११ प्रातो मे से चार प्रात ऐसे है जहा बहुमत मुसलमानो का है और दूसरे धार्मिक समुदाय अल्पसख्यक समूह के रूप मे है। यदि बरतानिया के अधीन बिलोचिस्तान को भी इसमे जोड दिया जाए तो चार के स्थान पर मुस्लिम बहुमत के पाच प्रात हो जायेगे। यदि हम अभी विवश है कि धार्मिक मतभेद के आधार पर ही 'बहुसख्यक' और 'अल्पसख्यक' का विचार करते रहे तो भी इस अवधारणा मे मुसलमानो की जगह केवल एक 'अल्पसख्यक' ही दिखाई नही देगी। यदि वह सात प्रातो मे अल्पसख्यक है तो पाच प्रातो मे उन्हे बहुसख्यक का स्थान प्राप्त है। ऐसी स्थिति मे कोई कारण नही कि उन्हे एक अल्पसख्यक समूह होने का कारण विचलित कर सके।

हिन्दुस्तान का भावी सविधान अपनी विवरणात्मकता मे चाहे जिस प्रकार का हो, किन्तु उसकी एक बात हम सबको ज्ञात है वह पूर्ण अर्थो मे एक अखिल भारतीय सघ का जनतात्रिक सविधान होगा जिसकी समस्त ईकाइया अपने-अपने आन्तरिक मामलो मे स्वतन्त्र होगी और सघीय केन्द्र के भाग्य मे केवल वही बाते रहेगी जिनका सबध देश के सार्वजनिक और देशव्यापी समस्याओ से होगा—जैसे विदेश नीति, रक्षा, कस्टम आदि। ऐसी स्थिति मे क्या सभव

है कि कोई मस्तिष्क जो एक जनतांत्रिक सविधान के पूर्णतया कार्यान्वित होने और समवैधानिक रूप मे चलने का चित्र थोडी देर के लिए भी अपने सामने ला सकता है वह उन शकाओ को स्वीकार करने के लिए तत्पर हो जाए जिन्हे बहुसख्यक और अल्पसख्यक के इस भ्रामक प्रश्न ने उत्पन्न करने की चेष्टा की है? मै एक क्षण के लिए भी यह विश्वास नही कर सकता कि हिन्दुस्तान के भावी मानचित्र मे उन शकाओ के लिए कोई जगह निकल सकती है। वस्तुत यह समस्त सदेह इसलिए उत्पन्न हो रहे है कि एक बरतानी राजनीतिज्ञ की विख्यात उक्ति के अनुसार, जो उसने आयरलैड के सबध मे कही थी कि हम अभी तक नदी के तट पर खडे है और तैरना चाहते है किन्तु नदी मे कूदते नही। इन आशकाओ का केवल एक ही उपचार है कि हमे नदी मे निर्भीक कूद जाना चाहिए। जैसे ही हमने ऐसा किया हम जान लेगे कि हमारे समस्त सदेह निराधार थे।

हिन्दुस्तानी मुसलमानों के लिए मौलिक प्रश्न

लगभग तीस वर्ष हुए जब मैने एक हिन्दुस्तानी मुसलमान के रूप मे समस्या पर पहली बार सोचने की चेष्टा की थी। यह वह समय था जब मुसलमानो का बहुमत राजनैतिक सघर्ष के क्षेत्र से पूर्णत अलग-अलग था और साधारणतया उसी मानसिकता के प्रभावाधीन था, जिसने १८८८ ई० मे काग्रेस से पृथकता और विरोध ग्रहण कर लिया था। समय का यह वातावरण मेरे चितन-मनन का मार्ग अवरुद्ध न कर सका। शीघ्र ही एक अतिम निष्कर्ष पर मैं पहुँच गया और उसने मेरे सम्मुख विश्वास और क्रियाशीलता का मार्ग खोल दिया। मैने सोचा कि हिन्दुस्तान अपनी समस्त परिस्थितियो सहित हमारे सम्मुख विद्यमान है और अपने भविष्य की ओर बढ रहा है। हम भी इस नाव मे बैठे हैं और इसकी गति की उपेक्षा नही कर सकते। इसलिए आवश्यक है कि अपनी कार्य-प्रणाली का एक स्पष्ट और अन्तिम निर्णय कर ले। यह निर्णय हम किस प्रकार कर सकते है? केवल इस प्रकार की समस्या के ऊपरी तल पर न रहे, उसकी जडो की गहराई मे उतरे और फिर देखे कि हम अपने आपको किस स्थिति मे पाते है। मैने ऐसा किया और देखा कि सारी समस्या का निवारण केवल एक प्रश्न के उत्तर पर निर्भर है। हम हिन्दुस्तानी मुसलमान हिन्दुस्तान के स्वतत्र भविष्य को शका और अविश्वास की दृष्टि से देखते है या आत्मविश्वास और साहस की दृष्टि से? यदि पहली स्थिति है तो निश्चय ही हमारा मार्ग नितात भिन्न हो जाता है। समय की कोई घोषणा, भविष्य से सबद्ध कोई वादा, सविधान का कोई सरक्षण, हमारे सदेह और भय का वास्तविक उपचार नही हो सकता। हम बाध्य है कि एक तीसरी शक्ति की उपस्थिति सहन करे। यह तीसरी शक्ति उपस्थित है और अपना स्थान रिक्त करने के लिए तत्पर नही तथा हमे भी कोशिश करनी चाहिए कि वह अपना स्थान न छोड सके। परन्तु यदि हम समझते है कि हमारे लिए सदेह तथा भय का कोई कारण नही है तो हमे आत्मविश्वास और साहस की दृष्टि से भविष्य को देखना चाहिए। ऐसी स्थिति मे हमारी कार्य-प्रणाली नितात स्पष्ट हो जाती है। हम अपने आपको बिलकुल एक दूसरी स्थिति मे पाते है जहा सदेह, दुविधा, अकर्मण्यता और प्रतीक्षा की आपत्तियो की प्रतिच्छाया भी नही पड सकती। विश्वास, दृढता, कर्मण्यता और क्रियाशीलता का सूर्य यहा कभी नही डूब सकता। समय का कोई उलझाव, परिस्थितियो का कोई उतार-चढाव समस्याओ की कोई चुभन हमारे कदमो को दिशाहीन नही कर सकती। हमारा कर्तव्य हो जाता है कि हिन्दुस्तान के राष्ट्रीय उद्देश्यो के मार्ग मे उठाए कदम बढे जाए।

मुझे इस प्रश्न का उत्तर जानने मे लेशमात्र भी देर नही लगी। मेरे शरीर के एक-एक रेशे ने पहली स्थिति को अस्वीकार किया। मेरे लिए असभव था कि इसकी कल्पना भी कर सकूँ। मै किसी मुसलमान के लिए यदि उसने इस्लाम की आत्मा को अपने हृदय के एक-एक कोने से ढूढ कर निकाल न फेकी हो तो यह सभव नही समझता कि वह अपने को प्रथम स्थिति मे पाना सहन करेगा।

मैंने १९१२ मे अलहिलाल' निकाला और अपना यह निर्णय मुसलमानो के सम्मुख प्रस्तुत किया। आपको यह याद दिलाने की आवश्यकता नही कि मेरी पुकारे प्रभावहीन नही हैं। १९१२ से १९१६ ई० तक का समय हिन्दुस्तानी मुसलमानो की नई राजनैतिक करवट का युग था। १९२० ई० के अन्तिम समय मे जब चार वर्ष की नजरबन्दी के पश्चात् रिहा हुआ तो मैने देखा कि मुसलमानो की राजनैतिक मानसिकता अपना पिछला साचा तोड चुकी है और नया साचा ढल रहा है। इस घटना को घटित हुए बीस वर्ष बीत चुके है। इस अवधि मे नाना प्रकार के उतार-चढाव होते रहे। परिस्थितियो मे नई-नई धाराये बही। विचारो की नई-नई तरगे उठी। फिर भी एक वास्तविकता बिना किसी परिवर्तन के अब तक विद्यमान है। मुसलमानो का जनमत पीछे लौटने के लिए तत्पर नही।

हा अब वह पीछे लौटने के लिए तैयार नही। परन्तु आगे बढने का मार्ग उसके लिए पुन दुविधाग्रस्त हो रहा है। मै इस समय कारणो की चर्चा नही कर रहा। मै केवल प्रभावो को रेखाकित करने की चेष्टा करूगा। मै अपने सहधर्मियो को याद दिलाऊगा कि मैंने १९१२ ई० मे जिस स्थान से उन्हे सम्बोधित किया था आज भी उसी जगह खडा हू। इस सम्पूर्ण कालावधि ने परिस्थितियो का जो ढेर हमारे सामने लगा दिया है, उनमे से कोई स्थिति ऐसी नही जिससे मेरा परिचय न हो। मेरी आखो ने देखने मे, और मेरे मस्तिष्क ने सोचने मे, कभी गलती नही की। परिस्थितिया मेरे सामने से केवल गुजरती ही न रही, मै उनके अन्दर खडा रहा और मैने एक-एक स्थिति का परीक्षण किया। मै विवश हू कि अपने अवलोकन को न झुठलाऊँ, मेरे लिए सम्भव नही कि अपने विश्वास से लडू। मैं अपने अन्त करण की आवाज को नही दबा सकता। मैं इस पूरे काल मे उनसे कहता रहा हू और आज भी उनसे कहता हू कि हिन्दुस्तान के नौ करोड मुसलमानो के लिए केवल वही कार्य-प्रणाली हो सकती है जिसका आह्वान मैने १९१२ मे किया था।

मेरे सहधर्मियो ने १९१२ ई० मे मेरे आह्वानो को स्वीकार किया था, किन्तु आज उन्ही का मुझसे मतभेद है, उनके इस मतभेद को लेकर मेरे मन मे कोई दुर्भाव नही है। किन्तु मै उनकी सत्यनिष्ठा और उनके निष्कपटता से प्रार्थना करूगा। यह राष्ट्र और देशो के भाग्यो की बात है। हम इसे सामयिक भावुकता के प्रवाह मे बहकर तय नही कर सकते। हमे जीवन की ठोस वास्तविकता के आधार पर अपने निर्णयो की दीवारे निर्मित करनी है। ऐसी दीवारे प्रतिदिन बनाई और ढाई नहीं जा सकती। मै स्वीकार करता हू कि दुर्भाग्यवश समय का वातावरण प्रदूषित हो रहा है। परन्तु उन्हे वास्तविकता के प्रकाश मे आना चाहिए। वह आज भी प्रत्येक दृष्टि से समस्या पर विचार कर ले, वह इसके अतिरिक्त अन्य पथ अपने सामने नहीं पायेगे।

मुसलमान और सयुक्त राष्ट्रीयता

मैं मुसलमान हू और गर्व से महसूस करता हू कि मुसलमान हू। इस्लाम की १३०० वर्ष की वैभवशाली परम्पराये मुझे थाती के रूप मे मिली है। मै तत्पर नही हू कि इसका कोई छोटे से

छोटा अश भी नष्ट होने दू। इस्लाम की शिक्षा, इस्लाम का इतिहास, इस्लामी ज्ञान-विज्ञान और कला, इस्लाम की सभ्यता मेरी सम्पत्ति की पूजी है और मेरा कर्तव्य है कि इसकी रक्षा करू। मुसलमान होने के कारण मै धार्मिक और सास्कृतिक परिधि मे अपना एक विशिष्ट अस्तित्व रखता हू और सहन नही कर सकता कि इसमे कोई हस्तक्षेप करे। परन्तु इन समस्त भावनाओ के साथ मै एक अन्य भावना भी रखता हू जिसे मेरे जीवन की वास्तविकताओ ने जन्म दिया है। इस्लाम की आत्मा मुझे उससे नही रोकती, वह इस मार्ग मे मेरा पथ-प्रदर्शन करती है। मैं गर्व के साथ महसूस करता हू कि मै हिन्दुस्तानी हू। मैं हिन्दुस्तान की एक और अविभाज्य सयुक्त राष्ट्रीयता का एक तत्त्व हू। मैं इस सयुक्त राष्ट्रीयता का एक ऐसा महत्त्वपूर्ण अश हू जिसके बिना दूसरी महानता का रूप अधूरा रह जाता है। मै इसकी बनावट का एक आवश्यक तथ्य हू। मै अपने इस दावे को कभी छोड नही सकता।

हिन्दुस्तान के लिए विधाता का यह निर्णय हो चुका था कि उसकी भूमि पर मनुष्यो की विभिन्न नस्ले, विभिन्न सभ्यताए और विभिन्न धर्मो के सार्थवाह आ कर बसे। अभी इतिहास के ऊषाकाल का आरम्भ नही हुआ था कि इन सार्थवाहो का आगमन आरम्भ हो गया और फिर एक के पश्चात् एक सार्थवाह आता रहा। इसकी विशाल धरती सबका स्वागत करती रही और इसकी दानशीलता ने सबके लिए जगह निकाली। इन्ही सार्थवाहो मे एक अन्तिम सार्थवाह हम इस्लामावलम्बियो का भी था। यह भी पिछले सार्थवाहो के पथ चिह्नो पर चलता हुआ यहा पहुचा और सदैव-सदैव के लिए बस गया। यह ससार की दो भिन्न जातियो और सभ्यताओ का मिलन था। यह गगा और यमुना की धाराओ के समान पहले एक दूसरे से अलग-अलग बहते रहे, किन्तु फिर जैसा कि प्रकृति का अटल नियम है, दोनो को एक सगम मे मिल जाना पडा। इन दोनो का मेल इतिहास की एक महान घटना थी। जिस दिन यह घटना घटी उसी दिन प्रकृति के निर्दिष्ट हाथो ने पुराने हिन्दुस्तान के स्थान पर नए हिन्दुस्तान के ढालने का कार्य आरम्भ कर दिया।

हम अपने साथ अपना भण्डार लाए थे। यह भूमि भी अपने भण्डारो से समृद्धशाली थी। हमने अपनी सम्पत्ति उसको अर्पित कर दी और उसने अपने कोशो के द्वार हम पर खोल दिए। हमने उसे इस्लाम के भण्डार की वह सबसे अधिक मूल्यवान वस्तु दे दी जिसकी उसे सबसे अधिक आवश्यकता थी। हमने उसे जनतन्त्र और मानवीय समानता और भ्रातृत्व का सन्देश पहुचाया।

इसके पश्चात् ११ शताब्दियॉ बीत चुकी है। अब इस धरती पर इस्लाम का दावा उतना ही समीचीन है जितना कि हिन्दू धर्म का। यदि हिन्दू धर्म कई हजार वर्ष से यहा के लोगो का धर्म रहा है तो एक हजार वर्ष से इस देश मे इस्लाम धर्म भी प्रचलित है। जिस प्रकार आज एक हिन्दू सगर्व कह सकता है कि वह भारतीय है और हिन्दू धर्म का अनुयायी है, उसी प्रकार एक मुसलमान सिर ऊचा करके भारतीय होने और इस्लाम धर्म का अनुयायी होने का दावा कर सकता है। इसके अतिरिक्त मै यह भी स्वीकार करूगा कि भारतीय ईसाई भी आज सर उठाकर कह सकता है कि मैं हिन्दुस्तानी हू और भारतवासियो के अनेक धर्मो मे से ईसाई धर्म का अनुयायी हू।

हमारे ११०० वर्ष के मिले-जुले इतिहास मे हमारी समानधर्मी सर्जनात्मक और रचनात्मक उपलब्धियो ने हिन्दुस्तान को समृद्धिशाली बनाया है। हमारी भाषाओ, हमारे काव्य, हमारे साहित्य, हमारी सस्कृति, हमारी कला, हमारी वेशभूषा, हमारी जीवनचर्या और

रीति-रिवाजो पर इस समानधर्मी जीवन की छाप लगी हुई है। हमारी भाषाये भिन्न थी किन्तु हम एक समान भाषा का उपयोग करने लगे, हमारे रीति-रिवाजो और आचरण मे विभिन्नता थी किन्तु उन्होने एक दूसरे को प्रभावित किया और परिणामत एक नया रूप धारण कर लिया। हमारी वेशभूषा पुरातनकालीन चित्रो मे ही देखी जा सकती है। उसे अब कोई पहनता नही है। यह साझी सम्पदाये हमारी साझी राष्ट्रीयता की थाती हैं और हम इन्हे छोडना नही चाहते और न उस युग मे लौटना चाहते है जब मिले-जुले साहसी जीवन का आरम्भ हुआ था। यदि हममे से कोई ऐसा हिन्दू है जो हजार वर्ष या उससे अधिक काल की हिन्दू जीवन पद्धति को वापस लाना चाहता है तो वह केवल स्वप्नलोक मे विचरण कर रहा है और इस प्रकार के स्वप्न यथार्थ नहीं बनते। इसी प्रकार यदि हममे से कोई मुसलमान अतीतकालीन अपनी सभ्यता और सस्कृति का पुनरुत्थान करना चाहता है जिसे मुसलमान एक हजार वर्ष पूर्व ईरान और मध्य एशिया से लाए थे तो वह भी स्वप्नलोक मे विचरण करते हैं और जितनी जल्दी वह जाग जाये उतना ही अच्छा है। यह अस्वाभाविक कल्पनाए है जिनकी जडे यथार्थ की भूमि मे फैल नही सकती। मैं उन व्यक्तियो मे से हू जिनका विचार है कि धर्म का पुनरुत्थान आवश्यक है किन्तु सस्कृति के सन्दर्भ मे पुनरुत्थान का अर्थ है प्रगति के पथ को अस्वीकार करना।

हमारे इस एक हजार वर्ष के मिले-जुले जीवन ने एक सयुक्त राष्ट्रीयता का साचा ढाल दिया है, ऐसे साचे बनाए नही जा सकते। वह प्रकृति के अदृश्य हाथो से शताब्दियो मे स्वत निर्मित होते है। अब यह साचा ढल चुका है और नियति ने इस पर अपनी मुहर लगा दी है। हमे रुचिकर हो या न हो किन्तु अब हमे एक हिन्दुस्तानी राष्ट्र और अविभाज्य हिन्दुस्तानी राष्ट्र से पृथकता का कोई कृत्रिम विचार हमारे इन एक होने को दो नही बना सकते। हमे ईश्वरीय निर्णय पर नतमस्तक होना चाहिए और अपने भाग्य निर्माण मे सलग्न हो जाना चाहिए।

सज्जनो ! मै अब आपका अधिक समय नही लूगा। मै अब अपना अभिभाषण समाप्त करना चाहता हू परन्तु इसकी समाप्ति के पूर्व मुझे एक बात की याद दिलाने की अनुमति दीजिए। आज हमारी समस्त सफलताए तीन बातो पर निर्भर है —एकता, अनुशासन और महात्मा गाधी के नेतृत्व मे विश्वास। यही एक मात्र नेतृत्व है जिसने हमारे आन्दोलन के भव्य अतीत का निर्माण किया है और केवल इसी से हम एक उज्ज्वल भविष्य की आशा कर सकते हैं।

हमारी परीक्षा का एक सकटपूर्ण युग हमारे सम्मुख है। हमने समस्त ससार की आखो को, इस दृश्य को देखने का निमन्त्रण दे दिया है। चेष्टा करे कि हम इसके योग्य सिद्ध हो।

□

भाग ३

समाहार : १९४७–१९५८

स्वतंत्र्योत्तर काल

शिक्षा एवं धर्म

"हमारी वर्तमान कठिनाइयाँ योरप के विपरीत भौतिकता के पागलपन से उत्पन्न नही हुई बल्कि धार्मिक कट्टरपन का परिणाम हैं। यदि हम इन पर नियत्रण करना चाहते हैं तो प्राथमिक चरणो मे धार्मिक शिक्षा की अस्वीकृति उपाय नही है बल्कि इस समस्या का समाधान प्रत्यक्ष निर्देशन के अन्तर्गत उच्च कोटि की तथा स्वस्थ धार्मिक शिक्षा देने मे है ताकि भ्रामक धार्मिक विश्वास बालको को अत्यत अल्पायु मे प्रभावित न कर सके।"

शिक्षा एवं धर्म *

दोस्तो !

केन्द्रीय शिक्षा सलाहकार समिति के इस चौदहवे सम्मेलन मे आपका मैं स्वागत करता हू। मैंने इसे 'चौदहवा' सम्मेलन इसलिए कहा कि इससे पहले बोर्ड के तेरह जलसे हो चुके हैं। लेकिन मै सोचना हू, ज्यादा ठीक बात यह होगी कि हम इसे अपनी तरह की पहली बैठक कहे। इस बोर्ड के तेरह जलसे जिस हिन्दुस्तान मे हुए थे वह पन्द्रह अगस्त सन् सैतालिस मे समाप्त हो गया और उमके साथ इतिहास की एक बहुत बडी कहानी की भी इति हो गई। आज हम एक नए हिन्दुस्तान मे इकट्ठे हुए है जिसे अब अपना नया इतिहास बनाना है और जिसके नए बनने वाले इतिहास का एक पृष्ठ आज हम उलट रहे है।

मुझे आशा है कि आप इसे स्थिति के प्रतिकूल नही समझेगे, यदि मै आपको याद दिलाऊ कि स्थिति के इस परिवर्तन मे उस काम के ढग और स्वभाव को भी बहुत कुछ बदल दिया है जिसे पूर्ण करने के लिए आप यहा इकट्ठे हुए है। इस बोर्ड ने आज तक शिक्षा की समस्याओ को जिन तराजुओ मे तौला था, वह आपके लिए पुराने हो गए। अब आपको नए तराजू बनाने पडेगे और नए बट्टो से उनको तौलना पडेगा। अब आप तत्कालीन राष्ट्रीय समस्याओ की लबाई-चौडाई उन फीतो से नही नाप सकते जो कल तक आपको हर तरह की नपाई का काम देते रहे है। हिन्दुस्तान की नई मागो का जवाब देने के लिए आपको नई बुद्धि और नए यन्त्रो की जरूरत होगी।

इस बोर्ड ने इस समय तक राष्ट्रीय शिक्षा के प्रश्न को ध्यान के कितने ही फैलाव और आख की कितनी ही गहराई के साथ देखने की कोशिश की हो लेकिन इस तथ्य की परछाई मे वह अपने दिमाग को नही बचा सकता था कि एक राष्ट्रीय सरकार के बेरोक इरादे उसे सहारा देने के लिए मौजूद नही है। उसे पूरी तरह फैलने की इच्छा रखने पर भी अपने आपको कुछ-न-कुछ सिमटा और सिकुडा हुआ रखना पडता। लेकिन अब वह स्थिति नही रह गई। आप जिस राष्ट्र की शिक्षा की समस्याओ पर सोच-विचार करना चाहते है उसी की राष्ट्रीय सरकार अपने बेरोक इरादो और बधन मुक्त कदमो के साथ आपको सहारा देने के लिए मौजूद हैं। वह आपसे आशा रखती है कि उद्देश्य की सक्रियता और ध्यान की गहराई का जो काटा उसने अपने हाथ मे ले रखा है आप अपने समस्त परामर्शो को भी उसी प्रकार के काटे मे तौलते हुए प्रस्तुत करे।

लेकिन आप इन नए इरादो और नई सरगर्मियो के साथ नए कदम उठाना चाहते है तो इसका यह मतलब कदापि नही होना चाहिए कि इस बोर्ड की पिछली सेवाओ के मूल्य का हमे पूरा आभास नही है। इस बोर्ड ने पिछले तेरह वर्षो के भीतर अपना कर्तव्य सलग्नता और सक्षमता के साथ निभाया है, उसका रिकार्ड उसकी रिपोर्टो के हजारो पृष्ठो मे फैला हुआ है और

---

* केन्द्रीय शिक्षा सलाहकार समिति के चौदहवे सम्मेलन मे दिया गया अध्यक्षीय भाषण नई दिल्ली, १३ जनवरी, १९४८

देश की आजकल की शैक्षणिक गतिविधि इसकी साक्षी है। सभवत इतिहास मे इसकी सबसे अधिक बहुमूल्य सेवा वह समझी जाएगी जो उसने चौवालिस ईस्वी मे बेसिक एजुकेशन (प्राथमिक शिक्षा) की नई स्कीम (योजना) तैयार करके पूर्ण की थी। ब्रिटिश इडिया के इतिहास मे यह पहला अवसर था कि देश की बुनियादी तालीम (प्राथमिक शिक्षा) के प्रश्न को उसके वास्तविक रूप मे देखने की चेष्टा की गई। और एक ऐसा चित्र बनाया गया जिसमे ध्यान का फैलाव और काम की उत्कठा दोनो को हम विद्यमान पाते है, यद्यपि यही दो बाते है जो यहा बहुत कम मिला करती थी। इस चित्र के बनाने मे हमारे भूतपूर्व सलाहकार सर जान सार्जेण्ट ने जो बडा हिस्सा लिया था उसके कारण उनका नाम उचित रूप से इस योजना के साथ जुड गया। मुझे प्रसन्नना है कि वह अभी हमारे देश मे मौजूद है और मौजूद रहेगे। यद्यपि इस समय वह बाहर गए हुए हैं इसलिए इस बैठक मे सम्मिलित न हो सके।

अब हमे विचार करना है कि इस योजना को किस प्रकार समय की इस बदली हुई स्थिति के अनुकूल बनाया जा सकता है और क्योकर उन रुकावटो को जल्दी से जल्दी दूर किया जा सकता है जो इसका रास्ता रोके हुए है ? लेकिन मैं यह सवाल यहा नही छेडूगा। एक एजुकेशन काफ्रेस (शिक्षा सम्मेलन) जो इस तरह के प्रश्नो पर सोच-विचार करने के लिए बुलाई गई है, तीन दिन बाद इसी हाल मे शुरू होगी और मुझे अवसर मिलेगा कि मै वहा विस्तार के साथ अपने विचार रखू।

लेकिन इस सबध मे समस्या का एक विशेष पहलू है जिस पर मै आपका ध्यान दिलाए बिना नही रह सकता। बेसिक एजुकेशन के सबध मे धार्मिक शिक्षा का प्रश्न उठा था और बोर्ड की दो कमेटियो ने इस पर सोच-विचार किया था। लेकिन ये कमेटिया किसी एक निष्कर्ष पर नही पहुच सकी। मैं चाहता हू कि समय की इस बदली हुई स्थिति मे फिर से नए सिरे से इस प्रश्न पर विचार किया जाए क्योकि हमारे देश के लिए यह परिवेश बहुत अहमियत रखता है।

आपको मालूम है कि धार्मिक शिक्षा के बारे मे उन्नीसवी शताब्दी का जो लिबरल (उदारवादी) दृष्टिकोण था, अब साधारणतया अपना मूल्य खो चुका है। पहली बडी लडाई के बाद से ही एक दूसरा दृष्टिकोण बनना आरभ हो गया था जिसे हमारी लडाई के क्रातिकारी परिणामो ने पूरी तरह एक नए माचे मे ढाल दिया है। पहले समझा जाता था कि राष्ट्रीय शिक्षा मे धार्मिक शिक्षा को मिलाने से बच्चो के बेरोक अक्ली उभार को नुकसान पहुचेगा। अब मान लिया गया है कि धार्मिक शिक्षा के बिना कोई उपाय नही है, राष्ट्रीय शिक्षा अगर इस बात से खाली रहेगी तो न तो सच्ची नैतिक आत्मा पैदा हो सकेगी, न मानवतावाद का साचा ठीक तरह ढाला जा सकेगा। रूस को ठीक लडाई के दौरान जिस तरह अपने पिछले फैसले बदलने पडे उनकी कहानी आप सुन चुके है और सन् ४४ मे इगलैड की सरकार को अपने शैक्षणिक नक्शे मे जो सशोधन करना पडा उसका हाल भी आप से छुपा हुआ नही है।

जहा तक हिन्दुस्तान का सबध है, समस्या बिल्कुल एक-दूसरे रूप मे हमारे सामने आ खडी होती है। योरोप और अमरीका मे धार्मिक शिक्षा की जरूरत का नया एहसास इसलिए पैदा हुआ कि लोगो ने देखा कि अगर धार्मिक शिक्षा को अलग रखा जाता है तो लोग जरूरत से ज्यादा बुद्धि वाले बन जाते है। लेकिन हिन्दुस्तान मे धर्म का प्रभाव जिस तरह काम कर रहा है, उसे देखते हुए हमारे सामने यह भय नही है बल्कि एक दूसरा खतरा सामने आ गया है। हमे इसका डर नहीं है कि लोग जरूरत से ज्यादा बुद्धि वाले बन जायेगे। हमे इस सकट ने घेर लिया है कि लोग जरूरत से ज्यादा मजहब (धर्म) वाले बन जाते है। हमारी आजकल की कठिनाइया यूरोप

की तरह भौतिकवादी पागलो ने पैदा नही की, बल्कि धार्मिक पागलो ने उत्पन्न की। अगर हम इस स्थिति से अपने देश को निकालना चाहते हैं तो इसका उपचार यह नही हो सकता कि धार्मिक शिक्षा का आजकल की स्थिति की अनुकम्पा पर छोड दे। हमे चाहिए कि पूरी तरह इसे अपनी देखभाल के अतर्गत ले और अच्छे प्रकार की और सच्ची धार्मिक शिक्षा दिलाए।

—इस प्रकार हम इस बात की रोकथाम कर लेगे कि धर्म अपने गलत रूप में आकर बच्चो के दिमागो को पहले दिन से बिगाड देने का अवसर न पाए। बात साफ है कि हिन्दुस्तान के करोडो वासी अभी इसके लिए तैयार नही हो सकते कि अपने बच्चो को धर्म के लगाव से अलग रखे और मै समझता हू कि स्वय यह आपकी भी इच्छा न होगी। फिर यदि सरकार अपनी शिक्षा के मानचित्र मे धार्मिक शिक्षा के लिए जगह नही निकालना चाहती तो सोचना चाहिए कि इसका नतीजा क्या निकलेगा? यही निकलेगा कि लोग अपने निजी उपायों से बच्चों को प्रारभिक धार्मिक शिक्षा दिलाने की कोशिश करेंगे। यह निजी उपाय आजकल जिस तरह के हो सकते हैं उनका हाल आप से छिपा नही है। मै पूरी जानकारी के साथ कह सकता हू कि न केवल ग्रामो मे बल्कि नगरो मे भी बच्चो की प्राथमिक धार्मिक शिक्षा का काम जिन अध्यापको के हाथो मे आता है वह साधारणतया आधे पढे हुए जाहिल आदमी होते है और धर्म को केवल उसके बिगडे हुए और सकीर्ण रूप मे ही पहचानते है। उनकी पढाई का ढग भी ऐसा होता है जिसमे मस्तिष्क के खुलने और घाव के फैलने की बहुत जगह नही निकल सकती है। स्पष्ट है कि ऐसे हाथो से जिन बच्चो के मस्तिष्क का सबसे पहला साचा ढलेगा उन्हे आगे चल कर कितना ही शिक्षा के नए साचो मे ढालने की चेष्टा की जाए लेकिन वह अपने प्लास्टिक के साचे के प्रभाव से अपने आप को मुक्त नही कर सकते। अगर हम चाहते हैं कि देश के बौद्धिक जीवन को इस बुराई से बचाये तो हमारे लिए जरूरी हो जाता है कि प्राथमिक धार्मिक शिक्षा को लोगो के प्राइवेट उपायो पर न छोड दे। स्वय अपनी देखभाल के साथ इसका प्रबध करे। एक बाहर की सरकार को निश्चय ही यह बात सजती थी कि वह धार्मिक शिक्षा के दायित्व से अपने को अलग रखे। लेकिन एक राष्ट्रीय सरकार इस दायित्व से अलग नही रह सकती। उसका कर्तव्य है कि देश की राष्ट्रीय मानसिकता को ढालने के लिए एक ठीक साचा बनाए। लेकिन हिन्दुस्तान मे धर्म-मजहब को छोड कर हम कोई ऐसा साचा नही बना सकते।

अगर धार्मिक शिक्षा के लिए बेसिक एजुकेशन मे जगह रखी जाए तो यह कितनी मात्रा मे हो? और इसका प्रबध किस प्रकार किया जाए? निस्सदेह इन प्रश्नो पर बहुत अधिक सोच-विचार की जरूरत है और इस मार्ग मे कुछ कठिनाइया भी हैं जिनके दूर करने का रास्ता हमे ढूढना है। लेकिन मेरे लिए इन बातो के विस्तार मे जाना जरूरी नही। अगर वास्तविक प्रश्न तय कर लिया जाय तो फिर विवरण पर विचार करके एक नक्शा बनाया जा सकता है। इसलिए मै आप से निवेदन करूगा कि इस प्रश्न पर नए सिरे से सोच-विचार करने के लिए आप एक कमेटी बना दे और इसे अधिकार दे कि अपनी सिफारिश सीधे सरकार को भेज दे।

एक और समस्या है जिस पर आपको अपना अतिम मत निर्धारित कर लेना है वो यह है कि भविष्य मे हमारी ऊची शिक्षा का माध्यम कौन-सी भाषा हो? मैं समझता हू कि इस बारे मे दो बाते ऐसी है जिनमे आप जरूर सहमत होगे। एक यह कि आगे चलकर अग्रजी भाषा शिक्षा का माध्यम नही रहेगी। दूसरे यह कि जो परिवर्तन भी इस सबध मे किया जाए वह अचानक न किया जाए, धीरे-धीरे किया जाए। मै सोचता हू कि जहा तक ऊचे दर्जे की शिक्षा का सबध है हमे अभी पाच वर्ष तक 'स्टेटस' (यथातथ्य स्थिति) को बनाये रखना चाहिए लेकिन इसके साथ

भावी परिवर्तनो की तैयारियो का काम भी आरम्भ कर देना चाहिए ताकि उस मुद्दत के बाद हम शिक्षा की समस्त शाखाओ की पढाई का काम अपनी देशीय भाषा के माध्यम मे कर सके। मैं चाहता हू, इस बारे मे भी आप सोच-विचार के पश्चात् अपना परामर्श सरकार को दे दे।

इस सबध मे एक मौलिक प्रश्न यह भी उत्पन्न हो जाता है कि अग्रेजी की जगह कोई एक भाषा अपनाई जाए या एक से अधिक ? अर्थात् देश मे यूनीवर्सिटी की भाषा एक रहे या हर प्रात अपनी-अपनी स्थानीय भाषा को अपनाए ? अग्रेजी भाषा हमारे लिए एक विदेशी भाषा थी। इसे पढाई का माध्यम बनाने से हमे कई प्रकार की हानि हुई। लेकिन साथ ही एक बहुत बडा लाभ पहुचा, अर्थात् देश के सारे 'पढे-लिखे **व्यक्तियों**' के ध्यान मे ज्ञान की एक भाषा हो गई और उसमे पूरे देश को एकतायी (एकता) की एक डोरी मे बाध दिया। यह लाभ इतना बडा है कि यदि विदेशी भाषा को माध्यम बनाने का मौलिक नुकसान मेरे सामने न होता तो मेरी बुद्धि इस ओर झुकने लगती कि अब अग्रेजी भाषा को उसके शैक्षणिक स्थान से हटाना उचित न होगा। लेकिन मुझे इस दृश्य की ओर बढने मे अपने आपको रोकना पडता है। मै आप मे एक बात पूछना चाहता हू अगर कल तक एक मद्रासी, एक बगाली, एक पजाबी, को इनमे कोई कठिनाई महमूस नही होती थी कि अपनी मातृभाषा रखते हुए भी एक विदेशी भाषा के माध्यम से शिक्षा पाये तो यह बात क्यो उसके लिए कठिन हो जाएगी कि स्वय अपने देश की एक भाषा के माध्यम से शिक्षा प्राप्त करे। अगर हम अग्रेजी की जगह हिन्दुस्तानी जबान को तमाम देश के लिए उच्च शिक्षा का माध्यम ठहरा सकते है तो अग्रेजी के कारण जो मानसिक एकता देश मे उत्पन्न हो गई है, वह ज्यो की त्यो बनी रहेगी। लेकिन अगर हम ऐसा नही कर सकते, तो फिर हमे दूसरा उपाय करना पडेगा। लेकिन मै यह कहने से अपने आपको नही रोक सकता कि इनसे हमारी मानसिक एकतायी (एकता) की मजबूती को ठेस जरूर लगेगी।

यह दूसरा उपाय यदि हो सकता है कि सारे प्रात अपने-अपने क्षेत्रो की भाषाए अपना ले और उसके साथ हिन्दुस्तानी भाषा की शिक्षा को भी एक बीच की भाषा के रूप मे और एक इटर प्रोविसल (अतरप्रातीय) भाषा के रूप मे इसे जरूरी मान ले। मै चाहता हू, कि इस समस्या पर भी आप नए सिरे से सोच-विचार करे और अपनी एक स्पष्ट राय निर्धारित करे।

दोस्तो ! आज भारी एजेडा आपकी प्रतीक्षा मे है। मैं अब और अधिक बोझ आपके समय पर नही डालूगा। मै फिर एक बार आपका स्वागत करता हू और अपनी बात समाप्त करता हू।

अलीगढ़ और हिन्दुस्तानी राष्ट्रीयता

"एक धर्मनिरपेक्ष और जनतात्रिक राज्य के लिए शैक्षणिक व्यवस्था धर्मनिरपेक्ष होनी चाहिए। इसे राज्य के समस्त नागरिको को बिना किसी भेद-भाव के समान प्रकार की शिक्षा प्राप्त करानी चाहिए।"

अलीगढ़ और हिन्दुस्तानी राष्ट्रीयता *

अलीगढ मुस्लिम विश्वविद्यालय के वार्षिक दीक्षान्त समारोह को सम्बोधित करने के लिए आपके कुलपति महोदय का निमन्त्रण जब मैने स्वीकार किया तो सुबह स्वभावत मुझे वह युग याद आ गया जब इस विश्वविद्यालय से मेरा प्रथम सम्पर्क स्थापित हुआ था। यह छत्तीस वर्ष पहले की बात है जब परिस्थिति ऐसी थी कि मेरी गणना इस सस्था के विरोधियो मे होती थी।

वास्तविकता आज से नितान्त भिन्न थी। उस काल मे हिन्दुस्तानी मुसलमान समस्त राजनैतिक आन्दोलनो से न केवल पृथक् थे बल्कि स्वतन्त्रता के सघर्ष के विरोध तक के लिए तत्पर थे। हिन्दुस्तानी मुसलमानो की इस राजनैतिक गतिरोध का सबसे बडा और एकमात्र कारण इस सस्था के सस्थापक स्वर्गीय सर सैयद अहमद खा का नेतृत्व था। जिसका भार १९वी शताब्दी के अन्तिम २५ साल मे उन्होने उठाया था। अलीगढ पार्टी ने इडियन नेशनल कांग्रेस से मुसलमानो को पृथक् रखने की सर सैयद अहमद खा की नीति को प्रचलित रखने की पूरी चेष्टा की, कुछ एक को और कुछ विशिष्ट व्यक्तियो को छोडकर इन्हे इसमे सफलता भी मिली।

इस पृष्ठभूमि मे मैने १९१२ ई० मे 'अल-हिलाल' का प्रकाशन किया। मैने अपने राजनैतिक जीवन के प्रारम्भ मे ही इस तथ्य को स्वीकार कर लिया था कि हिन्दुस्तानी मुसलमानो को स्वतन्त्रता आन्दोलन मे भाग लेना चाहिए और इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए उन्हे नेशनल कांग्रेस मे सम्मिलित होना चाहिए। इसलिए यह बात अनिवार्य थी कि मैं राजनैतिक नेतृत्व पर कटाक्ष करू जिसका दिग्दर्शन सर सैयद अहमद खा कर रहे थे और अलीगढ पार्टी जिसकी प्रतिनिधि थी। अत इस राजनैतिक बिन्दु पर मेरे और पार्टी के बीच टकराव हुआ। इस मतभेद को पार्टी के सदस्यो ने उस राजनैतिक नीति के सस्थापक का विरोध समझा और कुछ लोगो के विचार मे तो मैं स्वर्गीय सर सैयद अहमद खा और अलीगढ का शत्रु था।

परन्तु इस बात का वास्तविकता से कोई सम्बन्ध नही है। इसमे सदेह नही कि मेरी दृष्टि मे सर सैयद अहमद खा से राजनैतिक दिग्दर्शन मे भयकर और भीषण गलतिया हुई किन्तु इसी के साथ मै उनको १९वी शताब्दी की महान विभूतियो मे समझता था और आज भी समझता हू। परन्तु उनके शैक्षणिक और सामाजिक सुधारो की सराहना के साथ मैं राजनैतिक क्षेत्र मे उनकी मुसलमानो के भ्रामक नेतृत्व को कभी भूल नही पाया।

इस बात को ३६ वर्ष बीत चुके है किन्तु मै जब भी उस काल की घटनाओ पर विचार करता हू तो इस सम्बन्ध मे पुन विचार करने का आज भी मुझे कोई कारण नही मिलता। उस समय भी मेरा यह मत था और आज भी है कि सर सैयद शैक्षणिक और महान समाज सुधारक थे किन्तु राजनीति मे उनके भ्रामक नेतृत्व ने बहुत से दुर्गण उत्पन्न किये और जिससे हमे अत्यधिक हानि पहुची है। परन्तु आज यहा मेरा उद्देश्य उनकी राजनैतिक भूमिका पर टीका-टिप्पणी करना

---

* अलीगढ मुस्लिम विश्वविद्यालय मे २० फरवरी, १९४९ को आयोजित दीक्षात समारोह मे दिया गया भाषण।

नही बल्कि शैक्षणिक सुधारक सर सैयद अहमद खा की स्मृति को श्रद्धाजलि अर्पित करना है जिन्होने मुसलमानो की आधुनिक शिक्षा का आधारशिला रखी थी।

पाश्चात्य शिक्षा आज हमारे राष्ट्रीय जीवन का अग बन चुकी है। हम 'शिक्षा' की पारिभाषिकी उपयुक्त करते हैं और उस पर चितन-मनन करते है किन्तु आज उस विरोध का अनुमान नही कर सकते जिसका सामना इन सुधारको को करना पडा और जिन्होने सघर्ष करके देश मे पाश्चात्य शिक्षा प्रचारित की। उन्होने नया मार्ग ढूढा, कदम-कदम पर रुकावटो और कठिनाइयो का सामना किया और उन तमाम विरोधो के सामने डटे रहे जिनसे प्रत्येक सुधारवादी आन्दोलन को सामना करना पडता है। दीर्घ काल से रूढियो और अधविश्वासो के बादल जन-मानस पर छाये हुए थे। तत्कालिक विश्वास और शताब्दियो की रूढिप्रियता इस परिवर्तन के विरुद्ध थी। प्रगति के विरोधियो के हाथ मे धर्म की दुहाई का अमोघ अस्त्र उठा। यद्यपि धर्म, ज्ञान और बुद्धि का विरोधी नही है किन्तु दुर्भाग्य यह है कि उसे बहुधा इसी रूप मे प्रस्तुत किया जाता है। यह एक सामान्य नारा था कि पाश्चात्य शिक्षा, धार्मिक शिक्षा की विरोधी है और इसलिए जिन्हे धर्म प्रिय है उन्हे पुरातन शिक्षा से सम्बद्ध रहना चाहिए।

मनुष्य के विचारो को विभिन्न देशो के विभिन्न कालो मे इस सघर्ष का सामना करना पडा। योरप १७वी शताब्दी और १८वी शताब्दी मे सघर्षरत था जबकि प्राच्य देशो को इससे १९वी शताब्दी मे सघर्ष करना पडा। हिन्दुस्तान के हिन्दुओ मे यह द्वन्द्व शीघ्र आरम्भ हुआ और उनके यहा इसका अन्त भी शीघ्र हो गया। मुसलमानो मे यह सघर्ष दीर्घ अवधि तक चलता रहा किन्तु अन्ततोगत्वा वही हुआ जो होना चाहिए था कि परिवर्तन की शक्तिया विजयी हुई। पुरातन व्यवस्था का स्थान आधुनिक व्यवस्था ने ले लिया। जहा तक हिन्दुस्तान के मुसलमानो का प्रश्न है यह बात निर्विवाद कही जा सकती है कि जिस व्यक्ति ने जिस सघर्ष मे महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई वह इस विद्यालय का सस्थापक था। वह युद्ध यही अलीगढ मे लडा गया और इस प्रकार अलीगढ प्रगति का प्रतीक बन गया।

हमारे कुछ विद्वानो ने सर सैयद अहमद खा की तुलना राजा राम मोहन राय से की है। कुछ सीमा तक यह तुलना उचित है। राजा राम मोहन राय ने बगाल मे जो कुछ किया था सर सैयद अहमद खा ने वही ४० वर्ष पश्चात् उत्तर भारत मे और विशेष रूप से मुसलमानो के लिए किया था। इन दोनो मे इतना ही भेद है कि राजा राम मोहन राय के सुधारो का क्षेत्र केवल धर्म था जब कि सर सैयद अहमद खा ने शिक्षा के क्षेत्र मे भी सुधार किए। निश्चय ही इन दोनो ने बौद्धिक शिक्षाओ के ऊपर अपने व्यक्तित्व की छाप छोडी है। धर्म, शिक्षा, सामाजिक जीवन, भाषा, साहित्य और पत्रकारिता उनके सुधारात्मक प्रयत्नो और रचनात्मक शक्ति की साक्षी है।

सर सैयद अहमद खा ने यद्यपि काग्रेस का विरोध किया किन्तु हमे यह नही भूलना चाहिए कि उनके इस व्यवहार में साम्प्रदायिक राजनीति का लेशमात्र प्रभाव था। उनके कार्यो मे यहा तक कि राजनीति मे भी हिन्दू मुसलमान समान रूप से सम्मिलित थे। वह आजीवन हिन्दू-मुसलिम एकता के समर्थक रहे। उन्होने हर उस बात का विरोध किया जो इन सम्प्रदायो के बीच वैमनस्य और मतभेद का कारण हो। उन्होने अपने भाषण मे बारम्बार इस सुन्दर उपमा का उपयोग किया है कि हिन्दू और मुसलमान मात्रभूमि के मुख पर दो नेत्रो के समान हैं।

'हिन्दू' पारिभाषिकी को उन्होने जो महत्त्व दिया है उससे हिन्दुस्तानी राष्ट्रीयता के सबध मे उनके दृष्टिकोण को हम कुछ समझ सकते है। लाहौर मे हिन्दुओ की एक सस्था को सम्बोधित करते हुए उन्होने कहा था कि मुझे खेद है कि आप ने "हिन्दू की परिभाषा को सीमित

कर लिया है। मेरे विचार मे इसका यह उपयोग उचित नही है। मै उन सबको हिन्दू मानता हू जो इस देश मे रहते है चाहे वह किसी धर्म और नस्ल से सम्बन्ध क्यो न रखते हो। यही कारण है कि मुझे इस बात पर गर्व है कि मै हिन्दू हू। यदि हिन्दुस्तान के हिन्दू और मुसलमान उनकी शिक्षा की आत्मा को समझ लेते और उसी पर कार्य करते तो अभी हाल मे जो घटनाए घटित हुई है उनका रूप दूसरा ही होता।''

सर सैयद अहमद खा ने इस सस्था की स्थापना एक विशेष अभिप्राय के हेतु की थी। वह अग्रेजी शिक्षा की आत्मा को समझते थे और जानते थे कि उनकी गुणवत्ता यह है कि इसमे केवल पाठ्यक्रम पर आधारित शिक्षा ही नही होती बल्कि एक विशेष प्रकार का प्रशिक्षण किया जाता है और इस प्रशिक्षण का उद्देश्य नवयुवको और नवयुवतियो का चरित्र निर्माण करना और उनको दूसरो से उच्च बनाना था। वह यह भी महसूस करते थे कि अग्रेजी शिक्षा के साथ-साथ मुसलमानो की धार्मिक शिक्षा और प्रशिक्षण भी होना चाहिए। वह जानते थे कि इस बात के बिना आधुनिक शिक्षा मुसलमानो मे लोकप्रिय नही हो सकती। उन्होने यह महसूस किया कि इस उद्देश्य की प्राप्ति मे एक विशेष सस्था की स्थापना के बिना सफलता प्राप्त नही हो सकती। इसलिए उन्होने अपने जीवन का शेष समय अलीगढ कालेज के निर्माण को अर्पित कर दिया। हमे याद रखना चाहिए कि यह वह प्रथम सस्था थी जहा बरतानिया पब्लिक स्कूलो का वातावरण उत्पन्न किया जा रहा था।

प्रारम्भ मे उनके मन मे यह योजना थी कि कैम्ब्रिज की प्रणाली पर ऐसा विश्वविद्यालय स्थापित किया जाए जिसके प्रागण मे विद्यार्थी निवास करे किन्तु अन्त मे उन्हे एक कालेज की स्थापना पर सतोष करना पडा और इस काल की परिस्थितियो को देखते हुए यह भी कोई साधारण सफलता नहीं थी। उनके देहावसान के पश्चात् उनकी स्मृति के रूप में इसको विश्वविद्यालय बनाने का प्रयत्न आरम्भ हुआ और बीस वर्षो के अथक प्रयासो के पश्चात् इस उद्देश्य की पूर्ति मे सफलता मिली।

सर सैयद ने अलीगढ मे केवल एक कालेज ही स्थापित नही किया बल्कि युग की आधुनिक मागो को सामने रखकर उसे बौद्धिकता और सस्कृति का केन्द्र बना दिया। इसका केन्द्र बिन्दु सर सैयद अहमद थे। अपने समय के उच्चतम बुद्धिजीवी उनके व्यक्तित्त्व से प्रभावित होकर उनके चारो ओर एकत्रित हो गए। मेरे विचार मे शायद ही किसी पत्रिका ने उस पीढी को इतना प्रभावित किया हो जितना उनकी पत्रिका तहजीब-उल-अखलाक ने किया है। इगलिस्तान से वापसी पर उन्होने इसका प्रकाशन किया था। वह और उनके साथी इस पत्रिका के महत्त्वपूर्ण लेखको मे थे, वस्तुत इसी पत्रिका ने आधुनिक साहित्य की आधारशिला रखी और भाषा को ज्ञान के अमूर्त विचारो की अभिव्यक्ति के योग्य बनाया। और कदाचित् मुसलमानो मे कोई ऐसी साहित्यिक विभूति न रही हो जो इस मडल के लेखको से प्रभावित न हुई हो। आधुनिक काल के श्रेष्ठतम मुसलमान साहित्यकारों ने यहा से उर्जा प्राप्त की। यहा मुस्लिम चितन के अनुसधान, व्याख्या और पुनर्निर्माण की मडलियों का जन्म हुआ। यद्यपि आधुनिक उर्दू कविता का जन्म लाहौर में हुआ था किन्तु इसके विकास के लिए उचित वातावरण यहा मिला। आधुनिक शैली की कविताए मोहम्मडन एजुकेशनल कान्फ्रेंस के लिए लिखी गई और दूसरी सभाओं में पढी गई। यह उर्दू भाषण के अभ्यास का पहला मच भी था। अपने समय के सभी महत्त्वपूर्ण वक्ताओं ने इसी मच से अपनी भाषण वक्तृता का आरम्भ किया था। यहीं से ही इसका परीक्षण प्राप्त किया।

१९वी शताब्दी मे पूर्व के दूसरे देशो के समान हिन्दुस्तान मे भी सक्रमण काल था।

पुरातन जीवन पद्धति की दृष्टि समाप्त हो रही थी और आधुनिक जीवन पद्धति उसका स्थान ले रही थी। हिन्दुस्तान की प्राचीन धरती एक नए रूप मे नया चोला ग्रहण कर रही थी। जहा तक हिन्दुस्तानी मुसलमानो का सबध है प्रत्येक व्यक्ति जानता है कि यह अलीगढ ही था जहा सुधार के आन्दोलन सभव हुए। इसकी गणना हिन्दुस्तान के उन स्थानो मे से है जहा नवीन भारत के निर्माण मे मार्गदर्शन किया गया। १९वी शताब्दी हिन्दुस्तान मे पुनर्जागरण का काल था और अलीगढ उसका सबसे बडा केन्द्र।

यह बात सत्य है कि सर सैयद अहमद खा के देहावसान के पश्चात् अलीगढ की बहुत सी विशेषताए शेष न रही। यद्यपि कालेज को विश्वविद्यालय का सम्मान मिल गया किन्तु यहा जो प्रारम्भिक काल की भव्य परम्पराए थी वह जीवित नही रह पाई। परन्तु आप को यह नही भूलना चाहिए कि यह वैभवशाली थाती आपकी है और आप ही लोग है जिन्हे अलीगढ के उज्ज्वल अतीत की परपरा का आधुनिकीकरण करना है। यह अन्तर्लेख जो आपके स्ट्रैची हाल की दीवारो पर अकित है, हो सकता है कि समय के साथ धुधला जाये किन्तु वह अन्तर्लेख जो अलीगढ ने हिन्दुस्तान के आधुनिक काल मे अकित किये हैं वह कभी नही धुधला सकते। भावी इतिहासकार अलीगढ मे आधुनिक भारत के निर्माण के स्रोत खोजेगे।

एक शिक्षा सस्था जिसका अतीत इतना गौरवपूर्ण रहा हो उसका भविष्य भी उतना ही भव्य होना चाहिए। मैं नही जानता कि आपकी मन स्थिति क्या है? मुझे नही ज्ञात है कि भविष्य के कौन मे रग आपके सामने है? क्या इन द्वारो को बन्द करने का सदेश देगे या नये दरवाजे खोलने का आह्वान करेगे। जिनके द्वारा आप अपने अनुभवो के नवीन परिप्रेक्ष्यो से परिचित है। मुझे नही मालूम कि आप के सम्मुख कौन से परिप्रेक्ष्य है किन्तु मै आपको बताना चाहता हू कि मैने कौन से दृश्य देखे है। हो सकता है आप सोचेगे वह द्वार जो खुले हुए थे अब बन्द हो चुके है किन्तु मैने देखा है कि जिन द्वारो पर ताले लगे हुए थे वह अब खुल गये हैं। एक फारसी कवि ने कहा था—

तफावत अस्त मानी शुनीदन-ए-मनो तू।
तूबस्तनेदर, व मन फातहे बाब मी श्वम

मैंने और तुमने जो सुना वह भिन्न है। तुमने द्वारो के बन्द होने की आवाज सुनी और मैने खुलने की।

मै आप से बिना पूर्वग्रह के स्पष्टत बात करना चाहता हू और मुझे विश्वास है कि आप की आशा भी मुझसे यही होगी। आप यदि अभी तक इसी साम्प्रदायिक राजनीति के वातावरण मे रह रहे है जो १५ अगस्त १९४७ से पहले था तो मै बिना किसी सकोच के यह कहूगा कि आप का भविष्य वैसा नही होगा जो मेरी दृष्टि मे एक हिन्दुस्तानी मुसलमान का होना चाहिए। मुझे प्रसन्नता है कि तब से बहुत बडा परिवर्तन हो चुका है और एक नये युग की सभावनाए दिन-प्रतिदिन प्रकाशवान होती जा रही हैं। आपने इस बात को जान लिया है कि वर्तमान परिवर्तित परिस्थितियो मे इस सस्था का शैक्षणिक वातावरण कैसा होना चाहिए। आपको नए युग की मागो को समझ कर परिवर्तित दृष्टिकोण के अनुसार परिस्थितिया उत्पन्न करनी चाहिए। मुझे यह कहने मे तनिक भी सकोच नहीं है कि आपने समय के साथ अनुकूलता उत्पन्न करके केवल इस सस्था की ही नहीं बल्कि इडियन यूनियन के समस्त मुसलमानो की एक महत्त्वपूर्ण सेवा की है, इसके लिए मैं अपनी ओर से हार्दिक बधाई देता हू।

मैं सक्षेप मे आपको यह बताना चाहता हू कि राष्ट्रीय शिक्षा के सबध मे केन्द्रीय सरकार

की क्या योजनाए और कार्यक्रम है, और इस नवीन योजना मे अलीगढ विश्वविद्यालय जैसी सस्थाओ का क्या स्थान होगा। मेरे विचार मे आप भी इस बात से सहमत होगे कि एक धर्मनिरपेक्ष और जनतात्रिक राज्य की शिक्षा प्रणाली भी धर्मनिरपेक्ष होनी चाहिए। उसको देश के समस्त नागरिको के लिए बिना किसी भेदभाव के समान रूप से शिक्षा का प्रबन्ध करना चाहिए। इस प्रणाली की अपनी पद्धति और राष्ट्रीय चरित्र होना चाहिए। परन्तु इसी के साथ यह बात भी स्वीकार की गई है कि शिक्षा सस्थाओ को इसका अवसर भी दिया जायेगा कि वह किसी विशिष्ट शिक्षा पर बल दे और उसके द्वार सब लोगो के लिए खुले रहेगे जो इस प्रकार की शिक्षा मे रुचि रखते है। राष्ट्रीय शिक्षा वह क्षेत्र है जिसमे आपकी सस्था युगानुकूल अपना उचित स्थान प्राप्त कर सकती है और इसी प्रकार आप अपने विचित्र चरित्र सहित शिक्षा की सार्वजनिक योजना का भाग बन जायेगे और कई एक महत्त्वपूर्ण सेवा करेगे। इसके लिए विशाल पैमाने पर सर्वागीण सहिष्णुता का प्रदर्शन करना होगा। कहा जाता है कि अफलातून ने अपनी अकादमी पर यह उक्ति लिखवाई थी कि "वह जो रेखागणित नही जानते है उनके लिए यहा कोई स्थान नही है।" आपकी सस्था को ऐसा कोई प्रतिबन्ध नही लगाना चाहिए बल्कि आपको तो यह कहना चाहिए कि आप दोनो का स्वागत करेगे जो रेखागणित जानते है और वह जो नही जानते।

हमे ज्ञात है कि आपकी सस्था के प्रबधात्मक स्थान प्रारम्भ से ही भेद-भाव से मुक्त और उदारमन है। जब आपके कालिज की स्थापना हुई तो उसके सबसे पहले कई शिक्षार्थियो मे मुसलमानो के साथ हिन्दू भी थे। आप के विश्वविद्यालय के अध्यापको मे प्रत्येक सम्प्रदाय के लोग सम्मिलित रहे है।

अनेक हिन्दू प्रोफेसरो के नाम आपकी सस्था के इतिहास का एक अग है। मुझे विश्वास है कि यह परम्पराये विकसित होगी और समय के साथ-साथ यह अधिक बलवती होगी।

इस्लामी धर्मशास्त्र और इस्लामी इतिहास का अध्ययन और उसका अनुसधान आप की परम्परा का एक अग है, यद्यपि मै यह भी कहना चाहता हू कि सर सैयद के स्वर्गवास के पश्चात् इस क्षेत्र मे वह क्रियाशीलता नही रही जो उनके काल मे परिलक्षित होती थी। विश्वविद्यालय की स्थापना से भी वे आशाए पूर्ण नहीं हुई , आज आपका कर्तव्य है कि इन पुरातन परम्पराओं का नवीनीकरण करें और अपने विश्वविद्यालय में ज्ञान-विज्ञान के हर क्षेत्र में अनुसधान–और ज्ञान का एक वातावरण उत्पन्न करें।

मै इससे पूर्व भी आपको याद दिला चुका हू कि अलीगढ वह स्थान है जहा आधुनिक उर्दू साहित्य का विकास हुआ। यह एक महत्त्वपूर्ण कार्य है जिस पर आपके विश्वविद्यालय को गर्व होना चाहिए। आपका कर्तव्य है कि आप इस थाती की रक्षा करे और इसको अधिक समृद्धिशाली बनाये। मै आपका ध्यान इस ओर भी आकृष्ट करना चाहता हू कि अतीत की तुलना मे आज साहित्यिक गतिविधियो के लिए क्षेत्र अधिक विस्तृत है। आप को हिन्दी साहित्य मे भी इतनी ही रुचि लेनी चाहिए। मुसलमानो को हिन्दी भाषा और साहित्य के अध्ययन से सदैव लगाव रहा है। हिन्दी साहित्य पर हिन्दुस्तान के हिन्दुओ के समान मुसलमानो का भी अधिकार है। दोनो समुदायो ने उर्दू और हिन्दी की प्रगति मे समान रूप से भाग लिया है। ब्रज भाषा मे नवीन साहित्य का प्रारम्भ मुगल काल मे अकबर और जहागीर जैसे सम्राटो के सरक्षण मे हुआ। जिसमे मलिक मुहम्मद जायसी, खान-ए-खाना और अब्दुल जलील बिलग्रामी जैसे असाधारण प्रतिभा के साहित्यकारो ने साहित्य-सर्जना की। हम देखते है कि १८वी शताब्दी के अत मे ब्रज भाषा मे काव्य रचना करने वाले मुसलमान कवियो की पर्याप्त सख्या है। अब

समय आ गया है कि आप अपनी पुरातन परम्परा पुन जीवित करे। मेरी इच्छा है कि यह सस्था ऐसे बहुत से रचनाकार उत्पन्न करे जो उर्दू और हिन्दी दोनो मे साहित्य सर्जन कर सके।

इस काल मे लिपि सबधी द्वन्द्व उत्पन्न हो गया है। आप इस सबध मे गाधीजी के मत से परिचित है। उनकी हार्दिक इच्छा थी कि हर हिन्दुस्तानी उर्दू और देवनागरी दोनो लिपिया जाने। इसलिए जब उन्होने हिन्दुस्तानी प्रचार सभा की स्थापना की तो उसके कार्यकर्ताओ के लिए यह अनिवार्य कर दिया कि वह दोनो लिपिया सीखे। बरसो से मेरा भी यही मत है और मै समझता हू कि वर्तमान स्थिति मे इसका यही सम्भाव्य समाधान है। मुझे आशा है कि उर्दू साहित्य के प्रेमी हिन्दी साहित्य के प्रचारको की प्रतिक्रिया की प्रतीक्षा नही करेगे बल्कि वह स्वय ऐसे कार्य करेगे जो उनकी दृष्टि से देश हित मे उच्चतम होगे। जीवन के दूसरे क्षेत्रो मे इस बात की प्रतीक्षा की जा सकती है कि दूसरे क्या कर रहे है किन्तु शिक्षा के क्षेत्र मे हम दूसरो की प्रतीक्षा केवल अपने विश्वास को सकटग्रस्त करके ही कर सकते है। यदि दूसरे इस पर सन्तुष्ट है कि वह केवल एक लिपि जानते हैं तो उन्हे इस बात पर दु खी होने की आवश्यकता नही है कि हम दो लिपिया सीख रहे है। मेरी यह हार्दिक इच्छा है कि हिन्दुस्तान का प्रत्येक मुसलमान दोनो लिपिया सीखे और इस प्रकार देश के सम्मुख एक उदाहरण प्रस्तुत कर दे। यह गाधी जी का सदेश था और मुझे विश्वास है कि मुसलमान इस पर उत्साहपूर्वक कार्य करेगे। मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई कि इस कार्य की महत्ता को चारो ओर स्वीकार किया जा रहा है और उर्दू मे ऐसी पुस्तके लिखी गई हैं जिनकी सहायता से देवनागरी लिपि सुविधापूर्वक सीखी जा सकती है और जो हिन्दी साहिन्य से परिचय प्राप्त करने मे सहायक है। कुछ सस्थाये इस उद्देश्य से देश के विभिन्न भागो मे स्थापित की जा चुकी है और उन्होने अपना कार्यक्रम आरम्भ कर दिया हैं। मुझे विश्वास है कि आप इस कार्य की महत्ता को समझते हैं और आपकी सस्था इस कार्य के अत्यनत सक्रिय केन्द्रो मे से अपना एक अलग पहचान बनाएगी।

अब मै परामर्श के रूप मे कुछ वाक्य उन नवयुवक स्नातको से कहूगा जो आज अपना प्रमाणपत्र ले रहे हैं और जीवन के दायित्व को स्वीकार करने जा रहे है। मुझे इसमे सदेह है कि आपने उन परिवर्तनो का सपूर्ण आभास किया है जो आपके प्रवेश के पश्चात् उत्पन्न हुए है। आप जब इस सस्था मे प्रविष्ट हुए थे तो पराधीन राष्ट्र के व्यक्ति थे और आज जब इस विश्वविद्यालय को छोड रहे है तो आप स्वतन्त्र भारत के नागरिक है। मुझे विश्वास नही कि आप मे से सब लोगो ने इस बडे परिवर्तन की महत्ता का पूर्ण अनुमान किया है। पूर्व मे पराधीन राष्ट्र का व्यक्ति होने के कारण आपको बहुत सी विवशताओ का सामना करना पडा था। परन्तु अब एक स्वतन्त्र देश के नागरिकों के रूप में आप पर नये दायित्व आ गये हैं। स्वतन्त्रता ने आपकी उन्नति के लिए विस्तृत अवसर प्रदान किए है। इसलिए कि अब अपने आपको देश का सेवक और उसके प्रति निष्ठा का प्रमाण दे। आज आप जो चाहे प्राप्त कर सकते है और यही स्वतन्त्रता आप पर कुछ कर्तव्य भी लादती है।

आप स्वतत्र भारत के नागरिक हैं। एक ऐसे देश के नागरिक हैं जो धर्मनिरपेक्ष और जनतात्रिक मार्ग पर अपने राजनैतिक और सामाजिक जीवन को चलाने का सकल्प कर चुका है। एक धर्मनिरपेक्ष और जनतात्रिक राज्य की आत्मा यह है कि नस्ल, धर्म, जाति-पाति के भेद के बिना हर व्यक्ति को आगे बढने के अवसर प्राप्त हो। ऐसे राज्य के नागरिक होने के कारण आपको यह अधिकार है कि आप इस की आशा करे कि राजनीति, व्यापार, उद्योग या अन्य नौकरियो और व्यवसायो के समस्त द्वार आपके लिए खुले हुए हैं यदि आप अपने आचरण और

योग्यता से उनकी आवश्यक शर्तों को पूर्ण करते हो।

इस बात को नकारा नही जा सकता कि अतीत मे इस सस्था से शिक्षा प्राप्त बहुत से विद्यार्थियो का उद्देश्य केवल सरकारी नौकरिया प्राप्त करना था। स्वतत्रता से आप की मानसिकता मे विशालता और साहस मे उच्चता उत्पन्न होनी चाहिए और स्वतत्र भारत मे आपको अपनी इन योग्यताओ को कार्यान्वित करना चाहिए जो हर प्रकार से राष्ट्रीय आवश्यकताओ को पूर्ण कर सके। मेरे मन मे कोई सदेह नही है कि यदि आप राष्ट्रीयता की इस प्रगतिशील अवधारणा को आत्मसात कर लेगे जो हमारे धर्मनिरपेक्ष जनतात्रिक राज्य का सिद्धात है, तो जीवन के क्षेत्र मे कोई स्थान ऐसा नही होगा जो आपको प्राप्त न हो सके। मेरी इच्छा है कि आप अपने व्यक्तित्व का निर्माण करे, उसको सुदृढ बनाए तथा वह ज्ञान अर्जित करे जिससे भविष्य मे अपने देश को उन्नति और समृद्धि के मार्ग पर ले जाने मे अपनी उचित भूमिका निभा सके।

प्रस्तावना

प्राच्य एव पाश्चात्य दर्शन का इतिहास

"ज्ञान समस्त प्रकार की सीमाओं और बधनों से परे है। इसका विकास चाहे ससार के किसी भी क्षेत्र में हुआ हो किन्तु यह समस्त मानवजाति की थाती होती है। समस्त मानवों को इस पर समान अधिकार प्राप्त होता है चाहे वह जिस भी देश और राष्ट्र से सबध रखते हों।"

प्रस्तावना *

सृष्टि की तुलना एक फारसी कवि ने ऐसी पाण्डुलिपि से की है जिसका पहला और आखिरी पृष्ठ गायब है। अब यह बताना सभव नही है कि पुस्तक कैसे शुरू हुई और न ही हम यह जानते हैं कि यह कैसे पूरी होगी।

मज आगाज-ओ-जा अजाम-ए-जहॉ बेखबरेम
अव्वल-ओ-आखिर ई इक कुहना किताब उफ्तादस्त

(मै इस दुनिया के आदि और अन्त से अनभिज्ञ हूँ। यह वह पुरातन पुस्तक है जिसका प्रथम और अन्तिम पृष्ठ खो गया है।)

जबसे मनुष्य ने चेतना पायी है तबसे वह इन खोये हुए पन्नों की तलाश करने की कोशिश करता रहा है। इस खोज और उसके परिणामो का नाम ही दर्शन है। एक दार्शनिक अनेक पृष्ठो मे दर्शन और इसकी प्रकृति की व्याख्या करता है लेकिन कवि ने सिर्फ एक दोहे मे वह सब कह दिया है।

इस खोज का उद्देश्य जीवन और उसके अस्तित्व को जानना है। जैसे ही मनुष्य को आत्मज्ञान प्राप्त हुआ और उसने सोचना शुरू किया, उसके मस्तिष्क मे दो प्रश्न पैदा हुए, यानी, जीवन का अर्थ क्या है, और जो सृष्टि वह चारो तरफ देख रहा है उसका स्वरूप क्या है ? न जाने कब तक वह यू ही विभिन्न दिशाओ मे भटकता रहा। पर अतत उसने एक निश्चित दिशा तय कर ली तथा विचार और तर्क के मार्ग पर बढना प्रारम्भ किया। यह व्यवस्थित चितन की शुरुआत थी। मानवीय प्रज्ञा जिस दिन इस स्थिति मे पहुची तभी दर्शन का जन्म हुआ और उसी दिन से दर्शन का इतिहास प्रारम्भ होता है।

दर्शन का इतिहास · पाश्चात्य दर्शन के इतिहासो मे १८वी शताब्दी तक जिस पद्धति का अनुकरण किया गया है वह अरब दार्शनिको और इतिहासकारो द्वारा मध्यकाल मे अपनायी गयी पद्धति के समान ही थी। उन्होने दर्शन के विकास का अध्ययन दार्शनिक दृष्टिकोण से करने का प्रयास नही किया, बल्कि इसके विपरीत उन लोगो के लिए, दार्शनिको और उनके सम्प्रदायो का सकलन तैयार किया, जिन्हे इसमे दिलचस्पी थी। दरअसल ये दर्शन के इतिहास नहीं हैं बल्कि दार्शनिको के इतिहास है। जैसा कि विदित है, दर्शन का इतिहास लिखने की शुरुआत सर्वप्रथम १९वीं शताब्दी के प्रारम्भ से होती है और जो पद्धति उस समय अपनायी गयी, आज भी, हम उसी का अनुसरण करते चले आ रहे हैं।

दर्शन के इतिहास का अध्ययन आज बहुत आगे बढ गया है। अनेक देशो के विद्वानो ने

---

* १९४७ ई० मे दिल्ली मे आयोजित शैक्षणिक सम्मेलन मे मौलाना ने आधुनिक दृष्टिकोण से दर्शन के नवीन इतिहास की आवश्यकता की चर्चा की थी। इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए भारत के उपराष्ट्रपति डा०एस० राधाकृष्णन की अध्यक्षता में एक सपादक मडल नियुक्त किया गया था। इस प्रकार **दर्शन का इतिहास** दो खण्डो मे लिखा गया जिसमे मौलाना द्वारा लिखित यह प्रस्तावना सम्मिलित है। मौलाना ने ४ मई, १९५३ को लदन के प्रकाशक एलेन और उन्विन से इसे **हिन्दुस्तान टाइम्स** मे प्रकाशित कराने के लिए अनुमति मागी थी।

महत्त्वपूर्ण पुस्तके लिखी है। परन्तु उन्हे पढकर एक तथ्य की ओर बराबर मेरा ध्यान गया है। मैंने महसूस किया है कि दर्शन की शुरुआत का वर्तमान स्वरूप और विभिन्न श्रेणियो मे उसका विभाजन उसके आधार की पूर्ण और यथार्थ तस्वीर पेश नहीं करता। इसलिए दर्शन के सामान्य इतिहास के और अधिक व्यापक अध्ययन की आवश्यकता है।

देख-भाल के उचित साधनो के अभाव मे इस इतिहास के कुछ पृष्ठ खो गए है। अब उनकी जानकारी देने वाले स्रोतो का पता लगाना सभव नही है। हम जानते है कि यूनान से बहुत पहले मिस्र और ईराक मे सभ्यता का विकास हो चुका था। हम यह भी जानते है कि मिस्र के प्राचीन ज्ञान का प्रारम्भिक यूनानी दर्शन पर गहरा प्रभाव था। प्लेटो की रचनाओ मे ज्ञान के प्रतीको के रूप मे मिस्र की कहावतो का उल्लेख मिलता है। अरस्तू ने तो और भी आगे कहा है कि मिस्र के मौलवी विश्व के प्रथम दार्शनिक थे। पर मिस्र और यूनान के बीच परस्पर सबधो के बारे मे हमारे पास विस्तृत जानकारी नही है। उनके बारे मे अब तक न केवल हम अनभिज्ञ है बल्कि आगे भी इस विषय मे जानकारी मिलने की आशा कम है। इसी तरह हम यह भी निश्चित नही जानते कि बाबूल और नैनेवा की सभ्यताओ मे विकसित दार्शनिक चितन का स्वरूप कैसा था। हम यह भी नहीं जानते कि यूनानी दर्शन के जन्म के पीछे इस चितन की क्या कोई भूमिका थी। दर्शन के इतिहास की ये कमिया हमारे ज्ञान की अपूर्णता की द्योतक हैं, जो अपनी प्रकृति के कारण कभी दूर नही की जा सकती।

फिर भी प्राचीन इतिहास के कुछ दूसरे ऐसे क्षेत्र भी हैं जिनके बारे मे हमारे पास आज पूरी जानकारी है। इस आधार पर हम दर्शन के विकास की अधिक स्पष्ट तस्वीर खीच सकते हैं। प्राचीन भारतीय इतिहास के हमारे ज्ञान मे आज बहुत वृद्धि हुई है। इससे प्राचीन दर्शन के विकास से सम्बन्धित हमे नयी जानकारिया भी मिली हैं। अब यूनान से पूर्व दर्शन की क्या स्थिति थी इसका पता लगाना आसान हो गया है। साथ ही हम यह भी जान सकते हैं कि यूनानी दर्शन से पूर्व दर्शन के विकास का स्वरूप और क्षेत्र क्या था। लेकिन अभी तक हम दर्शन के इतिहास के उस एकागी दृष्टिकोण पर टिके हुए है जो १९वी शताब्दी तक प्रचलित था और इस विकास की ओर पर्याप्त ध्यान नही दे पाये।

पाश्चात्य दर्शन की शुरुआत यूनान के दार्शनिक अन्वेषण से हुई। ईसाइयत के प्रसार के पश्चात् इसका विकास समाप्त हो गया और एक ऐसी स्थिति आयी जब पाश्चात्य परिदृश्य से दर्शन लुप्त हो गया। कुछ शताब्दियो के अतराल के पश्चात् ईस्वी सन ८वीं सदी मे अरब के विचारको ने यूनानी दर्शन का अध्ययन किया। बाद मे स्वय यूरोप मे इसका अध्ययन शुरू हुआ और कुछ समय बाद इन अध्ययनो से ज्ञान का वह आदोलन शुरू हुआ जिसको आमतौर पर 'पाश्चात्य रेनेसा' कहा जाता है। यूरोप जो अब तक अरब के अनुवादको और टीकाकारो के प्रयासो द्वारा ही यूनानी पाठ्य-पुस्तको से परिचित था, अब उनके सीधे सम्पर्क मे आया। रेनेसा के पश्चात् वह बौद्धिक आदोलन शुरू हुआ जिससे आधुनिक दर्शन के विकास का गहरा सम्बन्ध है। इस तरह पाश्चात्य दर्शन का इतिहास चार कालो मे विभाजित है (१) प्राचीन काल (२) मध्यकाल (३) रेनेसा, और (४) आधुनिक काल।

१९वीं शताब्दी मे पाश्चात्य विद्वानो ने जब दर्शन के इतिहास की सामान्य रूपरेखा तैयार करने का प्रयत्न किया तो यही काल-विभाजन उनके समक्ष था। इस प्रकार के विभाजन के पीछे पाश्चात्य विचारो पर ईसाइयत का प्रभाव भी एक कारण था। पाश्चात्य विद्वानो ने सम्पूर्ण

मानव-विकास को ईसाइयत के अभ्युदय के दृष्टिकोण से व्याख्यायित करने का प्रयास किया है। इस तरह सम्पूर्ण मानव इतिहास को वे दो मुख्य कालो मे विभाजित करते है— (१) ईसापूर्व और (२) ईसा बाद। ईसा बाद को वे पुन पूर्व और पुनरुथान-युग मे बाटते हैं। एर्डमैन जैसे इतिहासकारो ने इसी आधार पर दर्शन के विकास का काल-निर्धारण किया है। एर्डमैन के अनुसार दर्शन का काल-विभाजन है—(१) ईसाइयत-पूर्व यूनान, (२) ईसाइयत-बाद मध्यकालीन और (३) पुनरुथान-बाद आधुनिक काल।[१]

स्पष्टत यह दर्शन के सामान्य इतिहास की रूपरेखा नही थी बल्कि केवल पाश्चात्य दर्शन के इतिहास की रूपरेखा थी। फिर भी जब तक भारतीय और चीनी दर्शन पूर्णत प्रकाश मे नही आ गया, यही एकागी तस्वीर सामान्य इतिहास मानी जाती रही। १९वी शताब्दी के दौरान लिखे गए दर्शन के सभी इतिहासो मे यही कहानी दोहरायी गयी है ,चाहे वे विद्यार्थियो के लिए पाठ्य-पुस्तक हो अथवा सामान्य पाठको के लिए। यह सीमित तस्वीर हमारे मस्तिष्क मे ऐसी छा गयी है कि बाद के अनुसधानो से नयी जानकारी मिलने के बावजूद भी हम उसे निकाल नही पाये। जब भी हम दर्शन के इतिहास के बारे मे सोचते हैं तो यही सीमित तस्वीर हमारे सामने आती है। हम इसके बिना यह नही समझ सकते कि कैसे इस शताब्दी के दूसरे दशक मे लिखने वाले थिल्ली जैसे विद्वान पूरब के योगदान को नकारते है और व्यवस्थित दर्शन के विकास की चर्चा को यूनान के साथ जोडते हैं।[२]

दर्शन की यह रूपरेखा इसके प्रारभ के सदर्भ मे ही नही बल्कि बाद के विभिन्न कालो के सदर्भ मे भी अधूरी है। दर्शन की प्रगति के बारे मे हमारा दृष्टिकोण तीन या चार कालो तक पश्चिमी अवधारणा से इस प्रकार प्रभावित रहा है कि हम दूसरे किसी परिप्रेक्ष्य मे इसे देख ही नही पाते। ऐतिहासिक रूप से सामान्यत यह माना जाता है कि ईसाकाल के शुरू होने से बहुत पहले बौद्ध तात्विक-चितन दर्शन के पूर्ण सम्प्रदाय के रूप मे उभरकर सामने आ चुका था। यदि हम इन कालो के दर्शन के विकास का अध्ययन करना चाहे तो यूनान के साथ-साथ भारत मे हुए इन परिवर्तनो पर भी ध्यान देना आवश्यक है। इन शताब्दियो के दौरान भारत और यूनान के दार्शनिक प्रवचनो के स्वरूप और उनकी व्यापकता का तुलनात्मक अध्ययन बहुत दिलचस्प होगा। दर्शन के अधिकाश प्रमुख इतिहासो मे केवल पाश्चात्य दर्शन की चर्चा ही अधिक मिलती है। उनमे इन सभी बातो का उल्लेख नही मिलता। बल्कि पूरब के योगदान को अनदेखा कर दिया गया है। २०वीं शताब्दी के आरभ के बाद हमारा ज्ञान यूनान की चारदीवारी के अदर तक सीमित नही रह गया है। इस बीच चीनी और भारतीय दर्शन की अधिकाश सामग्री हमारे सामने आ चुकी है। पर फिर भी, यह जानकारी अब तक कुछ विशेषज्ञो तक ही सीमित रही है। दर्शन के सामान्य इतिहासो मे जो स्थान इसको मिलना चाहिए, वह नहीं मिला है।

निस्सदेह बाद के कुछ लेखको ने पुरानी अवधारणा की सीमाओ को पहचाना है। दर्शन के पुराने अधूरे इतिहासो की जगह अधिक पूर्ण-सामग्री प्रस्तुत करने की कोशिश की जा रही है। हाल ही मे लिखा बर्टेण्ड रसेल का 'दर्शन का इतिहास' यद्यपि उन्नीसवी शताब्दी के अन्य इतिहासो की तरह ही है लेकिन उन्होने पाश्चात्य दर्शन का इतिहास नाम देकर उसकी सीमाओ को रेखाकित भी किया है। फिर भी, यह नही कहा जा सकता कि दर्शन के इतिहास की पुरानी सीमित अवधारणा का स्थान नयी और अधिक सतुलित रूपरेखा ने ले लिया है। और न ही हम यह कह सकते है कि दर्शन के सामान्य इतिहास मे पूर्व के दर्शन को जो जगह मिलनी चाहिए वह मिल गयी है। अब समय है कि हमे अपने पास उपलब्ध सामग्री से दर्शन का व्यापक इतिहास

लिखना चाहिए जिसमे पूर्व और पश्चिम के योगदान को उपयुक्त समान स्थान मिले।

दर्शन के प्रारंभिक स्रोत: इस सबध मे एक मूल प्रश्न उठता है और वह है दर्शन की शुरुआत का। इसकी शुरुआत हम कहा से माने। यूनान से अथवा भारत से। दूसरे शब्दो मे, दर्शन के विकास के प्रारभिक सूत्र किस देश मे मिलते है।

जहा तक यूनान के दर्शन का प्रश्न है हम इसके कुछ प्रारभिक आयामो से परिचित हैं। प्राय माना जाता है कि यूनान मे दर्शन की शुरुआत ६वी शताब्दी ई०पू० से पहले नहीं मिलती। पहला विचारक थेलस था जिसे हम वस्तुत दार्शनिक मान सकते है। एक विशेष घटना उसके नाम से जुडी है। यह माना जाता है कि उसने अपनी गणना द्वारा ५८५ ई०पू० के सूर्यग्रहण के ठीक समय का पूर्वानुमान कर लिया था। थेलस के पश्चात् यूनान मे पाइथागोरस और सुकरात ने दार्शनिक विकास को नया स्वरूप प्रदान किया। पाइथागोरस लगभग ५३२ ई०पू० तक जीवित रहा और सुकरात का निधन ३९९ ई०पू० मे हुआ।

फिर भी जब हम ६ठी शताब्दी ई०पू० के भारत पर दृष्टि डालते हैं, तो यहा पूर्णत भिन्न तस्वीर देखते है। भारत मे यह समय दार्शनिक विचारो के आरभ का नही है बल्कि इस समय यहा उनका विकास हो रहा था। यह यूनान की तरह दर्शन का उषा काल नही था बल्कि यहा दर्शन का पूर्ण विकास हो चुका था। यह दर्शन सबधी जिज्ञासा के दुर्गम-मार्ग पर मानव-प्रतिभा के लडखडाते हुए प्रथम कदम की तरह नही था, बल्कि ऐसी स्थिति थी जिसे लम्बी यात्रा के पश्चात् ही पाया जा सकता है।

इस समय के दार्शनिक चितन पर बात करते हुए दो तथ्य प्रमुख रूप से उभर कर हमारे सामने आते हैं।

(१) बौद्ध और जैन-मत का उदय इसी काल मे हुआ।

(२) बुद्ध और महावीर के आगमन के पूर्व भारत मे दार्शनिक विचारो का पर्याप्त विकास पहले से हो चुका था और ऐसी पद्धतिया विकसित हो चुकी थी जिनसे लम्बे समय के व्यापक और गहन दार्शनिक-चितन का पता चलता है।

विश्व के महानतम लोगो मे गौतम बुद्ध का स्थान है। यह विवादास्पद है कि हम उन्हे दार्शनिक की श्रेणी मे रखे या पैगम्बर माने। दूसरे शब्दो मे, उनके उपदेशो का अभिप्राय क्या था? यह नया रहस्योद्घाटन था अथवा नयी दार्शनिक खोज? लम्बे विवाद के बावजूद दर्शन और धर्म दोनो ही बुद्ध पर अपना अधिकार जमाये रहे। मैं उस विवाद को दोहराना नही चाहता, लेकिन अवतार की जगह दार्शनिक के रूप में उन्हे देखना मुझे अधिक स्वाभाविक लगता है। उन्होंने अपनी जिज्ञासाओ में जीवन की समस्याओ का समाधान खोजने का प्रयास किया है, ईश्वर के अस्तित्व की खोज नहीं। इसी तरह उसी समस्या के समाधान के साथ उनकी जिज्ञासा समाप्त हो जाती है, प्रकृति अथवा भगवान के अस्तित्व से उसका लेना-देना नही था। असख्य देवियो और देवताओ मे विश्वास करने वाली भारत की धार्मिक जिदगी से वे पूरी तरह अलग रहे। ईश्वर की मध्यस्थता के बिना ही उन्होने अपनी जिज्ञासा के समाधान की खोज की और उसे प्राप्त किया। जिस सिद्धात को उन्होने अपनी चितन-सबधी जिज्ञासाओ का आधार बनाया, वह स्वय मे दार्शनिक था। उनका विश्वास था कि मानवीय क्रिया-कलापो का लक्ष्य जीवन की समस्या का समाधान खोजना है। और यह किसी परम-सत्ता की शरण लिए बिना भी हो सकता है। यह सच है कि उनकी मृत्यु के पश्चात् उनके अनुयायियो ने उनके उपदेशो को शीघ्र ही पूर्णत एक धार्मिक सम्प्रदाय का रूप दे दिया। जब उन्होने देखा कि धर्म मे ईश्वर का स्थान

खाली है तो ईश्वर के खाली सिहासन पर उन्होने स्वय बुद्ध को आसीन कर दिया। फिर भी, यह एक ऐसी स्थिति थी जिसके लिए बुद्ध को उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता।

जैनमत का उदय भी लगभग उसी समय हुआ और ईश्वर की सत्ता के प्रति यह और भी अधिक उदासीन था। बुद्ध की भाति महावीर ने भी ईश्वर की सत्ता की चर्चा किए बिना ही सत्ता के रहस्य का हल जानने का प्रयास किया। जैनो की बौद्धिक व्याख्याओ का आधार वे सिद्धात हैं जो वस्तुत विश्वदर्शन का हिस्सा है।

मेरा विचार है कि पाठको को सिर्फ महावीर या गौतम बुद्ध के व्यक्तित्व पर ही विशेष ध्यान नही देना चाहिए बल्कि चिंतन की उस पृष्ठभूमि पर भी विचार करना चाहिए जिससे उनका उदय सभव हुआ। यह इसी पृष्ठभूमि का अध्ययन है जो दर्शन के इतिहासकारो के लिए बहुत महत्त्वपूर्ण है। भारत मे छठी शताब्दी ई०पू० मे ही गौतम बुद्ध और महावीर के सिद्धात और उनकी व्याख्याए सामने आ चुकी थी। यह तथ्य इस बात का प्रमाण है कि देश मे व्यापक और गहन दार्शनिक दृष्टिकोण विकसित हो चुका था। ऐसा वातावरण मौजूद था जिसमे जीवन के रहस्य के विभिन्न सिद्धातो और व्याख्याओ का विकास हुआ। ऐसी स्थिति भी पैदा हो गयी जहा ईश्वर के अस्तित्व को माने बिना अथवा उसकी शक्ति का रहस्योद्घाटन किए बगैर इन समस्याओ का समाधान हो सका।

ऐसा दार्शनिक वातावरण यूनान मे बहुत बाद तक भी नही बन पाया था। आयोनिश दर्शन जो यूनान के सबसे प्राचीन दर्शनो मे से एक है, ग्रहो, तथा अन्य तारो और नक्षत्रो की सूचना देने वाले आत्माओ के सिद्धात मे विश्वास करता है। ये प्रसिद्ध पौराणिक कथाओं के देवियो और देवताओ के समान है। ओलम्पस पर्वत की चोटी पर रहने वाले ये धर्म के ईश्वर थे। फिर भी जब इन्ही देवताओ को दार्शनिक रूप देकर स्वर्गारूढ किया जाता है तो वे तारो के ज्ञान की दार्शनिक उपाधि प्राप्त कर लेते है। आयोनिश दर्शन की यह प्रवृत्ति यूनानी-चिंतन के सभी बाद के सम्प्रदायो मे विद्यमान रही। यदि अरस्तू की स्वर्गीय आत्माओ की पूरी छानबीन की जाय तो पता चलेगा कि वे पुराने सौदर्य देवताओ से बहुत भिन्न नही है। यह सच है कि सुकरात ने देवताओ की उपासना का विरोध किया, परन्तु फिर भी वह ईश्वर की प्रचलित अवधारणा के प्रभाव को नही मिटा सका।

दूसरे स्थानो पर धर्म और दर्शन के इतिहास का सामान्य सर्वेक्षण करने के पश्चात् यदि हम उस माध्यम का अध्ययन करे जिसके द्वारा भारतीय प्रतिभा ने अपनी समस्याओ पर प्रतिक्रिया व्यक्त की है तो हम अपने सामने पूर्णत एक नयी दृष्टि पाते हैं। दूसरे स्थानो पर धर्म और दर्शन ने विशिष्ट और भिन्न मार्ग अपनाये, हालाकि उन्होने एक दूसरे को प्रभावित किया पर दोनो एक दूसरे मे घुल-मिल नही गये। दूसरी ओर भारत मे हमेशा दोनो के बीच अतर करना सभव नही है। भारत मे दर्शन यूनान की तरह अकादमियो की चार-दीवारी तक सीमित नही था, बल्कि करोडो का धर्म बन गया।

जैसा कि हम जानते है कि अस्तित्व की समस्याओ के जो हल गौतम बुद्ध और महावीर ने खोजे, वे मूलत दार्शनिक थे। लेकिन उनकी शिक्षाओ ने उसी तरह धार्मिक सम्प्रदाय निर्मित किए जैसे कि पैगम्बरो के प्रवचनो से होते है। यूनानी दार्शनिको मे सुकरात अनेक तरह से एक विशिष्ट व्यक्तित्व था। यद्यपि वह मूलत एक दार्शनिक था, पर मात्र दार्शनिक कहने से उसका व्यक्तित्व पूरी तरह उजागर नहीं होता। जब हम उसके विषय मे सोचते है तो बरबस हमें जीसस क्राइस्ट की याद आती है। उसके जीवन की घटनाए इसराइल के पैगम्बरो और भारत के

योगियो के जीवन की घटनाओ से बहुत मिलती-जुलती हैं। वह प्राय समाधि की स्थिति मे पहुच जाता था। वह देववाणी या अन्तर्वाणी मे भी विश्वास करता था जो सकट के सभी क्षणो मे उसकी मदद करती थी। अपने अतिम दिनो मे जब वह एथेस के राजदरबार को सबोधित कर रहा था तो वह इसी अतर्वाणी के आदेश द्वारा निर्देशित हो रहा था। फिर भी सुकरात को दार्शनिको की कोटि मे रखा जाता है। उसके अनुयायियो ने उसके व्यक्तित्व अथवा उसकी शिक्षाओ के आधार पर धार्मिक सम्प्रदाय खडा करने का प्रयास नही किया। इस तथ्य से भारतीय और यूनानी चितन के बीच अतर का साफ पता चलता है। यूनान मे धर्म ने दर्शन की विशेषताओ को अपनाया, भारत मे दर्शन को ही धर्म का रूप दे दिया गया।

इसलिए धर्म और दर्शन के बीच जो अतर हमने स्थापित किया है, वह भारत की स्थिति को सही-सही नही दर्शा सकता। यदि हम दर्शन को धर्म से अलगाने वाले मानदण्ड को भारत पर लागू करते है तो हमे या तो मानदण्ड को बदलना होगा या फिर यह मानना होगा कि भारत मे धर्म और दर्शन ने एक ही रास्ता अपनाया।

दर्शन और रहस्यवाद · प्रारभिक भारतीय दर्शन उपनिषदो मे मिलता है और उपनिषदो का एक विशिष्ट धार्मिक और रहस्यवादी रूप रहा है। इस बात से जेलर और एर्डमैन की भाति हमें यह भ्रामक निष्कर्ष नहीं निकाल लेना चाहिए कि प्रारभिक भारतीय दर्शन को अनुभवजन्य या बुद्धिसगत दर्शन के विवरण से बाहर रखना चाहिए। यह सच है कि जब तक रहस्यवाद एक वैयक्तिक अनुभव है, हम इस पर दार्शनिक जाच के परीक्षणो को लागू नही कर सकते। लेकिन जब उस अनुभव के आधार पर चितन की एक तर्क-सगत पद्धति बनाने का प्रयास किया गया है तो इसे मात्र दर्शन के क्षेत्र मे शामिल ही नही किया जाना चाहिए बल्कि उसका एक महत्त्वपूर्ण अग बनाया जाना चाहिए। दर्शन के अतिरिक्त और कोई अन्य नाम इसकी व्याख्या नही कर सकता।

दर्शन का तात्पर्य क्या है ? जीवन की प्रकृति और उसके अस्तित्व का अन्वेषण ही दर्शन है। सत्य को दो तरह से समझा जा सकता है। एक का आदि और अत परम्परा और रहस्योद्घाटन मे है , हम इसे धर्म कहते है। दूसरा तर्क और विचार के स्वतत्र व्यवहार पर निर्भर है और यह दर्शन कहलाता है।

प्रारम्भ से ही दार्शनिक अन्वेषण ने अपनी समस्याओ की व्याख्या के दो विकल्पो मे से एक को अपनाया है। पहला है मानव के अतर्जगत के माध्यम से और दूसरा उसके बाह्यजगत के द्वारा। भारतीय चितन की विशिष्टता रही है कि उसने व्यक्ति के बाह्यजगत की अपेक्षा उसके अतर्जगत पर बहुत अधिक ध्यान दिया है। यह किसी तथ्य की जाच-पडताल से शुरू होकर आतरिक यथार्थ की ओर नही जाता। बल्कि उलटा अतर्जगत की अनुभूति से आरम्भ होता है और वस्तुजगत तक पहुचता है। उपनिषद-दर्शन मे स्वय यही दृष्टिकोण मिलता है। यूनान मे भी दर्शन के प्रारभिक सम्प्रदायो ने यही पद्धति अपनायी या कम से कम यह उनके सामान्य दृष्टिकोण से अलग नहीं थी। जैसा कि हम जानते हैं कि ऑरफिक अथवा पाइथागोरियन दर्शन से इस मत की पुष्टि होती है। सुकरात की द्वन्द्वात्मक पद्धति निस्सदेह तर्कसगत थी, लेकिन उसने घोषणा की थी कि वह अन्तर्वाणी द्वारा निर्देशित होता था। भारतीय दर्शन की तरह कुछ यूनानी दार्शनिको का भी सदेश था कि 'अन्तर्रात्मा को जानो'। प्लेटो के आदर्शवाद मे अन्तर्रात्मा के ज्ञान के साथ-साथ रहस्यवाद के विकास के लक्षण भी हम देख सकते हैं। परन्तु उसके शिष्य अरस्तू ने चितन के इन दृष्टिकोणो मे किसी का भी विकास नही किया। फिर भी, रहस्यवाद अतत सिकन्दर के समय फलीभूत हुआ और नव-प्लेटोवादी दर्शन मे चरमोत्मर्ष को पहुचा। हम

यह निश्चित तौर पर नहीं कह सकते कि इस सिकन्दरिया सम्प्रदाय का विकास भारतीय उपनिषद-दर्शन से हुआ। लेकिन हम जानते है कि उस युग मे सिकन्दरिया पूर्व और पश्चिम के धर्मो और सभ्यताओ के लिए सम्पर्क बिन्दु बन गया था। जैसे कि विभिन्न धर्मो के ईश्वर इस सम्पर्क स्थल पर मिल गये थे और सेरेपियम (मिस्र और यूनानी देवताओ का पवित्र स्थान) की स्थापना की हो, ऐसा लगता है कि मानवीय चितन और अन्वेषण की विभिन्न धाराए इस जगह मिली और एक प्रवाह मे घुल-मिल गयी।[४]

रहस्यवाद का मूल सिद्धात क्या है? यह यथार्थ का वह ज्ञान है जिसे इद्रियो के द्वारा प्राप्त नही किया जा सकता। यदि हमे सत्य तक पहुचना है तो हमे ऐन्द्रिय-जगत से आतरिक-अनुभव पर आना होगा। पाइथागोरस से प्लेटो तक यही सिद्धात किसी न किसी रूप मे मान्य रहा। प्लेटो ने विचार-जगत और ऐन्द्रिय-जगत को बिल्कुल अलग-अलग माना। इन दोनो के मध्य अन्तर को स्पष्ट करने के लिए उसने सध्या के धूमिल प्रकाश और दोपहर के उज्ज्वल प्रकाश का उदाहरण दिया। प्लेटो के अनुसार इन्द्रियो के द्वारा हम जो कुछ ग्रहण करते हैं वह साध्य प्रकाश मे ग्रहण किए हुए की भाति होता है। बुद्धि के द्वारा हम जो कुछ ग्रहण करते है वह दिन के उजाले मे ग्रहण किए हुए की भाति स्पष्ट होता है। यथार्थ और छायाभास के बीच भेद पर उसने बार-बार बल दिया। उसका कहना था कि इन्द्रियो के माध्यम से हम केवल छाया-जगत तक पहुच सकते है, यथार्थ-जगत तक नही। अच्छे को ही उसने पूर्ण-सत्य के रूप मे अभिव्यक्त किया है। ज्ञान, विज्ञान और सत्य विचार का विश्लेषण करते हैं जो सत्य की तरह है , लेकिन मात्र अच्छा ही पूर्ण यथार्थ है। हम ऐन्द्रिय-बोध द्वारा यथार्थ तक नही पहुच सकते। रिपब्लिक मे उद्धृत गुफानिवासियो का प्रसिद्ध दृष्टात उसके दर्शन का अतिम वक्तव्य है। हालाकि वह सहजानुभूत तर्क की बात नही करना जिस पर उपनिषद-दर्शन आधारित है, परन्तु जिस तरह इन्द्रिय-बोध द्वारा प्रदत्त अनुभव की वस्तुओ को नकारता है वह उसे ऐन्द्रिय-जगत के प्रति रहस्यवादियो के व्यवहार के बहुत पास ला देता है।

भारतीय और यूनानी दर्शन के बीच दूसरा साम्य भी है जिसे अनदेखा नही किया जा सकता। यूनानी दर्शन मे जो बुद्धि की अवधारणा है वह भारतीय दर्शन के आत्मा से बहुत भिन्न नही है। प्लेटो ने एनक्सागोरस के विचारो का खण्डन करते हुए दो आत्माओ मे अन्तर स्थापित किया। उसने एक को अमर और दूसरे को नश्वर कहा। नश्वर आत्मा शरीर के प्रभाव से मुक्त नही है और इसे अहकार कहा जा सकता है। अनश्वर आत्मा सृष्टि की धारणा है और शरीर के सभी प्रभावो से मुक्त है। इस अनश्वर जीव को उसने सर्वव्यापक आत्मा कहा है। इसलिए यदि हम प्लेटो के नश्वर जीव की अवधारणा की तुलना उसके अनश्वर जीव के साथ करे तो यह भारतीय दर्शन के आत्मा और परमात्मा से बहुत भिन्न नहीं है।

इसलिए रहस्य के आधार पर उपनिषद-दर्शन को सामान्य दर्शन से बहिष्कृत करना उचित नही है। यदि हम ऐसा करते है तो हमे यूनानी दर्शन के भी एक बडे हिस्से को सामान्य दर्शन से बाहर कर देना होगा।

हमे यह भी याद रखना चाहिए कि दर्शन और गैर दर्शन के बीच अतर विषय-सामग्री के कारण नही है बल्कि पद्धति और विश्लेषण के कारण है। यदि किसी व्यक्ति के निष्कर्ष रहस्योद्घाटन अथवा एकान्त-साधना पर आधारित हैं तो उसकी खोज को दर्शन के बजाय रहस्यवाद अथवा धर्मशास्त्र कहना अधिक सगत होगा। फिर भी, यदि वह बौद्धिक व्याख्या की पद्धति अपनाता है और मानता है कि अस्तित्व के रहस्य को बौद्धिक आधार पर हल किया जाना

चाहिए तो हम उसे दार्शनिको की श्रेणी से अलग नही कर सकते। भले ही वह धार्मिक या रहस्यवादी विश्वासो से प्रभावित हो। वस्तुत दर्शन की कुछ बहुत महत्त्वपूर्ण सामग्री ऐसे प्रवचनो पर आधारित है।

ईसाइयत और इस्लाम मे ऐसे सम्प्रदाय विकसित हुए हैं जिन्होने दर्शन को धर्म के अधीन माना। पर उनके अपने विश्लेषण सामान्य तौर पर दार्शनिक लेखन के अतर्गत शामिल किए गये हैं। इसका कारण यह है कि उन्होने बौद्धिक आक्षेपो से धर्म की रक्षा करने के लिए बौद्धिक पद्धतियो का सहारा लिया। इसलिए सेट आगस्टाइन और बाद के ईसाई विचारको के प्रवचनो को दार्शनिक साहित्य से अलग नही किया जा सकता। यही बात मुस्लिम विचारको के लेखन के बारे मे भी है। जहा तक अरब-दर्शन का सबध है, यदि इस शास्त्रीय साहित्य को छोडा जाय तो एक बहुत महत्त्वपूर्ण सम्प्रदाय को बाहर कर देना होगा। अरब दार्शनिको मे इब्नसिना (एवेसिना) और इब्न-अल-रश्द (एवरोज) के नाम सर्वविदित है, लेकिन वे अरब-दर्शन के प्रवक्ता नही थे। ये वस्तुत अरस्तू के टीकाकार और अनुयायी थे। यदि हम अरब-दर्शन की ठीक से पडताल करना चाहते है तो हमे इन पर से दृष्टि हटाकर उन विद्वानों के कार्य का अध्ययन करना चाहिए जिनको प्राय यूनानी-दर्शन का विरोधी कहा जाता था। दिलचस्प बात है कि धर्म के सत्य को स्थापित करने के क्रम मे जो बिशप बर्क्ले आधुनिक काल मे दार्शनिक-चिनन पर छा गया, उसे सदैव दार्शनिको मे गिना जाता है और उमके लेखन को शामिल किये बिना किसी दर्शन का इतिहास पूरा नहीं माना जाता।

इसी प्रकार जेलर की यह आलोचना भी न्यायसगत नहीं है कि भारतीय-दर्शन का सबध धर्म से कभी नहीं टूटा ओर यह कभी स्वतन्त्र नहीं हुआ। ऐसा कहते समय जेलर के ध्यान में शायद वह आदर है जो वेदो को सामान्यत मिलता रहा, लेकिन वह सभवत इस बात को नही जानता था कि कम से कम तीन सम्प्रदायो ने वेदो के वर्चस्व को अस्वीकार किया। बौद्ध, जैन और चारवाक-दर्शन मे से कोई भी उनके निष्कर्षो की प्रामाणिकता या उनकी परम्परा पर अवलबित नही है। इतना ही नहीं बल्कि रूढिवादी सम्प्रदायो मे न्याय और साख्य दर्शनो ने तो वेदो की सत्ता के प्रति मात्र दिखावटी प्रेम ही प्रदर्शित किया। अत हम यह निश्चित रूप से कह सकते है कि बुद्ध के समय ही भारतीय दर्शन धर्म से पृथक् स्थिति बना चुका था।

भारत और यूनान के बीच दार्शनिक सम्पर्क : मै एक दूसरे प्रश्न की ओर सक्षेप मे ध्यानाकर्षित करना चाहूगा। यदि यह एक सर्वमान्य तथ्य है कि यूनान से पहले ही भारत मे दर्शन की शुरुआत हो चुकी थी तो क्या यह मानना न्यायसगत नहीं होगा कि ग्रीक-दर्शन की शुरूआत पर भारतीय दर्शन का कुछ प्रभाव रहा होगा? हम जानते हैं कि नील और फरात नदियो की सभ्यता यूनान से बहुत पहले विकसित हो चुकी थी। हमारे पास इस बात के भी प्रमाण है कि प्रारम्भिक यूनानी दर्शन के विकास मे इन सभ्यताओ का योगदान रहा है। क्या हम प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष ऐसा ही सबध भारत और यूनान के बीच नही खोज सकते?

वर्तमान-युग के कुछ इतिहासकारो ने इस समस्या पर विचार किया है लेकिन अभी तक वे प्रामाणिक निष्कर्षों तक नही पहुचे। यह सच है कि यूनानी दर्शन के कुछ प्रारभिक सम्प्रदायो मे ऐसी विशिष्टताए मिलती हैं जो भारतीय विचारो से बहुत मेल खाती है। इन समानताओ से निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि सभवत ये भारतीय प्रभाव के कारण है। ऐसा विशेषकर ऑरफिक सम्प्रदाय के बारे मे है। इतिहासकार सामान्यत सहमत हैं कि इसमे कुछ ऐसी बाते मिलती है जो निश्चित रूप से यूनानी नही है और एशियाई मूल को दर्शाती है। शरीर से आत्मा

की मुक्ति के रूप मे मोक्ष की अवधारणा ऑरफिक सम्प्रदाय की केन्द्रीय विषय-वस्तु है। जेलर का मानना है कि यह विचार मूलत भारत का है। पर वह मानता है कि यूनानियो ने इसको फारस से ग्रहाण किया।[१] लेकिन बाद की खोजों से यह सकेत नहीं मिलता कि मोक्ष या मुक्ति का ऐसा कोई विचार जराथुष्ट्र के विश्वास का जरूरी तत्त्व था। इसलिए यह मानना अतार्किक नहीं होगा कि यह अवधारणा यूनान मे भारत से पहुची और प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से इसने प्रारभिक यूनानी सम्प्रदायो को प्रभावित किया।

यूनान मे यह एक स्वीकृत विश्वास था कि बुद्धि और ज्ञान की प्राप्ति के लिए पूर्व की ओर जाना आवश्यक है। बहुत से दार्शनिको के अध्ययन से पता चलता है कि उन्होने ज्ञान की खोज मे पूर्व की यात्रा की। हमने देमोक्रितस के बारे मे पढा है कि उसने मिस्र और फारस मे काफी समय व्यतीत किया। पाइथागोरस के बारे मे कहा जाता है कि सामोस मे अपना घर छोडते समय उसने मिस्र की यात्रा की थी। यह सर्वविदित है कि सोलोन और प्लेटो ने भी व्यापक रूप से पूर्व की यात्राए की थी। इसलिए इसमे आश्चर्य नही होगा यदि पाइथागोरस या इस प्रारभिक-युग के किसी अन्य यूनानी दार्शनिक ने भारत की यात्रा की हो। परन्तु ऐसी किसी यात्रा के ऐतिहासिक प्रमाण नही मिलते। फिर भी यह सामान्यत माना जाता रहा है कि पाइथागोरस के दर्शन मे ऐसे तत्त्व है जो विशिष्ट रूप से भारतीय हैं। समानता कुछ इस तरह की है कि यदि हम बिना उसका नाम लिए उसके दर्शन की व्याख्या करे तो भारतीय दर्शन का विद्यार्थी आसानी से इसे भारतीय दार्शनिक का विवरण समझ सकता है। न जाने क्यो और कैसे अब तक दर्शन के इतिहास की इस समस्या का समाधान नही हो सका है।

सिकन्दर के लेखन से यह पता चलता है कि उसके गुरु अरस्तू ने अनुरोध किया था कि वह भारत मे ज्ञान की क्या स्थिति है इसका पता लगाये। यह स्वय इस बात का प्रमाण है कि भारत पर सिकन्दर के आक्रमण के पूर्व ही यूनान तक भारतीय ज्ञान की ख्याति पहुच चुकी थी। सिकन्दर की मृत्यु के पश्चात् उसके बारे मे किवदतिया बन गयी थी। यद्यपि वे यूनानी मे लिखी गयी थीं लेकिन कुछ का मिस्री भाषा मे अनुवाद किया गया था और बाद मे सीरियन से अरबी मे। उनमे भारतीय दार्शनिको के साथ सिकन्दर के वार्तालापो का उल्लेख मिलता है। उसने दार्शनिक समस्याओ के बारे मे भारतीय दार्शनिको से बहसे कीं और स्वीकार किया कि भारत मे दर्शन का स्तर यूनान की अपेक्षा बहुत ऊँचा है। ये कहानिया यद्यपि ऐतिहासिक नही हैं पर इनसे कम से कम यह सकेत अवश्य मिलता है कि भारतीय मनीषा की ख्याति इन क्षेत्रो मे फैल चुकी थी। यह यू भी सिद्ध होता है कि इस तरह की कथाए काफी प्रचलित थी और लोग उन्हे विश्वास और दिलचस्पी के साथ सुनते थे। ये दतकथाए ईसा-पूर्व पहली शताब्दी और ई० सन् पहली शताब्दी के बीच की लिखी मानी जाती है।

हम जानते है कि अपनी सभी जीती हुई जगहो मे यूनानी उपनिवेश बनाना सिकन्दर की नीति थी—अपनी इसी नीति के तहत उसने इण्डस के किनारे इस प्रकार के उपनिवेश स्थापित किए। हम यह भी जानते हैं कि सदेह दर्शन के सस्थापक पेरो (मृत्यु २७५ ई०पू०) सेना मे थे जो उसके साथ भारत आये थे। सिकन्दर की मृत्यु के पश्चात् सिल्यूकस निकेतर ने चन्द्रगुप्त मौर्य के साथ घनिष्ठ सबध स्थापित किए और मेगास्थनीज को उसके दरबार मे राजदूत बनाकर भेजा। अत अशोक के समय के पूर्व ही भारत और यूनान के बीच सबध स्थापित हो चुके थे। इससे इस धारणा को बल मिलता है कि उनके बीच बौद्धिक स्तर पर आदान-प्रदान भी हुआ था। आज मौजूद एक शिलालेख से भी हम अशोक के बारे मे जानते है कि उसने मकदूनिया के सभी

राजाओ और भूमध्यसागरीय देशो तक अपने धर्म-प्रचारक भेजे थे, हालाकि दुर्भाग्यवश इन प्रयासो का कोई पाश्चात्य लेखा-जोखा आज नही मिलता।

अब हम उन निष्कर्षो को सक्षिप्त रूप मे प्रस्तुत कर सकते है जिनके प्रमाण उपलब्ध हैं। अशोक के शिलालेखों मे जिन देशो का उल्लेख है उन देशो तक निश्चित रूप से बुद्ध का सदेश पहुचा था। सभव है कि यह और भी दूर तक पहुचा हो क्योकि बौद्ध-मत उन दिनो एक तेजी से उभरता हुआ धर्म था। यह भी सभव है कि भारत का प्रभाव यूनान मे अशोक के समय के बहुत पहले पहुच गया हो। भारतीय चितन और कुछ प्रारभिक यूनानी सम्प्रदायो, विशेषकर पाइथागोरस के दर्शन के बीच विशिष्ट समानताओ की तरफ हम पहले ही सकेत कर चुके है। या तो हम यह मान ले कि ये समानताए पूरी तरह से आकस्मिक है। वरना निश्चित रूप से यूनान और भारत के बीच सम्पर्क रहे है। इस सम्पर्क के परिणामस्वरूप भारतीय चितन ने यूनानी चितन को प्रभावित किया। इस समय भारतीय दर्शन का व्यापक विकास हो चुका था और यूनानी दर्शन के प्रारभिक सम्प्रदायो की तुलना मे यह बहुत आगे बढा हुआ था। इन सब से इस धारणा की पुष्टि होती है कि भारतीय चितन ने प्रारभिक यूनानी दर्शन के विकास मे योगदान दिया। हालाकि हमें इस बात की पक्की जानकारी नहीं है कि यह योगदान कितना और किस तरह का था।

अब तक यूनानी दर्शन पर भारतीय दर्शन के सभावित प्रभाव के बारे मे चर्चा की गयी है। अब हमे प्रश्न के दूसरे पक्ष पर भी विचार करना चाहिए कि क्या यूनानी विज्ञान और दर्शन ने भी भारत को प्रभावित किया है? ऐसा कोई विस्तृत लेखा-जोखा देना तो कठिन है जिसको निर्णायक कहा जा सके, फिर भी यह विश्वास के साथ कहा जा सकता है कि कम से कम ई० सन् चौथी शताब्दी और उसके बाद का भारतीय गणित-ज्योतिष यूनानी गणित-ज्योतिष से प्रभावित था। वस्तुत कुछ यूनानी शब्दावली भारत मे प्रचलित हो गयी थी। एक प्रसिद्ध भारतीय ज्योतिषी वाराहमिहिर जिसकी मृत्यु ५८७ ई० सन् मे हुई, ने अपनी पुस्तक 'वृहत् सहिता' में यूनानी ज्योतिषविदो का उल्लेख किया है। इस समय के एक दूसरे लेखक ने, जिसको अलबरूनी ने इण्डिका मे उद्धृत किया है, यूनानी विचारको की बहुत प्रशसा की है। इन सब से हम निश्चित कह सकते है कि ईसवी सन् तीसरी शताब्दी के पश्चात् भारत यूनानी ज्ञान से परिचित हो चुका था और विद्वत-मण्डली के बीच इसका प्रभाव अनुभव किया जा रहा था। फिर भी जहा तक भारतीय दर्शन के विभिन्न सम्प्रदायो का प्रश्न है यह विश्वास के साथ नही कहा जा सकता कि ये यूनानी चितन द्वारा कितना प्रभावित थे।

सक्षेप मे, यदि हम ईसवी सन् पूर्व और ईसवी सन् बाद के दो कालो को चुने तो हमारे निष्कर्ष तर्कसगत होगे। हम कह सकते है कि ईसवी सन् पूर्व मे यूनानी दर्शन अपने प्रारभिक दौर मे सभवत भारतीय दर्शन द्वारा प्रभावित था। जहा तक ईसवी सन् बाद का प्रश्न है, ऐसे कारण मौजूद है जिनसे यह कहा जा सकता है कि भारतीय चितन के कुछ पक्षो पर यूनानी ज्ञान का प्रभाव पडा था।

भारत और यूनान मैं यह स्पष्ट करना चाहूगा कि सामान्य दर्शन के एक व्यापक इतिहास की आवश्यकता पर मेरे बल देने के ऐतिहासिक कारण है। किसी भी देश अथवा राष्ट्र के योगदान को घटाने अथवा बढा कर देखने का कोई प्रश्न नही है। हमने मानवता को भौगोलिक सीमाओ पर आधारित समूहो मे विभाजित कर दिया है और विश्व के मानचित्र पर विभिन्न रगो मे पश्चिम, एशिया और अफ्रीका चित्रित कर दिया है। फिर भी मानव-ज्ञान के

मानचित्र को क्षेत्रो और विभिन्न रगो मे विभाजित नही किया जा सकता है। ज्ञान सभी सीमाओ और बाधाओ से ऊपर है। पृथ्वी का चाहे कोई भी कोना हो जहा यह सबसे पहले विकसित हुआ, वह सम्पूर्ण मानव-जाति की मिली-जुली विरासत है। सभी मानव जातियॉ, चाहे किसी भी देश अथवा राष्ट्र की हो, इस पर बराबर अधिकार रखती हैं। यह तथ्य कि सुकरात यूनान मे जन्मा था और उपनिषदो के रचयिता भारत मे, उनकी अपनी जीवनियों के विचार से महत्त्वपूर्ण हो सकता है लेकिन जहा तक मानव-ज्ञान के इतिहास का सबध है यह अप्रासगिक है। यह सच है कि सुकरात यूनानी था और उपनिषदो के लेखक भारतीय थे। फिर भी मानव-ज्ञान के क्षेत्र मे उन्होने जो योगदान दिया है वह न तो यूनानी है और न भारतीय, बल्कि सम्पूर्ण मानवता का उस पर अधिकार है। यदि दर्शन भारत मे यूनान से पहले आरम्भ हुआ तो इसका मतलब सिर्फ इतना है कि दर्शन के इतिहास की व्याख्या करते समय हम इसकी शुरुआत भारत से करे। फिर भी इससे भारत को विशेष महत्त्व नही मिल जाता और न ही यूनान की महानता कम हो जाती है। बनु-अम्र की जन-जाति के बारे में अरब कवि ने जो कहा वह मानव-ज्ञान के बारे में भी काफी सार्थक है –

मत कहो कि उसका घर नजद के पूर्व मे है, सब जानते है कि नज्द ही बनु अम्र की जनजाति का निवास है।

विश्व-दर्शन मैं पहले ही एक मुख्य कारण का उल्लेख कर चुका हूँ जो इस कार्य का सकलन करने के पीछे निहित रहा है। एक दूसरा कारण भी है जो अत्यधिक महत्त्व का है। अब तक दर्शन की विभिन्न श्रेणियो मे विभाजित करने से सच्चे विश्वव्यापी दृष्टिकोण से दार्शनिक समस्याओ का सर्वेक्षण नहीं किया जा सका है। हमारे सामने दर्शन के ऐसे इतिहास है जिनमे एक देश अथवा काल का अध्ययन किया गया है। लेकिन एक भी ऐसा अध्ययन नहीं है जिसमे सभी स्थानो और कालो के दार्शनिक परिवर्तनो को शामिल किया गया हो। इसलिए दर्शन का ऐसा इतिहास लिखने का समय आ गया है जिसमे प्राचीन, मध्य और आधुनिक काल के भारत, चीन और यूनान के योगदानो को शामिल किया जाय।

प्राकृतिक शक्तियो पर बढते हुए नियत्रण ने विभिन्न क्षेत्रो के लोगो को एक दूसरे के पास ला दिया है। इससे विभिन्न सस्कृतियॉ एक-दूसरे के घनिष्ठ सम्पर्क मे आयी है। घनिष्ठ सम्पर्को से ऐसी स्थितिया बनी है कि विभिन्न लोगो के योगदानो को मानव-ज्ञान के एक समान धरातल पर लाया जा सकता है। इनसे विभिन्न सभ्यताओ के दृष्टिकोण मे निहित विभिन्न सिद्धातो के बीच मेल-मिलाप करने की दर्शन की भूमिका मे सहायता भी मिलेगी। विश्व-दर्शन का विकास सैद्धातिक दिलचस्पी का ही विषय नहीं है बल्कि इसका बडा व्यावहारिक महत्त्व है।

इस दृष्टि से भी दर्शन का इतिहास फिर से लिखा जाना चाहिए। विभिन्न देशो और कालो के योगदानो को न केवल पूरी तरह से स्वीकार किया जाना चाहिए बल्कि सामूहिक विश्व-दर्शन के विकास मे उन्हे उचित स्थान दिया जाय। उदाहरण के लिए, ज्ञान की समस्या का अध्ययन करते हुए अब तक हमने या तो भारतीय विचारको के विचारो का अध्ययन किया है अथवा यूनानी विद्वानो या अरब-दार्शनिको का। परिणामस्वरूप दार्शनिक समस्याओ को हमने उनके पूरे आलोक मे नही देखा बल्कि राष्ट्रीय और भौगोलिक दृष्टिकोण के चश्मे से देखा है। अब हमे इन विभिन्न पद्धतियो द्वारा अन्तर्दृष्टियो को ध्यान मे रखते हुए समस्याओ के समाधान का प्रयास करना होगा। केवल इसी तरह हम विशुद्ध दार्शनिक दृष्टिकोण से दर्शन की समस्याओ तक पहुच सकते है।

यही सही है कि इस प्रयास मे भी दर्शन की समस्याओ का सर्वेक्षण इस दृष्टिकोण से नही किया गया है। लेकिन विभिन्न कालो मे विभिन्न लोगो ने जो ज्ञान प्रस्तुत किया कम से कम उसे एक समान परिधि मे आस-पास लाने का प्रयास इसके द्वारा अवश्य किया गया है। मुझे आशा है कि एक सामान्य एकत्रीकरण में सामग्री का यह सचयन विश्वदर्शन के उस इतिहास को लिखने की दिशा में पहले प्रयास के रूप में होगा जो वर्तमान स्थिति में अकेला ही मानवता की जरूरतों को पूरा कर सके।

निष्कर्ष : हमने इस प्रस्तावना की शुरुआत फारसी कवि के एक उद्धरण से की थी जिसमे कहा गया है कि अस्तित्व की पुस्तक के पहले और आखिरी पन्ने खो गये है। दर्शन इन खोये हुए पन्नो को पुन पाने के लिए की गई खोज है। इस अन्वेषण मे लगभग तीन हजार वर्ष बीत गये हैं। परन्तु खोए हुए पृष्ठ पुन प्राप्त नही हो सके और न ही कोई आशा है कि उन्हे कभी पुन प्राप्त किया जा सकेगा। दर्शन का इतिहास इस अन्वेषण का लेखा-जोखा है। भले ही यह लक्ष्य की प्राप्ति के बारे मे कुछ नही कहता पर इसने हमे यात्रा और अन्वेषण की उस मनोहर कहानी से परिचित अवश्य कराया है।

दर्शन के तीर्थयात्री अपनी खोज के लक्ष्य को पाने मे सफल नही हुए, पर अपनी यात्रा के दौरान उन्होने बहुत महत्त्वपूर्ण कुछ और भी हासिल किया है। दर्शन की अपनी खोज मे उन्होने विज्ञान को खोजा। विज्ञान ने मनुष्य के लिए नयी शक्ति दी है पर उसे शाति नही दी। पहले यह निर्माण के एक साधन के रूप मे सामने आया पर अब यह विनाश का हथियार बनता जा रहा है। अब समय आ गया है कि जब दर्शन को मानव-शाति की ओर अपना ध्यान देना चाहिए। यदि यह अपनी इस खोज मे सफल होता है और मनुष्य की खोई हुई शाति पुन तलाश लेता है तो भले ही यह दो खोए हुए पन्नो को पुन नही लिख सकता, पर मानवता के लिए एक नयी पुस्तक लिख सकेगा। तब इसे दूसरे फारसी कवि के शब्दो मे यह कहने का अधिकार होगा कि –

जो प्रेम की राह पर चलते है कभी नही थकते।
क्योकि यह मार्ग और मजिल दोनो है।

टिप्पणियॉ

१ अरब लेखको ने दो विशिष्ट प्रकार की पुस्तक लिखी है। एक श्रेणी मुख्यत उन जीवनीपरक पुस्तको की है जिनमे दार्शनिको के जीवन को अध्ययन का विषय बनाया गया है इसलिए इन पुस्तको मे उनके दर्शन का शामिल होना मात्र आकस्मिक था। दूसरी श्रेणी की पुस्तको के लेखको की मुख्य रुचि दर्शन के सम्प्रदायो का अध्ययन करने मे रही है और उनमे जीवनीपरक लेखा-जोखा मात्र सयोगवश ही मिलता है। पहले वर्ग की पुस्तको को 'तारीख-उल-हुकाम' या तारीख-उल-फलसफा (दार्शनिको का इतिहास) कहा गया। दूसरे वर्ग की पुस्तको को किताब-उल-मिलाने वान नहल (धार्मिक और दार्शनिक सम्प्रदायो की पुस्तके) अथवा अल आरा वन मकालत (मत और प्रवचन) ऐसी भी पुस्तके थीं जो दर्शन के विशेष युगो से सम्बद्ध है। इस तरह अल फराही(जन्म ९२५) ने एक पुस्तक लिखी जिसमे अरस्तू-पूर्व और अरस्तू-बाद के दर्शन का वर्णन है। इन अध्ययनो को हम सभवत दर्शन का एक व्यवस्थित इतिहास लिखने के प्रथम प्रयास के रूप मे व्याख्यायित कर सकते हैं।

२ दर्शन का इतिहास–जे० इ० एर्डमैन (पी०पी० ९)

३ दर्शन का इतिहास–फ्रेंक थिल्ली (पी०पी० ३)

४ जे० इ० एर्डमैन—दर्शन का इतिहास (पी०पी० १३)
५ यूनानी दर्शन के इतिहास की रूपरेखा—बी० जेलर (पी०पी० २)
६ यूनानी दर्शन के इतिहास की रूपरेखा—बी० जेलर (पी०पी० १६)
७ "और महामहिम की राय मे यह मुख्यतम विजय है, अर्थात् कानून द्वारा विजय, ये वो बात है जिसे महामहिम ने अपने राज्य और ६ सौ मील के घेरे मे बने हुए आस-पास के राज्यो मे लागू किया और इसको प्रसारित किया, यूनानी राजा के निवास-स्थान तक और उससे दूर एटियोकस तक जहा चार राजा निवास करते है और जिनके नाम है टोलेमी, एण्टीगोनस, मागस और एलेक्जेण्डर और इसी प्रकार राजा के राज मे बसे यवनो (पजाब के यूनानी) पर भी इसे लागू किया गया।" —बेवन की पुस्तक 'सिल्यूकस परिवार'—खण्ड ए (पृष्ठ २९८) से उद्धृत।

सांस्कृतिक दृष्टि
संगीत नाटक अकादमी
ललित कला अकादमी
साहित्य अकादमी
भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद

"कला वस्तुत पल्लवित नही हो सकती जब तक शक्तिशाली गैरसरकारी सस्थाएँ उसके लिये कार्य न करे। अकादमियो की स्थापना का यही मुख्य कारण है। इनकी स्थापना यद्यपि सरकार द्वारा हुई है किन्तु यह स्वायत्त सस्थाएँ होगी जो किसी भी प्रकार के सरकारी हस्तक्षेप के स्वतत्ररूप से कार्य करेगी।"

सांस्कृतिक दृष्टि *

संगीत नाटक अकादमी **

स्वाधीनता प्राप्ति के पश्चात् जिन समस्याओ पर तुरन्त ध्यान देने की आवश्यकता थी, उनमे सबसे महत्त्वपूर्ण यह थी कि सास्कृतिक गतिविधियो का आधुनिकीकरण किया जाए। पिछले डेढ सौ वर्षो मे ललित कलाओ को चाहे वह नृत्य हो या नाटक, सगीत हो या साहित्य, वह सरक्षण और प्रोत्साहन नही मिला, जो उसके सर्वांगीण विकास के लिए आवश्यक था।

यह बात सत्य है कि हिन्दुस्तान मे पुनर्जागरण १९वी शताब्दी के मध्य से आरभ हो गया था किन्तु इसका प्रारम्भ सामाजिक मागो के दबाव के फलस्वरूप हुई थी और इसमे कुछ सीमा तक राज्य का भी हाथ था। इसीलिए इसमे न गहराई थी और न इसके परिणाम दीर्घकालिक थे। यह स्थिति तब उत्पन्न होती है जब राज्य से उसे यथासभव सहायता मिलती। मुगल राज्य के पतन के पश्चात् ललित कलाओ की विभिन्न विधाओ को राजकीय स्तर पर उत्साहित किया गया और पुरातन परपराओ का अत कर दिया गया।

निस्सदेह ही हिन्दुस्तानी देसी राजाओ ने जो लगभग भारत के एक तिहाई भाग पर फैले हुए है, क्षेत्रीय स्तर पर अपने आप इन ललित कलाओ के विकास मे महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। हमे इनका आभारी होना चाहिए परन्तु इनकी चेष्टाए इन कलाओ की सपूर्ण उन्नति और विकास के लिए अपर्याप्त थी। और फिर रजवाडो का अत हो जाने के साथ वह सरक्षण जो सामती व्यवस्था के अतर्गत ललित कला को प्राप्त हुआ था, वह भी शेष नहीं रहा। जनतात्रिक व्यवस्था मे ललित कला का विकास जनता की अभिरुचि से होता है और राज्य के सरक्षण से होता है, क्योकि राज्य जनता की आकाक्षाओ की व्यवस्थित अभिव्यक्ति होता है। इसलिए ललित कलाओ को विकसित करना सरकार के दायित्वो मे सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण है। एक दशक पूर्व प्रगतिशील जनता ने इस तथ्य को जान लिया। २६ जनवरी १९५६ को बगाल की एशियाटिक सोसाइटी ने एक विशिष्ट प्रस्ताव द्वारा यह विचार रखा कि एक 'नेशनल कल्चरल ट्रस्ट' स्थापित किया जाए जो एक स्वतत्र और स्वायत्त सस्था हो और उसे देश के सास्कृतिक विकास का कार्यक्रम सौंपा जाए। इस ट्रस्ट मे तीन अकादमिया होगी। एक साहित्य अकादमी, जिसका सबध भारतीय भाषाओ, साहित्य, दर्शन और इतिहास से होगा। दूसरी कला अकादमी होगी, जिसमे ग्राफिक्स, प्लास्टिक और स्लाइट कला और वास्तुकला सम्मिलित होगे, तीसरी अकादमी नृत्य, नाटक और सगीत के सबद्ध होगी। इसी के साथ यह इच्छा प्रकट की गई कि इन अकादमियो का उद्देश्य यह होगा कि यह सस्कृति के सपूर्ण विभागो का प्रबध करे और उसके स्तर को सुधारे।

---

* मौलाना की सास्कृतिक दृष्टि तीन अकादमियो – साहित्य अकादमी, सगीत नाटक अकादमी और ललित कला अकादमी – की जन्मदात्री है। इसी के आधार पर भारतीय सास्कृतिक सबध परिषद की स्थापना हुई। उपर्युक्त अश मौलाना के उन भाषणो से उद्धृत हैं जो उन्होने इन में से प्रत्येक के उद्घाटन के अवसर पर दिए थे। समग्ररूप से यह अकादमियॉ उन साम्कृतिक मचो का प्रतिनिधित्व करती हैं जो ललित एव मचीय कलाओ के लिए मौलाना ने स्थापित किए थे। यह सपादित अश भारत सरकार के प्रकाशन विभाग द्वारा सकलित मौलाना आजाद के भाषणों से लिए गए हैं।

**सगीत नाटक अकादमी, नई दिल्ली मे उद्घाटन समारोह के अवसर पर स्वागत भाषण, २८ जनवरी, १९५३।

आत्मसात और समन्वय करने की भावना ही हमेशा से भारतीय सभ्यता और सस्कृति की विशेषता रही है और इसकी अभिव्यक्ति सगीत से अधिक किसी अन्य क्षेत्र मे परिलक्षित नही होती।

मध्य युग मे ईरानी और भारतीय शास्त्रीय सगीत के मिश्रण से जो सगीत-कला उत्पन्न हुई उसमे इन दोनो धाराओ की सूक्ष्मता और सुकुमारता विद्यमान है। जब मुसलमानो का भारत मे आगमन हुआ तो भारतीय सगीत विकास के उच्च शिखर तक पहुच चुका था। अत मुसलमानो को भारतीय सगीत की विशेषताओ को प्राप्त करने मे कोई कठिनाई नही हुई। उन्होने न केवल उसे अपना लिया बल्कि तत्पश्चात् भारत मे दोनो सगीत-परपराओ का अलग-अलग विकास होने के स्थान पर उन दोनो के मिलन से जिस सगीत-कला का जन्म हुआ उसका ही विकास हुआ और यहाँ तक हुआ कि यह अपनी सूक्ष्मता और सुकुमारता मे अपने वास्तविक स्रोतो से आगे निकल गयी।

अमीर खुसरो का नाम भारतीय इतिहास के विद्यार्थी के लिए अपरिचित नाम नहीं है। यद्यपि वो एक महान कवि थे किन्तु उनकी असाधारण सर्जनशीलता की गहरी छाप ललित कलाओ पर भी गहरी है। ईरानी और हिन्दुस्तानी सगीत के मिश्रण से उन्होने नए-नए राग आविष्कृत किए। ऐमन, तराना, कौल, सुहैला और दूसरे राग, जो आज भी करोडो भारतवासियो को आनन्दविभोर करते है, और भारतीय वाद्य सगीत उनकी असाधारण प्रतिभा और मिश्रण करने की क्षमता के उदाहरण है। बाजो मे 'सितार', उन्ही का आविष्कार है। उन्हे आभास हुआ कि 'वीणा बहुत लबा-चौडा तथा जटिल बाजा है, तो उन्होने उसे सरल बनाने के लिए उसके तारो की सख्या कम करके केवल तीन कर दी। 'सितार' फारसी भाषा का शब्द है, जिसका अभिप्राय तारो से है। इसीलिए इसको यह नाम दिया गया है। यह नाम ही इस तथ्य का परिचायक है।

सगीत को भी उन्होने इसी प्रकार सरल और सहज बना दिया। जयपुर के राजा मानसिह और सुल्तान शर्की सगीत के रसिया थे। उन्होने भारतीय सगीत मे 'खयाल' को प्रचलित किया। 'ध्रुपद' की पुरातन शास्त्रीय पद्धति अत्यधिक कठिन है और बेलोच थी जिससे भावो की प्राजल अभिव्यक्ति बहुत कठिन थी। उन्होने 'खयाल' (ध्रुपद) के वैभव को सुरक्षित रखा किन्तु इसकी कठोरता को समाप्त कर दिया और इस प्रकार यह भारतीय सगीत का सबसे लोकप्रिय राग बन गया।

भारतीय वाद्यो के विकासक्रम मे भी पूर्णत भावविह्वल करने की क्षमता और उनमे मिश्रण की स्थिति परिलक्षित होती है। विभिन्न प्रकार के तानपुरे ईरान मे लोकप्रिय थे। भारत ने उन्हे अपनी आवश्यकतानुसार परिवर्तित करके अपना लिया। एक अन्य ईरानी वाद्य 'कानुन', जिसे आजकल कश्मीरी बजाते है, भारतीय गगा-जमनी सस्कृति के उदाहरण सगीत से अधिक और कही नही मिलते। लगभग सहस्र वर्ष से अधिक समय मे हिन्दू और मुसलमानो की सयुक्त चेष्टाओ ने सगीत को उस उत्कर्ष बिन्दु पर पहुचा दिया कि शायद ही दुनिया मे कोई इसके सन्मुख खडा हो सके। ड्रामे के सबध मे यूनानियो का उद्गम-स्रोत कुछ भी हो, किन्तु इसमे शका नही कि उन्होने नाटक को उस स्थान पर पहुचा दिया जहा उनके समान कोई नही है, यद्यपि इन बातो मे तुलना करना कोई अच्छी बात नही है।

फिर भी हम यह कह सकते है कि कालिदास की गणना यूनानी नाटककारो की पक्ति मे हो सकती है। इसके अतिरिक्त भवभूति, भास आदि ने भारतीय नाटक को इतने उच्च शिखर तक पहुचा दिया है कि वो किसी प्रकार भी यूनानी नाटक से कम नही है। जहा तक

नाट्य-सिद्धात का प्रश्न है, इस मैदान मे भी हिन्दुस्तानियो की सेवाए उत्कृष्ट है और जो आज भी अनुकरण-योग्य समझी जाती हैं।

नृत्य के क्षेत्र मे भी हिन्दुस्तानी नृत्य की विविधता ने सदैव कला एव सस्कृति के विद्यार्थियो को अपनी ओर आकृष्ट किया है। शुद्ध भारतीय शास्त्रीय नृत्य का विकास मदिरो मे हुआ है। इसमे अभिव्यक्ति की असख्य पद्धतिया, आरोहण-अवरोहण, अद्भुत सगीतात्मकता और सुर-ताल इस भूमि के विभिन्न क्षेत्रो का प्रतिनिधित्व करते है। भारतीय नृत्य की विविधता और सुकुमारता का उदाहरण सपूर्ण विश्व मे शायद ही कहीं मिले। इस परपरा का प्रवाह और शक्ति, जिसकी अभिव्यक्ति आज तक हो रही है, सराहनीय है।

नृत्य, सगीत और नाटक की यह बहुमूल्य धरोहर है। इसको विकसित करना है और इसमे वृद्धि करना है। अपने लिए ही नही, बल्कि हमे यह कार्य इसलिए भी करना है कि यह मानव-मात्र की धरोहर है। यह बात कला-क्षेत्र से अधिक अन्य कही और चरितार्थ नही होती। सुरक्षित रखने का अर्थ है सर्जन करना। इन अकादमियो का यही उद्देश्य होगा कि वो सुव्यवस्थित सस्थाओ के माध्यम से हमारी इन परपराओ को सुरक्षित करे और इसको विकसित करे।[1]

ललित कला अकादमी [*]

यहा हिन्दुस्तान मे हमने सदैव ही इस बात को स्वीकार किया है कि कला व्यक्ति और जाति दोनो को सुसस्कृत बनाने का एक अनिवार्य अग है। हमारी सीधी-सादी ग्रामीण महिलाए कितनी सुदरता से कल्पना द्वारा अपने घरो को सजाती है। हमारे यहा ऐसे कारीगर है जो कपडे मे ऐसे डिजाइन बुनते हैं कि जिन पर यूरोप तथा अमरीका जैसे विकसित देशो के प्रशिक्षण-प्राप्त कुशल कारीगर ईर्ष्या करते है। यदि हम से यह प्रश्न किया जाए कि हमारे देश, हिन्दुस्तान जैसे निर्धन देश, की जनता मे कला की यह अभिरुचि कैसे उत्पन्न हो तो मेरे मस्तिष्क मे इसका उत्तर यह है कि हमारे धार्मिक भवनो की वैभवशाली वास्तुकला और मूर्तिकला के कारण आदि प्राचीन काल से मदिरो मे केवल पूजा-पाठ ही नही होता था बल्कि यह सौदर्योपासना के केन्द्र भी होते थे। मध्य युग मे वैभवशाली मस्जिदे निर्मित हुई जिनमे वैभव और सादगी का सुदर मिश्रण था। एक आदमी और तो कुछ नही कर सकता था किन्तु इन अद्भुत कलाकृतियो को निरतर देखते रहने से उसमे शुद्ध कलात्मक अभिरुचि उत्पन्न हो गई। एक देश जिसमे कोणार्क या भुवनेश्वर का मदिर अथवा ताजमहल का निर्माण हुआ तो वो केवल उसकी कल्पनाशीलता की उच्चता ही नही है बल्कि उसकी अद्वितीय कला-कौशल की भी अभिव्यक्ति है। वो मस्तिष्क जिसने सोचा, वो हाथ जिन्होने इसका निर्माण किया, वो सरक्षण जिसके फलस्वरूप यह भवन रूपायित हुए, उन सबकी सराहना हम आज भी करते है और निस्सकोच इसकी भूरि-भूरि प्रशसा करते रहेगे।

आज यह बात स्वीकार कर ली गई है कि कोई भी शिक्षा उस समय तक पूर्ण नहीं हो सकती जब तक वो मानवीय भावनाओ के विकास और उन्हे सुसस्कृत बनाने पर ध्यान केन्द्रित न करे और इसकी प्राप्ति का उच्चतम ढग यह है कि बुद्धिबल के प्रशिक्षण की सुविधाए उपलब्ध कराई जाए, ललित कला की किसी एक शाखा का अभ्यास कराया जाए, इस साधारण प्रश्न के अतिरिक्त कि कला की शिक्षा के माध्यम से मानवीय व्यक्तित्व के सूक्ष्म पक्षो का प्रशिक्षण होता

---

१ सगीत नाटक अकादमी के उद्घाटन समारोह में अभिभाषण, २८ जनवरी, १९५३

* ललित कला अकादमी, नई दिल्ली की प्रथम बैठक में दिए गए भाषण से, ५ अगस्त, १९५४

है यह इसलिए भी आवश्यक है कि इसके द्वारा हाथो के कामो मे कुशलता प्राप्त होती है। बच्चे की कल्पनाशक्ति को कार्यशील होने का अवसर मिलता है। अब यह बात मान ली गई है कि प्राथमिक शिक्षा अथवा नर्सरी की शिक्षा के प्रशिक्षण की उच्चतम पद्धति यह है कि बच्चो को रग मिलाने, विभिन्न आकारो और बनावटो की वस्तुओ को पहचानने और उनकी सहायता से अन्य वस्तुए बनाने का प्रशिक्षण दिया जाए। इससे बच्चे की रचनात्मक प्रवृत्ति की सन्तुष्टि होगी और इसके अतिरिक्त शक्ति तोड-फोड के स्थान पर रचनात्मक कार्यो मे लग जाएगी तथा इस प्रकार का रचनात्मक दृष्टिकोण आगे चल कर वह समाज मे भी अपनायेगा और सुसस्कृत तथा सुसभ्य बनेगा। अत कला की शिक्षा चाहे भावनाओ के प्रशिक्षण के लिए दी जाए अथवा आभासो का सस्कार करने के लिए या बच्चे की रचनात्मकता की इच्छा पूर्ति के लिए या हाथ के कामो मे कुशलता-प्राप्ति के लिए दी जाए, शिक्षा के अनिवार्य तत्त्व के रूप मे इसकी महत्ता प्रमाणित है।

साहित्य अकादमी *

मैं कुछ समय से सोच रहा था कि विभिन्न भारतीय भाषाओ के साहित्य के प्रसार के लिए कौन-सा उचित उपाय किया जाए। इसमे कोई सदेह नही कि कुछ राज्य इस सबध मे अपने ढग से काम कर रहे हैं परन्तु मेरे विचार मे कुछ ऐसे उपाय किए जाने चाहिए जिससे सपूर्ण भारत की विभिन्न भाषाओ के साहित्यकारो को प्रोत्साहित किया जा सके और उनकी रचनाओ को मान्यता प्रदान की जा सके।

साहित्य-अकादमी का उद्देश्य है कि वह जनता की साहित्यिक अभिरुचि का निरीक्षण करे और साहित्य की उन्नति मे सहायक हो और यह उसी समय सभव है जब हम साहित्यिक स्तर को सुरक्षित रखे। अत भारतीय साहित्यकारो का लक्ष्य यह होना चाहिए कि वह अपनी समस्त क्षमताए उत्कृष्ट साहित्य की रचना मे लगाएँ जो मानव की धरोहर मे एक वृद्धि है।

कुछ महानुभावो ने जिनमे कुछ सीमा तक हमारे प्रधानमत्री भी सम्मिलित है, यह विचार व्यक्त किया है कि अकादमिया सरकार की ओर से न बनाई जाए। इनके मतानुसार यह ऊपर से लादने वाली बात होगी। इनके विचार मे अकादमियो की स्थापना लोगो की ओर से होनी चाहिए और इसके लिए सरकार को उस समय तक प्रतीक्षा करनी चाहिए जब देश इतनी उन्नति कर ले कि सस्थाए अथवा व्यक्ति जिनके पास आवश्यक अधिकार हो, अकादमिया स्थापित करे और जब इस प्रकार की अकादमिया स्थापित हो जाएगी तो सरकार का केवल यह कार्य रह जाएगा कि वह इनको मान्यता प्रदान करे। मुझे खेद है कि मैं इस मत से सहमत नही हू। पुनर्जागरण काल के पश्चात् यूरोप में अनेक अकादमिया स्थापित हुई हैं। आज पाश्चात्य देशो मे शायद ही कोई ऐसा देश हो जहा एक या उससे अधिक अकादमिया स्थापित न हुई हो। यह सब अकादमिया शासको के प्रतिनिधियो या सवैधानिक सरकारो ने स्थापित की है। इसलिए कोई कारण नही कि हिन्दुस्तानी सरकार अकादमियो की स्थापना मे बढकर हिस्सा न ले। वास्तविकता तो यह है कि यदि अकादमियो की स्थापना के लिए इस बात की प्रतीक्षा की जाए कि वह निम्नस्तरीय आधार पर स्थापित हो तो इसकी प्रतीक्षा हमे प्रलयकाल तक करनी पडेगी।

यह बात मेरे मानसपटल मे सदैव से रही है कि कला के प्रसार मे सरकार की भूमिका निम्नस्तरीय होनी चाहिए किन्तु इसमे कोई सदेह नही कि सरकार को कला-प्रसार मे गहरी

* साहित्य अकादमी के पहले जलसे मे दिए गए भाषण से, १२ मार्च, १९५४

दिलचस्पी लेनी चाहिए। यह बात भी सत्य है कि देश मे कला का प्रसार उस समय तक नहीं हो सकता जब तक स्वयसेवी सस्थाए इसकी उन्नति मे प्रयत्नशील न हों। इसीलिए इन अकादमियो की स्थापना का यही उद्देश्य है कि सरकार द्वारा स्थापित किए जाने पर भी यह उसके हस्तक्षेप के बिना स्वायत्त सस्था के रूप मे कार्य करेगी।४ सरकार ने इन्हे स्थापित किया है, क्योकि इसके लिए किसी को तो आगे बढना ही था। अकादमिया स्थापित हो गई, अब सरकार का कार्य समाप्त हो गया। अब यह आप का काम है कि आप इसके सदस्य के रूप मे सपूर्ण देश के साहित्यकारो मे सृजनात्मकता का आदोलन चलाएँ।

भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद् *

आप सज्जनो को याद होगा कि जब भारत स्वाधीन हुआ तो अधिकाश लोगो ने इस बात पर बल दिया कि हमे ससार के अन्य देशो से निकट सास्कृतिक सबध स्थापित करने चाहिए और इस बात की भी आवश्यकता महसूस की गई कि इस कार्य को उचित ढग से करने के लिए एक सस्था की आवश्यकता है जो ससार मे सास्कृतिक दृष्टि से भारत का प्रनिनिधित्व कर सके। इसका सबसे बडा काम यह हो कि दुनिया के विभिन्न भागो मे हिन्दुस्तान के सबध मे जो भ्रातिया उत्पन्न हुई है और जो विरोध फैले हुए है, उनको दूर करे। यह इसलिए भी आवश्यक है कि गत दो शताब्दियो से हिन्दुस्तान के स्वाधीन न होने के कारण आधुनिक ससार के मच पर उसने अपनी कोई भूमिका नही निभाई है। इस काल मे वो अग्रेजों के आधीन था इसलिए वो विश्व के सम्मुख इस प्रकार प्रस्तुत हुआ जैसा अग्रेजो ने चाहा। स्पष्ट है कि यह प्रतिनिधित्व स्वय भारत का नही था बल्कि यह अग्रेज सरकार के हित-पूर्ति के लिए था और उन की इच्छानुसार था। परन्तु अब हिन्दुस्तान स्वाधीन है। उसे ठीक ढग से अब अपनी विशेषताओ के साथ दुनिया के सामने आना चाहिए।

१९४९ मे हमने इस प्रश्न को उठाया और अप्रैल १९५६ मे सास्कृतिक सबधो की भारतीय परिषद् स्थापित हुई। इसके सविधान मे यह बात स्पष्ट कर दी गई है कि इसका उद्देश्य समस्त देशो मे भारत के सास्कृतिक सबधो का प्रसार करना है और इसका कार्य-क्षेत्र सपूर्ण विश्व तक फैला हुआ होगा। यह बात स्पष्ट है कि जो कार्य इतने विस्तृत पैमाने पर होना है, वह एकदम तो हो नही सकता। इसका श्रीगणेश करने से पूर्व इस बात के आश्वासन की आवश्यकता है कि इसकी प्रारभिक चेष्टाए व्यर्थ नही जाएँगी, हमने निर्णय किया कि परिषद् के कार्यो को विभिन्न क्षेत्रो मे विभाजित कर दिया और अपने कार्य का आरभ मध्य-पूर्व के देशो, तुर्की और मिस्र से किया।

कुछ मित्र मुझसे पूछ सकते हैं कि परिषद् के कार्य का आरभ इस विशिष्ट विभाजन के आधार पर ही क्यो हुआ ? प्रश्न बिल्कुल उचित है और इसका कारण भी स्पष्ट है। आपको याद होगा कि भारत को देश-विभाजन के आधार पर स्वतत्रता प्राप्त हुई है जिसके परिणामस्वरूप साप्रदायिक और घृणात्मक वातावरण उत्पन्न हो गया है। पाकिस्तान मे हिन्दुओ और सिक्खो को भारी मात्रा मे अत्याचार का निशाना बनाया गया, उनका वध किया गया और हिन्दुस्तान मे असख्य मुसलमानो के साथ भी यही हुआ। सीमाओ पर शरणार्थियो का अनुमान से अधिक समूह एकत्रित था, विदेशो के सम्मुख यह वीभत्स सत्य वस्तुपरक दृष्टि से प्रस्तुत किया जाता तो

---

* भारतीय सास्कृतिक सबध परिषद् के सार्वजनिक जलसे में दिए गए भाषण से, १४ फरवरी १९५८

हमे कोई शिकायत नही थी किन्तु खेद यह है कि नवनिर्मित देश पाकिस्तान ने ससार के सम्मुख चित्र का एक ही पक्ष प्रस्तुत किया और भारत के विरुद्ध अनुचित प्रचार का अभियान आरभ कर दिया। परिणाम यह हुआ कि मुस्लिम देशो को यह बात समझाई गई कि हिन्दुस्तान का विभाजन साम्प्रदायिक आधार पर हुआ है और अब हिन्दुस्तान केवल हिन्दुओ का देश है। उनको यह भी विश्वास दिलाया गया कि अब हिन्दुस्तान मे जो मुसलमान शेष रह गए हैं उन्हे न तो नागरिक अधिकार प्राप्त है, न ही धार्मिक स्वतत्रता। अब मुझे आपको यह बताते हुए हर्ष हो रहा है कि सास्कृतिक सबधो की भारतीय परिषद की स्थापना के तुरत पश्चात्, परिस्थिति मे नाटकीय परिवर्तन उत्पन्न हो गया है और इन सब देशो ने इस वास्तविकता को स्वीकार कर लिया है कि उनके यह सकुचित विचार और भ्रातिया नितात निराधार थी। उन्होने यह भी जान लिया है कि हिन्दुस्तानी सरकार केवल हिन्दुओ की नही है, यह सब हिन्दुस्तानियो की है।

मौलाना संसद में

शिक्षा, प्राकृतिक ससाधन और वैज्ञानिक शोध के मत्रालय की अनुदान मागो पर ससद मे बहस

"चालीस वर्ष पूर्व मैने अपने देश की सेवा मे अपना जीवन समर्पित करने का सकल्प किया था। मैं १९०७ ई० की बात कर रहा हूँ जब मै अट्ठारह या उन्नीस वर्ष का था तबसे मेरा सपूर्ण जीवन खुला ग्रथ है जो दुनिया के सम्मुख है। अब मेरी कोई इच्छा शेष नहीं है मुझे कह लेने दीजिए कि जो मनुष्य निजी स्वार्थो से मुक्त हो जाता है वह असीम हो जाता है, बधनमुक्त हो जाता है। ऐसे मनुष्य को हानि-लाभ की चिता नही रहती। उसे कोई शस्त्र नही काट सकता क्योकि उसे तभी तक आघात पहुच सकता है जब तक वह स्वार्थो मे लिप्त है।"

मौलाना संसद में *

जनाब, परसो बहस मेरे दोस्त आचार्य कृपलानी ने शुरू की थी। उन्होने अपनी तकरीर (भाषण) मे इस बात पर जोर दिया कि तालीम (शिक्षा) का जो सिस्टम (व्यवस्था) इस वक्त मुल्क मे जारी है वह नीचे से लेकर ऊपर तक दुरुस्त नही है और इसमे रिफोर्म्स (सुधार) होने चाहिए। जिस वक्त उन्होने यह बहस शुरू की तो मुझे खयाल हुआ कि गालिबन (सभवत) वह यह चाहते है कि एजुकेशन मिनिस्टरी (शिक्षा मत्रालय) ने इधर रिफोर्म्स (सुधार) का जो कदम उठाया है और अभी जनवरी मे सैट्रल एडवाइजरी बोर्ड आफ एजुकेशन (केन्द्रीय शिक्षा सलाहकार बोर्ड) ने जो कार्यवाइया की हैं, उस पर बहस करे और इस बारे मे कुछ अपनी तजवीजे पेश करे। लेकिन मुझको यह देखकर ताज्जुब हुआ कि उन्होने यह कहा कि हमने एक कमीशन (आयोग) बिठाया था युनिवर्सिटी एजुकेशन (विश्वविद्यालय शिक्षा) के लिए, फिर एक कमीशन बिठाया गया सेकेण्डरी एजुकेशन (माध्यमिक शिक्षा) के लिए और अब शायद चन्द दिनो के बाद एक कमीशन बिठाया जाएगा प्राइमरी एजुकेशन (प्राथमिक शिक्षा) के लिए। इससे मालूम हुआ कि गवर्नमेन्ट जिस ढग पर एजुकेशन का कार्य कर रही है उसका उसे कोई आईडिया नही है। शायद उन्हे मौका नही मिलता कि वह इन चीजो को पढे, वरना उनका कहना कि अब एक कमीशन बिठाया जाएगा इब्तादाई तालीम (प्राथमिक शिक्षा) पर गौर करने के लिए कितना बेमानी (निरर्थक) है। क्योकि जहा तक इब्तादाई तालीम (प्राथमिक शिक्षा) का ताल्लुक है, आज नही, आज से पाच बरस पहले गवर्नमेन्ट यह फैसला कर चुकी है कि वह बेसिक पैटर्न की होगी। तमाम स्टेट गवर्नमेन्टो (राज्य सरकारो) ने यह चीज मजूर कर ली है और इसी पर अमल कर रही हैं। अब जो सवाल था वह युनिवर्सिटी एजुकेशन (विश्वविद्यालय शिक्षा) और सेकेण्डरी एजुकेशन (माध्यमिक शिक्षा) का था। युनिवर्सिटी एजुकेशन से भी ज्यादा अहम सवाल था सेकेण्डरी एजुकेशन का। क्योकि हकीकतन (वस्तुत) असली खराबी जो हमारे मौजूदा शिक्षण प्रणाली मे है वह हमको वही ढूढनी चाहिए। ब्रिटिश गवर्नमेन्ट ने यह सिस्टम (प्रणाली) इसलिए जारी नही किया था कि मुल्क के अवाम को तालीम दी जाए। बल्कि इसलिए जारी किया था कि उनको खास तरह के अग्रेजी जानने वालो की अपने दफ्तर का कारोबार चलाने के लिए जरूरत थी। इसके लिए उन्होने युनिवर्सिटिया कायम की। युनिवर्सिटी की तालीम कायम नही रह सकती थी जब तक कि सेकेण्डरी एजुकेशन (माध्यमिक शिक्षा) भी न हो और प्राइमरी एजुकेशन (प्राथमिक शिक्षा) न हो, इसलिए सेकेण्डरी एजुकेशन की तालीम कायम की गई। लेकिन वह सिर्फ इसलिए कायम की गई थी कि युनिवर्सिटी मे जाने का एक जरिया है, 'मीन्स' (साधन) है। यह नही सोचा गया कि मुल्क के लाखो करोडो बाशिन्दे जो युनिवर्सिटी तालीम तक नही जा सकते उनके लिए सेकेण्डरी

---

* विपक्ष द्वारा उनके मत्रालय (शिक्षा, प्राकृतिक ससाधन और वैज्ञानिक शोध) के सम्बन्ध में लगाये गये अभियोग के उत्तर मे मौलाना आजाद ने यह भाषण २९ मार्च १९५४ को लोक सभा मे दिया था।

एजुकेशन महज तालीम मे एक 'मिन्स' (साधन) की जगह नही रखेगी, 'इन्ड' (साध्य) होगी और इसलिए सेकेण्डरी एजुकेशन का ढग ऐसा होना चाहिए और इसमे ऐसे एलिमेन्ट्स (तत्त्व) होने चाहिए कि जो सौ मे नब्बे आदमियो के लिए तालीम मे 'इन्ड' (साध्य) का काम दे महज 'मिन्स' (साधन) का काम न दे। नतीजा इसका यह हुआ कि हमारी तालीम का पूरा सिस्टम गलत हो गया। बहरहाल सबसे ज्यादा जरूरी चीज यह थी कि सेकेण्डरी एजुकेशन के मुताल्लिक (सम्बन्ध मे) इन्क्वायरी (जाच) की जाये और इसके बाद सेकेण्डरी एजुकेशन को नए सिरे से आर्गेनाइज (व्यवस्थित) किया जाए। चुनाचे कमीशन कायम किया। नौ महीने के अन्दर उसने अपनी रिपोर्ट पेश कर दी। अब वह रिपोर्ट सेन्ट्रल एडवाइजरी बोर्ड (केन्द्रीय सलाहकार बोर्ड) के सामने आयी। सेन्ट्रल एडवाइजरी बोर्ड ने नवम्बर मे एक कमेटी कायम की कि वह इस रिपोर्ट पर गौर करे और गौर करने के बाद जनवरी मे बोर्ड के जलसे के सामने अपनी सिफारिशे रखे। चुनाचे जनवरी मे बोर्ड का फिर जलसा हुआ, उसके सामने वह सिफारिशे आई। बोर्ड ने उनको मजूर किया और मजूर करने के बाद अपना प्रोग्राम बनाया। यह कह देना कि जहा तक एजुकेशन के रिफोर्म्स (शिक्षा सुधार) का ताल्लुक है, कुछ नही हो रहा, यह बिल्कुल गलत और बेमानी है और यह भी एक आजकल फैशन हो गया है कि जो शख्स खडा होता है, निहायत ही सस्ती सी बात सामने रख लेता है कि एजुकेशन का सिस्टम ठीक नही है, रिफोर्म्स होना चाहिए। लेकिन बातो के तोता-मैना बनाने से तो कुछ होता नही। गौर करना चाहिए कि रिफोर्म्स हो तो किस तरीके से हो। एजुकेशन मिनिस्टरी ने इस पर गौर किया और यह दावे से कहा जा सकता है कि जो प्रोग्राम उसने इस वक्त रिफोर्म्स का अपने सामने रखा है वही सही प्रोग्राम है और हमे स्टेट गवर्नमेन्टो (राज्य सरकारो) ने पूरी तरह से कॉपरेशन (सहयोग) दिया तो हम थोडे अरसे के अन्दर सेकेण्डरी एजुकेशन को रिआर्गेनाइज (पुनर्व्यवस्थित) करेगे। और इसके बाद जहा तक युनिवर्सिटी एजुकेशन का ताल्लुक है इसके लिए भी जरूरत थी कि कोई न कोई ऐजेसी ऐसी कायम हो कि जिसके जरिये से रिफोर्म्स (सुधार) प्रेक्टिस मे (कार्यान्वित) लाये जाए। चुनाचे आपको मालूम है कि युनिवर्सिटी ग्राट्स कमीशन मुकर्रर किया जा चुका है। वह काम शुरू कर दिया गया है और उम्मीद है कि जहा तक युनिवर्सिटी एजुकेशन का ताल्लुक है अब निहायत तेजी के साथ इस तरफ कदम उठेगा।

इसके बाद श्री पुरुषोत्तम दास टडन ने तकरीर की। चूकि एजुकेशन रिफोर्म्स (शिक्षा सुधार) का तजकिरा (चर्चा) शुरू हो गया था इसलिए उन्होने भी कुछ अल्फाज इस बारे मे कहे। लेकिन दरअसल (वस्तुत) उनका असली मक्सद (मुख्य उद्देश्य) वह नही था, इसलिए मै भी इस पर ज्यादा तवज्जो नही करता। मै उनसे भी कहूगा कि जहा तक एजुकेशन रिफार्म्स का ताल्लुक है आप अपने दिमाग को तकलीफ न दीजिए। इसे दूसरो के लिए छोड दीजिए

श्री टडन (जिला इलाहाबाद पश्चिम) मगर दूसरे बहुत गलत सोच रहे है, छोड कैसे दू।

मौलाना आज़ाद इसे भी दूसरो पर छोड दीजिए। दूसरे मौजूद हैं जो गलती को पकडेगे, इसके लिए आप नही है।

श्री अलबुराय शास्त्री (जिला आजमगढ पूर्व वजीरावलिया पश्चिम) यह आपका गलत ख्याल है।

मौलाना आज़ाद बहरहाल वह हिन्दी के मसले (समस्या) पर और दरअसल उसके लिए वह तैयार हो कर आए थे। हिन्दी के मुताल्लिक मैं तसलीम (स्वीकार) करता हूँ कि यह एक अहम मामला है। कास्टीट्यूसन (सविधान) मे इसका भरोसा दिलाया गया है कि १५ साल के

बाद अग्रेजी हटेगी और इसकी जगह हिन्दी जबान देवनागरी स्क्रिप्ट (लिपि) मे आएगी। इसलिए हमारा फर्ज है कि हम इस पर गौर करे। मैं निहायत खुश होता अगर श्री टडन हमे बतलाते कि एजुकेशन मिनिस्टरी ने जो प्रोग्राम अपने सामने रखा है और कामो का जो एक नक्शा बनाया है उसके मुताल्लिक उनकी क्या तजवीज है। वह अपनी कुछ तजवीजे पेश करते। लेकिन मुझे अफसोस के साथ कहना पडता है कि जिस तरीके से उन्होने इस बहस को शुरू किया, शुरू होते ही यह चीज बिल्कुल वाजे (स्पष्ट) हो गई कि उनके सामने यह नही है कि वह कोई कन्सट्रेक्टिव (रचनात्मक) तजवीज पेश करे। पहले उन्होने एजुकेशन मिनिस्टरी के खिलाफ अपने दिमाग मे एक मुखालफाना (विरोधी) नक्शा बनाया और नक्शा बनाने के बाद वो अपना एक केस बनाना चाहते है और इसका मेटिरियल (सामग्री) जमा करना चाहते है। ख्वाह (चाहे) वह सही हो या गलत हो। चुनाचे मै अभी आपको बतलाऊगा कि उन्होने क्या नक्शा बनाया। नक्शा यह बनाया कि इन एजुकेशन मिनिस्टर (शिक्षा मत्री) के मुताल्लिक हमे मालूम है कि कान्स्टीटुएट असेम्बली (सविधान सभा) मे जब बहस शुरू हुई थी तो वह हिन्दुस्तानी के हक (पक्ष) मे थे। चुनाचे अब भी एजुकेशन मिनिस्टर जो कुछ काम कर रहे है, जो कुछ मदद दे रहे हैं, वह हिन्दी के लिए नही दे रहे हैं बल्कि हिन्दुस्तानी के लिए दे रहे है, यह उन्होने नही बताया

श्री टडन मौलाना मुझे माफ करे, अगर मै उनसे कहू कि जिस सुस्पष्टता के साथ मैने कहा था, आप जरा उसी सुस्पष्टता से बात कीजिए। मैंने यह नही कहा कि वह हिन्दी नही चाहते। मैने तो कुछ सेन्स आप परपोर्सन (अनुपात) को सामने रख कर कहा था कि उधर ज्यादा झुकाव है। महज गुस्से मे अपना सतुलन खो मत दीजिए। धैर्य रखिये, और धैर्य रखकर बात कीजिए।

मौलाना आज़ाद मेरे गुस्से की फिक्र मत कीजिए टडन जी ने अभी यह कहा कि मैंने यह नही कहा। मेरा मकसद यह नहीं था कि एजुकेशन मिनिस्टरी हिन्दी के लिए कुछ नही करती, हिन्दुस्तानी के लिए करती है बल्कि मेरा मकसद (अभिप्राय) यह था कि एजुकेशन मिनिस्टरी का ज्यादा झुकाव हिन्दुस्तानी की तरफ है। ठीक है, लेकिन मैं आपको बतलाना चाहता हू कि यह अज-सर-ता-पा (आद्योपान्त) गलत है। इसके लिए उन्होने दलील (तर्क) क्या पेश की। आप यह बात देखे कि कहा तक ईमानदारी के साथ उन्होने अपना नक्शा बनाया। दलील मे उन्होने पहली चीज यह पेश की कि एजुकेशन मिनिस्टरी वर्धा की हिन्दुस्तानी प्रचार सभा को मदद दे रही है। अब यह जाहिर है कि हिन्दुस्तानी प्रचार सभा के नाम मे हिन्दी का लफ्ज नही है। हिन्दुस्तानी का लफ्ज है। इसको एजुकेशन मिनिस्टरी मदद दे रही है, तो सुनने वालो के दिमाग पर यही असर पडेगा कि वाकई एजुकेशन मिनिस्टरी का झुकाव हिन्दुस्तानी की तरफ है क्योकि वह हिन्दुस्तानी प्रचार सभा वर्धा को मदद दे रही है। मै आपको बतलाना चाहता हू कि इसके अन्दर एक पुरफरेब तखैयु (भ्रामक कल्पना) है। वाकया (स्थिति) क्या है, मै आपको बतलाता हू।

श्री टडन डिप्टी स्पीकर साहब, मत्री को मुझसे सबक लेना पडेगा कि शब्द कैसे बोलना चाहिए। पुरफरेब (धोखेबाज) का लफ्ज मेरे लिए इस्तेमाल कर रहे है, गलत है। पुरफरेब वह बोल रहे है।

मौलाना आज़ाद बहस मे पुरफरेब (भ्रामक) का लफ्ज कहना हरगिज पार्लियामैन्ट की ज़बान के खिलाफ नही है। पुरफरेब के माने (अर्थ) यह है कि बहस मे एक शख्स कह सकता है कि दूसरे आनरेबुल मेम्बर ने एक चीज को जिस रूप मे पुट (प्रस्तुत) किया और पेश किया है वह

साफ नही, पुरफरेब है। पुरफरेब के माने यह है कि जरा सफाई नही है और इसलिए मै यह नही मानता कि इस लफ्ज का कहना पार्लियामेन्टरी जबान के खिलाफ है। बहरहाल (फिर भी) मुझको इस लफ्ज पर इसरार (आग्रह) नही है बहरहाल आप गौर कीजिए कि हिन्दुस्तानी प्रचार सभा जो है उसका मामला किस तरह मिनिस्टरी के सामने आया। यह सभा दरअसल गाधी जी ने बनाई थी। जैसा कल श्री टडन जी ने बयान किया कि जब गाधी जी का हिन्दी साहित्य सम्मेलन से इखतलाफ (विरोध) हुआ आप उससे अलग हो गए और उन्होने एक सभा बनाई। डा० राजेन्द्र प्रसाद इसके चेयरमैन हुए, काका साहब कालेलकर और बहुत से दूसरे लोग इसके मेम्बर हुए। गाधी जी की जिन्दगी मे ही जितने आदमी गाधी जी की तरफ देखने वाले थे वे इसके सदस्य थे। जब गाधी जी का इन्तकाल (स्वर्गवास) हो गया तो डा० राजेन्द्र प्रसाद ने इसकी मिटिग बुलाई। एक यह सवाल पैदा हुआ कि इसको कायम रखा जाए या न रखा जाए। डा० राजेन्द्र प्रसाद की और दूसरे मेम्बरो की भी यही राय थी कि यह गाधी जी की यादगार है, इसको कायम रखा जाए। चुनाचे इसको कायम रखा गया। फिर इसके बाद इसका एक जलसा हुआ। उसमे यह सवाल उठा कि इसकी आमदनी का जरिया जो था वह बाकी नही रहा। अगर इसको कायम रखना है तो इसको मदद मिलनी चाहिए। चुनाचे डा० राजेन्द्र प्रसाद ने इस चीज पर गवर्नमेन्ट की तवज्जो दिलाई। मैने पूछा कि हमे मालूम हो कि क्या इसकी योजना है और कितने रुपये की जरूरत है, तो एक स्कीम बनाकर पेश की गई थी, जिसके लिए बहुत ज्यादा रुपये की जरूरत थी। कहा गया कि दिल्ली मे इसका आफिस लाया जाए। इसके साथ एक प्रेस भी हो। जिसके माने थे कि कई लाख रुपये की नानरेकरिग (अनावृत्ति) मदद की जाय और तकरीबन एक लाख रुपये की रेकरिग (आवृत्ति) मदद की जाए। एजुकेशन मिनिस्टरी ने इससे इन्कार किया। लेकिन इससे उसने इत्तफाक (सहमति) किया कि इसको कायम रखने के लिए जो जरूरी रकम हो गवर्नमेन्ट आफ इडिया (भारत सरकार) उसको देने के लिए तैयार हो जाएगी। चुनाचे एक रकम मजूर की गई। ये बात भी आप याद रखिये कि हालाकि इसका नाम अभी तक हिन्दुस्तानी प्रचार सभा है लेकिन प्रैक्टीकली (व्यवहार मे) काम वह जो कुछ कर रही है हिन्दी के लिए कर रही है। चुनाचे वह रकम मजूर की गई। अब मै अपने दोस्त से पूछता हूँ कि डा० राजेन्द्र प्रसाद की निस्बत (सबध) मे उनकी क्या राय है। वह हिन्दी के विरोधी हैं या उसके हामी? बहरहाल जिस चीज पर मै आपका ध्यान दिलाना चाहता हूँ वह यह है कि यहा तक हिन्दी सभा का ताल्लुक है जो मदद उसको दी गई उससे यह नतीजा निकाल लेना कि एजुकेशन मिनिस्टरी का झुकाव हिन्दुस्तानी की तरफ है हिन्दी की तरफ नही, सही नही है। क्योकि यह एक ऐसी बाडी (सस्था) है जो खास हालात मे कायम की गई थी। समझा गया था कि यह गाधी जी की यादगार है। उन्होने मरने से पहले यह कहा था कि मै इसको हमेशा कायम रखूगा चाहे मै तन्हा ही रह जाऊ। इसलिए यह मुनासिब (उचित) नहीं समझा गया कि इसको खत्म किया जाए। और वह जो काम करती है हिन्दी के लिए करती है। हिन्दुस्तानी का सवाल नहीं है। तो मैं यह तवज्जो दिलाना चाहता था कि जो मेरे दोस्त ने यह जोर दिया और यह नतीजा निकालना चाहा कि एजुकेशन मिनिस्टरी का झुकाव हिन्दुस्तानी की तरफ है, यह सही नही है इसके बाद फिर टडन जी ने एक दूसरे आइटम का जिक्र किया और इस पर बहुत जोर दिया वह यह कि शिबली एकेडमी को इस वर्ष साठ हजार रुपये की नॉनरेकरिग ग्राट (अनावृत्ति अनुदान) दी गई है। यह एकेडमी तीस-चालीस वर्ष से कायम है। यह सही है कि उसने जितनी किताबे शाये (प्रकाशित) की है उर्दू जबान मे की

है और इसकी किताबो को गाधी जी ने पसद किया था। इसकी सरपरस्ती की थी और कई आरटिकल (लेख) इसके मुताल्लिक लिखे थे। बहरहाल उसने उर्दू जबान मे एक मुफीद (लाभदायक) और कीमती काम किया है। चूँकि शिबली एकेडमी मे जो लोग काम करते है वह काग्रेस मूवमेन्ट (आन्दोलन) मे शरीक थे तो काग्रेस के लोगो से भी उनकी मुलाकात और मिलना-जुलना है। कुछ आठ महीने हुए कि वह बतौर एक डेपुटेशन के पडित जवाहरलाल नेहरू के पास आए और उन्होने अपनी एकेडमी की हालत बयान की और यह कहा कि पार्टिशन (विभाजन) के पहले उनकी ज्यादातर किताबे पजाब और सिध मे जाती थी अब वह बन्द हो गई है। और रुपये की किल्लत (कमी) की वजह से भी बडा उलझाव पैदा हो गया है और अब हालात यह पैदा हो गए है कि अगर इसको कोई फौरी (तुरत) मदद नही मिलती है तो इसको हम बन्द करने पर मजबूर हो जायेगे। उन्होने फौरी मदद मागी, यह नही कहा कि हमको रेकरिग ग्राट (आवृत्ति अनुदान) दी जाए और हर वर्ष मदद की जाए। उन्होने कहा कि हमारे शुमार और फिगर (ऑकडे) इस तरह के है। अगर हमको साठ हजार की मदद मिल जाए तो हम एडजेस्ट कर लेगे और यह सुसायटी कायम रह जायेगी। प्राइम मिनिस्टर (प्रधानमत्री) ने एक चिट्ठी फाइनेस मिनिस्टरी (वित्त मत्रालय) को लिखी, एक चिट्ठी एजुकेशन मिनिस्ट्री को लिखी और यह खयाल जाहिर किया कि यह सुसायटी कायम रहे और इसी तरह काम करती रहे। यह अच्छी बात नही होगी कि इस थोडी सी रकम की वजह से यह मजबूर होकर बन्द हो जाए। इसलिए इस पर गौर करना चाहिए। मिनिस्ट्री ने भी उस वक्त यह खयाल किया कि यह चीज बेहतर नही है, अगर यह थोडी सी रकम इसको न दी गई तो यह सुसायटी बन्द हो जायेगी और पाकिस्तान भी इसका प्रोपेगेडा करेगा कि पार्टिशन (विभाजन) के बाद अब हिन्दुस्तान की ऐसी हालत हो गई है कि वहा कोई इस तरह की सुसायटी जिन्दा नही रह सकती। तो मैने भी इससे इत्तफाक किया कि साठ हजार की एड (सहायता) नॉनरेकरिग ग्राट (अनावृति अनुदान) लम्प सम (इकट्ठा) मे उसको दी जाए।

अब मैं इस तरफ आपकी तवज्जो दिलाना चाहता हूँ और चाहता हूँ कि आप मामले पर ठडे दिल से गौर करे। क्योकि इस मामले का हमेशा के लिए फैसला होना चाहिए कि इस तरह की बातो मे हमारा दिमाग किस तरफ जाता है। हालत यह है कि सैट्रल गौरमेट (केन्द्रीय सरकार) करीब साढे चौदह करोड रुपया हर साल खर्च करती है। इस रकम मे से जो कि एजुकेशन मिनिस्ट्री खर्च करती है अगर एक मरतबा साठ हजार रुपये की रकम उर्दू की एक सुसायटी को दे दी गई तो क्या यह कोई ऐसी चीज है कि इस पर इस दर्जे शिकायत की जाए और इसकी इतनी मुखालफत की जाए। गौर करे कि हमारा दिमाग कितना तग है कि इस मुल्क की दूसरी जबान को अगर साठ हजार रुपया दिया गया तो हम इसको बरदाश्त नही कर सकते और इसकी हम शिकायत करते है।

उर्दू जबान किसी एक मजहबी ग्रुप की जबान नही है। जो लोग इसको बोलते है उनमे हिन्दू भी हैं, मुसलमान भी है, ईसाई भी हैं। लेकिन मै इसमे नही जाना चाहता। मान लीजिए कि सिर्फ मुसलमान ही उर्दू बोलते है गोया कि यह सही नही है। फिर भी आखिर साढे चार करोड मुसलमान हिन्दुस्तान मे बसते है , अगर ऐसी सुसायटी को जो उर्दू की एक कीमती खिदमत (सेवा) अजाम दे रही है एक मरतबा साठ हजार रुपया देते है तो यह कौन सी ऐसी चीज है जिसको इस कदर महसूस किया जाए कि यह इस्लामिक कलचर (इस्लामी सस्कृति) की तरक्की के लिए किया जा रहा है। यह जो उन्होने इसकी शिकायत की तो क्या इस वजह से कि

उनको हिन्दी से मुहब्बत है। नही। हिन्दी से किसको इखतलाफ है। हिन्दी से मुहब्बत मे और हिन्दी की तरक्की देने मे तो सब एक राय है। तो वह इसलिए यह नहीं कहते कि उनको हिन्दी से मुहब्बत है बल्कि इसलिए कि वह नही देखना चाहते कि दूसरी कोई जबान आगे बढे। यह जजबा काम कर रहा है। अगर आप चाहते है तो ज्यादा से ज्यादा अपना कद ऊँचा कर लीजिए। लेकिन आप यह क्यो चाहते है कि दूसरा ठिगना हो जाए। अपने कद को ऊँचा करने का यह तरीका नही है कि दूसरो को ठिगना बनाया जाए। जहा तक हिन्दी का ताल्लुक है मैं आपको यकीन दिलाना चाहता हूँ कि कोई एक आदमी भी ऐसा नॉर्थ इडिया (उत्तरी भारत) मे नही है जो हिन्दी की तरक्की न चाहता हो या हिन्दी का मुखालिफ हो। जहा तक नार्थ इडिया का ताल्लुक है जो लोग खुद हिन्दी नही जानते वह भी अपने बच्चो को हिन्दी पढाते हैं। अगर हिन्दी की तरक्की के रास्ते मे कोई रुकावट है तो मै आपसे कहूँगा कि वह इस तरह के दिमागो की रुकावट है।

अभी सन् १९४९ की बात है कि मद्रास मे एक सुसायटी तमिल (तामिल) जबान की इनसाइक्लोपीडिया (विश्वकोश) बना रही थी। उसने गौरमेन्ट आफ इडिया से मदद के लिए दरख्वास्त (प्रार्थना) की। गौरमेन्ट आफ इडिया ने ख्याल किया कि यह एक मुफीद और अच्छा काम है और अस्सी हजार रुपया इसके लिए मजूर किया। मुझे याद है कि उस वक्त क्या शोर मचा था और क्या-क्या कहा गया। अब यह चीज कि हमने तामिल जबान की इन्साइक्लोपीडिया के लिए अस्सी हजार रुपया दिया यह कोई ऐसी चीज नही थी कि जिस पर किसी को परेशानी हो जाती। लेकिन इसके अन्दर भी यही जज्बा था। हिन्दी की मुहब्बत नही बल्कि यह दूसरी जबानो को क्यो आगे बढने का मौका दिया जाता है—चाहते है कि वह बाकी न रहे। इसके माने यह है कि आप हिन्दी की तरक्की नही चाहते। दूसरी जबानो की गिरावट चाहते है, यह जज्बा गलत है। वाकया यह है कि इस जज्बे की वजह से हिन्दी इस तेजी से तरक्की नही कर रही है जिस तेजी से उसको तरक्की करनी चाहिए। जो मुखालफत और साउथ मे (दक्षिण) हो रही है उसकी तह मे क्या चीज है। हमे देखना चाहिए कि हम हिन्दुस्तान की किसी भी जबान की मुखालफत न करे। हम हर जबान को फलते-फूलते देखना चाहते है। लेकिन हा इसके साथ-साथ हमको यह खयाल है कि हिन्दी हिन्दुस्तान की कौमी जबान है और हमारा फर्ज है और हर हिन्दुस्तानी का फर्ज है कि वह इस पर कायम रहे और वफादारी के साथ हिन्दी को ऊँचा करने की कोशिश करे। लेकिन यहा इस तरह की एटीट्यूड (दृष्टिकोण) अख्तयार की जाती है जैसी कि कल मेरे दोस्त ने अख्तयार की कि अगर किसी सुसायटी को साठ हजार की रकम दी गई तो उन्होने इस बात पर खास तौर पर जोर दिया कि यह सब इस्लामिक कल्चर के लिए किया जा रहा है। यह बिल्कुल गलत है। इसमे इस्लामी कलचर का कोई सवाल नही है। मै आपसे यह कहना चाहता हूँ कि आप मुझसे यह तवक्को (आशा) न रखे कि मै लीपा-पोती या लल्लो-चप्पो की बाते करूँगा। लीपा-पोती की बाते वह करता है कि जिसके अन्दर स्वार्थ होती है। मुझसे यह भी खुश रहे, वह भी खुश रहे। मेरी मिनिस्ट्री न चली जाए। मेरा कोई स्वार्थ नही है। मैने आज से चालीस वर्ष पहले, जब इन चारो तरफ बैठने वाले लोगो को पता भी नही था अपनी जिदगी का प्रोग्राम मुल्क की खिदमत का बनाया था। यह मैं बात कह रहा हूँ सन् १९०७ की, जब मेरी उम्र १८-१९ वर्ष से ज्यादा न थी। जब मै बगाल की रेवेल्यूश्नरी पार्टी (क्रातिकारी दल) मे शरीक हुआ था। उस वक्त से लेकर आज तक मेरी जिन्दगी एक खुली हुई किताब है जो दुनिया के सामने है। कोई ख्वाहिश (इच्छा) मेरे अन्दर नही है। जिन्दगी का

बडा हिस्सा खत्म हो गया। जो थोडा बाकी है वह न मालूम कब खत्म हो जाएगा। क्या चीज है जिससे मुझे गरज हो। मै आपको बतलाना चाहता हूँ कि जब एक शख्स ने गरज अपने अन्दर से निकाल दी तो वह बेपनाह (असीम) हो जाता है। बेपनाह आप मुझे नहीं समझे। बेपनाह का मतलब यह है कि ऐसे आदमी को कोई तलवार काट नहीं सक्ती क्योकि हथियार की काट तो उस जिस्म (शरीर) पर चलती है, उस बॉडी (शरीर) पर चलती है कि जिसके अन्दर गरज हो, गरज की कमजोरी पर। अगर गरज नहीं है तो कोई उसको नहीं काट सकता, बल्कि मै आपसे साफ-साफ कहूँगा कि हिन्दुस्तान पर, मुल्क पर जो मुसीबत आई 'टू नेशन थ्योरी' (द्विराष्ट्री सिद्धात) और पाकिस्तान बनाने का पॉइट आफ व्यू(दृष्टिकोण) और फिर पाकिस्तान के कारण। इस मुसीबत की जितनी जिम्मेदारी गुमराह मुसलमानो पर और मुस्लिम लीग पर है उतनी ही जिम्मेदारी इस तरह के दिमागो पर भी है

इस तरह के दिमागो पर भी है क्योकि आप इस तरह एक तगदिली की जगह अख्तयार करते है कि दूसरी जबान के लिए कोई जगह नही है, दूसरी जमात के लिए कोई जगह नही है। दूसरो के हुकूक (अधिकारो) के लिए कोई जगह नही। तो कुदरती तौर पर उन लोगो को कि जो अलग होना चाहते है उनको मौका (अवसर) मिलेगा और वह एक्सप्लाइट (दुरुपयोग) करेगे और कहे गे ऐसे लोगो के हाथ हुकूमत कैसे दे सकते है। आप को मालूम है कि इस चीज का मैने मुकाबला किया। मैंने कहा कि हिन्दुस्तान का हिन्दू दिमाग जो है, हिन्दू माइड जो है वह इस तरह के दिमाग को रिप्रेजेट (प्रतिनिधित्व) नही करता है। इसको गाधी जी रिप्रेजेट करते है और वह लोग जो उनके साथ खडे है। मैने इस चीज पर मुसलमानो की तवज्जो दिलाई, मैं लडा, कई लाख मुसलमानो के दिमाग मे इन्कलाब पैदा किया। लेकिन बहरहाल मै इस मसले मे जज्बात को कन्ट्रोल नही कर सका। इसलिए मै आपसे कहूगा कि इन चीजो मे जब तक आप इस तरह एक तग दिमाग बना रखेगे आप अपने मकसद को कामयाब नही कर सकते, बल्कि आप के मकसद को रोज-बरोज नुकसान होगा।

तो बहरहाल अब मै कुछ थोडा वक्त आपका और लूगा। इसके बाद सेठ गोविन्द दास जी ने तकरीर की। उन्होने तकरीर करनी शुरू की कि हिन्दी के रास्ते मे अब कोई रुकावट नही है मगर दो रुकावटे है। एक तो अग्रेजी है और उन्होने कहा कि जो लोग अग्रेजी पसद करते है मै उनको नाजायज पैदा किया हुआ बच्चा समझता हूँ इसके बाद उन्होने कहा कि उर्दू। मेरी समझ मे यह बात नही आई कि उर्दू का यहा ताल्लुक क्या है मै नही समझता कि उर्दू का क्या ताल्लुक था। एजुकेशन मिनिस्ट्री का जहा तक ताल्लुक है उसने उर्दू का सेक्शन कायम नही किया है हिन्दी का सेक्शन कायम किया है। जो उसका प्रोग्राम है वह हिन्दी के लिए है। उर्दू के लिए नही। उर्दू का क्या ताल्लुक अब मै और वक्त नही लूगा। मैं आपको यकीन दिलाऊ ताकि दो मिनट के लिए भी आप यह न समझे कि एजुकेशन मिनिस्ट्री ने अपना दिमाग बन्द किया है। उसका दिमाग खुला है, उसने हर कोशिश की है और आइन्दा भी करेगी। इसकी सलाह करने या उसका सुधार करने के लिए आप जो तजवीज पेश करेगे वह उसको खुशदिली के साथ वेल्कम (स्वागत) करेगी। लेकिन आप से दरख्वास्त की जाती है कि अगर आपको बदगुमानिया पैदा हो, और चीजे सुनाई पडे तो आप मेरे पास आए, मै दूर नही हू। मैं इस हाल से पाच गज की दूरी पर बैठता हूँ, आप मुझसे मिल सकते है और पूछ सकते हैं कि मामला क्या है और मै यकीन दिलाता हूँ कि जहा तक हिन्दी की तरक्की का ताल्लुक है एजुकेशन मिनिस्ट्री अपनी ड्यूटी (कर्तव्य) समझती है। वह इस ड्यूटी मे कोताही नही करेगी।

यूनेस्को

अभिभाषण

"आधुनिक दुनिया का सबसे बडा अन्तर्विरोध यह है कि यद्यपि प्रत्येक राष्ट्र शाति का इच्छुक है और उसकी बात करता है किन्तु लगभग सभी सरकारे शाति बनाए रखने की तुलना मे युद्ध की तैयारी पर कही अधिक धन व्यय करती है।"

यूनेस्को में भाषण *

मित्रो,

भारत सरकार और भारतीय जनता, भारतीय राष्ट्रीय आयोग तथा अपनी ओर से यूनेस्को के सार्वजनिक सम्मेलन के इस नवे सत्र मे आपका स्वागत करते हुए मुझे अत्यन्त हर्ष का अनुभव हो रहा है। हमे इस बात की प्रसन्नता है कि हमारे निमत्रण पर दिल्ली मे इस सम्मेलन को आयोजित करने के हमारे प्रस्ताव को यूनेस्को ने स्वीकार कर लिया और इसमे भाग लेने के लिए समस्त ससार के प्रतिनिधि यहा एकत्रित हुए है। मै आप को विश्वास दिलाता हू कि स्वागतार्थ जो शब्द मेरे मुख से निकले है वह औपचारिकता मात्र नही है बल्कि गहरी और हार्दिक भावनाओ की अभिव्यक्ति है।

यह दूसरा अवसर है जब यूनेस्को एशिया मे अपना सम्मेलन कर रहा है। यूनेस्को के सार्वजनिक सम्मेलन की तीसरी बैठक १९४८ मे लेबनान मे आयोजित हुई थी। यह बैठक हालाकि दिल्ली मे हो रही है किंतु पूर्ण आशा है कि इसका प्रभाव क्षेत्र अत्यन्त विस्तृत होगा और सपूर्ण एशिया तथा विशेष रूप से दक्षिण पूर्वी एशिया के देश यूनेस्को के उद्देश्यो और कार्यक्रम से लाभान्वित होगे।

हम थोडे समय के लिए पीछे मुड कर देखे और कुछ दसाब्दियो पूर्व की दुनिया का अनुमान करे तो हमको यह मानना पडेगा कि इस प्रकार का सम्मेलन जो इन दिनो आयोजित हो रहा है, सभव नही था। उन दिनो ससार दो भागो मे विभक्त था, एक तथाकथित श्रेष्ठ यूरोपीय ससार और दूसरे एशिया और अफ्रीका के दलित देश। यह विभाजन तो वर्तमान दसाब्दी मे प्रथम महायुद्ध के पश्चात् इस दृष्टि से समाप्त हो गया है कि अब प्राच्य और पाश्चात्य के भेद के बिना दुनिया के समस्त देश एक साथ सयुक्त मच पर एकत्रित हो सकते है। इस प्रकार का सम्मेलन जिसे सम्बोधित करने का सम्मान मुझे आज प्राप्त हुआ है पिछले युद्ध से पूर्व सभव नही था। उस समय हम निम्न जाति के थे, पराधीन थे। आज हम स्वतत्र और समान अधिकार प्राप्त राष्ट्रो की समान बिरादरी के अग है और केवल यही बात वास्तविक अन्तर्राष्ट्रीय प्रजाति को सभव बना सकती है। ससार ने व्यर्थ ही कष्ट सहन नही किया। युद्ध की पीडा से नवीन और उभरते हुए एशिया का जन्म हुआ है। इसी का फल है कि आज एक एशियाई राजधानी मे यह तारक मडली एकत्रित हुई है, जहा यूरोप और अमरीका के प्रतिनिधि एशिया और अफ्रीका के प्रतिनिधियो से पूर्व समानता के आधार पर ससार की समान समस्याओ पर विचार विनिमय करने के लिए मिल रहे है।

मै उन ऐतिहासिक परिस्थितियो से पूर्णत अवगत हू जिन्होने भूतकाल मे पाश्चात्य और प्राच्य के बीच वैमनस्य उत्पादक दीवार खडी कर दी थी और जो पूर्णत हटी नही है। इसके अवशेष अब भी पाये जाते है जो तनाव तथा दुर्भावना के कारण है। परन्तु वह पुरातन

* नई दिल्ली म आयाजिन यूनस्का क ९व सार्वजनिक सत्र मे दिया गया भाषण, ५ नवम्बर, १९५६

दृष्टिकोण और मूल्यो का प्रभुत्व मानव के मस्तिष्क से विलुप्त हो चुका है जिन्होने विभाजन भित्ति को खडा किया था और सदृढ बनाया था। अब यह बात स्पष्ट है कि देर या सबेर इन्हे वास्तविक रूप से आधुनिक और जनतात्रिक मूल्यो के लिए स्थान रिक्त करना पडेगा। उपनिवेशवाद जो किसी समय पुरानी दुनिया का स्तम्भ और प्रतीक था अब इतना असम्मानित हो गया है कि वह लोग भी जो किसी न किसी रीति मे इसको व्यवहार मे लाते है इसके सबध मे क्षमाप्रार्थी है।

सयुक्त राष्ट्र अमरीका ने विश्व शाति के हित मे दो कार्य किए है। प्रथम विश्व युद्ध के पश्चात् मुख्यत राष्ट्रपति विलसन के आदर्शवाद के प्रभावाधीन 'राष्ट्र सघ' की स्थापना हुई थी। द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात् राष्ट्रपति रूजवेल्ट ने श्री चर्चिल और मार्शल स्टालिन के सहयोग से 'सयुक्त राष्ट्र सघ' के विचार का प्रायोजन किया था। राष्ट्रपति विलसन अपने देश से आगे थे जहा सानरो सिद्धात के प्रभाव के अन्तर्गत पृथकतावादी दृष्टिकोण अब भी प्रचलित था इसीलिए सयुक्त राष्ट्र अमरीका इस सघ मे सम्मिलित नही हुआ। परिणाम यह हुआ कि सघ के नेतृत्व का भार बरतानिया और फ्रास पर पडा जो स्वय उपनिवेशी शक्तिया थी और शीघ्र ही सत्ता की राजनीति मे सघ को अपने आधीन करना आरभ कर दिया। इस विद्वत मडली को यह बताने की आवश्यकता नही है कि राष्ट्र सघ इस प्रकार शनै-शनै अपनी शक्ति खोता गया और अन्ततोगत्वा अत को प्राप्त हुआ।

राष्ट्र सघ ने भी सामाजिक और आर्थिक समस्याओ के समाधान के लिए विभिन्न समितिया और आयोग नियुक्त किए थे। किन्तु इस सघ का मुख्य बल राजनैतिक समस्याओ पर रहा। सयुक्त राष्ट्र सघ ने प्रारम्भ मे ही इस बात का आभास कर लिया था कि वह अपने राजनैतिक उद्देश्यो मे सफल नही हो सकता यदि वह सामाजिक और आर्थिक समस्याओ पर उचित ध्यान नही देता। इसी कारण से उसने अपने कार्यो को सम्पन्न करने के लिए विशिष्ट एजेंसिया बनाई। उनमे से यूनेस्को अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। इसका सविधान इस बात को स्पष्ट कर देता है कि समस्त तनाव मनुष्य के मस्तिष्क मे जन्म लेते हैं। इसलिए मनुष्य के मस्तिष्क की शाति की सुरक्षा का उपाय किया जाना चाहिए। यही यूनेस्को का विशिष्ट परम उद्देश्य और दायित्व है।

यूनेस्को का जन्म लगभग ठीक १० वर्ष पूर्व ८ नवम्बर १९४६ को हुआ था और यह बात कहना समीचीन होगी कि इसके जीवन की प्रथम शताब्दी मे इसके कार्यो का भी विवेचन किया जाए। इस प्रकार का सर्वेक्षण स्थिति के अनुकूल सक्षिप्त और सिहावलोकन मात्र ही होना चाहिए। अत यह इसके कार्यक्रमो के कुछ उज्ज्वल बिन्दुओ को ही प्रस्तुत कर सकता है। जैसा कि आप सब जानते ही है कि राष्ट्रो की असमानता को दूर करना यूनेस्को का एक मुख्य उद्देश्य है ताकि ससार भर के पुरुष और नारिया वास्तविक जनतत्र के वातावरण मे जीवन व्यतीत कर सके। साथ ही सघ मानव मस्तिष्क की शाति की सुरक्षा को शक्तिशाली बनाने के लिए शिक्षा विज्ञान और सस्कृति को प्रसारित करने का भी प्रयत्न किया है।

यूनेस्को के कार्यक्रमो मे मौलिक शिक्षा के उन कार्यक्रमो को प्राथमिकता और महत्ता प्राप्त है जो कई देशो मे उसके नेतृत्व के अन्तर्गत अथवा उसकी प्रेरणा से आरभ किए गए है। सारे ससार मे इस बात की मान्यता बढ रही है कि शिक्षा का अर्थ केवल मस्तिष्क और बुद्धि को सुसस्कृत बनाना ही नही है इसके अन्तर्गत समाज की सामाजिक और आर्थिक उन्नति के सदर्भ मे सर्वागीण व्यक्तित्व का विकास भी आता है। उस विचार का यह विस्तार जिसे पूर्व मे प्रौढ शिक्षा का कार्यक्रम कहा जाता था मुख्यत यूनेस्को द्वारा प्रारम्भ किए गए अध्ययनो का ही फल है। भारत मे हम यूनेस्को के इन अध्ययनो से लाभान्वित हुए हैं और हमने सामाजिक शिक्षा का पाच

सूत्रीय कार्यक्रम निधारित किया है जिसका उद्देश्य सबके व्यक्तिगत और सामूहिक जीवन को समृद्ध करना है। यूनेस्को ने न केवल इन अध्ययनो का सूत्रपात किया है बल्कि प्रशिक्षण के कार्यक्रम चलाने के लिए कई सदस्य देशो की सहायता भी की है और अन्तर्राष्ट्रीय आधार पर विशेषज्ञ भी दिए है। हम यूनेस्को के इस प्रयास को विस्मृत नही कर सकते कि इसने ससार के समस्त देशो मे तमाम बालको के लिए नि शुल्क और अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा का प्रबध किया है। यूनेस्को ने सदैव इस बात पर बल दिया है कि आर्थिक उन्नति शिक्षा के अधिक से अधिक प्रसार पर निर्भर है। इसीलिए उसने सदस्य राज्यो को इस बात की ओर प्रेरित करने का अत्यधिक प्रयास किया है कि वह शीघ्रातिशीघ्र ऐसे कार्यक्रमो को स्वीकार कर ले। उसके प्रस्तावित दो वर्षीय कार्यक्रम का एक मुख्य बिन्दु यह है कि दक्षिण अमरीका के देश यूनेस्को की प्रत्यक्ष सहायता लेकर ऐसी शिक्षा को प्रसारित करे।

यूनेस्को के सहयोग का दूसरा विशिष्ट महत्त्वपूर्ण क्षेत्र तकनीकी सहायता है जो वह अल्पविकसित और अविकसित देशो को प्रदान करती है। अपने कार्यक्रमो को रूपायित करने के माध्यम से यूनेस्को को विदित हुआ है कि अल्पविकसित और अविकसित देशो की परिभाषाए निर्धारित अर्थ नही रखती है और जो सहायता प्रदान की जाए वह वास्तविक रूप से तभी प्रभावशाली होगी जब यह लेन-देन दोनो ओर से हो। हम भारत मे विज्ञान और प्रविधि के विभिन्न क्षेत्रो मे तकनीकी सहायता प्राप्त करते रहे है और हम शिक्षा और सस्कृति से सबधित विशेषज्ञ सहायता के रूप मे उन देशो को भेजते रहे है जिन्हे इसकी आवश्यकता थी। तकनीकी सहायता के इसी कार्यक्रम से जुडी हुई वैज्ञानिक और तकनीकी पाठ्यक्रम की पुस्तके और उपकरण उपलब्ध कराने की यूनेस्को की एक योजना है जो कूपनो द्वारा सहायता प्रदान करती है। इस योजना से मुद्रा कानूनो की कुछ बाधाओ को दूर करने मे सहायता मिली है जो मुद्रा विनियमन को आज की दुनिया मे अत्यन्त कठिन बना देते है। मै ऊसर भूमि की समस्याओ के अध्ययन की भी चर्चा करूगा जिसका सूत्रपात वर्षो पूर्व किया गया था और जिसे अब एक महत्त्वपूर्ण परियोजना के रूप मे विकसित करने का प्रस्ताव है।

एक दूसरा क्षेत्र विभिन्न राष्ट्रो और भूखण्डो मे सुन्दर सास्कृतिक आदान-प्रदान के प्रचार-प्रसार का है जिसमे यूनेस्को का योगदान अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हो गया है। अन्तर्राष्ट्रीय तनाव और वैमनस्य के मुख्य कारणो मे से एक अज्ञान और पूर्वाग्रह है। एक शताब्दी से अधिक समय से यूरोपवासियो का विचार था कि सभ्यता का अर्थ केवल पाश्चात्य सभ्यता है। पाश्चात्य देशो के उच्च सैनिक बल को उच्च नैतिक और सास्कृतिक पराकाष्ठा स्वीकार किया गया था। दो विश्व युद्ध के धक्के और शनै -शनै उपनिवेशवाद के ह्रास ने दुनिया के लोगो मे समानता का भाव अधिक मात्रा मे उत्पन्न करने मे सहायता प्रदान की है। सर्वनिष्ट मानवता की यह भावना ठोस आधार तब तक प्राप्त नही कर सकती जब तक विभिन्न देशो के लोग एक दूसरे की सस्कृति को अधिक से अधिक न जाने और उसका आदर न करे। प्राचीन साहित्य के अनुवादो, चित्र पुस्तिकाओ का प्रकाशन, सगीत की रिकार्डिंग और दुनिया के विभिन्न लोगो के बीच सास्कृतिक कर्मियो के आदान-प्रदान के द्वारा सास्कृतिक अर्थापन का कार्यक्रम यूनेस्को की अत्यन्त महत्त्वपूर्ण प्रणालियो मे से एक है। जिसके द्वारा राष्ट्रो के बीच सद्भावना स्थापित की जा सकती है। मुझे यह जानकर प्रसन्नता है कि निकट भविष्य के लिए एक विशाल परियोजना के रूप मे इस कार्यक्रम को प्रस्तावित किया गया है।

इसी साध्य की प्राप्ति के लिए ही यूनेस्को इतिहास पढाने की प्रणाली पर विचार कर रही

है। अधिकाश देशो मे इतिहास राष्ट्रीय आत्मश्लाघा का बहुधा दूसरा नाम है। जो बात इसे अत्यधिक कुत्सित बना देती है वह यह है कि इस प्रकार की आत्मश्लाघा की अभिव्यक्ति साधारणत दूसरे लोगो और राष्ट्रो के योगदान को नकारने और उनके अत करने के द्वारा होती है। कुछ परिस्थितियो मे तो दूसरे देशो और अन्य सस्कृतियो के प्रति घृणा का सक्रिय प्रचार भी किया जाता है। स्पष्ट है कि वास्तविक अन्तर्राष्ट्रीय दृष्टिकोण उस समय तक उत्पन्न नही हो सकता जब तक बच्चो को उनके प्रारभिक जीवन मे दूसरे राष्ट्रो को निम्न कोटि का बताकर उनके अपने राष्ट्रो की उच्चता का पाठ पढाया जायेगा। अधिकाशत इतिहासो ने अभी तक शत्रुता और सघर्ष के तत्त्वो पर ही बल दिया है। व्यक्तियो और राष्ट्रो के बीच होड पर बल देने पर ही इनकी दृष्टि रही है और इस बात पर ध्यान नहीं गया कि सहयोग ने ही मानव की अतिजीविका को सभव बनाया है, प्रतिस्पर्धा ने नही। यूनेस्को ने अपने प्रारम्भ काल से ही इस बात पर बल दिया है कि इतिहास के पठन पाठन को नया दृष्टिकोण अपनाना चाहिए और इस सबध मे कदम उठाना चाहिए। मानव जाति की वैज्ञानिक और सास्कृतिक इतिहास की परियोजना जब परिपूर्ण हो जाएगी तो दुनिया भर के स्त्री और पुरुषो के बीच अधिक सद्भावना उत्पन्न करने और मित्र-भाव जागृत करने मे यह एक महत्त्वपूर्ण योगदान होगा।

युग-युगान्तर से हो रहे मानव सहयोग के विशाल अध्ययन के अतिरिक्त यूनेस्को ने कुछ विशिष्ट विचारो के अध्ययन का काम करना आरम्भ किया है, जो व्यक्तियो और राष्ट्रो मे तनाव का कारण बनते है। नस्ली दर्प आज की मानवता के ललाट पर कलक है। यूनेस्को सदैव नस्ली दर्प के विरुद्ध लडती रही है। इसके द्वारा प्रारम्भ किए गए अनुसधानो से कई लोकप्रिय अन्धविश्वासो का खडन हुआ है। ससार मे इस बात का एहसास बढा है कि नस्ली श्रेष्ठता और हीनता का विचार वस्तुत निराधार है किन्तु दुर्भाग्यवश दुनिया के कुछ भूखण्ड आज भी ऐसे है जहा नस्ली भेदभाव का प्रचलन है। यह बुराई जहा भी विद्यमान हो उसके विरुद्ध यूनेस्को को अपनी भरसक शक्ति द्वारा लडना चाहिए। राष्ट्रो के बीच अधिक सद्भावना प्राप्ति के अपने प्रयत्नो मे यूनेस्को ने कुछ मौलिक सामाजिक और राजनैतिक चितनधाराओ के वैज्ञानिक अध्ययन का कार्य आरम्भ किया है। १९४७ मे इसके मानवीय अधिकारो के विचार के अध्ययन का आयोजन किया था और इसके द्वारा मनुष्य के मौलिक अधिकारो की विश्वव्यापी घोषणा को स्थापित करने मे सहायता प्रदान की थी। इसके पश्चात् उसने जनतत्र की अवधारणा के अध्ययन का कार्य आरम्भ किया था और सम्भवत प्रथम बार जनतत्र के आवश्यक तन्तुओ के लिए मिले-जुले प्रयास मे साम्यवादी और पूजीवादी देशो के विचार को एकत्रित करने मे सफल हुई थी। इन अध्ययनो और अन्य अनुसधानो के द्वारा वैमनस्य को दूर करने और उस प्रणाली की ओर सकेत करने मे सहायता मिली है जिसमे विभिन्न विचारधाराए समान परिभाषाओ के माध्यम से स्वय को अभिव्यक्त कर सके।

मै इस सूची मे और अधिक बाते जोड सकता था किन्तु मै आपको और अधिक थकाना नही चाहता था। इस अपूर्ण और सरसरी सर्वेक्षण से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि चाहे यूनेस्को हमारी सारी आशाओ को पूर्ण न कर सका हो किन्तु इसकी सफलताए अत्यधिक है। हमारा उद्देश्य उच्च था और अब भी हैं और यह भी सभव नही है कि हमारे तमाम आदर्श तुरन्त पूर्ण हो जाए। हमे यह भी याद रखना चाहिए कि उद्देश्य प्राप्ति के मार्ग मे पूर्वाग्रह की बाधाए खडी है, अविश्वास और सबसे अधिक वित्तीय साधनो की कमी है और इसलिए इन परिस्थितियो मे यूनेस्को जो भी कर पायी उस पर असन्तुष्ट होने का कोई कारण नही है। यह आधुनिक काल का

विरोधाभास है कि हर राष्ट्र शाति का इच्छुक है और शाति की बाते करता है किन्तु लगभग सारी सरकारे शाति और स्थिरता के लिए व्यय किए जाने वाले धन मे युद्ध की तैयारियो पर अधिक धन व्यय कर रही है। यूनेस्को का बजट केवल दस करोड डालर है। किन्तु जब भी हम इसकी तुलना उन हजारो करोड डालरो से करते है जो केवल एक देश सामरिक शस्त्र निमार्ण पर व्यय करता है तो हम आश्चर्य-चकित रह जाते है और यह सोचने पर विवश हो जाते है कि क्या ससार सामूहिक रूप मे पागलपन मे लिप्त हो चुका है ? यह बात भी विचारणीय है कि जब हम कहते है कि यूनेस्को का बजट दस करोड डालर है तो हमे यह भी याद रखना चाहिए कि इसका अधिकतर भाग शासनिक कार्यो पर व्यय हो जाता है। यह मै जानता हूँ कि कोई सस्था उस समय तक नही चल सकती जब तक उसका प्रबध करने वाले व्यक्ति न हो। किन्तु इस बात को भी अस्वीकार नही किया जा सकता कि प्रबधात्मक कार्यो पर व्यय करने के पश्चात् यूनेस्को के पास उसके वास्तविक कार्यो के लिए जो भाग शेष रह जाता है वह बहुत कम है। यदि हमे नक्षत्रो को देखना है तो हमे निश्चय ही दूरबीन प्राप्त करनी चाहिए किन्तु दूरबीन मे हमे इतना तल्लीन नही हो जाना चाहिए कि नक्षत्रो को देखना ही भूल जाए। इसके पूर्व मै कई अवसरो पर इस सबध मे सविस्तार विचार-विनिमय कर चुका हू और यहा पिष्टपेषण करना नही चाहूगा। मुझे विश्वास है कि यूनेस्को के समस्त सदस्य इस समस्या की महत्ता से पूरी तरह अवगत हैं और समान रूप से चिंतित है कि समस्त शासनिक व्यय को घटाने के लिए समस्त सभव उपाय किए जाए।

आज मेरी चिता का मुख्य कारण यूनेस्को के बजट का वह अश नही है जो प्रशासनिक कार्यो पर व्यय होना है बल्कि ससार के बजट का वह अश है जो यूनेस्को के उद्देश्यो की पूर्ति के लिए व्यय किया जाता है। यह उद्देश्य क्या है ? यही न कि शिक्षा, वैज्ञानिक अनुसधान और सास्कृतिक कार्यक्रमो द्वारा ससार भर मे मनुष्य को प्रतिष्ठावान बनाया जाना चाहिए। यूनेस्को का उद्देश्य राष्ट्रो और व्यक्तियो के बीच की उन असमानताओ को भी घटाना है जो आधुनिक जगत मे अत्यधिक दृश्यमान है। यही समस्त राष्ट्रो का समान उद्देश्य है अत इस समान उद्देश्य की पूर्ति के लिए आवश्यक धन-राशि की पूर्ति समस्त राष्ट्रो को करनी चाहिए। परन्तु हम देखते है कि इस अनिवार्य कर्तव्य की समान स्वीकृति के होते हुए भी इस साध्य की प्राप्ति के व्यावहारिक उपाय कम ही दृष्टिगोचर होते है।

इस स्थिति का मुख्य कारण यह है कि आज शस्त्रो पर ससाधन अधिक व्यय किए जाते है जिसका कारण युद्ध का भय है। अतीत मे भी इस प्रकार के टकराव का मुख्य कारण दूसरे के क्षेत्र पर अधिकार प्राप्ति और आर्थिक रहे है। विगत कालो मे युद्ध बहुधा क्षेत्र, धर्म या जाति के कारण लडे गए थे। किसी समय जीविका के लिए युद्ध हुए थे क्योकि खाद्य पदार्थों की पूर्ति सीमित थी और जनसख्या-वृद्धि सकट की स्थिति उत्पन्न कर देती थी। इस प्रकार जीविका के साधन जुटाने के लिए लोग एक देश से दूसरे देश मे जाते थे। १८वी और १९वी शताब्दी मे राष्ट्रीयता या भाषा के आधार पर यूरोप मे युद्ध हुए थे। यूरोप से बाहर कई युद्ध हुए जो पाश्चात्य देशो की उपनिवेशवादी आकाक्षा के फल थे। शीघ्र ही ससार "सम्पन्न और विपन्न" राष्ट्रो मे विभाजित हो गया था। इस उपनिवेशवादी सघर्ष का अत प्रथम विश्वयुद्ध के रूप मे हुआ।

आज की दुनिया मे युद्ध के पूर्वकालिक कारण साधारणत समाप्त हो गए है। वैज्ञानिक और प्राविधिक विकास के कारण आज कोई कारण नही है कि सब को सुखपूर्वक जीवन व्यतीत

करने के लिए पर्याप्त सामग्री प्राप्त न हो। यदि ससार की जनसख्या मे वृद्धि को सुव्यवस्थित कर दिया जाए और इसके लिए शिक्षा को अत्यन्त महत्त्वपूर्ण भूमिका निभानी चाहिए, तो व्यक्तियो और राष्ट्रो के बीच सघर्ष के आर्थिक कारण दूर हो जाएगे। उपनिवेशवाद भी अब कोई महत्त्वपूर्ण शक्ति नही है। ससार के अधिकाशत भागो मे यह प्राय लुप्त हो चुका है। जहा यह विद्यमान भी है वहा भी इसके दिन लद चुके है। ससार के विभिन्न भूखण्डो मे स्वराज्य के सिद्धात की बढ रही मान्यता के कारण भौगोलिक और भाषाई आधारो पर युद्ध साधारणत पुरानी बाते हो चुकी है।

मनुष्य यदि बुद्धिमत्ता से कार्य करे तो शाति के जितने अच्छे अवसर आज हैं इससे पहले कभी नही थे। परन्तु आज भी दुनिया का वातावरण तनाव, आशका, भय और घृणा से युक्त है। वर्तमान परिस्थितियो का मूल कारण फिर क्या है? मै समझता हू कि आप सब इस बात से सहमत होगे कि इसका कारण विचारधारा है। द्वन्द्व आज लोगो के मस्तिष्क मे है, भौतिक वस्तुओ मे नही। हमारे एक ओर पूजीवादी और दूसरी ओर एक समाजवादी कैम्प है। यह दोनो कैम्प न केवल राष्ट्रो के आधार पर विभक्त है बल्कि कुछ सीमा तक वैचारिक टकराव व्यक्तियो को ही विभाजित करते हैं। प्रत्येक देश मे हमे विरोधी कैम्प के समर्थक मिलते है जो वर्तमान सघर्ष को गृहयुद्ध का प्रारूप देते है और अन्तर्राष्ट्रीय सघर्ष का भी अग बना देते है। अत यह बात आश्चर्यजनक नही है कि वर्तमान सघर्ष से प्र त्येक पक्ष इतनी कटुता उत्पन्न करे। इसका आधार चूकि विचारो के द्वन्द्व पर हैं अत विचारों के आधार पर ही इस लडाई को लडा जाना चाहिए। इसलिए यूनेस्को इस द्वन्द्व की अनदेखी नही कर सकती। विचारो के इस सघर्ष को समाप्त करने और इसका समाधान खोजने तथा ससार के राष्ट्रो के सम्मुख उसे प्रस्तुत करना यूनेस्को का कर्तव्य समझता हूँ। यह वास्तविक समस्या है। इसका सामना हमे करना चाहिए। इसकी अनदेखी हम उसी स्थिति मे कर सकते हैं जब हम जोखिम उठाने के लिए तैयार हो।

जहा तक सयुक्त राष्ट्र सघ और उसकी विशिष्ट एजेसियो का सबध है हमे मानना पडेगा कि उनकी प्रतिबद्धता किसी भी विचारधारा से नही है। सयुक्त राष्ट्र अमरीका और सोवियत यूनियन दोनो सयुक्त राष्ट्र सघ के सस्थापक सदस्य है। यूनेस्को मे भी ऐसे सदस्य राष्ट्र हैं जो अनेकानेक विभिन्न विचारधाराओ का प्रतिनिधित्व करते है।

फिर सयुक्त राष्ट्र सघ और यूनस्को से चीन को पृथक् रखने की सार्थकता क्या है? इसका आधार चितनधारा तो हो नही सकती क्योकि सोवियत यूनियन, युगोस्लाविया और कई दूसरे 'कम्युनिस्ट राष्ट्र सघ यूनेस्को के सदस्य है। अत चीन का अपवर्जन अन्यायपूर्ण भी है और बुद्धिमत्ता' के विरुद्ध भी है। मै जानता हूँ कि इस सबध मे यूनेस्को सभवत सयुक्त राष्ट्र सघ के निर्णय की प्रतीक्षा कर रहा है किन्तु बात इतनी स्पष्ट है कि मै नही समझता कि सयुक्त राष्ट्र सघ चीन को राष्ट्रो की बिरादरी मे उसका उचित स्थान प्रदान करने मे अधिक विलम्ब कर सकती है। स्थिति यह है कि चीन को मान्यता न देना सयुक्त राष्ट्र सघ के इस दावे को नकारना है कि वह वास्तविक विश्व-सगठन है क्योकि चीन के अपवर्जन का अर्थ है कि मानवता का लगभग एक-चौथाई भाग उससे अपवर्जित है।

चीन की यूनेस्को की सदस्यता के सबध मे जो भी तकनीकी आपत्तिया हो किन्तु उस प्रस्ताव पर किसी प्रकार की तकनीकी या अन्य प्रकार की आपत्ति नही हो सकती कि वह उन वैचारिक मतभेदो को दूर करने मे पहल करे जिसने आधुनिक युग को विभाजित कर रखा है। वैचारिक समस्याए इसके विशिष्ट सरोकार के क्षेत्र मे आती है और इसके सविधान ने

मानव-मस्तिष्क मे शाति के प्रतिरक्षक होने का दायित्व इसको सौपा है। यूनेस्को इस कर्तव्य का निर्वाह कैसे कर सकती है जब तक उन वैचारिक द्वन्द्वो का समाधान न खोज ले जो आज विश्व-शाति और मनुष्य के अस्तित्व के लिए ही सकट उत्पन्न कर रहे हैं। यूनेस्को का यह परम कर्तव्य होना चाहिए क्योकि सयुक्त राष्ट्र की समस्त एजेसियो मे से केवल उसी का सबध मानव मानसिकता की समस्या से है।

इसका समाधान खोजने के सबध मे प्रथम उपाय यह होना चाहिए कि वास्तविकता को स्वीकार किया जाए। हमे खुलेमन और असदिग्ध रूप से स्वीकार कर लेना चाहिए कि दोनो विचारधाराओ मे किसी का भी ससार मे विलोप नही किया जा सकता और न ही उन्हे पददलित किया जा सकता है। कोई भी मनुष्य जिस मे लेशमात्र भी विवेक होगा क्षणिक मात्र को भी इस बात पर विश्वास नही कर सकता कि सयुक्त राष्ट्र अमरीका और रूस मे से कोई भी अपने विरोधी के दृष्टिकोण को मान लेगा। वास्तविकता यह है कि विचारो मे पूर्ण समानता न अब है और न इससे पहले कभी रही है। शताब्दियो से विभिन्न देशो ने विभिन्न विश्वासो और दृष्टिकोणो का अनुसरण किया है फिर आज धर्म और विश्वासो के विभिन्नता के समान ही वैचारिक मतभेदो को क्यो न स्वीकार कर लिया जाए।

आधुनिक पूजीवादी समाज का विकास औद्योगिक क्राति के पश्चात् हुआ है। इसने मनुष्य की उत्पादन-क्षमता को अत्यधिक बढाया है किन्तु वितरण की मूल समस्या का समाधान प्रस्तुत करने मे यह विफल रहा है। इसीलिए नवीन समाधानो की माग हुई और उनके फलस्वरूप समाजवाद की विभिन्न शाखाए उत्पन्न हुई। यूरोप के सबध मे कहा जा सकता है कि पूजीवाद के प्राचीन रूप पुरातन हो चुके है। सपूर्ण पश्चिमी यूरोप तीव्रगति से सामाजिक नियत्रण और कल्याणकारी विधि की ओर बढ रहा है। निजी कारखाने निश्चय ही वर्तमान हैं किन्तु वह जन नियत्रण द्वारा आरोपित सीमाओ के भीतर कार्य करते हैं।

इस बात का प्रत्यक्ष अपवाद केवल अमरीका मे ही परिलक्षित हो सकता है। ऐसा ज्ञात होता है कि अमरीकी महाद्वीप मे ही पूजीवाद का भविष्य उज्ज्वल है किन्तु यह बात सत्य है कि अमरीका मे भी श्रम के शोषण पर आधारित पूजीवाद के पूर्वकालिक और भद्दे रूपो मे अनेक परिवर्तन आ चुके है फिर भी अमरीका मे पूजीवाद और निजी कारखाने अब भी शक्तिशाली और जीवन्त शक्ति है। और लोगो का बहुमत इस स्वरूप से सन्तुष्ट लगता है। जीवन-स्तर अत्यधिक उच्च हो गया है और लगभग सपूर्ण जनता को सुख-सुविधा का आश्वासन मिल गया है।

अमरीकी पूजीवाद यदि शक्तिशाली है और विकसित हो रहा है तथा उसको परिवर्तित करने की इच्छा लोगो के मन मे नही है और न इसकी सभावनाए ही दृष्टिगोचर होती है, तो ठीक यही बात सोवियत व्यवस्था के सबध मे भी कही जा सकती है। रूस के लोगो को जिन सकटो और समस्याओ का सामना करना पडा उसका समाधान उन्होने केवल समाजवाद की सूरत मे ही ढूढा। हमे यह याद रखना चाहिए कि जार के शासन काल मे रूसी जनता को जनतत्र का कोई वास्तविक अनुभव नही हुआ था। मतदान पेटियो से उनका परिचय लगभग शून्य था और राजनैतिक अधिकारो और स्वातत्र्य को गुप्तचर विभाग का भय लगा रहता था। अत सोवियत व्यवस्था मे राजनैतिक जनतत्र के अभाव ने रूसी जनता के लिए कोई कष्ट उत्पन्न नही किया और सामाजिक तथा आर्थिक जनतत्र की प्रस्तुति ने उनकी भाषाओ और विश्वासो की

पूर्ति की। सोवियत व्यवस्था से उनकी वफादारी को देशभक्ति ने और अधिक सुदृढ किया। क्योकि क्राति के तुरन्त पश्चात् जो गृहयुद्ध प्रारम्भ हुआ उसमे विदेशी हस्तक्षेप होने लगा और जनमानस मे सरकार विरोधी तत्त्वो के विदेशी शक्तियो से सबध स्वीकृत हो गए। पिछले चालीस वर्षो मे रूस की असाधारण उन्नति से ऐसा लगता है कि उसने उनके विश्वास को दृढ कर दिया कि समाजवाद के आधार पर ही अत्यधिक उन्नति हो सकती है। व्यक्तियो और घटको मे समाजवाद के पक्ष मे उनके निर्णय मे नि सदेह छोटे-मोटे भेद और परिवर्तन हो सकते हैं किन्तु सोवियत यूनियन और पूर्वी यूरोप के कई देशो के जनसमूह ने उतनी ही निष्ठा से समाजवादी जीवन पद्धति को स्वीकार किया है जितना कि सयुक्त राष्ट्र अमरीका के लोगो ने पूजीवाद और स्वतत्र व्यवसाय को स्वीकार किया है।

मैं इसके पूर्व कह चुका हू कि चूकि दोनो व्यवस्थाओ मे सघर्ष वैचारिक है अत इस द्वन्द्व का समाधान निकालने का प्रयत्न करने का यूनेस्को पर विशिष्ट दायित्व है। पहली बात तो यह है कि समाधान वैचारिक धरातल पर ही खोजा जाना चाहिए और इस मान्यता पर आधारित होना चाहिए कि दोनो व्यवस्थाए उपस्थित है और रहेगी। इसके अतिरिक्त हमे स्वीकार करना चाहिए कि प्रत्येक व्यवस्था को उस समय तक अपने दृष्टिकोण को प्रचारित करने की पूर्ण स्वतत्रता होनी चाहिए जब तक शातिपूर्ण और अनुशासनबद्ध ढग से ऐसा किया जाता है। यूनेस्को मताभिव्यक्ति की अत्यधिक स्वतत्रता का समर्थक है और दोनो व्यवस्थाओ की ओर से इस सबध मे जो दावा किया जाता है वह यूनेस्को की भावना के पूर्णत अनुकूल है। अत अपने दृष्टिकोण को अभिव्यक्त करने की स्वतत्रता तो होनी चाहिए किन्तु किसी भी व्यवस्था को हिंसात्मक अथवा तोड-फोड की पद्धति अपनाने का अधिकार नही है। प्रत्येक व्यक्ति सिद्धातत स्वीकार करता है कि प्रत्येक राष्ट्र को अपने भाग्य का निर्णय करने का अधिकार है। इसका निष्कर्ष यह है कि प्रत्येक देश को समाज और सरकार के स्वरूप का चयन करने का अधिकार है और इस सबध मे किसी अन्य देश को आदेश देने का अधिकार नही है। इस दृष्टिकोण को यदि एक बार ससार के महान राष्ट्रो ने बिना किसी मानसिक आरक्षण के स्वीकार कर लिया तो वह न केवल एक दूसरे के प्रति सहिष्णुता की भावना रखेगे बल्कि अनेक क्षेत्रो मे एक दूसरे से सहयोग करेगे।

मैने दोनो कैम्पो के मित्रो से बात की है। वह मैने जो कुछ कहा है उसकी सार्थकता को अस्वीकार नही करते किन्तु मुझे लगा कि प्रत्येक व्यवस्था के समर्थक इस बात से भयभीत है कि दूसरा पक्ष कही धोखे और विध्वसात्मक पद्धति का उपयोग न कर रहा हो या न कर ले। यदि विचारधारा के आधार पर स्वतत्र रूप से विचार-विनिमय के अधिकार को स्वीकार कर लिया जाए और इसकी अनुमति दे दी जाए तो इस प्रकार के भय और गलतफहमी के बहुत से कारण पारस्परिक वार्तालाप के द्वारा समाप्त हो सकते है और इस प्रकार धोखे से विध्वसात्मक कार्यवाहियो के कारण आप ही आप समाप्त हो जाएगा। यदि कोई पक्ष इस तथ्य की अपेक्षा करके हिसात्मक गुप्त कार्यप्रणाली का उपयोग करे तो इस बात को शीघ्र ही सयुक्त राष्ट्र सघ के सम्मुख प्रस्तुत होना चाहिए। और मेरे विचार मे इस सबध मे सयुक्त राष्ट्र सघ को यह अधिकार होना चाहिए कि प्रत्यक्ष और स्वतत्र विचार-विनिमय के सबध मे जो पारस्परिक समझौता हुआ है उसकी उपेक्षा करने वालो के विरुद्ध वह कार्यवाही कर सके।

पिछले दिनो मे अन्य देश जिस कारण से सोवियत के प्रति आशकित थे उनमे से एक कोमिटर्न के अन्तर्गत अन्तर्राष्ट्रीय कम्युनिस्ट आदोलन की उपस्थिति थी। सोवियत राज्य की

स्थापना के प्रारम्भिक चरणो मे यह बात नि सकोच कही गई थी कि कम्युनिस्ट पार्टी विश्व-व्यापी क्राति के लिए कार्य करेगी। ट्रोस्की का विचार था कि जर्मनी और दूसरे देशो में कम्युनिस्ट क्राति का होना अनिवार्य है। परन्तु शनै -शनै सोवियत नेताओ और विशेषकर स्टालिन ने एक ही देश मे समाजवाद के निर्माण की बात कहनी आरम्भ की। द्वितीय विश्वयुद्ध के समय जब बरतानिया और सयुक्त राष्ट्र अमरीका सोवियत यूनियन के मित्र बन गए तो कोमिटर्न का विसर्जन कर दिया गया। यह बात भी स्मरणीय है कि युद्ध के अतिम चरण मे स्टालिन ने चीन की कम्युनिस्ट पार्टी को मार्सल शियाग काईशेक से सहयोग करने का परामर्श दिया था। धीरे-धीरे यह चेतना विकसित हुई कि सोवियत यूनियन अपने नागरिको के जीवन-स्तर को अत्यधिक उच्च बनाकर समाजवादी समाज के जो दृष्टान्त प्रस्तुत करेगा उससे साम्यवाद की अत्यधिक सेवा हो सकेगी। स्टालिन के देहान्त के पश्चात् तात्कालिक नेताओ ने नि सदेह रूप से इस बात की घोषणा की कि किसी भी देश को अन्य देश के आन्तरिक मामलो मे हस्तक्षेप करने का अधिकार नही है। यदि किसी देश मे समाजवादी व्यवस्था स्थापित होगी तो वह उस देश की कम्युनिस्ट पार्टी के प्रयासो के फलस्वरूप होगी। तात्कालिक रूसी नेताओ के इस समय के व्यवहार से दूसरे देशो के आन्तरिक मामलो मे गुप्त रूप से कम्युनिस्ट हस्तक्षेप के भय का विचार मस्तिष्क से निकल जाना चाहिए।

हमे अब उस नवीन परिवर्तन पर विचार करना चाहिए जो पिछले दो-तीन वर्षो से सोवियत यूनियन मे उत्पन्न हो रहा है। वहा विस्तृत परिवर्तन हुए हैं जिनसे आशा होती है कि वैचारिक टकराव का शातिपूर्ण समाधान सम्भव है। कुछ समय पूर्व पाश्चात्य राजनैतिक जनतत्र के समर्थक बहुधा इस बात की शिकायत करते दृष्टिगोचर होते थे कि रूस मे स्वतत्र रूप से विचार-विनिमय का अधिकार नही है और मत का निर्धारण ऊपर से दिए गए आदेश के अनुसार होता है। उनका कहना था कि यह बात केवल नागरिको पर व्यक्तिगत रूप से लागू नही होती है बल्कि अन्य देशो की राजनैतिक शासन-पद्धति पर भी लागू होती है और उससे इन्कार नही किया जा सकता है। इस बात मे औचित्य है और इस तथ्य के औचित्य को नकारा नही जा सकता। स्टालिन के काल मे युगोस्लाविया और रूस मे इस बात के आधार पर द्वन्द्व उत्पन्न हुआ था कि युगोस्लाविया साम्यवाद के अपने नमूने का चयन करना चाहता था। मार्शल पीटर का कहना था कि युगोस्लाविया को सोवियत पद्धति के अनुसरण की आवश्यकता नहीं है और वह विशिष्ट आवश्यकताओ को दृष्टि मे रखकर समाजवाद की अपनी रूपरेखा तैयार कर सकता है। स्टालिन ने इस बात को स्वीकार नही किया और हम सब जानते हैं कि युगोस्लाविया कुछ वर्षो तक किस प्रकार रूस की शत्रुता और कटु आलोचना का शिकार होता रहा परन्तु इस सबध मे सोवियत दृष्टिकोण मे अब प्रत्यक्ष परिवर्तन दृष्टिगोचर होता है। रूस की कम्युनिस्ट पार्टी की पिछली काग्रेस मे रूसी नेताओ ने नि सकोच रूप से इस बात को स्वीकार किया था कि समाजवाद के विभिन्न आधार हो सकते है। इससे हमने देखा कि रूस और युगोस्लाविया के बीच का द्वन्द्व समाप्त हो गया। पोलैण्ड मे घटित तात्कालिक घटनाए पुन इस दृष्टिकोण की पुष्टि करती है कि रूसी नेता अब इस बात के पक्ष मे है कि अन्य देशो की कम्युनिस्ट पार्टियो को आदेश देना अनावश्यक है। ससार के सब प्रगतिशील व्यक्तियो ने दुखपूर्वक इस बात को महसूस किया कि अतीत मे रूस मे समाजवादी व्यवस्था का अर्थ समझा गया लोगो के जीवन पर नियत्रण करना और व्यक्ति की स्वतत्रता को अपहरित करना। इसमे कोई शका नही कि रूस के लोगो को राजनैतिक स्वतत्रता और अपने नागरिक अधिकारो का कोई पूर्व अनुभव नही था।

इसलिए यह बात सराहनीय है कि रूसी नेता वर्तमान व्यवस्था को जनतात्रिक बनाने का प्रयास कर रहे है। रूस मे औद्योगिक और आर्थिक जनतन्त्र पहले से ही है। किन्तु वह दिन रूस और समस्त ससार के लिए अत्यन्त हर्षोल्लास का होगा जब अपनी समस्त सफलताओ के साथ वहा व्यक्ति की स्वतत्रता और राजनैतिक जनतत्र की स्थापना भी होगी। मैं समझता हू कि इस उद्देश्य की पूर्ति के लि सोवियत रूस इस दिशा मे ठोस कदम उठा रहा है। इसलिए आवश्यक और उचित है कि जनमत इस परिवर्तन का स्वागत करे और इस प्रकार से इसका प्रोत्साहन करे। यह एक मानवीय कर्तव्य है कि लोग अपने मतो की अभिव्यक्ति विभिन्न पद्धतियो से नि सकोच रूप से करे। चूकि इससे किसी न किसी रूप मे स्वतन्त्रता और जनतन्त्रता को बल मिलता है। इन दोनो व्यवस्थाओ ने इस तथ्य को स्वीकार कर लिया है कि दोनो साथ-साथ रह सकते है और पारस्परिक सहिष्णुता को प्रदर्शित करने को ततपर हैं तो इसका शीघ्रतम परिणाम यह होगा कि यह एक दूसरे के निकट आ जाएगे और इनमे पारस्परिक सद्भावना बढेगी। एक बार जब पारस्परिक वैमनस्य और आशकाग्रस्त स्थिति समाप्त हो जायेगी तो प्रत्येक व्यवस्था के अनुयायी दूसरे के अनुभवो मे लाभान्वित हो सकते है। एक दूसरे से अधिक से अधिक परिचय प्राप्त करने के कारण पारस्परिक सकट भी बढेगा। मै जैसा कि अभी निवेदन कर चुका हूँ, इनमे से कोई व्यवस्था समाप्त होने वाली नही है और फिर दोनो के बीच के मतभेद भी उपस्थित रहेगे। किन्तु यह मतभेद पर्याप्त मात्रा मे कार्यपद्धति और प्राविधि मे है तथा मानवता और सस्कृति के उच्च मूल्यो मे नही है जो तीव्रता से सम्पूर्ण मानवजगत के लिए एक जैसे हो रहे है।

यूनेस्को का यह विशिष्ट दायित्व है कि वह दो ऐसी व्यवस्थाओ के बीच पारस्परिक सद्भावना और महिष्णुता पैदा करने का प्रयत्न करे जिनकी शत्रुता मानवीय कल्याण के लिए घातक है और इस दिशा मे काम करे कि वह अपने उद्देश्यो की पूर्ति के ससाधनो तक भी पहुच सकता है।

एक बार युद्ध का भय और पारस्परिक सदेह का अन्त हो जाए तो वह भारी धन-राशि जो आज सामरिक अस्त्र-शस्त्र बनाने के काम मे व्यय हो रही है, यूनेस्को के रचनात्मक कार्यो मे उपयुक्त हो सकती है। यही इस सस्था का वास्तविक कार्य है। युद्ध और मृत्यु से नितात रिक्त ससार मे ही यूनेस्को से विश्वव्यापी आधार पर शिक्षा, स्वास्थ्य और जीवन-स्तर को उन्नत बनाने की आशा की जा सकती है जिसका वादा इस सस्था ने सपूर्ण विश्वास के साथ अत्यन्त साहसपूर्वक किया है।

मै यह अभिलेख जब लिपिबद्ध कर चुका था तो अकस्मात् मिस्र से युद्ध की सूचना प्राप्त हुई। इस त्रासदी का प्रभाव इतना भयकर है कि मै इसकी चर्चा किए बिना यहा नही रह सकता। अभी कुछ क्षण पहले मैने यह आशा व्यक्त की थी कि युद्ध के पुरातन कारण जो अधिकाशत भूभागीय, धार्मिक और राष्ट्रीय समस्याओ से सबध रखते थे वे इस आधुनिक युग मे उपस्थित नही रहे है। किन्तु अब मै अत्यन्त दुख पूर्वक इस बात को स्वीकार करता हू कि वह मेरी बुद्धि का भ्रम था। पिछले दिनो मिस्र मे जो घटनाए घटी उनसे ज्ञात होता है कि हम अब तक पुराने तरीको और पुरातन रीतियो पर चल रहे है और अपने स्वप्नलोक तक पहुचने के लिए हमे अब भी एक लम्बी यात्रा करनी है।

यूनेस्को का राजनैतिक समस्याओ से प्रत्यक्ष सबध नही है। किन्तु हम इनकी उपेक्षा इसलिए नही कर सकते है कि यह हमारी अभिरुचि के कार्यो और विशेष रूप से विश्व-शाति और अन्तर्राष्ट्रीय सद्भावना से सबद्ध कार्यो को प्रभावित करते है। मै अत्यन्त विनम्रता मे

निवेदन करूगा कि शीघ्रातिशीघ्र गभीरता पूर्वक इस समस्या पर विचार किया जाए। यह समस्या है क्या ? इस्राइली सेना ने मिस्री सीमा पार करके इस देश पर आक्रमण कर दिया और इगलिस्तान तथा फ्रास चुनौती देकर काहेरा पर चढ दौडे। मै आपसे पूछता हू कि इस दु खदायक परिवेश मे सयुक्त राष्ट्र सघ की भूमिका क्या है ? यह बात मेरे गले नही उतरती कि इगलिस्तान और फ्रास जैसे दो बडे राष्ट्रो को जो यूनेस्को के मस्थापक सदस्य भी है मिस्र के विरुद्ध यह कदम उठाना चाहिए था। ऐसा ज्ञात होता है कि जैसे सयुक्त राष्ट्र सघ और सुरक्षा परिषद का अस्तित्व ही नही है। यहा तक कि सयुक्त राष्ट्र सघ के उस प्रभावशाली प्रस्ताव को भी पारित नही होने दिया गया जो सभवत इस समस्या के निवारण का समाधान खोजने में सहायक होता। इस स्थिति को देखकर यह दुखद आभास होता है कि आज भी विश्व-शाति और मानव जाति के भविष्य को अपनी सकुचित राष्ट्रीय और व्यापारिक हितो के सम्मुख निम्न कोटि का समझा जा रहा है और इस बात को महसूस करने के पश्चात् मै सोच रहा हू कि इन परिस्थितियो मे यूनेस्को के कार्यो का अर्थ क्या है ? हम इस निष्कर्ष पर पहुचे बिना नही रह सकते कि अभी उस मानसिकता को उत्पन्न करने मे सफल नही हो सका है जिसके फलस्वरूप मनुष्य के हृदय मे तीव्र प्रेमभाव और आसक्ति उत्पन्न हो और जिसके बिना समस्त प्राविधि और वैज्ञानिक प्रगति एक भयकर तलवार के समान है जो हमारे सिरो पर लटक रही है। इसके लिए पुरुषो और स्त्रियो के मन मे उस विख्यात "शाति की सुरक्षा को स्थापित करने के लिए हमे अपने प्रयासो मे और बृद्धि करनी चाहिए जो अब तक हम से बहुत दूर है और इसकी पूर्ति के लिए इस महान सस्था का जन्म हुआ था। यूनेस्को को सकट के क्षण में भी मानवता का अन्त करण बन जाना चाहिए नहीं तो यह मानव-कल्याण के लिए क्रियात्मक शक्ति के रूप मे काम करने मे विफल रहेगा।

हिन्दुस्तान छोड़ो

भारत की स्वाधीनता

"मैं समझता हूँ कि पन्द्रह मिनट से अधिक मैं नही सोया हूगा कि किसी ने मेरे पैर हिलाए। मैने ऑखे खोली तो देखा कि भोलाभाई देसाई के सुपुत्र धीरूभाई देसाई हाथो मे कागज का एक पन्ना पकड़े खडे हैं। धीरूभाई के बताने के पूर्व ही मैं समझ गया कि बबई का पुलिस आयुक्त मेरी गिरफ्तारी का वारेट लाया है।"

हिन्दुस्तान छोड़ो *

कार्यकारिणी समिति का प्रस्ताव प्रकाशित हुआ तो पूरे देश मे बिजली की एक लहर दौड गई। लोगो ने इस पर विचार नही किया कि इस प्रस्ताव के क्या परिणाम निकल सकते है। उनको तो बस यह दिखाई पड रहा था कि अन्ततोगत्वा काग्रेस बरतानिया को हिन्दुस्तान से निकालने के लिए जन आदोलन प्रारम्भ कर रही है। जनता और सरकार दोनो ही अत्यन्त शीघ्रता से इस प्रस्ताव "हिन्दुस्तान छोडो" के नाम से प्रचारित करने लगे। कार्यकारिणी समिति के अनेक सदस्यो के समान जनता भी गाधी जी के प्रति अविच्छिन्न श्रद्धा रखती थी और उसे विश्वास था कि महात्मा जी ने कोई ऐसी योजना सोच रखी है जो सरकारी व्यवस्था को छिन्न-भिन्न कर देगी और वह परिणामत समझौता करने पर विवश हो जायेगी। मै यहा इस बात को स्वीकार करना चाहता हूँ कि कुछ व्यक्ति ऐसे भी थे जो सोचते थे कि गाधी जी हिन्दुस्तान को किसी जादू के द्वारा या ऐसे उपायो से स्वतन्त्रता दिला देगे जो मानवीय बुद्धि से परे हैं। इसलिए वह आवश्यक नही समझते थे कि तुरन्त इसके लिए कोई विशेष प्रयास करे। प्रस्ताव पारित करने के पश्चात् कार्यकारिणी समिति ने यह निर्णय किया कि ये देखेगी कि सरकार पर इसका क्या प्रभाव पडता है। यदि सरकार ने मागो को स्वीकार कर लिया या कम से कम समझौता करने की दृष्टि अपनायी तो आगे बातचीत के लिए सभावना बनी रहेगी और यदि इसके विपरीत सरकार ने मागो को ठुकरा दिया, तो गाधी के नेतृत्व मे उसके विरुद्ध एक आन्दोलन प्रारम्भ किया जायेगा। मुझे इसमे लेशमात्र भी सदेह नही था कि सरकार यह बात सहन न करेगी कि उसको डरा-धमका के बातचीत की जाये। जो घटनाए घटित हुई उन्होने मेरे इस अनुमान को प्रमाणित कर दिया।

वर्धा में विदेशी पत्रकारों की भीड लग गई थी, इन्हें कार्यकारिणी समिति का निर्णय जानने की अत्यधिक उत्सुकता थी। पन्द्रह जुलाई को गाधी जी ने एक पत्रकार सम्मेलन बुलाया। एक प्रश्न के उत्तर मे उन्होने कहा कि यदि आन्दोलन प्रारम्भ किया गया तो वह बरतानिया सरकार के विरुद्ध एक अहिसात्मक क्राति होगा।

प्रस्ताव की स्वीकृति के पश्चात् गाधी जी के सचिव महादेव देसाई ने (कुमारी स्लेड) मीरा बहन से कहा कि वायसराय से मिलकर इन्हे प्रस्ताव के उद्देश्य का स्पष्टीकरण करना चाहिए। कुमारी स्लेड बरतानिया निवासी एक जल-सेनानायक की बेटी थी किन्तु उन्होंने गाधी जी के व्यक्तित्व से प्रभावित होकर भारतीय जीवन-पद्धति ग्रहण कर ली थी। वह साधारणतय मीरा बहन कहलाती थी और गाधी जी के घनिष्ठतम श्रद्धालुओ मे से थी और उनके आश्रम मे कई

---

* यह लेख मौलाना की पुस्तक **भारत की स्वाधीनता** का एक अध्याग है। यह पुस्तक उनके मरणोपरात प्रकाशित हुई। पुस्तक की लिखी गई अपनी प्रस्तारना मे हुमायू कबीर ने लिखा है कि मौलाना को अपनी आत्मकथा लिखने के लिए तत्पर करने मे उन्हे अत्यधिक कठिनाई का सामना करना पडा। कबीर का यह भी कहना है कि अपनी मृत्यु से कुछ दिन पूर्व उन्होने सम्पूर्ण पाण्डुलिपि को स्वीकृति प्रदान की थी। कबीर के कथनानुसार मौलाना की इच्छा थी कि पुस्तक के तीस पृष्ठो को उनके दहावसान क तीस वर्ष पश्चात् जनता के मम्मुख लाया जाए। परिणामत तीस पृष्ठो को १९८८ मे प्रकाशित किया गया।

वर्ष रह चुकी थी। उनसे यह भी कहा गया कि वे वायसराय की प्रस्तावित आन्दोलन के चरित्र और उसकी कार्य-प्रणाली को समझाने का प्रयास करे। मिस स्लेड ने वायसराय से मिलने के लिए वर्धा प्रस्थान किया और भेट करने का निवेदन किया। वायसराय के निजी सचिव ने उत्तर दिया कि गाधी जी विद्रोह की बाते करते है इसलिए वायसराय से मिल नही सकते। उन्होने यह भी स्पष्ट कर दिया कि सरकार युद्धकाल मे किसी प्रकार के विद्रोह को सहन नही कर सकती, चाहे वे हिसात्मक हो या अहिसात्मक। उन्होने यह भी कहा कि सरकार किसी ऐसे दल के प्रतिनिधि से मिलने और वार्तालाप करने के लिए तत्पर नही है जो इस प्रकार की बाते करता है। इस अस्वीकृति के पश्चात् मीरा बहन वायसराय के निजी सचिव से मिली और उनसे विस्तार से बातचीत की। उस समय मै देहली मे था। उन्होने इस बातचीत के विवरण से मुझे अवगत कराया, फिर वर्धा वापस गयी और गाधी जी को इस भेट का वृत्तात सुनाया।

तत्पश्चात् महादेव देसाई ने एक वक्तव्य प्रकाशित किया कि लगता है कि गाधी जी के सबध मे कुभ्रातिया उत्पन्न हो गई है। यह कहना उचित नही है कि गाधी जी ने बरतानिया के विरुद्ध खुले हिसात्मक विद्रोह का निर्णय किया है। मुझे कहना पडता है कि महादेव देसाई के इस वक्तव्य पर मुझे कुछ आश्चर्य भी हुआ। वास्तविकता यह है कि 'अहिसात्मक क्राति' की परिभाषा जवाहरलाल नेहरू ने प्रचारित की थी और फिर जो अहिसात्मक क्राति की बाते करने लगे थे। सभव है कि उनके मन मे इसका कोई विशिष्ट अर्थ रहा हो, किन्तु जनसाधारण ने उनके इस वक्तव्य का अभिप्राय यह समझा था कि काग्रेस ने अब निर्णय कर लिया है कि वह हिसा के अतिरिक्त हिन्दोस्तान मे बरतानिया सरकार को विवश करने के समस्त उपयुक्त उपाय करेगी ताकि वह सत्ता से वचित हो जाये। मै कह चुका हू कि मैने पहले से अनुमान कर लिया था कि अग्रेज पर हमारे निर्णय का क्या प्रभाव पडेगा और मुझे कोई आश्चर्य नही हुआ जब वायसराय ने गाधी जी या उनके प्रतिनिधि से मिलना अस्वीकार कर दिया। कार्यकारिणी समिति के निर्णयानुसार ७ अगस्त १९४२ ई० को अखिल भारतीय काग्रेस समिति का अधिवेशन स्थिति पर विचार करने के लिए बबई बुलाया गया।

१९ जुलाई से ५ अगस्त तक मेरा पूरा समय देश के विभिन्न भागो के काग्रेसी नेताओ से भेट करने मे बीता। मै उनके मन मे बैठा देना चाहता था कि यदि सरकार ने हमारी मागे मान ली या कम से कम हमे काम करने का अवसर दिया तो आदोलन चलाने मे गाधी जी के निर्देशो का दृढता से पालन किया जायेगा। यदि सरकार ने गाधी जी को बदी बना लिया तो जनता को अधिकार होगा कि सरकार की ओर से की गई हिंसा का सामना करने के लिए जो कार्यप्रणाली उचित समझे अपनाए, चाहे तो प्रणाली हिसात्मक हो या अहिसात्मक। जब तक नेता स्वतत्र है और अपने कर्तव्यो का निर्वाह कर सकते है तब तक देश मे जो कुछ होगा वह उसके उत्तरदायी होगे। परन्तु यदि सरकार उनको बन्दी बना लेती है तो इसके परिणामो का दायित्व उसी पर होगा। इन निर्देशो को गुप्त रखा गया था और उनका प्रचार कभी नही किया गया। इस समय की परिस्थिति का जो मानचित्र मेरे सम्मुख था वह यह था कि बगाल, बिहार, उत्तर प्रदेश, मध्यप्रात, बम्बई और दिल्ली पूर्णतया तत्पर है और वहा आदोलन मे तीव्रता और शक्ति होगी। आसाम उस समय बरतानिया की सामरिक गतिविधियो का केन्द्र था और सैनिक पदाधिकारियो और सिपाहियो से भरा पडा था। इसलिए वहा किसी प्रकार का व्यावहारिक कार्यक्रम चलाना सभव ही नही था। परन्तु आसाम जाने के समस्त मार्ग बगाल और बिहार से जाते थे, इसलिए इन दोनो प्रातो मे कार्यक्रम की महत्ता दुगुनी हो गई। शेष प्रातो मे अनुकूल वातावरण उत्पन्न

करने का मैने अत्यधिक प्रयास किया किन्तु इस बात को स्वीकार करता हू कि वास्तविक स्थिति की रूपरेखा मेरे सम्मुख स्पष्ट नही थी।

वायसराय ने मीरा बहन से मिलना अस्वीकार कर दिया तो गाधी जी ने महसूस किया कि सरकार आसानी से झुकने वाली नही है। इस बात से उनके विश्वास को धक्का लगा। किन्तु अब भी उनको विश्वास था कि सरकार कोई कठोर कार्यवाही नही करेगी। उनका विचार था कि अखिल भारतीय काग्रेस समिति के अधिवेशन के पश्चात् कार्यक्रम को स्थापित करने के लिए पर्याप्त समय मिल जायेगा और वह शनै -शनै आन्दोलन की गति को तीव्र कर सकेगे। मै उनके इस भ्रम को उचित नही समझता था। २८ जुलाई को मैने उनको एक विस्तृत पत्र मे लिखा कि सरकार पूर्णतया तत्पर है और बबई मे अखिल भारतीय काग्रेस समिति अधिवेशन के तत्पश्चात् कोई कार्यवाही करेगी। गाधी जी ने उत्तर दिया कि निष्कर्ष निकालने मे मुझे उतावली से काम नही लेना चाहिए। वो भी परिस्थिति का निरीक्षण कर रहे है और उन्हे अब भी विश्वास है कि कोई न कोई उपाय अवश्य निकल आएगा।

३ अगस्त को मैने कलकत्ते से बम्बई के लिए प्रस्थान किया। मुझे पूर्ण विश्वास तो न था किन्तु मन यह कहता था कि मै कलकत्ते से एक दीर्घ काल के लिए अलग हो रहा हू। मुझे इस बात की भी सूचनाये प्राप्त हुई थी कि सरकार ने सभी प्रकार के प्रबध कर लिये है और इसका सकल्प है कि प्रस्ताव पारित होते ही समस्त नेतागण पकड लिये जाए।

कार्यकारिणी समिति की बैठक ५ अगस्त को सम्पन्न हुई, जिसमे ७ अगस्त को अखिल भारतीय काग्रेस समिति के सम्मुख प्रस्तुत करने के लिए प्रस्ताव का एक प्रतिरूप तैयार किया गया। मैने अपने उद्घाटन भाषण मे समिति की पिछली बैठक से इस समय तक स्थिति मे जो परिवर्तन हुए थे उनका सक्षिप्त विवरण प्रस्तुत किया और पर्याप्त विस्तार सहित उन कारणो की व्याख्या की जिन्होने कार्यकारिणी को अपना दृष्टिकोण परिवर्तित करने और हिन्दुस्तान को स्वतत्र करने के लिए आन्दोलन आरभ करने पर कटिबद्ध किया था। मैने कहा कि इस समय उसके भाग्य का निर्णय हो रहा है और हमारा राष्ट्र हाथ पर हाथ रखकर बैठ नही सकता। हिन्दुस्तान ने जनतात्रिक देशो के साथ सहयोग करना चाहा था। किन्तु बरतानिया सरकार ने सम्मानपूर्ण सहयोग के मार्ग अवरुद्ध कर दिये है। अब स्थिति यह है कि जापानी आक्रमणकारी द्वार तक आ गया है, इसलिए राष्ट्र आक्रमणकारी का सामना करने के लिए आत्मबल उत्पन्न करना चाहता है। बरतानिया यदि उचित समझे तो हिन्दोस्तान को छोड सकता है, जैसे उसने सिगापुर, मलाया और बर्मा को रिक्त कर दिया, किन्तु हिन्दुस्तानी देश को छोड नही सकते। क्योकि यह उनकी मातृभूमि है। इस कारण से वह अपने मे इतनी शक्ति उत्पन्न करना चाहते है कि बरतानिया की श्रृखलाओ को तोड सके और नये आक्रमणकारी को मुहतोड उत्तर दे सके।

कुछ कम्युनिस्टो के अतिरिक्त जिन्होने इस आन्दोलन का विरोध किया था अखिल भारतीय काग्रेस समिति के समस्त सदस्यो ने कार्यकारिणी समिति के द्वारा प्रस्तुत किये गए प्रस्ताव का स्वागत किया। गाधी जी ने भी बैठक को सबोधित किया और दो दिन के विचार-विनिमय के पश्चात् ८ अगस्त को रात गये यह प्रस्ताव भारी बहुमत से स्वीकृत हो गया। प्रस्ताव का पूर्ण पाठ परिशिष्ट मे अकित है।

मै बबई जाता तो साधारणतया स्वर्गीय भोला भाई देसाई के यहा ठहरा करता था। इस अवसर पर भी मै वही ठहरा था। इस समय वे रुग्ण थे और उनका स्वास्थ्य कुछ समय से ठीक नही था, इसलिए जब मै अखिल भारतीय काग्रेस कमेटी की बैठक से बाहर आया और ज्ञात

हुआ कि वह मेरी प्रतीक्षा कर रहे है तो कुछ आश्चर्य हुआ। रात्रि का समय पर्याप्त मात्रा मे बीत चुका था, मै थका हुआ था और मेरा अनुमान था कि वह सो गये होगे। मैने उनके इतनी देर तक जागने पर अपनी हल्की सी अप्रसन्नता व्यक्त की किन्तु उन्होने बतलाया कि मेरे एक सबधी मोहम्मद ताहिर जिनका बबई मे कारबार था मुझसे मिलने आए थे और बहुत देर तक मेरी प्रतीक्षा करते रहे किन्तु जब मैं वापस नही आया तो वह मेरे नाम एक सदेश छोडकर चले गये है। मोहम्मद ताहिर के एक मित्र बबई पुलिस मे थे। उनसे उन्हे ज्ञात हुआ था कि प्रात काल समस्त काग्रेसी नेतागण पकड लिए जाएगे। ताहिर के मित्र ने यह भी बतलाया था कि उसे निश्चित रूप से तो नही ज्ञात है किन्तु सूचना यह है कि हम सबको हिन्दुस्तान के बाहर सभवत दक्षिण अफ्रीका भेज दिया जायगा।

इस प्रकार की बाते कलकत्ते से चलने के पूर्व सुनने मे आई थी। इसके पश्चात् ज्ञात हुआ कि यह बाते नितात निराधार न थी जब सरकार ने हम सबको बदी बनाने का निर्णय किया था तो उसे यह भी विचार आया होगा कि हमको हिन्दुस्तान मे रखना नीति के विरुद्ध है। अत यह वास्तविकता है कि इस सबध मे दक्षिण अफ्रीका की सरकार से वार्ता आरम्भ की गई थी, किन्तु ज्ञात होता है कि ठीक समय पर कोई बाधा उत्पन्न हो गई जिसके कारणवश यह निर्णय बदलना पडा। तुरत ही हमे विदित हो गया कि सरकार ने निर्णय किया है कि गाधी जी को पूना मे नजरबद किया जायेगा और हम लोगो को अहमद नगर दुर्ग मे बद किया जायेगा।

भोलाभाई इस सूचना से अत्यन्त चिंतित थे और इसी कारण अब तक मेरी प्रतीक्षा कर रहे थे। मै बहुत ही थका हुआ था इसलिए इस प्रकार की गप्पे बैठकर सुनने को जी नही चाहता था। मैने भोलाभाई से कहा कि यदि यह सूचना सत्य है तो मेरे पास स्वतत्रता के केवल कुछ घटे ही शेष है, इसलिए उचित है कि मैं शीघ्र ही खाना खाकर सो रहूँ ताकि प्रात जो कुछ होने वाला है उसके लिए तत्पर हो जाऊ। स्वतत्रता के इन कुछ घटो को गप्पो के सबध मे अनुमान लगाने से कही अधिक उचित है कि सो रहू। भोलाभाई ने इससे सहमति व्यक्त की और मै तुरत बिस्तर पर लेट गया।

मै सदैव से प्रात उठने का अभ्यस्त हू। अगली प्रभात को भी मै यथानियम चार बजे उठा। परन्तु मेरी थकान अब भी नही गई थी और सर भारी सा हो गया था। मैने स्पिरिन की दो गोलिया खाई, चाय की एक प्याली ली और बैठ गया। निर्णय किया गया था कि स्वीकृत प्रस्ताव की एक प्रतिलिपि पत्र के साथ सलग्न करके राष्ट्रपति रूजवेल्ट को भेज दी जाएगी। हमने सोचा कि राष्ट्रपति रूजवेल्ट हिन्दुस्तानी 'स्वतत्रता' के सबध में जितनी रूचि दिखा रहे हैं उसके देखते हुए कम से कम इतना तो होना ही चाहिए। मैने राष्ट्रपति रूजवेल्ट के नाम पत्र लिखना आरभ किया। किन्तु उसे समाप्त न कर सका। सभवत थकावट के कारण या हो सकता है 'स्पिरिन' के कारण नीद आने लगी और मै सोने के लिए लेट गया। मै अधिक से अधिक पद्रह मिनट सोया हूगा किसी ने चुपके से मेरा पाव दबाया। मैने आखे खोली तो भोलाभाई देसाई के सुपुत्र धीरूभाई देसाई एक कागज लिये खडे थे। मै समझ गया कि वह क्या है। धीरूभाई के बतलाने के पूर्व ही मैं जान गया कि बबई का डिप्टी कमिश्नर मेरी गिरफ्तारी का वारट लाया है। उन्होने कहा कि डिप्टी कमिश्नर बरामदे मे प्रतीक्षा कर रहा है। मैने धीरूभाई से कहा कि कमिश्नर से कह दे कि मुझे तैयार होने मे थोडा सा समय लगेगा।

मैंने स्नान किया और कपडे पहने। मैने अपने निजी सचिव मोहम्मद अजमल खा को आवश्यक निर्देश दिए, क्योकि वह उस समय तक सोते से उठकर मेरे पास आ चुके थे। इसके

पश्चात् मै बरामदे मे आया। भोलाभाई और उनकी बहू डिप्टी कमिश्नर से बाते कर रही थी, मैंने मुस्कराकर भोलाभाई से कहा कि उनके मित्र गत सध्या को जो सूचना लाए थे, सही निकली। फिर मैंने डिप्टी कमिश्नर को सबोधित करते हुए कहा कि "मै तैयार हू ?" उस समय पाच बजे थे।

मैं डिप्टी कमिश्नर की कार में बैठा, एक दूसरी कार मे मेरा सामान रखा गया और वह हमारे पीछे-पीछे चली। हम सीधे विक्टोरिया टर्मिनस आये। यह स्थानीय गाडियो का समय था किन्तु स्टेशन बिल्कुल खाली था, शायद तमाम गाडिया और यात्री कुछ समय के लिए रोक दिए गए थे। जैसे ही मैं कार से उतरा, अशोक मेहता दिखाई पडे। वह भी गिरफ्तार कर लिए गये थे और विक्टोरिया टर्मिनस लाये गये थे। इससे मै समझ गया कि सरकार ने केवल कार्यकारिणी समिति के सदस्यो को ही नही बल्कि बबई के स्थानीय नेताओ को भी पकड लिया है और सारे देश मे यही किया जा रहा होगा। प्लेटफार्म पर खडी गाडी हमारी प्रतीक्षा कर रही थी, मुझे उसके पास लाये। उस समय एक इजन गाडी मे डायनिग कार लगा रहा था। वह कॉरीडोर वाली गाडी थी, जैसी कि साधारणतया बबई और पूना के बीच चलती थी। मै एक डिब्बे मे पहुचा दिया गया, जहा मै खिडकी के पास ही सीट पर बैठ गया। तत्पश्चात् ही जवाहरलाल, आसिफ अली और डा० महमूद दृष्टिगोचर हुए। जवाहरलाल ने मुझे बतलाया कि गाधी जी को भी स्टेशन लाए है और वे दूसरे डिब्बे मे बिठाये गये हैं। एक यूरोपीय फौजी अफसर ने आकर मुझसे पूछा कि आप चाय तो न पियेगे ? मै चाय पी चुका था किन्तु और मगवा ली।

थोडी ही देर मे एक दूसरा फौजी अफसर आया और उसने हम लोगो की गणना आरम्भ कर दी। वह किसी कारण चकराया हुआ सा था क्योकि उसने हम लोगो को कई बार गिना। जब वह हमारे डिब्बे मे आया तो थोडी ऊची आवाज से कहा "तीस"। जब उसने दो बार ऐसा ही किया तो मैने उतनी ही ऊची आवाज मे कहा "बत्तीस"। इससे वह और चिन्तित हो गया और उसने पुन गिनना आरम्भ किया। इसके पश्चात् ही गार्ड ने सीटी बजाई और गाडी चल पडी। मैने श्रीमती आसिफ अली को प्लेटफार्म पर खडे देखा। वह अपने पति को बिदा करने आयी थीं। जब गाडी चलने लगी तब उन्होने मेरी ओर देखा और कहा "मेरी चिन्ता न कीजिएगा, मै अपने लिए कोई न कोई काम निकाल लूगी, बेकार न बैठूगी।" इसके पश्चात् होने वाली घटनाओ ने सिद्ध कर दिया कि उन्होंने जो कुछ कहा था वह कर दिखलाया।

मै अभी बता चुका हू कि हमारी गाडी मै कॉरीडोर था। श्रीमती नायडू हमारे डिब्बे मे आई और कहा कि गाधी जी हमसे मिलना चाहते है। हम कॉरीडोर मे होते हुए उनके डिब्बे मे गये, जो कुछ दूरी पर ही था। गाधी जी अत्यत मलिन चित्त दिखाई पड रहे थे। मैने कभी उनको उदास और दु खी नही देखा था। मै समझ गया कि उनको इस अकस्मात् गिरफ्तारी की आशका नही थी, अनुमान यह था कि सरकार कोई कठोर कार्रवाई नही करेगी। यद्यपि मैने उनको बारबार अवगत कराया था कि वह बहुत अधिक भ्रम मे न रहे किन्तु स्पष्ट है कि इनको अपने मत पर अधिक विश्वास था। अब चूकि उनके अनुमान ठीक नही निकले थे इसलिए वह निर्णय नही कर पाये थे कि उनको क्या करना चाहिए।

हमने अभी बात आरभ ही की थी कि गाधी जी ने कहा कि 'तुम अपने ठिकाने पर पहुचते ही सूचित करना कि तुम कांग्रेस अध्यक्ष के रूप मे अपने कर्तव्यो का पालन करते रहना चाहते हो। इस उद्देश्य के लिए तुमको अपने निजी सचिव और दूसरी सुविधाओ की माग करनी चाहिए। जब तुम पिछली बार गिरफ्तार हुए थे और नैनी जेल मे बद थे तो सरकार ने तुमको यह

सुविधाए उपलब्ध करायी थी। इस प्रकार की सुविधाओ की तुमको फिर माग करनी चाहिए और यदि आवश्यकता पडे तो इसे एक समस्या बना लेनी चाहिए"। मै गाधी जी से सहमत न हो सका। मैने कहा कि वर्तमान स्थिति नितान्त भिन्न है। हमने अपना मार्ग जानबूझ कर चुना है। इसलिए इसके परिणामो को भी सहन करना चाहिए। यह बात तो मेरी समझ मे आ सकती थी कि यदि वह किसी ऐसे मुद्दे के सबध में लडने को कहें जो काग्रेस ने उठाया हो, किन्तु यह कैसे हो सकता था कि मै इतने साधारण मुद्दे पर कि मुझे विशिष्ट सुविधाए दी जाए, लडने के लिए तत्पर हो जाता। मै इस माग को उचित नही समझता था कि काग्रेस के कार्यो को सम्पन्न करने के लिए निजी सचिव रखने की अनुमति मिल। तात्कालिक परिस्थितियो मे यह बात इस योग्य नही थी कि इस पर लडाई की जाए।

हम यह बाते कर ही रहे थे कि बबई का पुलिस कमिश्नर जो हमारे साथ ही चल रहा था, अदर आया। उसने हमसे अपने डिब्बे मे जाने के लिए कहा। उसने मुझसे कहा कि केवल श्रीमती नायडू गाधी जी के साथ रह सकती है। जवाहरलाल और मै अपने डिब्बे मे आ गये। हमारी गाडी उस समय तीव्र गति से कल्यान की ओर जा रही थी। परन्तु वह कल्यान मे नही रुकी और पूना के मार्ग पर चल पडी। मैने सोचा कि सभवत हम लोग नजरबद किए जाएगे और जब वहा गाडी रुकी तो मुझे विश्वास हो गया कि मेरा अनुमान ठीक है।

लगता है हमारी गिरफ्तारी की सूचना किसी प्रकार पूना पहुच गई थी। प्लेटफार्म पर हर ओर पुलिस थी और जनसमूह मे से किसी को आने की अनुमति नही थी। परन्तु पुल के ऊपर बहुत बडी भीड एकत्रित थी। जैसे ही गाडी स्टेशन पर पहुची तो लोगो ने 'महात्मा गाधी की जय" करना आरम्भ कर दिया। जैसे ही लोगो ने नारे लगाए, कमिश्नर ने पुलिस को लाठी बरसाने का आदेश दे दिया। उसे आदेश मिला था कि किसी प्रकार के प्रदर्शन या नारे की अनुमति न दी जाये।

जवाहरलाल खिडकी के निकट बैठे थे। जैसे ही उन्होने देखा कि पुलिस लाठी बरसा रही है तो डिब्बे से बाहर कूद पडे और चिल्लाते हुए आगे बढे कि 'तुम्हे लाठी बरसाने का कोई अधिकार नही है। पुलिस कमिश्नर उनके पीछे लपका और उन्हे उनके डिब्बे मे लाने की चेष्टा की। जवाहरलाल ने उसका कहना नही माना और आक्रोश मे बाते करने लगे। इस बीच कार्यकारिणी समिति के अन्य सदस्य शकरराव देव भी प्लेटफार्म पर उतर पडे। चार सिपाहियो ने उनको घेर लिया और गाडी मे वापस जाने के लिए कहा। जब उन्होने जाना अस्वीकार किया तो पुलिस वाले उनको बलपूर्वक उठाकर डिब्बे मे लाये और मैने जवाहर लाल से पुकार कर कहा कि वह अन्दर आ जाए। जवाहर लाल क्रोध से भरे हुए लग रहे थे किन्तु उन्होने मेरा निवेदन स्वीकार कर लिया। पुलिस कमिश्नर मेरे पास आया और दो तीन बार उसने क्षमा याचना की। कहने लगा कि "श्रीमान, मुझे अत्यन्त खेद है, किन्तु मुझे इन बातो का आदेश दिया गया है और मैं उनके पालन के लिए विवश हू।"

मैने अपनी खिडकी से देखा कि श्रीमती नायडू और गाधी जी गाडी से उतार लिए गये है। यह बात हमे बाद मे पता चली कि आगा खा के घर मे जो आगा खा महल के नाम से विख्यात है, उन्हे नजरबद किया गया है। एक अन्य व्यक्ति भी जो बम्बई मे गिरफ्तार किया गया था गाडी से उतरा और प्लेटफार्म पर जाना चाहता था। परन्तु पुलिस ने उसे रोक दिया। फिर भी वह उस समय तक हठ करता रहा जब तक कि पुलिस ने उसको पकडकर बलपूर्वक नही रोका। मेरा विचार है कि वह गाधी जी के आदेशानुसार व्यवहार करने का प्रयत्न कर रहा था।

आप को याद होगा कि गाधी जी ने कहा था कि वर्तमान आदोलन मे लोगो को चाहिए कि वह अपने को स्वेच्छा से गिरफ्तार न कराये। बल्कि जब कडाई की जाए और बल का उपयोग किया जाए तभी वह जेल में जाने पर तत्पर हो।

जब गाधी जी उतार लिए गये तो गाडी फिर चल पडी। अब मैं समझा कि हमे अहमद नगर ले जाया जा रहा है। हम दिन के डेढ बजे स्टेशन पहुचे। कुछ पुलिस अधिकारियो और एक फौजी अफसर के अतिरिक्त प्लेटफार्म पर कोई न था। हमसे उतरने के लिए कहा गया और कारो मे बैठा दिया गया, जो हमारी प्रतीक्षा कर रही थी। कारे तुरत चल पडीं और सीधी जाकर दुर्ग के भीतरी फाटक पर रुकी। वहा एक फौजी अफसर प्रतीक्षा मे खडा था। पुलिस कमिश्नर ने एक सूची निकाल कर उसे दे दी। वह एक-एक नाम पुकारता गया और हमे दुर्ग मे प्रविष्ट कराता गया। वस्तुत इस प्रकार पुलिस कमिश्नर हमको सैनिक विभाग को सौप रहा था। अब से हम सैनिक कारावास मे आ गये।

अंतिम भाषण

परेड ग्राउड, दिल्ली

"देखना तकदीर की लज्जत कि जो उसने कहा
मैंने यह जाना कि गोया ये भी मेरे दिल मे है।"

— गालिब

अंतिम भाषण *

अध्यक्ष महोदय और मित्रो,

मै समझता हू कि यह सम्मेलन इसलिए आयोजित किया गया है कि आप यह चाहते हैं कि हिन्दुस्तान के जीवन मे उर्दू का जो वास्तविक स्थान है वो उसे दिया जाए। आप यह नही चाहते कि किसी भाषा का स्थान रिक्त किया जाए और वह उर्दू को मिल जाए। आप उर्दू के समर्थक हैं किन्तु हिन्दुस्तान की अन्य किसी भाषा के विरोधी नही हैं। जैसा कि अभी मेरे मित्र पडित सुदर लाल जी ने कहा कि यहा एक व्यक्ति भी ऐसा नही है जो हिन्दी का विरोधी हो। यही उचित भावना है, इसी भावना से समस्या के समाधान का मार्ग स्पष्ट होता है।

मुझे याद है कि ३०-४० वर्ष पहले भाषा के सबध मे यह झगडा था कि देश की भाषा क्या हो ? जो लोग उर्दू समर्थक थे, वो चाहते थे कि उर्दू देश की भाषा हो और जो लोग हिन्दी का समर्थन करते थे उनकी इच्छा थी कि हिन्दी। ये समस्या उस समय गहराई तक पहुच गई थी क्योकि दोनो भाषाए एक-दूसरे की प्रतिद्वद्वी बन कर खडी हो गई थी। उर्दू वाले कहते थे कि यदि हिन्दी को देश की भाषा स्वीकार कर लिया गया तो उर्दू समाप्त हो जाएगी और हिन्दी वाले कहते थे कि यदि उर्दू को देश की भाषा मान लिया गया तो हिन्दी का अत हो जाएगा। लोग इस प्रश्न को हर समय इसी दृष्टि से देखते थे और इसी के अभ्यस्त हो गए थे। अत जब यह प्रश्न उठता तो उसे इसी तुला मे तौला जाता। इसी परिस्थिति मे देश स्वतन्त्र हुआ और सविधान बनने का समय आया। सविधान-सभा ने पर्याप्त विचार-विनिमय के पश्चात् बहुमत से यह निर्णय किया कि "इस देश की भाषा हिन्दी होगी।"

इसके परिणामस्वरूप उर्दू की स्थिति मे एक मौलिक परिवर्तन आ गया और उर्दू की प्रतिद्वद्वी की स्थिति समाप्त हो गई। अब जबकि इस पर हमारे सविधान की मोहर लग चुकी है तो हर हिन्दुस्तानी जो सविधान के प्रति निष्ठा रखता है—का कर्त्तव्य हो जाता है कि उसे मानें और वह इसके विरुद्ध नहीं जा सकता। तब प्रश्न उठता है कि देश में उर्दू का क्या स्थान है ? अब उसका स्थान वही है जो सविधान की अन्य १४ भाषाओ का है। बहुत से लोग इसे अब भी प्रतिद्वद्वी के रूप मे देखते है क्योकि पिछले दिनो की कटुता अभी तक चली आ रही है। यद्यपि अब यह बात नही है। अब यह प्रश्न तो उठता ही नही कि पूरे देश की भाषा क्या होगी। हिन्दी

---

* अजुमन-तरक्की-ए-उर्दू हिन्द की ओर से १५-१७ फरवरी १९५८ को हिन्दुस्तान में उर्दू की स्थिति पर विचार करने के लिए एक सम्मेलन आयोजित किया था। यह सम्मेलन परेड ग्राउड पर हुआ था जिसके निकट देहली का ऐतिहासिक लाल किला स्थित है। इस सम्मेलन में मौलाना का आशा से परिपूर्ण उद्घाटन भाषण मच पर बैठे पडित जी सुन रहे थे। पडित नेहरू के अतिरिक्त इस सम्मेलन में कर्नल बशीर हुसैन जैदी, पडित सुदर लाल, मौलाना हिफ्जुर रहमान (सासद) और डॉ० ताराचद (सासद) ने भाषण दिए थे। इसी मैदान में जहा मौलाना ने उर्दू के भविष्य के सबध में आशा और विश्वास प्रकट किया था और लोगों से भाषाई आधार पर पारस्परिक शत्रुता के भावों से ऊपर उठने का निवेदन किया था। ठीक एक सप्ताह पश्चात् २२ फरवरी को वहीं उन्हें चिरनिद्रा निमग्न होना था।

को जो स्थान मिलना था वो मिल चुका और हमने इस पर सविधान की मुहर लगा दी। अब प्रत्येक हिन्दुस्तानी का कर्त्तव्य है कि इसके आगे सर झुकाए किन्तु इसके साथ ही उर्दू का जो उचित स्थान है वो भी उसे मिलना शेष है। इसका यह अधिकार उसे मिलना चाहिए। किसी भाषा को मानने का मतलब यह है कि इसे सरकार भी माने और लोग भी माने।

उर्दू एक ऐसी भाषा है जो देश मे आमतौर पर बोली जाती है। न केवल उत्तर मे बल्कि दक्षिण मे भी इसके बोलने वाले पर्याप्त सख्या मे हैं। आपको मालूम है कि हैदराबाद और तिलगाना के क्षेत्र मे उर्दू बोली जाती है। मैसूर मे लाखो आदमी उर्दू बोलते हैं। इसी तरह आन्ध्र प्रदेश और मद्रास मे विभिन्न स्थानो पर उर्दू बोली और समझी जाती है। उत्तर प्रदेश, बिहार, दिल्ली और पजाब मे तो कहने की जरूरत ही नहीं, यहा लाखो-हजारो आदमी उर्दू बोलते हैं।

मुझे विश्वास है कि जिस उद्देश्य के लिए यह सम्मेलन बुलाया गया है उसमे इसे सफलता प्राप्त होगी और अब जब प्रधानमत्री ने इसका उद्घाटन किया है तो निश्चय ही यह अपने उद्देश्य की पूर्ति मे असफल नही रहेगी।

भाग ४

पत्रावली

पत्र और तार *

महात्मा गांधी के नाम पत्र

"अल–बलाग"
मुद्रण एव प्रकाशन गृह,
४५, रिपन लेन,
कलकत्ता
तिथि–६ दिसबर, १९२१

प्रियवर महात्मा जी,

मैं इस महीने की दूसरी को यहा आया। यहा आने पर मुझे अपने सहकर्मी और **पैग़ाम** के उप-सपादक मौलवी अब्दुल रज्जाक मलीहाबादी की गिरफ्तारी का पता चला। मेरी अनुपस्थिति मे पुलिस ने तलाशी भी ली थी और उन सारी पाडुलिपियो तथा महत्त्वपूर्ण ज्ञापनो को उठा ले गई थी जिन्हे मैंने तैयार किया था। यह अत्यन्त दुखद घटना होगी यदि मैं इनसे वचित कर दिया गया। कलकत्ते मे जो दमन हो रहा है वह उससे कही अधिक है जिसके सबध मे मैंने बबई मे सुना था। सरकार आदोलन को दबाने और जडमूल से उसका अत करने पर तुली हुई है। आदोलन को दबाने के लिए प्रातीय सरकार द्वारा उठाये गये प्रत्येक कदम का पूर्ण समर्थन करने की घोषणा वायसराय ने भी की है। परन्तु जनता शात है और मुझे विश्वास है कि कोई भी हानिकारक कार्य नही होगा।

काग्रेस और खिलाफत कमेटी दोनो ने मिस्टर दास को अपना डिक्टेटर नियुक्त किया है और उन्हे पूर्ण अधिकार दे दिए हैं। खिलाफत कमेटी ने ऐसा इस अनुमान के अतर्गत किया है कि मै यहा समय पर नही लौट पाऊगा। इन व्यवस्थाओ मे अब हस्तक्षेप को मै बुद्धिमत्ता नही समझता क्योकि इस अवसर पर किसी भी प्रकार का परिवर्तन लक्ष्य के लिए हानिकारक होगा। अब 'सविनय अवज्ञा' का कार्यक्रम तैयार करने का दायित्व मिस्टर दास का है, जिसके लिए कलकत्ता पूर्णतया तत्पर लगता है। लगता यह है कि होने वाली काग्रेस की समाप्ति के पूर्व मिस्टर दास इस प्रकार के किसी कार्यक्रम के पक्ष मे नही है और इस तरह समय बिता रहे है। काग्रेस कमेटी की ओर से यहा कोई वास्तविक कार्यक्रम नही चल रहा है। केन्द्रीय काग्रेस समिति के

पास लगभग कोई भी स्वयसेवक नही है। अब तक सारा कार्यक्रम खिलाफत के स्वयसेवक चला रहे हैं, जिनकी सख्या चार हजार है। इन स्वयसेवको की सेवाए अब मिस्टर दास के अधीन कर दी गई हैं और जैसा वे उचित समझे, वह इनका उपयोग कर सकते है। मैने बिना किसी हस्तक्षेप के अपनी राय दे दी है।

मैने जब यहा चौबीस को सफल हडताल सगठित करनी चाही और चाहा कि शाति और व्यवस्था बनी रहे तो सरकार की इच्छा इसके विपरीत हुई। इस सबध मे मैने मुस्लिम समुदाय के बीच कार्य किया और उससे मै सन्तुष्ट हू।

मैं यह जानने का इच्छुक हू कि क्या मुझे काग्रेस के अधिवेशन तक कलकत्ते मे रुका रहना चाहिए। मै यहा केन्द्रीय खिलाफत कमेटी का पर्याप्त मात्रा मे कार्य पीछे छोड कर आया था।

तार द्वारा उत्तर दीजिए।

सादर मै हू,

आपका प्यारा भाई,

ए० के० आजाद

महात्मा गांधी के नाम तार

अहमदाबाद

६ ५ २६

कृपया हिन्दू-मुस्लिम प्रश्न पर विचार करने के लिए जुलाई अथवा अगस्त मे काग्रेस का विशेष इजलास बुलाए जाने के लिए प्रयत्न कीजिए। ये अतिम अवसर है, यदि इसकी अवहेलना की गई तो दीर्घकाल के लिए समस्त प्रयास व्यर्थ हो जाएगे और परिणामत राष्ट्रीयता और देशभक्ति के स्थान पर सम्पूर्ण देश साप्रदायिक एव धार्मिक दगो मे लिप्त हो जाएगा।

अबुल कलाम

मौलाना के नाम गांधी जी का पत्र

आश्रम
साबरमती
८ ५ २६

प्रिय मौलाना साहब,

आपका तार मिला। यह अखिल भारतीय काग्रेस समिति के इजलास के बाद प्राप्त हुआ। आप क्या सोचते है कि काग्रेस का विशेष इजलास बुलाने से किसी उद्देश्य की पूर्ति हो सकती है? यह बात उपयोगी तभी हो सकती है जब कोई नीति अथवा कार्यक्रम हो जिसे इस इजलास की स्वीकृति की आवश्यकता हो। परन्तु दुर्भाग्यवश न तो हमारी कोई नीति है और न ही कोई कार्यक्रम। इसके विपरीत बडे-बडे महानुभाव एक-दूसरे के प्रति अविश्वास रखते हैं। और यदि कही अविश्वास नही है तो भी तथ्यो अथवा मत के सबध मे सहमति भी नही है। ऐसी परिस्थितियो मे काग्रेस का इजलास केवल वर्तमान निराशा को और बढाएगी। मुझे ऐसा लगता है कि समय ही इस कठिनाई का समाधान कर सकेगा जिसने हमे व्याकुल कर रखा है। मेरी इच्छा है कि कम से कम प्रत्येक दगे के कारणो को जानने और उसके परिणामो को रेखाकित करने का उपाय हम ढूढ सके। परन्तु लगता ऐसा है कि इस अत्यत सरल कार्य के लिए भी हम सक्षम नही रह गए है।

आपका
एम०के० गाधी

महात्मा गांधी के नाम तार

कलकत्ता

अक्टूबर १९, १९३२

सम्मेलन के मुस्लिम नेतागण एकमत, यदि दूसरी मॉगे मान ली जाए तो प्रथम मतदान पर बल नहीं देगे। वर्तमान स्थिति मे इससे अच्छा समाधान सभव नही। आप की अनुपस्थिति सफलता मे बाधक। सदेश द्वारा आशीर्वाद दीजिए। सरकार पर इतना विश्वास कीजिए कि उसे आपत्ति नही होगी।

अबुल कलाम

मौलाना अबुल कलाम आज़ाद के नाम तार

कलकत्ता
२० अक्तूबर १९३२

तार के लिए धन्यवाद। इस समय जब मैं इस एकान्त स्थान पर हू, केवल यही कह सकता हू कि ईश्वर हमारी सहायता करे कि हम हिन्दुओ, मुसलमानो और सिक्खो के बीच वास्तविक एकता उत्पन्न करने मे सफल हो, यह पूरे भारत की एकता का लक्षण है जिसके लिए आप, मैं और हमारे काग्रेसी साथी दीर्घकाल से इच्छुक हैं और प्रार्थना कर रहे हैं।

मै सही स्थिति और वास्तविक घटनाओ से अनभिज्ञ हू। उचित और अनुचित का निर्णय नही कर सकता हू। इतना कह सकता हू कि जहा तक मेरा सबध है, सम्बद्ध पक्ष जिस समाधान को स्वीकार करेगी, वह मुझे स्वीकार होगा। मेरी शुभकामनाए आपके और उन सब मित्रो के साथ है जो लबे समय से व्याकुलता के शिकार इस देश मे खोई हुई शाति को प्राप्त करने मे सलग्न हैं। इन भावो की अभिव्यक्ति मे मेरे साथ सरदार पटेल भी सम्मिलित है।

आपका
एम०के० गाधी

मौलाना आज़ाद के नाम पत्र

बारदौली
३० दिसम्बर, १९४१

प्यारे मौलाना साहब,

कार्यकारिणी समिति के विचार-विनिमय से मुझे यह अनुभव हुआ कि मैने बबई प्रस्ताव की व्याख्या मे भयकर भूल की है। मैने इसका यह अर्थ समझा कि काग्रेस ने वर्तमान युद्ध या अन्य युद्धो मे अहिसा के सिद्धातो के आधार पर भाग लेने से इनकार कर दिया है। मै आश्चर्यचकित था कि सारे सदस्य मेरी इस व्याख्या का विरोध क्यो कर रहे हैं और इस बात पर उनका आग्रह क्यो है कि युद्ध का विरोध अहिसा के आधार पर नही होना चाहिए। बबई प्रस्ताव को पढने के पश्चात् मुझे ज्ञात हुआ कि वह बिल्कुल ठीक कह रहे थे। मैने उसका जो अर्थ समझा वह इसका अभिप्राय था ही नही। इस भूल को जानने के पश्चात् मेरे लिए इस सबध मे काग्रेस का मार्गदर्शन करना सभव नही है जिसमे युद्ध को रोकने के प्रयास इस प्रकार किए जाए जिनमे अहिसा आवश्यक न हो। मै यह नही कर सकता। उदाहरणतया मै अग्रेज के प्रति शत्रुता के आधार पर सामरिक गतिविधियो मे हिस्सा लेने वालो मे स्वय को सम्मिलित करना नही चाहता।

आपका
एम०के० गाधी

जवाहरलाल नेहरू के नाम पत्र

२७ मार्च, १९४०

प्रिय जवाहरलाल,

जब १५ मार्च के प्रात काल (रेल मे) तुमने मेरे अभिभाषण का अग्रेजी अनुवाद मुझे दिया तो मैने ऐसे ही उस पर एक सरसरी निगाह डाली थी। इसके पश्चात् अब तक मुझे इसे अच्छी तरह देखने का अवसर नही मिला था। अब कुछ कम व्यस्त हू। मैने इसे अब अच्छी तरह देखा और इसे देख कर अनायास मेरा मन चाहा कि अपने स्वभाव के विशिष्ट सन्तुलन को तिलाजलि देकर तुम्हारी बौद्धिकता और असाधारण विद्वत्ता को अपना हार्दिक अभिनन्दन प्रस्तुत करू। अग्रेजी भाषा की तुम्हारी योग्यता और उस पर जो तुम्हे अधिकार प्राप्त है, वह इससे कही अधिक है जितना अब तक मैं समझता था। मुझे यह कहने मे कोई सकोच नही है कि हमारे युग के अन्य उच्च कोटि के लेखको को इस कार्य को सपन्न करने के लिए पर्याप्त समय की आवश्यकता होती, जबकि तुमने इसे बिना किसी विशेष प्रयास के कुछ घटो मे ही पूर्ण कर दिया।

अनुवाद कार्य कुछ दृष्टियो से रचनात्मक कार्य से अधिक कठिन है क्योकि इसमे रचनाकार की रचना-शैली के साथ लेखन के साहित्यिक गुणो को भी शेष रखना होता है और यह कार्य वही व्यक्ति कर सकता है जो दोनो भाषाओ पर समानरूपेण अधिकार रखता हो। तुम्हारे अनुवाद मे विशेष रूप से मैंने यह बात महसूस की है कि तुमने मेरी रचना की विशेषताओ और उर्दू मे मेरी साहित्यिक शैली को इस सुदरता से सुरक्षित रखा है कि आश्चर्य नही यदि पाठक यह समझे कि वस्तुत यह अभिभाषण उर्दू मे नही बल्कि अग्रेजी मे ही लिखा गया है। इसी प्रकार तुम्हारी रचनात्मक कल्पना की पकड सराहनीय है। तुमने विवरणो को भी अपनी दृष्टि मे रखा जिसके कारण लेख मे प्रवाह और प्राजलता सुरक्षित रही। तुम पूर्ण रूप से मेरी मानसिकता को समझ सके, जिमका सबध मेरी लेखनशैली से, वाक्य-रचना और शब्द-विन्यास से है। तुमने जब यह कार्य आरम्भ किया तो वस्तुत तुम्हारे मस्तिष्क मे इस विषय का सपूर्ण चित्र था। यह कार्य निश्चय ही अत्यत कठिन था, विशेष रूप से इसलिए कि मेरी लेखनशैली से भी प्रत्यक्षत कोई सहायता नहीं मिली।

कुछ स्थानो पर तुमने मेरी उर्दू रचना को भी थोडा-सा सशोधित कर दिया है, कही उसे विस्तृत कर दिया है, कही उसे सक्षिप्त कर दिया है। यह अग्रेजी शैली के लिए समीचीन था। मैने इन सब स्थानो को ध्यानपूर्वक देखा जहा-तहा तुमने सशोधन किये है और यह देखकर प्रसन्नता हुई कि तुमने कुछ स्थानो पर मेरी रचना को सुदर बना दिया है किन्तु मेरी शैली को कहीं नही बदला। उदाहरणत वायसराय के घोषणापत्र पर मत अभिव्यक्त करते हुए मैने लिखा था

''पृष्ठ के पश्चात् पृष्ठ पढ़ जाने पर कठिनाई से इतना ही बता पाता है '', यहा 'कठिनाई से' मेरी लाक्षणिक शैली मे मुख्य शब्द है, तुमने मेरे लाक्षणिक प्रयोग की पृष्ठभूमि को सुरक्षित रखा है और इसका प्रयोग इस प्रकार किया है

मैं 'कठिनाई' के द्वारा जो कहना चाहता था तुमने उसमे वृद्धि करके उस बात पर और अधिक बल दे दिया है। मैं इस बात को स्वीकार करता हू कि मेरे लेखन की तुलना मे तुम्हारा अनुवाद अधिक समीचीन और उचित है। तुमने जिस प्रकार मेरी रचना को सुदर रूप प्रदान किया है, यह तो उसका एक उदाहरण मात्र है। ऐसे बहुत से उदाहरण प्रस्तुत किए जा सकते हैं।

मैं सभवत इलाहाबाद २० को पहुचूगा। मुझे आशा है कि तुम उस समय तक वहा रुकोगे।

तुम्हारा
ए० के० आजाद

पडित जवाहरलाल नेहरू
इलाहाबाद।

जवाहरलाल नेहरू के नाम पत्र

प्रिय जवाहरलाल,

मत्रिमडल मे जब विश्वविद्यालय अनुदान आयोग बिल के प्रारूप पर विचार किया गया था तो आपने कहा था कि ससद मे इसके प्रस्तुत करने के पूर्व इसे विश्वविद्यालयो को उनके विचार जानने के लिए भेजा जाना चाहिए।

इस पर विचार करने के पश्चात् मै महसूस करता हू कि बिल के प्रारूप को पुन विश्वविद्यालयो को भेजना अनावश्यक है। हम यदि ऐसा करते है तो परिणाम यह होगा कि जो बात निश्चित समझ ली गई थी वह पुन अनावश्यक वाद-विवाद का विषय बन जाएगी।

आप जानते ही हैं कि बिल पर विचार-विनिमय के लिए मैने समस्त उप-कुलपतियो को बुलाया था, उन्होने दो दिन के विचार-विनिमय के पश्चात् तीन प्रस्ताव पारित किये थे। बिल का प्रारूप उन्ही प्रस्तावो के अनुकूल तैयार किया गया है। उप-कुलपतियो को आशा भी नही है कि उनसे परामर्श किया जायेगा। वह जानते हैं कि विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के नाम से बिल पारित होगा।

इस सबध मे एक मौलिक प्रश्न है कि जिस पर हमे स्वय विचार करना है। राज्यो के विश्वविद्यालयो की शैक्षणिक और प्रशासनिक दोनो स्थितिया अत्यन्त दयनीय है। उनमे महत्त्वपूर्ण परिवर्तन तुरन्त किये जाने चाहिए। यदि प्रभावशाली ढग से ऐसा नही किया जाता तो राष्ट्रीय जीवन पर इसके हानिकारक प्रभाव प्रतिदिन बढते जाएगे। सविधान के अनुसार विश्वविद्यालयीय स्तर की शिक्षा का दायित्व केन्द्रीय सरकार पर है। केन्द्रीय सरकार इस दायित्व की पूर्ति केवल तभी कर सकती है जब इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए स्वतन्त्र सस्था स्थापित हो। यदि आप महसूस करते है कि सरकार को आगे कदम केवल तब उठाना चाहिए जब प्रत्येक उप-कुलपति उससे सहमत हो तो मुझे कहने दीजिए कि इस प्रकार की सर्वसम्मति सभव नही है क्योकि व्यक्तिगत रूप से कई उपकुलपति और कार्यकारिणी समिति के सदस्य विश्वविद्यालयो की समस्याओ के लिए स्वय जिम्मेदार है। वह किसी सुधार पर कभी सहमत नही होगे। ऐसी परिस्थितियो मे 'बिल' को पुन विश्वविद्यालयो मे उनका मत जानने के लिए भेजना व्यर्थ है।

यदि हम ऐसा करते है तो हमे विश्वविद्यालयी स्तर की शिक्षा सबधी सुधार गुडबाई कहना होगा और बिल को सदा के लिए भूल जाना होगा।

हस्ताक्षर नही हैं।

اس سلسلے میں ایک بنیادی سوال یہ ہے جس پر ہمیں غور کرنا
چاہیے۔ یونیورسٹیوں کی حالت اکیڈمک اور ایڈمنسٹریشن دونوں
کے لحاظ سے سخت خراب ہو رہی ہے۔ یونیورسٹی ایجوکیشن میں
اہم تبدیلیاں فوراً ہونی چاہییں اور اگر موثر طریقہ پر نہیں
ہوئیں تو نیشنل لائف کو روز بروز سخت نقصانات سے دوچار
ہونا پڑتا ہے۔ کانسٹی ٹیوشن میں یونیورسٹی ایجوکیشن کی دیکھ بھال
کا اختیار سنٹرل گورنمنٹ کو دیا گیا ہے، اور سنٹرل گورنمنٹ
جبھی اپنا فرض انجام دے سکتی ہے کہ ایک انڈیپنڈنٹ باڈی اس
غرض سے قائم ہو۔ اب اگر آپ محسوس کرتے ہیں کہ گورنمنٹ
کو کوئی قدم اس بارے میں جبھی اٹھانا چاہیے جب یونیورسٹیوں
کے موجودہ وائس چانسلروں میں سے ایک ایک آدمی اس سے
اتفاق کرے، تو میں یہ کہنا چاہتا ہوں کہ اس طرح کا اتفاق کبھی
نہیں ہو سکتا کیونکہ وائس چانسلروں اور اکزیکٹو باڈیز کے

ممبروں میں کافی تعداد ایسے لوگوں کی ہے جو یونیورسٹیوں
کی خرابیوں کے لیے ذمہ دار ہیں، اور کبھی اس سے اتفاق نہیں کر سکتے
کہ کوئی دروازہ ریفارم کا کھلے۔ اس صورت میں بل بنانا
اور ایسے بار بار رائے کے لیے یونیورسٹیوں کو بھیجنا بیکار ہے
ہیں۔ یونیورسٹی ایجوکیشن ریفارم کے مقصد کو گڈ بائی کہنا چاہیے
اور بل کو سیشن کے لیے ڈراپ کر دینا چاہیے۔

(मौलाना का अपने हाथों से लिखा प्रारूप जिस पर तिथि अंकित नहीं है)

मौलाना अबुल कलाम आज़ाद के नाम पत्र

मौलाना अबुल कलाम आजाद
महल, नैनीताल

वर्धा, १६ मई, १९४०

प्रिय मौलाना,

आपका तार मिला। कार्यकारिणी समिति की बैठक की तिथि १५ जून को आपने स्वीकार कर ली। आभारी हू। इस तिथि मे सुविधा यह है कि मै सीमाप्रान्तो के दौरे पर जा सकूगा और २१ जून को बम्बई वापस आ जाऊगा। यह बात बिल्कुल ठीक है कि कार्यकारिणी समिति की बैठक किसी व्यक्ति की सुविधा के लिए स्थगित नही करनी चाहिए, इसको इन सब बातो का विचार किए बिना निर्धारित समय पर होना चाहिए। विवशता की बात और है। मेरा विचार है और महात्मा गाधी भी इससे सहमत है कि अभी हमे कुछ प्रतीक्षा करनी चाहिए कि वर्तमान स्थिति क्या रूप धारण करती है, स्थिति परिवर्तन की गति अत्यन्त तीव्र है। एक महीने मे बहुत कुछ परिवर्तन हो जाते है, इस दृष्टि से भी यह बात उचित है कि कार्यकारिणी समिति की बैठक शीघ्र न हो।

मैं यहा आज ही आया हू और महात्मा जी से बातचीत हुई है। मुझे यह जानकर अत्यन्त प्रसन्नता हुई है कि अतर्राष्ट्रीय समस्याओ मे जो परिवर्तन हुए हैं, उन पर उनकी प्रतिक्रिया भी न्यूनाधिक वही है जो मेरी है। शायद मेरा वह वक्तव्य आपने पढा हो जो पाच छ दिन पूर्व मैने अखबारो को दिया था, इसकी प्रतिलिपि भेज रहा हू। राजेन्द्र बाबू का उस दिन का वक्तव्य पढ कर मुझे दु ख हुआ। अब मुझे रेडियो से ज्ञात हुआ है कि आसिफ अली ने भी इसी प्रकार की कोई अपील राजनैतिक पार्टियो से की है कि वह एक साथ मिलकर रक्षा-उपायो मे अग्रेजो की सहायता करे। मेरे विचार मे आसिफ अली ने यह बहुत अनुचित बात की है। कार्यकारिणी के सदस्य होने के कारण उनके वक्तव्य का यह अर्थ लिया जाएगा कि कार्यका।रेणी समिति इस नीति को ग्रहण करने के लिए तत्पर है जबकि, जहा तक मुझे ज्ञात है, ऐसा कभी नही होगा।

राजेन्द्र बाबू का एक पत्र १४ मई का लिखा हुआ आया, उसकी एक प्रति आपको भेजी गई। गाधी जी के मतानुसार इसका जवाब मैने लिखा है। इसकी प्रतिलिपि भी आपको भेज रहा हू। इसमे आप कुछ अनुमान लगा सकेगे कि मै क्या सोच रहा हू। मुझे आशा है कि उत्तर प्रदेश कांग्रेस समिति अपनी दिनाक १८ वाली बैठक मे इसे दृष्टि मे रखते हुए एक प्रस्ताव पारित करे। मेरी बुद्धि इस सदर्भ मे बिल्कुल निर्भ्रम है कि हमारी नीति मे कोई परिवर्तन नहीं होना चाहिए। हमे पहले की तरह अपनी सगठनात्मक और दूसरी तैयारियो को जारी रखना चाहिए। सत्याग्रह के परीक्षण और उसके लिए नये नामो के पजीकरण का कार्य चलता रहना चाहिए। **मेरा** विचार है कि हमे सत्याग्रह तुरन्त प्रारम्भ नहीं करना चाहिए चाहे हम इसके लिए तैयार ही क्यों न हों। परन्तु केन्द्रीय सत्ता के दुर्बल होने की स्थिति मे जो भी स्थितिया उत्पन्न हो, हमे उनका सामना करने के लिए तत्पर रहना चाहिए।

हिन्दुस्तान के रक्षा-प्रयासो से सहयोग की बात हास्यास्पद है। रक्षा-प्रयास किसके विरूद्ध ? अग्रेजी राज्य की सहायतार्थ ? मेरे विचार मे यह अनुचित और अपमानजनक है। इस बात के अतिरिक्त हम इस समय इस स्थिति मे नहीं है कि इस सबध मे कोई प्रभावशाली कार्य कर सके।

हिन्दुस्तान की रक्षा भी हम, सत्याग्रह आदोलन को आगे बढा कर, उसके अतर्गत कर सकते है। मुझे तो विदेशी आक्रमण का कोई भय नही है। मुझे तो आतरिक उपद्रव की आशका है और इसका भी हमारे पास इसके अतिरिक्त कोई उपाय नही है कि हम स्वय को सत्याग्रह के द्वारा सगठित करे।

मेरे मस्तिष्क मे इस सबध मे कोई भ्रम नही है कि हमने जो नीति अपनाई है, उससे एक इच भी हमे नही हटना चाहिए। अधिक से अधिक क्या होगा कि नई अग्रेज सरकार या वायसराय जो जाल बिछाएगा, हम उसमे नही फसेगे। मेरे विचार मे वह कुछ न कुछ करने पर विवश होगे। गाधी जी और अन्य व्यक्तियो को आमत्रित करेगे या फिर कुछ अस्पष्ट वक्तव्य देगे। उस सब बातो का हमारी ओर से स्पष्ट उत्तर होना चाहिए कि हम किसी प्रकार साम्राज्यवाद की रक्षा मे सहयोग करने को उद्यत नही है। हिन्दोस्तान की स्वतन्त्रता स्वीकार की जानी चाहिए, अग्रेजो के उपनिवेश के रूप मे या अन्य किसी प्रकार से नही। भारतीय जनता अपना सविधान भी सविधान सभा के द्वारा बनाएगी और इस कार्य के लिए लोगो का कोई छोटा-सा दल स्वीकृत नही होगा। हम केवल इसी आधार पर बात करने को तत्पर है और यदि इसी आधार पर वार्तालाप नही हो सकती तो बेकार की बातो से क्या लाभ। अग्रेज राज्य का अब अन्त होने को है, निकट भविष्य मे यह एक पुरातनकालीन कहानी बनने वाला है। अब केवल यह मूर्खता और दर्प ही तो है कि इसके पश्चात् भी अग्रेज सरकार हिन्दोस्तान मे तानाशाही दृष्टि अपनाए हुए है, इसके आचरण मे तनिक भी परिवर्तन नही है। अग्रेजी ससद के सदस्यो का व्यवहार हमारे साथ एक अभिभावक और एक सत्ताधारी का है तथा वह जिस ढग से हमारे साथ व्यवहार कर रहे है, वह हमारे लिए असहनीय है। विनाश के ऐसे लक्षण भी उनकी आखे नही खोल सकते और उनकी दृष्टि वास्तविकता का सामना नही कर सकती तो हम फिर ऐसे नेत्रहीन लोगो का साथ क्यो दे।

यह कहना कि नाजीवाद अग्रेजी साम्राज्यवाद से अधिक बुरा है इसलिए हम अग्रेजी राज्य को प्राथमिकता देते है तो यह हमारा अत्यधिक अपमान है। यदि हम इतने विवश और निस्सहाय है कि अपनी रक्षा स्वय नही कर सकते तो उचित यही है कि शीघ्रातिशीघ्र हमारा अस्तित्व समाप्त हो जाए। हम स्थितियो को परिवर्तित नही कर सकते किन्तु हम हर प्रकार की राजसत्ता और आधिपत्य के विरुद्ध लडेगे।

गाधी जी ने मुझे आपका वह पत्र दिखाया जो आपने उन्हे डाक्टर गोपीचन्द और सरदार सम्पूर्ण सिह के पजाब विधानसभा मे पार्टी के नेता नियुक्त करने के सबध मे लिखा था। मै आप से पूर्णतया सहमत हू कि यह अनुचित था किन्तु मेरे मस्तिष्क मे यही है कि अब क्या करना चाहिए। मै शीघ्र ही दो दिन के लिए सत्याग्रह शिविर मे सम्मिलित होने के लिए लाहौर जा रहा हू। इफ्तिखार ने मुझे बुलाया है। यदि आप मुझे कुछ निर्देश देना चाहे तो उसे तुरन्त भेज दीजिए। गाधी जी के पत्र के उत्तर मे मैने जो पत्र लिखा है उसकी एक प्रति भेज रहा हू। इसका भी सबध काग्रेस और अकालियो से है। मेरा कार्यक्रम यह है, किन्तु बिल्कुल ठीक तिथियो का निर्धारण अभी तक नही हुआ है।

लखनऊ मे प्रातीय काग्रेस समिति की बैठक के लिए मई १८, १९, २०।
इलाहाबाद मे प्रातीय काग्रेस समिति की बैठक के लिए मई २१, २२, २३।
लाहौर मे प्रातीय काग्रेस समिति की बैठक के लिए मई २४, २५।

पेशावर आदि में प्रांतीय कांग्रेस समिति की बैठक के लिए मई २६, २७, २८, २९, ३०।

श्रीनगर और कश्मीर प्रांतीय कांग्रेस समिति की बैठक के लिए मई ३१ से एक सप्ताह तक।

आपका शुभचिन्तक,
जवाहरलाल

मौलाना अबुल कलाम आजाद के नाम पत्र

इलाहाबाद
५ मार्च, १९४२

प्रिय मौलाना साहब,

मुझे आपका आल इडिया काग्रेस कमेटी के कार्यालय की महिला शाखा के सबध मे ३ मार्च का लिखा हुआ पत्र प्राप्त हुआ। मैं आपको तार नही भेज रहा हू क्योकि थोडे-से शब्दो मे अधिक बात कहना कठिन है।

सलाहकार समिति बनाने का आपका विचार उचित है। परन्तु इस समिति मे सपूर्ण भारत से लोग लिए जायेगे, उसकी बहुत ही कम बैठके हो पाएगी। फिर भी मूल समस्याओ पर विचार करने के लिए कभी भी इसकी बैठके हो सकती थी। जहा तक इस प्रकार की समिति की नियुक्ति का प्रश्न है, वह बहुत कुछ इस बात पर निर्भर है कि इसके गठन के सबध मे हमारा दृष्टिकोण क्या होगा। इसमे न्यूनाधिक प्रातीय प्रतिनिधि होगे या फिर कम से कम हिन्दुस्तान के बडे हिस्सो के प्रतिनिधियो को इसमे सम्मिलित किया जाएगा। यद्यपि यह बात सैद्धातिक रूप से उचित प्रतीत होती है किन्तु समस्या वही है कि इन लोगो का पारस्परिक मिलन कम होगा। इस समस्या के समाधान का एक उपाय सभव है, इसमे ऐसे क्षेत्रो के प्रतिनिधि हो जो एक सलाहकार समिति मे लिए जाएँ और इन प्रतिनिधियो की नियुक्ति के लिए स्थानीय या प्रातीय लोगो से परामर्श किया जा सकता है, यद्यपि सदैव ही ऐसा करने की आवश्यकता नही है। आपकी प्रस्तावित समिति से सभव है कि सुधार हो और यह श्रीमती कृपलानी के लिए सहायक सिद्ध हो। आपने जो नाम प्रस्तावित किए है, ठीक है। कुछ और नाम भी प्रस्तुत किए जा सकते है किन्तु इनमे उचित नामो का चयन करना कठिन होगा। क्या इस प्रकार की समिति मे सरोजनी नायडू को सम्मिलित करना उचित नही होगा? कार्यकारिणी समिति के सदस्य के रूप मे निश्चय ही उन्हे सलाहकार समिति म सम्मिलित होने की आवश्यकता नही है, जब भी आवश्यकता हो उनको सलाहकार समिति मे सम्मिलित किया जा सकता है।

अखिल भारतीय काग्रेस समिति की महिला शाखा के सबध मे मेरा विचार यह है कि उसे हिन्दोस्तान भर मे हो रहे महिला सबधी कार्यक्रमो का लेखा-जोखा एकत्रित करना चाहिए और उसे हिन्दोस्तान के समस्त महिला सगठनो से सपर्क रखना चाहिए तथा विशेष रूप से काग्रेसी महिलाओ के कार्यो का लेखा-जोखा रखना चाहिए, जो उन्होने काग्रेस के तत्वावधान मे किये है और उसे ऐसी योजनाए प्रस्तुत करनी चाहिए जो उनके विभिन्न कार्यो मे सपर्क स्थापित करे। प्रातीय काग्रेस कमेटी की ओर से इस सबध मे महिला शाखा को निर्देश दिया जाए कि वह स्वत न कोई काम कर सकती है, न कोई सगठन बना सकती है। मै कहूगा कि वर्तमान सकटपूर्ण स्थिति मे दीर्घकालिक कार्यक्रमो पर अधिक ध्यान नही देना चाहिए बल्कि तत्कालिक समस्याओ पर अधिक ध्यान केन्द्रित करने की आवश्यकता है। काग्रेस ने कार्यक्रम की रूपरेखा निर्धारित की थी, उसके अन्तर्गत महिलाए स्वय अपनी सुरक्षा के हेतु अपनी योग्यता के अनुकूल स्थानीय कार्यक्रमो को स्वत कार्यान्वित करे। यह बात अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है कि ऐसे प्रयास किए जाए कि महिलाए इसी दिशा मे सोचने लगे, क्योकि जनता की नैतिक स्थिति बहुत कुछ इस बात पर निर्भर होती है कि महिलाए क्या सोचती है और क्या करती हैं। यदि उनको अपने क्षेत्रो मे काम

का अवसर दिया जाएगा तो उनमे विवशता और दुर्बलता का भाव कम होगा और वह यह अनुभव करेगी कि वह स्वय इन महत्त्वपूर्ण सहकारी कार्यो का एक अग है। कुछ क्षेत्रो मे सामाजिक समस्या यह है कि महिलाओ के साथ छेडखानी की जाती है। यह बाते नैतिक पतन के कारण बढती है, क्योकि मूलरूप से यह एक मनोवैज्ञानिक समस्या है। मै अपने थोडे से अनुभव के आधार पर यह कह सकता हू कि महिलाए यह जानने के लिए विचलित है कि वर्तमान स्थिति मे वह क्या करे। यदि थोडा-सा भी उनका मार्गदर्शन किया जाए तो इसके अच्छे परिणाम निकल सकते है। मै इस बात के नितान्त विरुद्ध हू कि महिलाओ को विवश और निस्सहाय समझा जाए, जो स्वय अपनी देखभाल नही कर सकती है, इनको सकट के स्थानो से भाग जाना चाहिए, किसी भी युग के लिए यह अत्यन्त अनुचित नीति है। इससे वह और अधिक विवश और दुर्बल हो जाएगी जितनी कि वह है। वर्तमान युग मे तो यह बात नितान्त निरर्थक है क्योकि सकट के स्थानो को आप सीमाबद्ध नही कर सकते, सकट तो हर स्थान पर है, यहा तक कि घर की चारदीवारी मे भी सकट उत्पन्न हो सकता है। इसलिए इस समस्या के समाधान का एकमात्र उपाय यही है कि महिलाओ को महसूस कराया जाए कि समस्या यह है और वह इनका सामना कर सकती है, मानसिक दृष्टि से इन्हे इसके लिए और इसी प्रकार की अन्य समस्याओ के लिए तत्पर रहना चाहिए। मेरी बहन विजय लक्ष्मी पडित आज देहली जा रही है। वह इस समस्या पर अरुणा आसिफ अली से विचार-विनिमय करेगी। मै इस पत्र की प्रतिलिपि श्रीमती कृपलानी को भी भेज रहा हू।

आपको ज्ञात ही है कि मेरी बहन इस वर्ष अखिल भारतीय महिला काफ्रेस की अध्यक्षा है। वह और अन्य काग्रेसी महिलाए इस महिला काफ्रेस के तत्त्वावधान मे काम कर रही है। कुछ प्रातो और विशेष रूप से गुजरात मे काग्रेसी महिलाए महिला काफ्रेस चला रही है। यह अच्छा होगा कि हम यथासभव हर प्रकार का सहयोग महिला काफ्रेस को उन कार्यो मे दे जो हमारे विचार मे सपन्न होने चाहिए। हो सकता है कि यह बात हिन्दुस्तान के अन्य भागो मे सभव न हो। कहने का तात्पर्य यह है कि एक ही प्रकार के सगठन बनाने मे हमारी शक्ति और हमारा श्रम व्यर्थ न होना चाहिए।

आपका
जवाहरलाल नेहरू

विविधिका

विशिष्ट पत्र, ज्ञापन और वक्तव्य

जलियावाला बाग की पुण्यस्मृति के अवसर पर मौलाना द्वारा लिखित सदेश और उसका हिन्दी रुपान्तर। इन सकलनो से मौलाना के व्यक्तित्व के विचित्र और रोचक तथ्य सामने आते हैं। इन्हे राष्ट्रीय सग्रहालय, राष्ट्रीय गाधी सग्रहालय एव पुस्तकालय, जवाहरलाल नेहरू सग्रहालय एव पुस्तकालय तथा भारतीय सास्कृतिक परिषद् सबध परिषद् के पुस्तकालय मे सचित अप्रकाशित पाण्डुलिपियो से सकलित किया गया है।

जलिया वाला बाग की पुण्यस्मृति के अवसर पर संदेश
१३ अप्रैल, १९३९ *

यही जमीन है जहा मौत के सुकून (मौनता) ने हमारी नई कौमी जद्दोजहद (राष्ट्रीय आदोलन) का हगामा बेदार (जाग्रत) किया था। हिन्दुओ, मुसलमानो, सिखो का खून एक साथ और एक वक्त (समय) बहा, और इसी मौत के खून से हमने अपने लिए जिदगी का खून बहम (उपलब्ध) पहुँचाया। बीस बरस गुजर गए। हर साल हम १३ अप्रैल को इस वाकेआ (घटना) की याद मे जमा होते है और आज भी इस तारीख मे हर हिन्दू, मुसलमान और सिख से दरख्वास्त (निवेदन) करूगा कि इस वाकेआ की याद अपने दिल के एक-एक रेशे के अदर ताजा करे और फिर अपने एतेकाद (निष्ठा) और कर्म का एहतेसाब (लेखा-जोखा) करके देखे कि इस वाकेआ ने जिदगी और हरकत (गति) का जो प्याम हमे दिया था, वह हमारे दिलोदिमाग पर सब्त (अकित) है या महव (लुप्त) हो चुका है।

*मौलाना का अपने हाथों से लिखित।

विद्यार्थियों को संदेश *

The children of today are
the citizens of the future. They
must therefore prepare themselves
so that they can perform their
ordinary tasks with honour
and dignity to themselves
and glory to their country
and their nation

आज के बच्चे कल के नागरिक है। इसलिए उन्हे स्वय को इस प्रकार से तत्पर करना चाहिए कि वो दुष्कर कर्त्तव्यो का निर्वाह इस तरह करे जिससे उन्हे सम्मान और गरिमा प्राप्त हो और उनके देश तथा राष्ट्र का गौरव बढे।

उर्दू से हिन्दी में अनुवाद

तुल्लबा (विद्यार्थी) हिन्दुस्तान की कौमी जद्दोजहेद (राष्ट्रीय आदोलन) मे सबसे ज्यादा अहम् और जरूरी कन्ट्रीब्यूशन जो कर सकते है, वो है कि कम्यूनल इतिहाद (एकता) का नमूना बने, और इस नमूने से वक्त की तमाम बाहेमी बेएंतेमादियो (पारस्परिक अविश्वास) को नेशन के लिए फतह करे।

मुझे उम्मीद है कि आपकी यूनियन इस बारे मे पूरी कोशिश करेगी।

---

* १३ और १४ अप्रैल १९४० को राजकोट म आयोजित काठियावाड और कच्छ प्रान्त के विद्यार्थियो के सम्मेलन के नाम सदेश। अग्रेजी मे जवाहरलाल नेहरू द्वारा लिखित है।

विद्यार्थियों को संदेश*

* १३ और १४ अप्रैल १९४० को राजकोट में आयोजित काठियावाड और कच्छ प्रान्त के विद्यार्थियों के सम्मेलन के नाम मौलाना का संदेश।

प्रेस वक्तव्य

हिन्दुस्तान टाइम्स
१७ अगस्त, १९४५

बेगम आज़ाद कोष

मुझे प्रेस रिपोर्ट से ज्ञात हुआ है कि देश के विभिन्न भागो मे स्वर्गीय बेगम आजाद की स्मारक के लिए धन इकट्ठा किया जा रहा है। मै उन सभी मित्रो का हृदय से आभार व्यक्त करता हू जिन्होने इस प्रेमपूर्वक कार्य को करने का बीडा उठाया है। लेकिन मेरे मत मे इस मामले से सबधित विचार और भावनाओ को बताना मेरा कर्त्तव्य है। मुझे विश्वास है कि जन स्मारको को बनाने का निश्चय करना किसी की याद को शाश्वत करना है। हमे इस बारे मे निश्चित सिद्धात ध्यान मे रखने चाहिए। स्मारक केवल उन व्यक्तियो की याद मे बनाने चाहिए, जो देशसेवा मे अद्वितीय वैयक्तिक विशेषता के कारण विशेष स्थान के अधिकारी हो। प्रस्तावित स्मारक की कसौटी के विरूद्ध कोई निर्णय लेना कदाचित उचित नहीं होगा। मैं इस निष्कर्ष पर पहुचा हू कि मैं उन सभी मित्रों से प्रार्थना करूँ जिन्होंने इस उद्देश्य के लिए धन इकट्ठा किया है, धन जमा करना बद कर दे और एकत्रित किए हुए धन को 'कमला नेहरू स्मारक हस्पताल इलाहाबाद' को हस्तातरण कर दे। एक बार फिर उन सभी मित्रो के प्रति मै हार्दिक आभार व्यक्त करता हू।

प्रेस वक्तव्य

१७ अप्रैल, १९४६

पाकिस्तान मुस्लिम हितों के विरुद्ध

जैसा कि जाना जाता है कि मिस्टर जिन्ना की पाकिस्तान योजना दो राष्ट्रो के सिद्धात पर आधारित है। उनका विचार है कि भारत भिन्न-भिन्न धर्मो पर आधारित अनेक उपराष्ट्रो का समूह है। उनमे से दो प्रमुख राष्ट्रो, हिन्दू और मुस्लिम का अलग राष्ट्र और राज्य होना आवश्यक है। जब डॉ० एडवर्ड थामसन ने एक बार मिस्टर जिन्ना से कहा है कि भारत मे हजारो शहरो, गावो और बस्तियो मे हिन्दू, मुस्लिम एक साथ जीवन यापन करते है तो मिस्टर जिन्ना ने उत्तर दिया कि उनका पृथक राष्ट्र होने पर इसका कोई प्रभाव नही पडना। जिन्ना के अनुसार दो राष्ट्र हर बस्ती, गाव और शहर मे, एक-दूसरे से मिल-जुल कर नही रह रहे है अत इच्छा व्यक्त की कि उनका दो भिन्न राज्यो मे बटवारा कर देना चाहिए।

मैं समस्या के अन्य समस्त पहलुओ की उपेक्षा करके इसे एकमात्र मुस्लिम हितो की दृष्टि मे देखने के लिए तत्पर हू। मै इससे भी अधिक यह कहूगा कि यदि यह बात सिद्ध कर दी जाए कि पाकिस्तान की परियोजना किसी प्रकार मे भी मुसलमानो के लिए लाभप्रद हो सकती है तो मै स्वय इसे स्वीकार करने के लिए तैयार हो जाऊगा और दूसरो से स्वीकृत करवाने के लिए भी कार्य करूगा। परन्तु सच्चाई यह है कि अगर मैं मुसलमानो के साम्प्रदायिक हित को मद्दे नजर रखते हुए योजना का निरीक्षण करूगा तो मुझे इसी निष्कर्ष पर पहुचना पडेगा कि यह उन्हे किसी प्रकार मे लाभान्वित नही कर सकती या उनकी उचित आशकाओ का शमन नही कर सकती है।

आइए, ठडे मन से उन परिणामो पर विचार करे, जो यदि पाकिस्तान योजना लागू कर दी जाए तो उत्पन्न होगे। भारत दो राज्यो मे बट जाएगा। एक मे मुसलमानो का और दूसरे मे हिन्दुओ का बहुमत होगा। हिन्दुस्तान मे साढे तीन करोड मुसलमान रह जाएगे जो छोटी-छोटी अल्पसख्यक इकाइयो मे सारे देश मे बिखरे होगे। उत्तर प्रदेश मे १७ प्रतिशत, बिहार मे १२ प्रतिशत और मद्रास मे ९ प्रतिशत मुसलमान रह जाएगे जो इससे भी अधिक शक्तिहीन हो जाएगे जितने वो आज हिन्दू बहुमत प्रातो मे है। लगभग १,००० वर्ष से ये क्षेत्र उनका जन्मस्थान है और उन्होने मुस्लिम सस्कृति और सभ्यता के अत्यन्त विख्यात केन्द्र वहा निर्मित किए है।

एक ही रात मे वे महसूस करेगे और जान जाएगे कि वे अनागरिक और विदेशी हो गए है, औद्योगिक शैक्षणिक और आर्थिक क्षेत्र मे पिछड़ गए है। वो इसके पश्चात् जो शुद्ध हिन्दू राज स्थापित होगा, उस की दया-भावना पर वे आश्रित होगे।

अखबारों को भेजा गया वक्तव्य, जो सूचना-पत्रो मे १६-१७ अप्रैल १९४६ को प्रकाशित हुआ। इस वक्तव्य का जो रूप यहा प्रस्तुत किया गया है वो एसोसिएटिड प्रैस द्वारा पत्र-पत्रिकाओ को प्रेषित किया गया था।

दूसरी तरफ, पाकिस्तान राज्य मे उनकी स्थिति मर्माक और कमजोर हो जाएगी। पाकिस्तान मे कही भी उनका बहुमत इतना नहीं होगा जितना हिन्दुस्तान राज्य मे हिन्दुओ का बहुमत होगा। वास्तव मे उनका बहुमत इतना कम होगा कि वो उस आर्थिक, शैक्षणिक और राजनीतिक लाभ के सम्मुख टिक न पाएगा जो इन क्षेत्रो मे मुस्लिम इतर समुदायो को प्राप्त हैं। यदि ऐसा न हुआ होता और पाकिस्तान मे अधिकाशत मुस्लिम होते तो फिर भी हिन्दुस्तान मे मुसलमानो की इस समस्या का यह समाधान नही हो सकता था। दो राज्य जो एक-दूसरे के विरोध मे खडे हुए है, एक-दूसरे के अल्पसख्यको की समस्या का समाधान प्रस्तुत नही कर सकते, बल्कि अल्पसख्यको को बदी बनाकर रखने की एक प्रणाली प्रचलित करके आपसी मतभेदो द्वारा प्रतिशोध और दमन की भावना को बढावा देगे। अत पाकिस्तान योजना मुसलमानो की किसी समस्या का समाधान नही करती। जहॉ अल्पसख्यक वर्ग हैं वहॉ भी वह उनके अधिकारो को सुरक्षित नही रख सकती। पाकिस्तान का नागरिक होने के नाते न तो भारत मे उसका स्तर सही होगा और न ही ससार के किसी भी मामले मे वह भारत सघ राज्य की तरह एक बडे राज्य का नागरिक होकर भाग ले सकेगा। यह न तो उस स्थान पर उनके अधिकारो की रक्षा कर सकती है, जहॉ वे अल्पसख्यक है और न ही पाकिस्तानी नागरिक के रूप मे हिन्दुस्तान या विश्व मे उनकी उस स्थिति को दृढ कर सकती हैं जो हिन्दुस्तान सघ जैसे बडे राज्य के नागरिक होने के रूप मे उन्हे प्राप्त होती।

कहा जा सकता है कि यदि पाकिस्तान स्वय मुसलमानो के हितो के इतना विपरीत है तो मुसलमानो की इतनी बडी जनसख्या और उसके प्रति इतना मोह क्यो रखती ? इसका उत्तर साप्रदायिक उग्रवादी हिन्दुओ के व्यवहार मे ढूढा जा सकता है। मुस्लिम लीग ने जब पाकिस्तान की बात करनी आरभ की तो उन्होने इस योजना मे अखिल इस्लामी क्षेत्र बनाने के भयकर षड्यन्त्र का आभास किया और भयभीत होकर इसका विरोध इसलिए करने लगे कि यह हिन्दुस्तानी मुसलमानो के देशी राज्यो से हिन्दुस्तानी मुसलमानो को मिलाने का प्रयास है। इस विरोध ने लीग के अनुयायियो को प्रोत्साहन प्रदान किया। सीधे-सादे यद्यपि अविश्वसनीय तर्क द्वारा कहा गया कि यदि हिन्दू पाकिस्तान के इतने विरोधी हैं तो निश्चय ही इसे मुसलमानो के लिए लाभदायक होना चाहिए। भावावेश का ऐसा वातावरण उत्पन्न हो गया था जिसने उचित विवेचन असभव बना दिया था और मुसलमान नवयुवको और तुरन्त प्रभाव ग्रहण करने वाले व्यक्तियो को विशेष रूप से यह भाव बहा ले गया लेकिन इस बात मे मुझे कोई सदेह नही कि जब वर्तमान भावावेश समाप्त हो जाएगा और इस समस्या पर ठडे मन से विचार किया जा सकेगा तो वे लोग भी इसे मुस्लिम हितो के लिए हानिकारक कह कर इसकी निन्दा करेगे जो आज पाकिस्तान के समर्थक है।

मै जिस योजना को काग्रेस द्वारा स्वीकृत कराने मे सफल हुआ हू उसमे पाकिस्तान योजना की समस्त मूल बाते आ गई है और इस योजना के समस्त दुर्गुण और त्रुटिया समाप्त हो गई है। पाकिस्तान का आधार मुस्लिम बहुसख्यक क्षेत्रो मे केन्द्र द्वारा हस्तक्षेप का भय है क्योकि केन्द्र मे हिन्दुओ का बहुमत होगा। काग्रेस इस भय का निवारण करने के लिए प्रातीय इकाइयो को पूर्ण स्वायत्तता प्रदान करने और प्रातो को सपूर्ण सत्ता देने के लिए तत्पर है। उसने केन्द्र के आधीन विषयो की दो सूचिया बनाई हैं जिनमे से एक अनिवार्य है और दूसरे ऐच्छिक ताकि यदि कोई प्रातीय इकाई चाहे तो उन नवीनतम अधिकारो को छोडकर जिसे उसने केन्द्र को सौंप दिया है शेष सभी विषयो का प्रबध स्वय कर सकती है। काग्रेस योजना अत इस बात को सुनिश्चित करती है कि मुस्लिम बहुमत के प्रातो को अपने प्रशासन को चलाने में स्वतन्त्रता प्राप्त होगी और

वा अपनी इच्छानुसार विकास कर सकेगे किन्तु साथ ही साथ उन समस्त प्रश्नो पर वो केन्द्र पर प्रभाव डाल सकेगे जिनका सबध सपूर्ण भारत से है।

हिन्दुस्तान मे स्थिति कुछ ऐसी है कि केन्द्रीयकृत एव एकात्मक सरकार स्थापित करने के प्रयास अवश्य ही विफल होंगे। ठीक इसी तरह हिन्दुस्तान को दो राज्यों में विभाजित करने की चेष्टा का विफल होना अनिवार्य है। समस्या के सारे पहलुओ पर विचार करने के पश्चात् मै इस निष्कर्ष पर पहुचा हू कि काग्रेस सूत्र मे जो दृष्टि अपनाई गई है एक मात्र उसी के द्वारा इस समस्या का समाधान हो सकता है क्योकि इस सूत्र मे प्रातो और सपूर्ण भारत दोनो के विकास के लिए स्थान रखा गया है। काग्रेस सूत्र मुस्लिम बहुमत के क्षेत्रो की उस आशका का निवारण करने मे सफल हुआ है। जिसे पाकिस्तान योजना ने उत्पन्न कर दिया था। दूसरी ओर पाकिस्तान की योजना के उन दुर्गुणो से यह सुरक्षित रहती है जो उन क्षेत्रो के मुसलमानो को जहाँ वो अल्पसख्यक हैं, शुद्ध हिन्दू प्रशासन के अतर्गत लाती है।

मै उन व्यक्तियो मे से हू जो समझते है कि साप्रदायिक कटुता और मतभेद का यह वर्तमान अध्याय भारतीय जीवन का ऐसा पक्ष है जो बीत जाएगा। मेरा निश्चित विचार है कि जब हिन्दुस्तान अपने भाग्य का दायित्व सभाल लेगा तो ये लुप्त हो जाएगे। मुझे मिस्टर ग्लैडस्टोन की यह उक्ति याद पड रही है कि पानी से भयभीत होने वाले मनुष्य का उत्तम उपचार यही है कि उसे पानी मे धक्का दे दिया जाए, तभी वो तैरना सीख जाएगा और महसूस करेगा कि पानी इतना घातक नही है जितना उसकी कल्पना ने उसे समझ लिया था। इसी प्रकार हिन्दुस्तान को अपना दायित्व सभालना चाहिए और अपनी समस्याओ की व्यवस्था करनी चाहिए। हिन्दुस्तान जब अपने लक्ष्य को प्राप्त कर लेगा तो वह साप्रदायिक सदेह और टकराव के वर्तमान अध्याय को विस्मृत कर देगा तथा आधुनिक जीवन की समस्याओ का सामना आधुनिक दृष्टिकोण के द्वारा करेगा।

मतभेद निश्चय ही रहेगे किन्तु इनका आधार साप्रदायिकता न होकर के आर्थिक होगा। राजनैतिक दलो के बीच का विरोध चलता रहेगा किन्तु वो धर्म पर आधृत नही होगे बल्कि आर्थिक और राजनैतिक समस्याओ स सबद्ध होगे। भविष्य मे वर्गो के बीच एकता प्रस्फुटित होगी और इसका आधार समुदाय कदापि नही होगा और इसी मेल के अनुसार नीतिया निर्धारित होगी। यदि यह कहा जाए कि यह केवल विश्वास मात्र है जिसे घटनाए शायद सिद्ध न कर पाए पर मै कहूगा कि चाहे जो कुछ भी हो नौ करोड मुसलमान एक ऐसा तथ्य है जिसकी उपेक्षा कोई नही कर सकता और परिस्थितिया चाहे जो कुछ भी हो मुसलमान इतने सशक्त होगे कि वो अपने भाग्य की रक्षा स्वय कर सकते हैं।

एशियाई संबंधों के सम्मेलन की महत्ता
मार्च १९४७

एशियाई सबधो के सम्मेलन का जो अधिवेशन अब दिल्ली मे हो रहा है वो लिखित इतिहास मे अद्वितीय है। निश्चय ही बौद्धकालीन भारत मे भिक्षुओ के महान् समागम आयोजित हुए हैं जिनमे लका, बर्मा और सुदूर इडोनेशिया के प्रतिनिधियो ने भाग लिया था। परन्तु उनका उद्देश्य नितात धार्मिक था और वह भी बौद्ध-धर्म के अनुयायियो तक सीमित था। उनके उद्देश्यो मे विविधता नही थी और न ही उनमे विभिन्न प्रकार के ऐसे सास्कृतिक, धार्मिक और राष्ट्रीय समूहो का प्रतिनिधित्व हुआ था जैसा कि वर्तमान दिल्ली सम्मेलन मे हो रहा है।

१८वी शताब्दी मे नादिरशाह ने भी मुस्लिम धर्माचार्यो का एक महासमागम आयोजित करने की बात सोची थी। उस समय शियो और सुन्नियो के मतभेद के कारण इस्लामी एकता के लिए सकट उत्पन्न हो गया था। सुन्नियो मे नाना-प्रकार के सप्रदाय और उपसप्रदाय स्थापित थे और शिया भी अनेकानेक दलो मे विभाजित थे। प्रतिद्वद्वियो मे समझौता कराने और उनके विरोधी दावो मे समन्वय उत्पन्न करने के हेतु बगदाद मे धर्माचार्यो का एक महासमागम आयोजित किया गया था।

इसमे ईरान, इराक, बुखारा, समरकद और मुस्लिम धर्मशास्त्र के पठन-पाठन के अन्य केन्द्रो से प्रतिनिधि सम्मिलित हुए थे। परन्तु प्राचीन भारत के बौद्ध भिक्षुओ के सम्मेलन के समान ही यह भी एक धार्मिक समागम था जो एक ही धर्म के अनुयायियो तक सीमित था। इसमे भी मानवीय जीवन की उस विविधता का अभाव था जो एशियाई सबधो के सम्मेलन मे परिलक्षित होता है।

इस प्रकार यह प्रथम अवसर है जब एशिया के लोग एक सयुक्त मच पर अपने समान समस्याओ पर विचार करने के लिए एकत्रित हुए है। वो राष्ट्रीय स्वाधीनता के पक्षो और उसके लिए अपनी आतरिक प्रेरणाओ की तुलनात्मक विवेचन करेगे। वे अपनी सस्कृतियो की समानता की जडो की खोज करेगे और मित्रता तथा भाईचारे के कारणो पर प्रकाश डालेगे। ये प्रतिनिधि उस आर्थिक शक्ति को समझने का प्रयास करेगे जिसने उनके सामाजिक जीवन मे विविधता उत्पन्न की है और उन समान उपायो की व्याख्या करेगे जिनके द्वारा जन-साधारण को स्वतन्त्रतापूर्वक सपूर्ण जीवन व्यतीत करने का अवसर प्राप्त हो सकेगा।

प्रतिनिधियो मे अनेक देशो की महिलाए भी सम्मिलित हैं और वो लिखित इतिहास मे प्रथम बार एशिया की महिलाओ के रूप मे अपनी समस्याओ पर विचार करेगी।

इस प्रकार के सम्मेलन इससे पूर्व कभी आयोजित नही हुए और यह अत्यन्त दु:ख की बात होगी यदि यह सम्मेलन, इसमे सम्मिलित लोगो के सहयोग के लिए, किसी अस्थायी ढाचे का शिलान्यास किए बिना समाप्त हो जाए। इस प्रकार के सगठन की रूपरेखा यहा और इसी समय प्रस्तुत नही की जा सकती किन्तु भावी कार्यक्रमो पर इस सम्मेलन मे विचार-विनिमय होना चाहिए।

---

* हिन्दुस्तान टाइम्स विशेषाक के लिए विशेष रूप से लिखित।

मेरा विचार है कि एक ऐसा सस्थान स्थापित होना चाहिए जिसकी एक स्थायी समिति हो और जिसमे सारे देशो के प्रतिनिधि सम्मिलित हो, जो इस सम्मेलन मे भाग ले रहे है। ये सस्थान न केवल समय-समय पर विभिन्न देशो मे सम्मेलनो का आयोजन करे बल्कि ऐसे पुस्तकालयो की स्थापना भी करे जहा इन समस्त देशो का आधुनिक साहित्य एकत्रित किया जाए। यदि सभव हो तो एक मासिक अन्यथा एक त्रैमासिक पत्रिका सस्थान को प्रकाशित करनी चाहिए जिसमे उन समस्याओ पर विचार होना चाहिए जिनसे पूर्व के जन-साधारण दो-चार है और ये कार्य सहयोग और सहमति की भावना के अतर्गत होना चाहिए।

हम सब इस बात से प्रसन्न है कि एशिया के जन-साधारण को एकता के सूत्र मे बाधने के इस आदोलन का सूत्रपात करने का अवसर भारत को प्राप्त हुआ है। परन्तु समय आ गया है जब आगे कदम बढाने की आवश्यकता है। अब हमारी यह दुनिया आदर्शवादियो का स्वप्न मात्र नही है बल्कि विद्यमान यथार्थो का स्पष्ट वक्तव्य है। दूरी और समय मानव-एकता के उद्देश्यो के आधीन हो गए है। अत इस एशियाई सम्मेलन को विश्व-सास्कृतिक सम्मेलन की रूपरेखा निर्धारित करनी चाहिए जिसमे न केवल पूर्व के लोग बल्कि पश्चिम के लोग भी भाग ले सके। मै सम्मेलन के पथप्रदर्शकों और उनकी इस दृष्टि के आधार अराजनैतिक और पक्षपातरहित भावना को धन्यवाद देता हू। इस प्रकार के सास्कृतिक सम्मेलन में सकीर्ण राजनीति के लिए कोई स्थान नहीं है और न ही क्षुद्र साप्रदायिक अथवा दलगत स्वार्थो के लिए कोई जगह है। मुझे कोई सदेह नही है कि यह सम्मेलन विराट मानवतावादी और सास्कृतिक दृष्टिकोण से प्रेरित होगा और इसमे सम्मिलित समस्त लोगो मे सहमति और सहचर की भावना उत्पन्न करेगा।

हम उन सबके आभारी हैं जिन्होने भारत का निमत्रण स्वीकार किया है। वो लोग दूर-दूर से आए हैं और मुझे पूर्ण आशा है कि वो जब अपने देश लौट कर जायेगे तो अपने साथ भारत वर्ष का मैत्री और सद्भावना का सदेश ले जाएगे।

ईद का चांद

हमने एक ऐसी आधुनिक प्रणाली आविष्कृत की है जो इस बात को नि सदेह बना देगी कि समय पर हमे सूचना मिल जाए और हमे इसका पूर्णरूपेण उपयोग करना चाहिए। भारत मे हमे कुछ ऐसा उपाय करना चाहिए कि ईद और रमजान की प्रथम तिथि का निर्धारण समान-रूप से निर्विवाद हो जाए।

इस सबध मे जो कठिनाई है वो यह है कि धर्माचार्य अपनी सकीर्ण धुरी से निकलने को तत्पर नही हैं। इसके अतिरिक्त वायरलैस से मिलने वाली सूचना के "ठीक" होने के सबध मे भी उन्हे सदेह है। फिर भी हमे प्रयत्न करते रहना चाहिए। आशा की जाती है कि कुछ समय मे लोग इन विचारो से सहमत होने लगेगे।

(मौलाना ने यह नोट मोहम्मद साले के पत्र के उत्तर मे १८ जुलाई १९५३ का लिखवाया था।)

भाग ५

जीवन की घटनाओं की अनुक्रमणिका

मौलाना अबुल कलाम आज़ाद के जीवन की घटनाओं की अनुक्रमणिका

मक्का मे जन्म	– १७ अगस्त, १८८८
बिस्मिल्लाह (विद्यारभ समारोह)	– १८९२
भारत आगमन	– १८९८
कविता की रचना आरभ	– १८९८
माता का स्वर्गवास	– १८९९
कलकत्ते से **नैरग-ए-खयाल,** मासिक पत्रिका निकाली	– १८९९
विवाह	– १९०० अथवा १९०१
साप्ताहिक **अल-मिस्बाह** निकाला	– २२ जनवरी, १९०१
पुरातनतम प्रकाशन **एलान-उल-हक**	– ५ जनवरी, १९०२
साप्ताहिक **ऐहसान-उल-अखबार,** कलकत्ता, के सम्पादक	– १९०२
दर्से निजामी (निजामी पाठ्यक्रम) को पूर्ण किया	– १९०३
मासिक पत्रिका **खदग-ए-नजर,** लखनऊ, के उपसपादक	– मार्च, १९०३
एडवर्ड गजेट, शाहजहापुर, के सपादक	– १९०३
लिसान-उल-सिद्क पत्रिका निकाली	– २० नवबर, १९०३
'अजुमन हिमायत-उल-इस्लाम', लाहौर के वार्षिक अधिवेशन मे भाग लिया	– १ से ३ अप्रैल, १९०४
'अजुमन हिमायत-उल-इस्लाम', लाहौर के वार्षिक अधिवेशन मे भाग लिया और 'इस्लाम का भविष्य' विषय पर भाषण दिया	– १९०५
लिसान-उल-सिद्क का अतिम अक आगरा के विख्यात मुफीदे आम प्रेस मे छपा	– अप्रैल-मई, १९०५
इराक गए	– १९०५
मासिक पत्रिका **अल-नदवा**, लखनऊ, के उपसपादक	– अक्तूबर, १९०५
अल-नदवा से प्रस्थान	– मार्च, १९०६
प्रत्येक तीसरे दिन प्रकाशित **वकील,** अमृतसर, के सपादक	– अप्रैल, १९०६
ज्येष्ठ भ्राता अबुनस्र यासीन आह का देहावसान	– १९०६
वकील पत्रिका छोड कर कलकत्ता वापसी	– नवबर, १९०६
ढाका मे मुस्लिम शिक्षा सम्मेलन के जलसे मे भाग लिया। इसी जलसे मे मुस्लिम लीग की स्थापना	– दिसबर, १९०६

साप्ताहिक **दारूल-सल्तनत**, कलकत्ता, के संपादक	— जनवरी, १९०७
वकील, अमृतसर, के संपादक पुन नियुक्त	— अगस्त, १९०७
पिता के रुग्ण होने के कारण **वकील** से त्याग-पत्र	— अगस्त, १९०८
पिता का देहावसान	— १५ अगस्त, १९०८
पश्चिमी एशिया और फ्रांस का पर्यटन	— १९०८-१९०९
साप्ताहिक **अल-हिलाल** निकाला	— १३ जुलाई, १९१२
अल-हिलाल प्रेस से २००० रुपये की जमानत मागी गई जो २३ सितंबर को जमा की गई	— १८ सितंबर, १९१३
बंगाल सरकार द्वारा अल-हिलाल के १४ और २१ अक्तूबर के अंको के एकीकृत अंक की जब्ती	— अक्तूबर, १९१४
जमानत की जब्ती और १०,००० रुपये की नई जमानत की माग	— १६ नवंबर, १९१४
जमानत न देने के कारण १८ नवंबर के अंक के प्रकाशन के पश्चात् **अल-हिलाल** का प्रकाशन बंद और साप्ताहिक **अल-बलाग** का प्रकाशन आरंभ	— १२ नवंबर, १९१५
सुरक्षा एक्ट, की धारा ३ के अंतर्गत चार दिन में कलकत्ता और बंगाल छोड़ने का बंगाल सरकार का आदेश। यह अवधि एक सप्ताह तक बढ़ाई गई। देहली पंजाब और यू.पी. की सरकारें पहले ही अपने प्रांतो मे प्रवेश पर प्रतिबंध लगा चुकी थी। कलकत्ता से निष्कासन के कारण १७, २४ और ३१ मार्च के अंको के प्रकाशन के पश्चात् **अल-बलाग** बंद हो गया। रांची (बिहार) मे आगमन और नगर के बाहर मोराबादी मे निवास। कुछ दिनो के पश्चात् केन्द्रीय सरकार के आदेश के अन्तर्गत नजरबंदी	— ७ अप्रैल, १९१६
तजकिर (आत्मकथा) और जामआ-उल-शवाहिद फी-दखूल-ए-गैरमुस्लिम फी मसाजिद'	— १९१९
रिहाई	— १ जनवरी १९२०
बंगाल प्रांतीय खिलाफत कमेटी के अध्यक्ष के रूप मे सरकार से असहयोग करने की जनता से अपील	— २८, २९ फरवरी, १९२०
'मसलए खिलाफत और जजीर-तुल-अरब' का लेखन जिसके अंग्रेजी और पश्तो अनुवाद क्रमश बंबई और पेशावर से प्रकाशित। मिर्जा अब्दुलकादिर बेग ने इसे अंग्रेजी मे और मलिक मैदा खा शानवरी ने पश्तो मे अनुवाद किया।	— १९२०
अखिल भारतीय खिलाफत कान्फ्रेंस के नागपुर अधिवेशन की अध्यक्षता। असहयोग आंदोलन के प्रचार-प्रसार के लिए अपने नियंत्रण मे साप्ताहिक **पैगाम** निकाला।	— २३ सितंबर, १९२१
आगरा मे प्रांतीय खिलाफत कमेटी के अधिवेशन की अध्यक्षता	— २५ अक्तूबर, १९२१

लाहौर मे जमीअत-उल-उल्मा-ए-हिन्द के अधिवेशन की अध्यक्षता	— १८-२० नवबर, १९२१
गिरफ्तारी और एक वर्ष का कारावास तथा प्रेसीडेसी जेल, अलीपुर मे बदी	— १० दिसबर, १९२१
इस मुकदमे मे दिया गया वक्तव्य **कौल-ए-फैसल** के नाम से पसिद्ध हैं। इसका अरबी अनुवाद काहिरा मे और तुर्की अनुवाद स्तब्योल मे प्रकाशित हुआ। इसे मौलाना अब्दुर्रज्जाक मलीहाबादी ने अरबी मे और **जहान-ए-इस्लाम**, रुस्तब्बोल के सपादक उमर रजा ने तुर्की मे अनूदित किया।	१९२२
रिहाई।	— ६ जनवरी, १९२२
अरब देशो मे भारतीय स्वतन्त्रता आदोलन के प्रचार के लिए अपने नियन्त्रण मे अल-जमीआ नामक पखवाडा-पत्र अरबी भाषा मे निकाला	— १ अप्रैल १९२३
आल इडिया काग्रेस के विशेषाधिवेशन, दिल्ली, की अध्यक्षता।	— १५ सितबर १९२३
अखिल भारतीय खिलाफत कमेटी के कानपुर अधिवेशन की अध्यक्षता	— २९ दिसबर, १९२५
अल-हिलाल का पुन प्रकाशन	— १० जून, १९२७
९ दिसबर १९२७ के अक के प्रकाशन के पश्चात् **अल-हिलाल** बद	— १९२७
मुस्लिम नेशनल पार्टी के अध्यक्ष	— २७ जुलाई, १९२९
आल इडिया नेशनल काग्रेस के स्थानापन्न अध्यक्ष	— १९३०
गिरफ्तारी	— १९३१
तर्जुमान-उल-कुरान (कुरानानुवाद) प्रथम खड	— सितबर, १९३१
गिरफ्तारी	— १९३२
तर्जुमान-उल-कुरान खड दो	— अप्रैल, १९३६
तर्जुमान-उल-कुरान खड १ और **खड** २ सैयद अब्दुल लतीफ द्वारा अग्रेजी मे अनूदित जो भारत और पाकिस्तान मे प्रकाशित हो चुका	— १९३६
आल इडिया काग्रेस कमेटी के स्थानापन्न अध्यक्ष	— १९३९
आल इडिया नेशनल काग्रेस के अध्यक्ष निर्वाचित, १९४६ तक इस पद पर आसीन	— १९४०
आल इडिया काग्रेस के रामगढ अधिवेशन की अध्यक्षता	— १९ मार्च, १९४०
गिरफ्तारी और दो वर्ष का कारावास तथा नैनी जेल मे बदी	— १९४०
रिहाई	— ४ दिसबर, १९४१
क्रिप्स मिशन से वार्तालाप	— मार्च-अप्रैल १९४२
गिरफ्तारी और अहमद नगर दुर्ग मे नजरबदी	— ९ अगस्त, १९४२
कलकत्ते मे पत्नी का स्वर्गवास	— ९ अप्रैल, १९४३

भोपाल मे छोटी बहन हनीफा बेगम आबरू का देहावसान	— जून, १९४३
अहमदनगर से बकुरा जेल मे स्थानातरण	— अप्रैल, १९४५
रिहाई	— १५ जून, १९४५
शिमला काफ्रेस मे सम्मिलित	— १६ जून, १९४५
गुबार-ए-खातिर और **कारवान-ए-ख़्याल**	— १९४६
मत्रिमडल मिशन से वार्तालाप	— अप्रैल-जून, १९४६
अस्थायी सरकार मे शिक्षामत्री के रूप मे सम्मिलित	— १५ जनवरी, १९४७
स्वतन्त्र भारत की प्रथम सरकार मे शिक्षामत्री	— १५ अगस्त, १९४७
काग्रेस ससदीय दल के उपनेता	— १९५१
प्रथम आम चुनाव मे ससद सदस्य निर्वाचित शिक्षा, प्राकृतिक ससाधन और वैज्ञानिक अनुसधान मत्री	— १९५२
काग्रेस ससदीय दल के उपनेता पुन निर्वाचित	— १९५५
योरप और पश्चिम एशिया मे शिष्टमडल का नेतृत्व, दिल्ली मे आयोजित ९वी यूनेस्को कान्फ्रेस की अध्यक्षता	— मई से जुलाई तक, १९५६
द्वितीय आम चुनाव मे ससद सदस्य निर्वाचित और शिक्षा एव वैज्ञानिक अनुसधान के मत्री पुन नियुक्त	— १९५७
दिल्ली मे आयोजित 'अजुमन तरक्की-ए-उर्दू' मे दिया गया अतिम भाषण	— १५ फरवरी, १९५८
स्वर्गवास। जामा मस्जिद, दिल्ली के सामने वाले पार्क मे दफन	— २२ फरवरी, १९५८

भाग ६

ग्रंथ सूची

मेरी तस्वीर के ये नक्श जरा गौर से देख
इस में इक दौर की तारीख नजर आएगी

प्रस्तावना

मौलाना अबुल कलाम आजाद ने अपने जीवन काल मे लगभग ८००० पुस्तको के अपने निजी सग्रह को 'इडियन काउसिल फॉर कल्चरल रिलेशन्स' के पुस्तकालय को भेट कर दिया था। इस सग्रह मे विभिन्न विषयो अर्थात् इतिहास, धर्म भूगोल तथा साहित्य से सबधित मौलिक सूत्र एव दुर्लभ सामग्री और पुस्तके शामिल है। इन पुस्तको के अतिरिक्त काफी सख्या मे अमूल्य पाण्डुलिपियॉ, मूल सस्मरण और सरकारी व अर्धसरकारी पत्राचार के मौलिक मसविदे मौजूद है। यह सब सामग्री शोध कार्य-रत विद्यार्थियो तथा बुद्धिजीवियो के लिए अत्यन्त मार्गदर्शी है और आई सी सी आर के पुस्तकालय मे उद्धरण तथा अध्ययन के लिए उपलब्ध है।

मौलाना आजाद एक व्यक्ति ही नही बल्कि अपने मे एक सस्था समझे जाते थे। उनका व्यक्तित्व सपूर्ण था। उन्होने जो कुछ कहा अथवा लिखा उससे भाषण-कला और पत्रकारिता के नए आयाम स्थापित हुए।

मौलाना आजाद की लेखनी और शैली दोनो ही अनूठी थी। उनके समस्त लेख, दर्शन-शास्त्र, धर्म-शास्त्र, साहित्य, राजनीति, इतिहास और भूगोल जैसे विभिन्न क्षेत्रो मे महान साहित्यिक कृतियो का स्थान रखते है और कई राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय दार्शनिको और लेखको ने अनगिनत पुस्तको और लेखो की रचना करके मौलाना आजाद के व्यक्तित्व को अमर बना दिया है।

यद्यपि मौलाना आजाद के सर्वसपन्न व्यक्तित्व के साधारण तौर पर दूसरो की लेखनी को प्रखर किया है तथापि अब भी मौलाना से सम्बन्धित अध्ययन का विशाल क्षेत्र शोधको का अध्ययन के लिए प्रेरणा देता है। वास्तव मे मौलाना आजाद पर अधिक अध्ययन के हेतु बुद्धिजीवियो तथा विद्यार्थियो के मार्ग-दर्शन के लिए एक उपयुक्त मार्ग-दर्शक की अत्यन्त आवयकता है। इस मार्ग-दर्शक के अभाव को दूर करने की दृष्टि से काउसिल ने यह निश्चय किया कि मौलाना आजाद पर एक सपूर्ण पुस्तक-सूची का सग्रह प्रकाशित किया जाए।

इस पुस्तक-सूची मे जो कुछ प्रस्तुत किया जा रहा है, उसमे मौलाना आजाद के लेखों की सपूर्ण सूची और मौलाना आजाद पर दूसरे विशेषज्ञो की रचित व सकलित पुस्तको और लेखो की सूची शामिल की गई है।

इस सूची मे शामिल दूसरे भाग का प्रमुख उद्देश्य कम से कम उन समस्त महत्त्वपूर्ण पुस्तको तथा पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित लेखो की सूची सकलित करना है जो पिछले '७५ वर्षो मे प्रकाशित हुए और उसके माध्यम से अधिक शोध-अध्ययन, विचार-विमर्श, समीक्षा और सम्बन्धित विषयों पर एक भरपूर विश्लेषणात्मक अध्ययन के लिए ठोस बुनियाद उपलब्ध कराने का प्रयास किया गया है।

मौलाना आजाद पर उपलब्ध सामग्री के सर्वेक्षण से विदित करता है कि "आजादियान" के विशेषज्ञो के प्रयासो का अधिकाश भाग उनके जीवन-परिचय और मौलाना की जीवन-घटनाओ

का विवरण है। विश्लेषणात्मक अध्ययन पर आधारित पुस्तकें—जिनमें मौलाना की विचारधारा को तीखी नजर से जॉचा और परखा गया हो, बहुत कम है। मौलाना के समूचे कारनामो की तुलना मे अब तक के गवेषणात्मक प्रयासो की सख्या बहुत कम है।

भारत के स्वतन्त्रता सग्राम के इतिहास मे मौलाना के मूल्याकन के लिए बहुत सी विस्तृत बौद्धिक एव साहित्यिक रचनाओ की आवश्यकता है।

यह सूचिका-ग्रथ मौलाना के योगदान पर विस्तृत अध्ययन के लिए शोधनीय सामग्री उपलब्ध करने वाले महत्त्वपूर्ण माध्यम के रूप मे पहला कदम है। इस सूचिका-ग्रथ मे जहॉ तक सम्भव हो सका है, मौलाना पर लिखित सारे महत्त्वपूर्ण और उल्लेखनीय ग्रन्थो का विवरण प्रस्तुत किया गया है।

संकलन

यह पुस्तक-सूची २ भागो मे विभाजित है। पहले भाग के दो खड क' और 'ख' हैं। पहले खड मे मौलाना आजाद द्वारा रचित पुस्तके है और दूसरे खड मे उन पत्र पत्रिकाओ का उल्लेख है जिनके वह सम्पादक अथवा सहायक सम्पादक थे।

दूसरे भाग के भी 'क', 'ख' दो खड है। पहले खड अर्थात् 'क' मे मौलाना आजाद पर रचित ग्रथो की सूची है जबकि दूसरे खड 'ख' मे मौलाना आजाद पर लिखे गये वे लेख व सपादकीय शामिल हैं जो विभिन्न पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित हुए। पत्र-पत्रिकाओ के आजाद विशेषाको का उल्लेख भी मिलता है।

पहले भाग के खड 'क' मे मौलाना आजाद की पुस्तको को पूरी ग्राथिक विवरण के साथ शब्दावली क्रम के अनुसार अकित किया गया है। खड 'ख' मे उन पत्र-पत्रिकाओ को, जिनके मौलाना सपादक अथवा सहायक सपादक रहे, उनके नामों को अन्तर्गत शब्दानुक्रम से अकित किया गया है।

दूसरे भाग के खड 'क' में ग्रथों का उल्लेख लेखक के नाम को शब्दानुक्रम से अकित किया गया है।

खड 'ख' मे जो लेख तथा सपादकीय शामिल है उनको भी लेखक अथवा शीर्षक के अतर्गत शब्दानुक्रम से प्रस्तुत किया गया है। हर लेख अथवा सम्पादकीय के लिए उस पुस्तक अथवा पत्रिका का उल्लेख उसके नाम, स्थान, अक, तिथि और पृष्ठो के साथ दिया गया है, जिसमे वह प्रकाशित हुए हैं।

चूँकि इस पुस्तक मे अकित पुस्तक-सग्रह अरबी, फारसी, हिन्दी, सिधी तथा उर्दू भाषाओ से ओत-प्रोत है अतएव हिन्दी के अलावा अन्य भाषाओ के सकेत के लिए प्रविष्टि के अत में कोष्टक के बीच भाषा विशेष का सकेत कर दिया है।

गुलजार नकवी
पाकीजा सुलतान

भाग १

मौलाना आज़ाद द्वारा रचित पुस्तकों की सूची

खंड 'क'

१ *अजकार-ए-आजाद*

सम्पा० एस अब्बास हामी मद्रासी लाहौर, कमरूद्दीन, nd (उर्दू)

"मौलाना आजाद के लेखों का विवरण।"

२ *अजीम शख्सियते*

लाहौर, इदारा-ए-तआरूफ, nd (उर्दू)

"कुछ प्रमुख व्यक्तियों पर मौलाना द्वारा लिखी जीवनियाँ।"

३ *अजीमत-व-दावत*

दिल्ली, नाज पब्लिशिग हाऊस, nd (उर्दू)

"इस्लाम और मुसलमान शासको का इतिहास। उन उलेमा की भूमिका की विवेचना है जो अपने कालीन शासकों से प्रेरित 'फतवे' जारी करने पर मजबूर हुए और सुधारको के तर्कों पर जिन्होने शासको के विरुद्ध आवाज उठाई। यह पुस्तक कलकत्ता पब्लिक लायब्रेरी ने भी प्रकाशित की है यह मौलाना की पुस्तक "तजकिरा" के कुछ पाठो पर आधारित है।"

४ *अबुल क्लाम आजाद की कहानी खुद उनकी जबानी*

लाहौर, चट्टान पब्लि०, १९६० (उर्दू)

"मौलाना आजाद की जीवनी जो उन्होने १९२१ मे अपनी नजरबन्दी के दिनो मे अब्दुल रज्जाक को बयान किए।"

५ *अफसाना-ए-हिज्र-ओ-विसाल*

लाहौर, अल-हिलाल बुक एजेंसी, १९३५ (उर्दू)

"पुस्तक इस्लाम के आधारभूत सिद्धातो को रेखाकित करती है और बताया गया है कि मनुष्य को सीधे रास्ते की अनदेखी नहीं करनी चाहिए।"

६ *अबुल क्लाम के अफसाने*

सम्पा० अब्दुल गफ्फार शकील अलीगढ, सर सैयद बुक डिपो, १९६१ (उर्दू)

"विवरण (१) मौलाना आजाद और अफसाना निगारी (प्रस्तावना द्वारा सपादक) पृ० (२) मुहब्बत पृ० ९-३६, (३) हकीकत कहाँ है? पृ० ३७-४७, (४) हौलनाक रात, पृ० ४८-५७, (५) नेपोलियन पर दूसरा हमला, पृ० ५८-६२, (६) सौदा बिन्त अम्मारा, पृ० ६३-६७, (७) अर्बी बिन्त अल-हारिस, पृ० ६८-७३, (८) चिडिया चिडे की कहानी, पृ० ७४-९५, (९) शहीद-ए-रस्म, पृ० ९६-९९, (१०) किमार बाज पृ० १००-१०३, आदि।"

७ *अरमुगान-ए-आजाद*

मौलाना अबुल क्लाम आजाद का क्लाम और उनके इब्तिदाई मजामिन। सम्पा० अबु सलमान शाहजहाँपुरी, कराची, आजाद अकादमी, १९७२ (उर्दू)

"मौलाना आजाद की काव्य रचनाओ का सग्रह।"

८ *अम्र बिल-मारूफ*

लाहौर, अलहिलाल बुक एजेंसी, १९४६ (उर्दू)

"हजरत मुहम्मद साहेब के एक सहयोगी की जीवन-कथा।"

९ *अम्बिया-ए-कराम*

सम्पा० गुलाम रसूल मेह्र लाहौर, शेख गुलाम अली, १९७२ (उर्दू)

"इस्लाम के कुछ प्रमुख पैगम्बरो का जीवन परिचय तथा समकालीन घटनाओ का ऐतिहासिक विवरण।"

१० *अल-जिहाद फी सबील-अल्लाह*

मुरादाबाद, निजामिया खिलाफत स्टोर, nd (उर्दू)

"धर्मयुद्ध जिहाद के महत्त्व को विस्तार के साथ बताया गया है और इस्लामी इतिहास के कई जिहादों की घटनाओ पर प्रकाश डाला गया है।"

११ *अल-तबलीग*

कराची आजाद रिसर्च इंस्टिट्यूट, nd (उर्दू)

"पेश्वा, दिल्ली, १९३४ का रिप्रिंट। इस भाषण मे मौलाना आजाद ने इस्लाम की तबलीग (प्रचार) उसके महत्त्व और आवश्यकता पर विस्तारपूर्वक प्रकाश डाला है।"

१२ *अल-दीन-व-अलसियासत*

बिजनौर, मलिक कुतुबखाना, nd (उर्दू)

"धर्म और राजनीति के पारस्परिक सबंध पर इस्लामी दृष्टिकोण को प्रतिपादित किया गया है।'

१३ *अल-बेरूनी और जुगराफिया-ए-आलम*

सम्पा० जियाऊल हसनफारूकी तथा सैयद मसीह-उल-हसन। दिल्ली, डॉ० जाकिर हुसैन इंस्टिट्यूट ऑफ इस्लामिक स्टडीज, १९८८ (उर्दू)

'यात्री और विद्वान अलबेरूनी की जीवनी जिसने विश्व-भूगोल पर शोध कार्य किया।"

१४ *अल-सय्यदा फातिमा बिन्त अब्दुल्ला*

(उर्दू)

१५ *अल-हरब फी-अलकुरान*

कलकत्ता, अल-हिलाल, १९२२ (अरबी)

१६ *अल-हिलाल के तबसिरे*

सम्पा० लखनऊ, उ०प्र०, उर्दू अकादमी, १९८८ (उर्दू)

"मौलाना आजाद के अखबार अलहिलाल मे प्रकाशित सम्पादकियो का सग्रह।"

१७ *अल-हुर्रियत फी-अलइस्लाम*

सम्पा० मुश्ताक अहमद मेरठ, कौमी दारूल इशाअत, १९२१ (उर्दू)

"इस्लामी सरकार के लोकतान्त्रिक ढाँचे और योरोपीय सरकारो के साथ तुलना की विशद टिप्पणी।"

१८ *असहाब-ए-केहफ*

दिल्ली, सितारा-ए-हिन्द बुक डिपो, nd (उर्दू)

"कुरान की एक घटना पर टिप्पणी।"

१९ *आजाद-की-तकरीरे*

सम्पा० अनवर आरिफ, दिल्ली, अदबी दुनिया, १९६१ (उर्दू)

"विभिन्न अवसरो पर की गई मौलाना की तकरीरो (भाषणो) का सग्रह।"

२० *आजादी-ए-हिन्द*

सम्पा० रईस अहमद जाफरी, लाहौर, हक बुक डिपो, १९५० (उर्दू)

"स्वाधीनता-सग्राम के घटना-चक्रों पर विस्तार से प्रकाश डाला गया है।"

२१ *आजादी की कहानी*

अनु० महेन्द्र चतुर्वेदी, बम्बई, ओरियन्ट लौंगमेस १९६५ (उर्दू)

"मौलाना आजाद की पुस्तक इण्डिया विंस फ्रीडम का हिन्दी अनुवाद।"

२२ *इत्तिहाद-ए-इस्लामी*

मेरठ, कौमी दारुल इशाअत, nd (उर्दू)

"एकता के विषय में मौलाना का एक विशेष भाषण। पॉच बार प्रकाशित हो चुका है।"

२३ *इदैन*

ईदुल फित्र, ईदुल-अजहा दिल्ली, जय्यद प्रैस, १९५६ (उर्दू)

"इस्लामी त्यौहारो, ईद और बक्रईद के महत्त्व पर प्रकाश डाला गया है।"

२४ *इफादात-ए-आजाद*

मजहबी और अदबी स्तफसरात के जवाबात। सम्पा० अबु सलमान शाहजहॉपुरी। कराची, इदारा-ए-तफनीफ-औ-तहकीक, १९८९ (उर्दू)

"मौलाना आजाद के अखबारो अलहिलाल और अल बलाग मे प्रकाशित धर्म तथा उर्दू साहित्य की कई समस्याओ पर पाठकों के पूछे प्रश्नो के उत्तरो का सकलन।"

२५ *ईसाईयत का मसअला*

कराची, इदारा-ए-फरोग-ए-अदब, १९६४ (उर्दू)

"मौलाना आजाद ने ईसाई धर्म की विचारधारा पर अपने विचार व्यक्त किए हैं।"

२६ *इमामुल हिन्द मौलाना अबुल कलाम आजाद का फैसला और मालेर कोटला का निजा*

मालेर कोटला, अजुमन-ए-एहले-हदीस, १९५४ (उर्दू)

"मालेर कोटला पजाब में मस्जिद एहले-हदीस के इमाम की नियुक्ति पर विवाद हो गया था। इसके फैसले के लिए मौलाना से फतवा मागा गया। इस विवाद का पूरा विवरण इस पुस्तक मे है।"

२७ *इस्लाम और आजादी*

दिल्ली, साबरी पब्लिशर्स, १९५७ (उर्दू)

"आजादी और मानव-ससार के भाईचारे पर आधारित इस्लामी सिद्धान्तो का विवेचन किया गया।"

२८ *इस्लाम और नेशनलईज्म*

लाहौर अलबलाग बुक एजेन्सी १९२९ (उर्दू)

"राष्ट्रीयता इस्लाम का एक मौलिक सिद्धान्त है। मौलाना ने बताया है कि इस्लाम राष्ट्रीयता के सिद्धान्त पर किस प्रकार कार्यशील है और यह किस प्रकार समकालीन आवश्यकता बन जाता है।"

२९ *इस्लाम और मसीहियत*

दिल्ली, ताज उर्दू एकेडेमी, १९६५ (उर्दू)

"कुरानी उद्धरण, हजरत मुहम्मद के उद्‌गार और इस्लामी जीवनचर्या के सम्बन्ध में कुछ भ्रामक तर्कों को रद्द किया गया है। ईसाई मत के कुछ प्रचारकों ने इस्लामी शिक्षा पर अनुचित कुठाराघात किया था और इस्लाम तथा पैगम्बर के बारे में सदेहात्मक विचार व्यक्त किए थे, ईसाई प्रचारकों की आलोचना का जवाब दिया गया है। वास्तव में यह अल-हिलाल मे लेख की शक्ल में प्रकाशित हुआ।"

३० *इस्लाम का नजरिया-ए-जग*

सम्पा० इब्नुल राय लाहौर, बासत-ए-अदब, १९६५ (उर्दू)

"मौलाना आजाद के भाषणों का सग्रह। इसमें बताया गया है कि अन्याय और हिंसा के विरुद्ध युद्ध अथवा सघर्ष इस्लाम मे उचित ठहराया गया है। इसमे उन्होने कुरान के उदाहरणों और रसूल-ए-पाक के उद्‌गारो की सहायता से अपने दृष्टिकोण का औचित्य दिया है।"

३१ *इस्लामी मसाईल*

दिल्ली, शहजाद बुक डिपो, nd (उर्दू)

"इस लेख मे मौलाना ने सत्य और मिथ्या के दृष्टिकोण पर विस्तारपूर्वक बहस की है। उन्होंने कुरान के उद्धरणों को भी दिया है।"

३२ *इंतिखाब-ए-अलहिलाल*

लाहौर, अदबस्तान, nd (उर्दू)

"अलहिलाल के लेखो का सग्रह। १९५८ और १९६१ मे भी प्रकाशित हुआ।"

३३ *इंतिखाब-ए-तजकिरा*

सम्पा० महमूद इलाही। लखनऊ, उ०प्र० उर्दू अकादमी, १९८८ (उर्दू)

"मौलाना की पुस्तक तजकिरा का सकलन प्रस्तावना और नोटो सहित।"

३४ *इण्डिया विस फ्रीडम*

स० २ मद्रास, ओरियन्ट लोंगमैन्स, १९८८ (अग्रेजी)

"हुमायूँ कबीर ने मौलाना आजाद का जीवन-चरित्र लिखा है जो ३० पृष्ठो की सामग्री को छोडकर १९५८ मे प्रकाशित किया गया। ३० वर्ष के उपरान्त १९८८ में पुस्तक का सम्पूर्ण मसविदा पुस्तक के आफसैट मुद्रण के साथ प्रकाशित हुआ।"

३५ *इसानियत का मसअला*

कराची, इदारा-ए-फरोगे-अदब, १९६४ (उर्दू)

"ईसाई मत और उसकी शिक्षा पर मौलाना के विचारो का सग्रह।"

३६ *इसानियत मौत के दरवाजे पर*

लाहौर, शमीम बुक डिपो, १९५७ (उर्दू)

"स० २, १९५८ कुछ इस्लामी आदिकालीन नेताओं का जीवन-परिचय, (१) उमर बिन अल-आस (२) हज्जाज बिन यूसुफ (३) हजरत खनाब बिना अरवी (४) अब्दुल्ला बिन अली जीवन (५) अब्दुल्ला बिन जुबैर (६) उमर बिन अब्दुल अजीज।"

३७ *उरूज-औ-जवाल का कुरानी दस्तूर*

लाहौर, बज्म-ए-इशाअत, १९६४ (उर्दू)

"विवरणिका (१) उम्मत-ए-मुस्लिमा (२) हकीकत-ए-इस्लाम, (३) वेहदत-ए-इजतिमाईआ, (४) मर्कजे-कौमियत, (५) जुगराफि-ए-मर्कज, (६) फिक्र-ए-वेहदत और फिक्र-ए-मर्कजियत, (७) उरूज-औ-जवाल का फितरी उसूल (८) अज्म-औ-इस्तिकामत, (९) तजदीद-औ-तासीर, (१०) कामयाबी की चार मजिले।"

३८ *उम्मुल किताब तफसीर-ए-सूरा-ए-फातिहा*
लाहौर, मक्तबा-ए-एहबाब, nd (उर्दू)
"कुरान की एक प्रमुख आयत की व्याख्या।"

३९ *एहरार-ए-इस्लाम*
लखनऊ, सिद्दीक बुक डिपो, nd (उर्दू)

४० *ऐलान-ए-हक*
कलकत्ता, उस्मानिया प्रेस, १८९८ (उर्दू)
"चॉद देखने और फतबे पर मौलाना आजाद के वालिद मौलाना खैरूद्दीन ने मजहबी विषय को चर्चा का विषय बनाया और मौलाना आजाद ने उसे सम्पादित किया।

४१ *औलिया-अल्लाह व औलिया-उश-शैतान*
लाहौर, अलहिलाल बुक एजेसी, १९३५ (उर्दू)
"गुण और अवगुण के बीच निरन्तर सघर्ष के विषय मे कुरानी प्रसगो का विवेचन।

४२ *औरतो की आजादी और फराईज*
लाहौर, शमीम बुक डिपो, nd (उर्दू)
"महिलाओ के कर्तव्य तथा समाज मे उनके स्थान पर मौलाना की प्रतिक्रिया तथा मान्यताए। महिला मानव की जन्मदाता भी है, वह सतानावृत्ति सुरक्षा और कार्य करती है। वह ऐसी है जो कुचली नही जा सकती।"

४३ ***कारवान-ए-ख्याल***
सम्पा० मौहम्मद अब्दुल शाहिद खॉं शेरवानी बिजनौर, मदीना प्रेस, १९४६ (उर्दू)
"नवाब सद्रयार जग हबीबुर्रहमान खॉं शेरवानी को लिखे गए ४ सितम्बर १९४० मे १२ **नवम्बर** १९४६ के दौरान खतों का सग्रह।"

४४ *किताबुल तजकिरा*
सम्पा० अनु० मीर वली उद्दीन हैदराबाद, मौलाना अबुल कलाम आजाद ओरियटल रिसर्च इन्स्टीट्यूट, १९६१ (उर्दू)
"मौलाना आजाद की पुस्तक तजकिरा जिसका अनुवाद बडी सुन्दर भाषा मे आवश्यक **हाशियों** तथा विवरणो के साथ प्रस्तुत किया गया है।"

४५ *कुरान का कानून-ए-उरुज-औ-जवाल*
दिल्ली, दारूल इशाअत, १९६० (उर्दू)
"इसमे इस्लाम के सिद्धान्तों, शिक्षा तथा मुसलमानो पर उसके प्रभाव का जायजा लिया गया **है**।"

४६ ***कुर्बानी***
दिल्ली, महबूबुल-मताबे, nd (उर्दू)
"फ्रासीसी लेखक विक्टर ह्यूगो के एक नाविल पर आधारित मौलाना आजाद का एक सक्षिप्त नाविल।"

४७ **कौल-ए-फैसल**
कलकत्ता, अल-बलाग प्रेस, १९२२ (उर्दू)
"यह मौलाना आजाद का वह प्रसिद्ध वक्तव्य है जिसमे उन्होने उप-महाद्वीप के स्वतन्त्रता-आन्दोलन का विवरण लिखा है। सार्वजनिक सभाओ और भाषणो पर प्रतिबन्ध के बावजूद

मौलाना आजाद ने खिलाफत और असहयोग आदोलनो मे देश के विभिन्न स्थानो पर भाषण किए। प्रमुख राष्ट्रीय नेतागण जेलों मे भेज दिए गए, और मौलाना आजाद भी १९२१ मे गिरफ्तार कर लिए। उन पर विद्रोह का आरोप लगाया गया। इस अवसर पर उन्होने न्यायालय मे अपना वक्तव्य दिया जो कौल-ए-फैसल के नाम से प्रकाशित हुआ।"

४८ *खिलाफत और जजीरतुल अरब*

अनु० मिर्जा अब्दुल कादिर बेग। बम्बई, सेट्रल खिलाफत कमेटी, १९२० (अग्रेजी)

"मौलाना अबुल कलाम आजाद ने १८ फरवरी १९२० को बगाल प्रोविशियल खिलाफत कानफ्रेस के अधिवेशन में भाषण दिया।"

४९ *खुतबा-ए-सदारत*

आल इण्डिया खिलाफत कान्फ्रेस, कानपुर, १९२५ (उर्दू)

"आल इण्डिया खिलाफत कान्फ्रेस के वार्षिक अधिवेशन, २४ दिसम्बर १९२५, कानपुर मे मौलाना आजाद का अध्यक्षीय भाषण।"

५० *खुतबा-ए-सदारत*

इण्डियन नेशनल कॉग्रेस, खुसूसी इजलास, १५ सितम्बर १९२३, दिल्ली (उर्दू)

'मौलाना आजाद का अध्यक्षीय भाषण।'

५१ *खुतबा-ए-सदारत*

इण्डियन नेशनल कॉग्रेस रामगढ सैशन १९४० (उर्दू)

इण्डियन नेशनल कॉग्रेस के ५३वे अधिवेशन, स्वागत समिति मे मौलाना आजाद का अध्यक्षीय भाषण।

५२ *खुतबा-ए-सदारत जमियत उलेमा-ए-हिंद, १९२१, लाहौर*

मरट कौमी दारुल इशाअत, १९२१ (उर्दू)

मौलाना आजाद का अप्रकाशित अध्यक्षीय भाषण। इसमे उन्होंने विदेशी शासन के विरुद्ध सघर्ष के लिए हिन्दू-मुस्लिम एकता की आवश्यकता पर जोर दिया है।"

५३ *खुतबात-ए-अबुल कलाम आजाद*

लाहौर अल-मनार एकेडमी nd (उर्दू)

विवरणिका

(१) भाषण, कलकत्ता, १९१४ (२) प्राविशियल खिलाफत कमेटी, आगरा (३) जमियत उलेमा-ए-हिन्द, लाहौर (४) (५) प्राविशियल खिलाफत कमेटी, बगाल, १९२८ (६) जनरल सैशन, कलकत्ता, शहादत-ए-हुसैन, १९२१ (७) इण्डियन नेशनल कॉग्रेस दिल्ली, १९२३ (८) इण्डियन खिलाफत कानफ्रेस, कानपुर, १९२५ (९) इण्डियन नशनल कॉग्रेस, रामगढ १९४०

५४ *खुतबात-ए-आजाद*

लाहौर, अदबिस्तान, nd सम्पा० नसरुल्ला खॉं अजीज (उर्दू)

उपलब्ध सामग्री की विवरणिका

"प्रस्तावना—नसरुल्ला खॉं अजीज, पृ० ४-८, खुतबात इत्तिहाद-ए-इस्लामी, इजलास-ए-आम कलकत्ता, २९ अक्टूबर १९१४, पृ० ९-३५, सूबाई मजलिस-ए-खिलाफत आगरा, २५ अक्टूबर १९२१, पृ० ३५-६८, (खुतबा-ए-तहरीरी, जमियतुल उलेमा हिन्द, लाहौर, १८ नवम्बर १९२१, खुतबा-ए-तकरीरी, पृ० ६९-१४९), इजलास-ए-आम कलकत्ता, शहादत-ए-हुसैन, पृ० २११-२४५, इजलास-ए-खुसूसी इण्डियन नेशनल काग्रेस, दिल्ली १५

दिसम्बर, १९२३, पृ० २४५-३०७, सूबाई मजलिस-ए-खिलाफत-ए-कानफ्रेस, कानपुर, २९ दिसम्बर, १९२५, पृ० ३३५-३६३, इस पुस्तक में १९४० तक के सारे महत्त्वपूर्ण खुतबे एक स्थान पर मिल सकते हैं।"

५५ *खुतबात-ए-आजाद*

सम्पा० मालिक राम, नई दिल्ली, साहित्य अकादमी, १९७४ (उर्दू)

"मौलाना आजाद के भाषणो का सग्रह।"

५६ *खुतबात-ए-आजाद*

दिल्ली, उर्दू किताब घर, १९५९ (उर्दू)

"विवरणिका

(१) इत्तिहाद-ए-इस्लाम, २७ अक्टूबर १९२१, पृ० २-५, (२) खतबात-ए-मजलिस-ए-खिलाफत, २५ अक्टूबर १९२१, आगरा पृ० २८-५४, (३) खुतबा-ए-सदारत, बगाल खिलाफत कानफ्रेस, २८ व २९ फरवरी १९२०, पृ० ५५-१०६, (४) खुतबा-ए-सदारत, जमियत उलेमा-ए-हिन्द, नवम्बर १९२१, लाहौर, पृ० १०७-१२३, (५) खुतबा-ए-सदारत, आल इण्डिया खिलाफत कानफ्रेस, २९ दिसबर १९२५, कानपुर, पृ० १७२-१९२"

५७ *खुतबात-ए-सियासिया और मसाजिद-ए-इस्लामिया*

मेरठ, कौमी दारूल इशाअत, nd (उर्दू)

"मौलाना ने हदीसो के उल्लेखो द्वारा सिद्ध किया है कि राजनीतिक समस्याएँ मस्जिदो के खुतबो (भाषणो) द्वारा भी हल की जा सकती है। स्वराज प्रिंटिंग वर्क्स दिल्ली ने भी उसको प्रकाशित किया है।"

५८ *खुदा की हस्ती*

सम्पा० मुहम्मद रफीक चौधरी। दिल्ली शाहीन बुक सेन्टर, १९८८ (उर्दू)

"इसमे मौलाना आजाद के धार्मिक विचारो, विशेष रूप से खुदा के अस्तित्व का विवरण है।"

५९ *गुबार-ए-खातिर*

अनु० मदनलाल जैन। दिल्ली, साहित्य अकादमी, १९५९

"मौलाना के उन पत्रों का सग्रह जो उन्होंने अहमदनगर के किले मे अपनी गिरफ्तारी के दौरान १९४२-१९४५ की अवधि मे लिखे।"

६० *गुबार-ए-खातिर*

सम्पा० मालिक राम नई दिल्ली, साहित्य अकादमी, १९६७ (उर्दू)

"उन पत्रों का सग्रह जो अगस्त १९४२ से जूनं १९४५ तक की अवधि मे मौलाना ने अहमदनगर किले मे अपनी नजरबन्दी के जमाने मे लिखे थे। यह पत्र उन्होने नवाब सद्र-यार जग (हबीबुर्ररहमान खाँ शेरवानी) को लिखे जो कभी सबोधित को प्राप्त नही हुए।"

६१ *चन्द औराक-ए-मुकद्दम्मा-ए-कुरान*

कलकता, अलबलाग प्रेस, nd (उर्दू)

"ये पृष्ठ अलबलाग प्रेस से प्रकाशित हुए किंतु तर्जुमानुल कुरान मे शामिल होने से रह गए थे। ये मौलाना आजाद के निजी सग्रह से उपलब्ध हुए हैं जिनको भारतीय सास्कृतिक सहयोग परिषद् को भेट कर दिए थे।"

६२ *जामे-उल-शवाहिद फी दखूल गैरूल मुस्लिम फी उलमसाजिद*

दिल्ली, मकतबा-ए-माहौल, १९६० (उर्दू)

"इस पुस्तक मे मस्जिद मे गैर मुसलमानो के प्रवेश के बारे मे विचार किया गया है। इसमे कुरान के उद्धरणो और हदीसो के द्वारा बताया गया है कि यदि मजहब के प्रचार और इस्लाम के प्रसार के निमित गैर-मुस्लिमो का इस्लामी इबादत खानों मे प्रवेश करना अनिवार्य हो जाए तो पाबन्दी आवश्यक नहीं है। इस सक्षिप्त लेख से हदीस और फिका के बारे मे मौलाना की शैक्षिक क्षमता का पता चलता है।"

६३ *जिहाद और इस्लाम*

नई दिल्ली, साहित्य अकादमी, १९७४ (उर्दू)

"मौलाना ने जिहाद (धार्मिक युद्ध), उसकी परिभाषा और महत्त्व पर अपने विचार व्यक्त किए है। यह विचारधारा कुरान तथा इस्लामी इतिहास के बारे मे मौलाना की मालूमात का खुला सुबूत है।"

६४ *जुलकरनैन*

लाहौर, शमीम बुक डिपो, nd

"तर्जुमान-उल-कुरान मे अकित एक ऐतिहासिक घटना का उल्लेख।"

६५. *जुलकरनैन या कौरवश-ए-कबीर*

अनु० बोस्तानी बरहरी तहरीन, १३३९ A H (फारसी)

"मौलाना की प्रसिद्ध पुस्तक तरजुमान-उल-कुरान के लेख सूरा-ए-कहफ के जुलकरनैन का फारसी अनुवाद।"

६६ *तकरीज, सरोद-ए-जिन्दगी*

दिल्ली, नाज पब्लिशिग हाऊस, १९३४ (उर्दू)

"असगर गोडवी के काव्य-सग्रह पर मौलाना आजाद ने प्रस्तावना-लेख लिखा है।"

६७ *तकरीर बामुकाम मिर्जापुर स्कूअेर*

१ जुलाई १९२१ (अप्रकाशित) (उर्दू)

"मौलाना ने यह भाषण मिर्जापुर स्कूअेर कलकत्ता मे १ जुलाई १९२१ को की थी। इस मे दो अभि-भाषण एक साथ सजिल्द हैं। पहला अभिभाषण उन्होने १ जुलाई को और दूसरा अभिभाषण २१ जुलाई को दिया था। पी०सी० चटर्जी ने दोनो का अग्रेजी मे अनुवाद किया है। पहले अभिभाषण मे ३ व्यक्तियो के विरुद्ध विरोध प्रकट किया गया है दूसरे भाषण मे खिलाफत आन्दोलन का परिचय है। इन दोनो भाषणो पर मौलाना को गिरफ्तार कर लिया गया।"

६८ *तजकिरा*

सम्पा० फजल-उद्दीन अहमद लाहौर, अनारकली किताबघर, १९१९ (उर्दू)

"पुस्तक मे मौलाना आजाद ने अपने वश के प्रमुख सदस्यो की जीवनी के साथ-साथ इस्लाम के विषय मे प्रमाणिक टिप्पणिया लिखी है।"

६९ *तजकिरा*

सम्पा० मालिक राम दिल्ली, साहित्य अकादमी, १९८५ (उर्दू)

"इसमे मौलाना के परिवार के कई व्यक्तियो की जीवनी है। यह इतिहास के विषय की पुस्तक है। यह न केवल जीवनी है बल्कि धर्म पर भी अहम दस्तावेज है। इस पुस्तक का सबसे पहला सस्करण मिर्जा फजलुद्दीन अहमद ने अल-बलाग प्रेस कलकत्ता से १९१९ से प्रकाशित किया था। मकतबा मेरी लायब्रेरी और किताब महल लाहौर ने भी रिप्रिन्ट प्रकाशित किया।"

७० *तफसीर-ए-पारा अलफ लाम मीम*

लाहौर, शमीम बुक डिपो, १९५८ (उर्दू)

"कुरान के पहले अध्याय की व्याख्या जो मौलाना के तर्जुमानुल कुरान से उद्धरित है।"

७१ *तफसीर-ए-पारा-ए-तिलकर्रसूल*
लाहौर, शमीम बुक डिपो, nd (उर्दू)
"कुरान के तीसरे अध्याय का उर्दू अनुवाद, तर्जुमानुल कुरान में से लिया गया।"

७२ *तफसीर-ए-पारा-ए-लक्तनालू*
लाहौर, शमीम बुक डिपो, nd (उर्दू)
"कुरान के चौथे पारे (अध्याय) का उर्दू अनुवाद, जो कि तर्जुमानुल कुरान से लिया गया है।"

७३ *तफसीर-ए-पारा-ए-लायू हिब्बुल्ला*
लाहौर, शमीम बुक डिपो, nd (उर्दू)
"कुरान के छठे अध्याय की व्याख्या जो कि तर्जुमानुल कुरान से ली गयी है।"

७४ *तफसीर-ए-पारा-ए-वलमोहसिनात*
लाहौर, शमीम बुक डिपो, nd (उर्दू)
"कुरान के पाँचवे पारा का उर्दू अनुवाद जो कि मौलाना के तर्जुमानुल कुरान से लिया गया"

७५ *तफसीर-ए-पारा-ए-वाइजा-समीऊ*
लाहौर, शमीम बुक डिपो, nd (उर्दू)
"कुरान के सातवे पारे (अध्याय) का उर्दू अनुवाद, तर्जुमानुल कुरान से लिया गया है।"

७६ *तफसीर-ए-पारा-ए-सैकूल*
लाहौर, शमीम बुक डिपो, nd (उर्दू)
"कुरान के दूसरे अध्याय का उर्दू अनुवाद जो मौलाना आजाद की पुस्तक 'तर्जुमान-उल-कुरान' से लिया गया है।"

७७ *तबररुकात-ए-आजाद*
सम्पा० गुलाम रसूल मेह हैदराबाद, अस्मानिया बुक डिपो, १९६९ (उर्दू)
"मौलाना आजाद के ९७ पत्रो और ८ लेखो का सग्रह। यह लेख धर्म, राजनीति, इतिहास, शिक्षा और सुधार के पहलूओ को समेटे हुए हैं।"

७८ *तरजुमानुल कुरान*
अनु० सैय्यद अब्दुल लतीफ खण्ड २ अलबक्रा टू अल इफिआल बम्बई, एशिया, १९६७ (अग्रेजी)
"कुरान के आठवे अध्याय का अँग्रेजी अनुवाद मौलाना के तर्जुमान-उल-कुरान के पहले तथा दूसरे सस्करणो की भूमिकाओ का अनुवाद भी शामिल है।"

७९ *तरजुमानुल कुरान*
सम्पा० मालिक राम नई दिल्ली, साहित्य अकादमी, nd ४ खड (उर्दू)
"मौलाना की कुरानी तफसीर ४ खण्डो मे डॉ० जाकिर हुसैन ने इसकी प्रस्तावना लिखी है। खण्ड १ (१९६४), खण्ड २ (१९६६), खण्ड ३ (१९६८), खण्ड ४ (१९७०)।"

८० *तरीका-ए-हज*
दिल्ली, ताज पब्लिशिग हाऊस, १९६६ (उर्दू)
"पुस्तक मे हज के महत्त्व और उसकी कार्यविधि पर प्रकाश डाला गया है।"

८१ *तरबीयत-ए-असकरी और कुरान-ए-हकीम*
लाहौर, शमीम बुक डिपो, nd (उर्दू)

८२ *तजियाते-आजाद*

दिल्ली, ताज पब्लिशिग हाऊस, nd (उर्दू)

"अलहिलाल तथा अल-बलाग मे प्रकाशित कुछ लेखो का सग्रह। यह पुस्तक विशेष रूप से मौलाना आजाद के लेखो मे व्यग्य की पहचान कराई गई है। यह पुस्तक नया किताब घर लाहौर से १९६३ में प्रकाशित हो चुकी है।"

८३ *तसव्वुरात-ए-कुरान*

सम्पा० सैय्यद अब्दुल लतीफ दिल्ली, नाज पब्लिशिग हाऊस, nd (उर्दू)

"कुरान का वास्तविक चित्रण और कुरान की मौलिक बातो से बहस की गई है।"

८४ *तसरीहात-ए-आजाद*

दिल्ली, ताज उर्दू अकादमी, nd (उर्दू)

"अलहिलाल के प्रकाशन के दौरान मौलाना के पास मुसलमानों और हिन्दुओ के बहुत से धार्मिक तथा राजनैतिक मसलो पर प्रश्न आते थे। मौलाना ने इन समस्याओ पर जो उत्तर दिए वह इस किताब मे है।"

८५ *तहरीक-ए-आजादी*

दिल्ली, किताब खाना, nd (उर्दू)

"राजनीतिक और धार्मिक पहलूओं पर लिखे गए लेखो, विशेष रूप से स्वाधीनता सग्राम के इतिहास का सग्रह। यह पुस्तक पहले भी चमन बुक डिपो, दिल्ली १९५८ मे और मकतबा-ए-माहौल लाहौर १९५९ मे प्रकाशित कर चुके हैं।"

८६ *तहरीक-ए-नज्मे-जमाअत*

सम्पा० अबु सलमान शाहजहॉपुरी लाहौर, नजीर सस पब्लिशर्स, १९७८ (उर्दू)

८७ *ताजा मजामिन-ए-अबुल कलाम आजाद*

सम्पा० मौहम्मद मुशताक अहमद मेरठ, कौमी दारूल इशाअत, १९२१ (उर्दू)

"मौलाना आजाद के कई लेखो का सग्रह।"

८८ *तारीखी मकालात*

सम्पा० खलीक अहमद निजामी दिल्ली, नदवतुल मुसन्नफीन, १३८५ AH (१९६६) (उर्दू)

"मौलाना आजाद के लेखो का सकलन।"

८९ *तालीमी "तर्के-मवालात" का मकसद*

दिल्ली, स्वराज प्रिटिग वर्क्स, १९२० (उर्दू)

९० *तौहीद-औ-शहादत*

बम्बई, बुक सेन्टर, १९६६ (उर्दू)

"अलहिलाल और अलबलाग मे प्रकाशित लेखो का सग्रह।"

९१ *दर्स-ए-वफा*

दिल्ली, उस्मानिया कुतुब खाना, nd (उर्दू)

"कहानियो का सग्रह।"

९२ *दास्तान-ए-कर्बला*

सम्पा० मुहम्मद अब्दुर्रहमान सईद कराची, नफीस अकादमी, १९५६ (उर्दू)

"कर्बला के मैदान मे हजरत इमाम हुसैन और उनके परिवार के सदस्यो की शहादत की घटना पर प्रकाश डाला गया है।"

९३ *दावत-ए-अमल*

मेरठ, कौमी दारूल इशाअत, १९२० (उर्दू)

"अल हिलाल १ जुलाई १९१४ मे प्रकाशित लेख। यह स्वराज प्रिंटिग वर्क्स, दिल्ली ने भी प्रकाशित किया है।"

९४ *दावत-ए-हक*

दिल्ली, किताब खाना, nd (उर्दू)

"अब्बासी खलीफा (शासक) मामूनुल रशीद ने कुरान के सूत्रो का विचार प्रस्तुत किया। इस विचारधारा के अनुसार कुरान अलौकिक पुस्तक नही है। उसने इस विचारधारा को धार्मिक उलेमा और बगदाद की जनता पर भी थोपना चाहा। मक्का के शेख अब्दुल अजीज अल-कनानी ने इसके बारे मे सुना तो उसने बगदाद के जन-मानस को खलीफा की डिक्टेटरशिप से छुटकारा दिलाने का निर्णय किया। वह बगदाद चला गया जहाँ उसने 'मुअतिजला' की विचारधारा की खुलकर निन्दा की। शेख को इस विचारधारा के वरिष्ठ विद्वानो के साथ 'धार्मिक वाद-विवाद' के लिए एक विशेष गोष्ठी मे बुलाया गया। इस वाद-विवाद मे शेख अब्दुल अजीज को सफलता मिली। इस घटना का विवरण इस पुस्तक मे मौजूद है।"

९५ *पदा कैद की अलामत है या आजादी की जमानत ?*

'पर्दा जो मुसलमान महिलाओ के लिए अनिवार्य है, पर मौलाना आजाद के विचार।"

९६ *पेश-लफ्ज मसनवियात-ए-मीर बाख्त्ते मीर।*

सम्पा० रामबाबू सक्सेना दिल्ली, धूमीमल धरमदास, १९५६ (उर्दू)

९७ *पेश लफ्ज पार्मो*

एक यूनानी नाटक द्वारा एस्कि लिस (३७३ BC) अनु० आसफ अली सम्पा० ख्वाजा अहमद फारूकी (उर्दू)

"मौ० आजाद द्वारा प्रस्तावना रचित।"

९८ *पार्लियामानी तकरीर*

नई दिल्ली, लोक सभा सैक्रेट्रियट, १९५४ (उर्दू)

"मौलाना आजाद तथा कुछ और नेताओ द्वारा देश की साम्प्रदायिक परिस्थिति पर ससद मे भाषणो का सकलन।"

९९ *प्रेसिडेशियल एड्रैस,*

इण्डियन नेशनल कॉग्रेस, ८३ सैशन, रामगढ, १९४० (अँग्रेजी)

"मौलाना आजाद के उर्दू भाषण का अँग्रेजी भाषण।"

१०० *प्रेसिडेशियल एड्रैस,*

स्पेशल सैशन आफ दि इण्डियन नेशनल कॉग्रेस हैल्ड ऐट दिल्ली इन सितम्बर १९२३ अलीगढ, जामिया मिल्लिया प्रैस, १९२३ (अँग्रेजी)

"कॉग्रेस के एक विशेष अधिवेशन सम्पन्न दिल्ली, १५ सितम्बर १९२३ मे मौलाना आजाद के अध्यक्षीय भाषण का अँग्रेजी मुसविदा। उन्होने स्वाधीनता सग्राम को अधिक सक्रिय बनाने के लिए रणनीति का प्रारूप बनाया। उन्होंने इस भाषण मे हिन्दू सगठन के विरुद्ध विचार व्यक्त किए और हिन्दी मुस्लिम एकता पर जोर दिया। इस अधिवेशन मे सी०आर० दास, हकीम अजमल खाँ, मोती लाल नेहरू, सी०राजगोपालाचार्य, सरदार पटेल, राजेन्द्र प्रसाद आदि ने भाग लिया।"

१०१ *फलसफा*

उसूल-औ-मुबादि की रोशनी मे अनु० मोहम्मद वारिस कामिल दिल्ली, न्यू ताज पब्लिशर्स, nd (उर्दू)

"डॉ० एस० राधाकृष्णन की पुस्तक "History of Philosophy Eastern & Western" के उर्दू अनुवाद पर मौलाना आजाद की प्रस्तावना। इसमे मौलाना आजाद पर जवाहरलाल नेहरू का एक लेख भी शामिल है।"

१०२ *फैसला-ए-मुकद्दमा-ए-जामा मस्जिद, कलकत्ता*

कलकत्ता, ट्रस्टीज जामा मस्जिद, nd (उर्दू)

"नाखुदा मस्जिद कलकत्ता के वक्फ की आर्थिक अनियमितताओ का मामला पेश किया गया। अन्तत यह विवाद कलकत्ता हाई कोर्ट से खारिज हुआ और मौलाना के सामने अन्तिम निर्णय के लिए सामने लाया गया।"

१०३ *बाकियात-ए-तर्जुमानुलकुरान*

सम्पा० गुलाम रसूल मह्र दिल्ली, इशाअत-उल-किताब, १९६२ (उर्दू)

"कुरान के अवतरणो का अनुवाद, व्याख्या और टिप्पणी जो तर्जुमानुल कुरान के खण्ड ३ मे दिए गए है। कहा जाता है कि यह सम्पूर्ण अनुवाद और व्याख्या मौलाना के मौलिक विचारो तथा लेखो पर आधारित है।"

१०४ *बॉयकाट*

मेरठ, कौमी दारूल इशाअत, १९२१ (उर्दू)

१०५ *बुनियादी तसव्वुरात-ए-कुरान*

अनु० सैयद अब्दुल लतीफ हैदराबाद, एकेडेमी ऑफ इस्लामिक स्टडीज, १९६० (उर्दू)

" Basic Concepts of the Quran"" का उर्दू अनुवाद। इसमे मौलाना ने कुरान के बारे मे अपने विचारो का सक्षिप्त विवरण दिया है।"

१०६ *बेसिक कोसेप्टस ऑफ दि कुरान*

अनु० सैयद अब्दुल लतीफ हैदराबाद, एकेडेमी ऑफ इस्लामिक स्टडीज, १९५८ (अप्रकाशित) (अग्रेजी)

"इसमे मौलाना के कुरान सम्बन्धी विचारो को सकलित किया गया है। 'सूरत-ए-फातिहा' के सदर्भ मे कुरानी अध्ययन के लिए इसमे सम्पूर्ण प्रस्तावना भी है।"

१०७ *रद्दे-मिर्जाईअत*

लाहौर, कुतुबखाना-ए-दावते इस्लाम, १९३७

१०८ *(रिसाला) अजीमत-औ-दावत*

कलकत्ता, पब्लिक लायब्रेरी nd (उर्दू)

"मौलाना आजाद की प्रसिद्ध पुस्तक 'तजकिरा' के कुछ पृष्ठो को नाज पब्लिशिग हाऊस ने भी प्रकाशित किया है।"

१०९ *रसूल-ए-अरबी*

लाहौर, मक्तबा अजमत, nd (उर्दू)

"इस्लाम के महान पैगम्बर हजरत मुहम्मद साहेब की पवित्र जीवनी और श्रेष्ठ चरित्र का अध्ययन।"

११० *रसूल-ए-रहमत सरित-ए-तैयबा पर मौलाना अबुल कलाम आजाद के मकालात।*

सम्पा० गुलाम रसूल मह दिल्ली, एतिकाद, १९८२ (उर्दू)

"अतिम पैगम्बर मुहम्मद रसूल उल्ला की पवित्र जीवनी पर लेखो का सग्रह।"

१११ *नक्शए-ए-आजाद*

सम्पा० गुलाम रसूल मह लाहौर, किताब मजिल, १९५८ (उर्दू)

"गुलाम रसूल मेहर के नाम मौलाना के खतो का मग्रह और मिर्जा गालिब पर मौलाना के विचार "

११२ *नवादिर-ए-अबुल कलाम आजाद*

सम्पा० जहीर अहमद खॉ, अलीगढ, सर सैयद बुक डिपो, १९६२ (उर्दू)

"मौलाना आजाद के कुछ लेखो का सग्रह।"

११३ *निगारिशात-ए-आजाद*

दिल्ली, न्यूताज आफिस, १९६० (उर्दू)

"धर्म, इस्लाम का इतिहास और नीति आदि विषयो पर लिखे लेखो का सग्रह।"

११४ *नेशनल तहरीक*

(उर्दू)

'१९३९ के दौरान लिखा हुआ अप्रकाशित मुसविदा जो इण्डियन कोसिल फार कल्चरल रिलेशन्स के पुस्तकालय मे उपलब्ध है।"

११५ *विलादत-ए-नबवी*

दिल्ली, चमन बुक डिपो, १९६२ (उर्दू)

"पुस्तक मे आखिरी पैगम्बर के जन्म का महत्त्व और उस पावन धरती, जो कि उस समय मे पिछडे क्षेत्रो मे थी, की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि बयान की गई है। वह पूरे विश्व के लिए कल्याणकारी थे।"

११६ *मकातिब-ए-अबुल कलाम*

लाहौर, अदबिस्तान, nd (उर्दू)

"मौलाना आजाद के पत्रो का सग्रह।"

११७ *मकातिब-ए-अबुल कलाम आजाद*

सम्पा० अबु सलमान शाहजहॉपुरी कराची, उर्दू एकेडेमी, १९६८ (उर्दू)

"१९०० से १९५७ के दौरान लिखे मौलाना के पत्रो का सग्रह।"

११८ *मकालात-ए-अलहिलाल*

लाहौर, अदबिस्तान, nd (उर्दू)

"मौलाना के लेखो का सग्रह जो समय-समय से अल-हिलाल मे प्रकाशित हुए। इदारा-ए-इशाअतुल कुरान दिल्ली मे रिप्रिंट प्रकाशित किया।"

११९ *मकालात-ए-आजाद*

सम्पा० अब्दुल्ला बट्ट लाहौर, कौमी किताबखाना, १९४४ (उर्दू)

"मौलाना के विभिन्न लेखों का सग्रह।"

१२० *मकालात-ए-अबुलकलाम आजाद*

दिल्ली, चमन बुक डिपो, nd (उर्दू)

"मौलाना के लेखो का सग्रह जिसमें उन्होंने मुसलमानो की स्वतन्त्रता, उनके दायित्व और धार्मिक मान्यताओ के सम्बन्ध में विचार व्यक्त किये हैं। १९५७ मे दारूल इशाअत कराची ने उसका रिप्रिंट प्रकाशित किया।"

१२१ *मकालिमात-ए-अबुलकलाम आजाद*

लाहौर, मकतबा-ए-एहबाब, nd (उर्दू)

"मौलाना आजाद के साहित्यिक तथा धार्मिक लेखों का सग्रह और अलहिलाल के पाठको के पत्रों के प्रत्योत्तर लेख शामिल हैं।"

१२२ *मकाम-ए-जमाल-उद्-दीन अफगानी*

(उर्दू)

"मुस्लिम विद्वान जमालुद्दीन अफगानी की जीवनी के अलावा मुस्लिम ससार के समकालीन हालात का नक्शा।"

१२३ *मजामीन-ए-अबुल कलाम*

कराची, दारूल इशाअत, nd (उर्दू)

"मौलाना के कई लेखों का सग्रह।"

१२४ *मजामीन-ए-अबुल कलाम आजाद*

२ खण्ड दिल्ली, हिन्दुस्तानी पब्लिशिग हाऊस, १९४४ (उर्दू)

खण्ड १ सम्पा० सिफरिश हुसैन

खण्ड २ बद्रुल हसन

'विभिन्न विषयों विशेषत इस्लामी दर्शन तथा इतिहास और उर्दू साहित्य के विषयों पर मौलाना आजाद के लेखों का सकलन।"

१२५ *मजामीन-ए-अलबलाग*

सम्पा० महमूदुल हसन सिद्दीकी दिल्ली, हिन्दुस्तान पब्लिशिग हाऊस, १९४९ (उर्दू)

"अल बलाग में प्रकाशित लेखो का सग्रह। आईना-ए-अदब में १९८१ मे भी रिप्रिंट प्रकाशित हो चुका है।"

१२६ *मजामीन-ए-अलहिलाल*

सम्पा० मुहम्मद रफीक दिल्ली, इदारा-ए-इशाअतुल कुरान, nd (उर्दू)

"अल-हिलाल में प्रकाशित लेखो का सग्रह। यह अखबार मौलाना ने १९१२ में कलकत्ता से निकाला था। यही लेख अदबिस्तान लाहौर ने भी प्रकाशित किए हैं।"

१२७ *मजामीन-ए-आजाद*

सम्पा० अब्दुल्ला बट्ट लाहौर, कौमी कुतुबखाना, १९४४

"मौलाना के लेखो का एक सग्रह।"

१२८ *मजामीन-ए-लिसान-उल-सिद्क*

सम्पा० अब्दुल कवी दिसनवी लखनऊ, नसीम बुक डिपो, १९६७ (उर्दू)

"मौलाना के सबसे पहले अखबार लिसान-उल-सिद्क (जो कलकत्ता से १९०३ में जारी हुआ) मे प्रकाशित लेखों का सग्रह। इन लेखों की शैली और भाषा के चटखारे ने न केवल पाठको को बल्कि मौलाना आजाद के समकालीन लेखकों को भी प्रभावित किया।"

१२९ *मजमूआ-ए-मजामीन अबुल कलाम आजाद*

सम्पा० मुश्ताक अहमद मेरठ, कौमी दारूल इशाअत, nd (उर्दू)

"मौलाना आजाद के लेखो का सग्रह।"

१३० *मलफूजात-ए-आजाद*

सम्पा० मुहम्मद अजमल खाँ दिल्ली, हाली पब्लिशिग हाऊस, १९५९ (उर्दू)

"इस्लाम धर्म की रोशनी मे दिए गए कुछेक प्रश्नों के उत्तरों का सग्रह।"

१३१ *मसअला-ए-खिलाफत*

दिल्ली, हाली पब्लिशिंग हाउस, १९६१ (उर्दू)

"प्रातीय खिलाफत कानफ्रेस का अध्यक्षीय भाषण, यह समस्या खिलाफत पर विशद चर्चा को आमत्रण देती है। इसमे खिलाफत की परिभाषा, इतिहास और पृष्ठभूमि को चर्चा का विषय बनाया गया है। खिलाफत पर शोध करने के लिए आवश्यक है।"

१३२ *मार्टरडम आफ हुसैन*

अनु० मुहम्मद इकबाल सिद्दीकी दिल्ली, नूर पब्लि० १९८५ (अग्रेजी)

"हजरत इमाम हुसैन के बलिदान की घटना और कर्बला की दूसरी घटनाओं का मार्मिक विवरण।"

१३३ *मुसलमान और कॉंग्रेस*

लाहौर, आजाद बुक डिपो, nd (उर्दू)

"मुसलमानो का कॉंग्रेस में शामिल होने की समस्या पर मौलाना के विचार और प्रतिक्रिया।"

१३४ *मुसलमान औरत*

लाहौर, एम० सनाउल्ला खाँ, १९५६ (उर्दू)

"फरीद वाजिद आफदी की अरबी पुस्तक 'अल-मिरातुल मुसलिया" का उर्दू अनुवाद लेखक ने इस पुस्तक मे मिश्र के वर्तमान समाज में महिलाओ की दशा का जायजा लिया है। यह अनुवाद मौलाना की साहित्यिक क्षमता का श्रेष्ठ नमूना है और अनुवाद पर मौलिकता का सदेह होता है।"

१३५ *मेरा अकीदा*

सम्पा० गुलाम रसूल मह कराची, मक्तबा-ए-माहौल, १९५९ (उर्दू)

"कई पत्रो का सग्रह जिनमें मौलाना ने तरजुमान्-उल-कुरान के पहले खण्ड के पहले प्रकाशन के बाद मौलाना के विश्वास तथा श्रद्धा के बारे में मुसलमानों मे सदोहों और शकाओं को दूर करने के सिलसिले मे स्पष्टीकरण निहित लेख लिखे।"

१३६ *मौलाना अबुल क्लाम आजाद का पैगाम*

दिल्ली, उर्दू अकादमी, १९८५ (उर्दू)

"मौलाना आजाद का एक भाषण"

१३७ *मौलाना अबुल क्लाम आजाद की तारीखी खुत्बा*

दिल्ली, उर्दू अकादमी, १९८५ (उर्दू)

"मौलाना आजाद ने देश के विभाजन (१९४७) के अवसर पर जामा मस्जिद दिल्ली में एक ऐतिहासिक भाषण दियाा के नाम नौ (९) पत्रों और सबोधित के उत्तरो का सग्रह।"

१३९ *मौलाना अबुल क्लाम आजाद का गैर-मतबुआ क्लाम*

सम्पा० अबु सलमान शाहजहाँपुरी, कराची, १९६६ (उर्दू)

"मौलाना अबुल कलाम आजाद का मौलिक अप्रकाशित काव्य सग्रह।"

१४० *मौलाना आजाद का नजरिया-ए-सहाफत*

सम्पा० कुतुबुल्ला लखनऊ, उ०प्र० उर्दू अकादमी, १९८८ (उर्दू)

"मौलाना आजाद की शैली पत्रकारिता और दृष्टिकोण पर रोशनी डाली गई है।"

१४१ *शहीद-ए-कर्बला*

बिजनौर, कुतुब खाना नई जन्तरी, १९३० (उर्दू)

"मौलाना ने इस्लामी इतिहास की सबसे महत्त्वपूर्ण घटना, शहादत-ए-कर्बला का अध्ययन किया है जिसमें हजरत इमाम हुसैन और उनके रिश्तेदारों की आहुति का उल्लेख किया गया है।"

१४२ *शाहराह-ए-मकसूद*

सियासत-ए-हिन्द में मुसलमानों के लिए राहे-अमल दिल्ली, जैयद बर्की प्रैस, nd (उर्दू)

"पहला सस्करण, कलकत्ता, अलहिलाल, १९१२"

१४३ *शख्सियत-ए-जुलकरनैन अल-मुजकिरा फी-उल-कुरान*

बगदाद, दारूल बसरी, nd (अरबी)

"तर्जुमान-उल-कुरान के कुछ अशों का अरबी अनुवाद जिसमें जुलकरनैन के चरित्र का चित्रण किया गया है। जुलकरनैन एक सफल शासक समझा जाता था जिसने हारूत और मारुत के अत्याचारों से जनता को छुडाया उलेमा में इस चरित्र के बारे में मतभेद पाये जाते है। मौलाना ने कुरान के तर्जुमान में उसके व्यक्तित्व की पहचान कराई है।"

१४४ *स्पीच एट मिर्जापुर आन १ एण्ड १५ जुलाई १९२१*

(अप्रकाशित) (अग्रेजी)

"मौलाना आजाद ने पहली और पन्द्रह जुलाई १९२१ को कलकत्ता के मिर्जापुर स्कूअर के मैदान मे भाषण दिये थे।"

१४५ *स्पीच बामुकाम मिर्जापुर स्कूएर, १ जुलाई १९२१*

(अप्रकाशित) (उर्दू)

"मौलाना आजाद ने असहयोग आन्दोलन के दौरान कलकत्ता मे इस स्थान पर भाषण दिया।"

१४६ *स्पीचेज आफ मौलाना अबुल कलाम आजाद*

१९३९, १९४१, १९४२, १९४३, १९४५, १९५७ (अप्रकाशित) (अग्रेजी)

१४७ *स्पीचेज आफ मौलाना अबुल कलाम*

खड १, ३ दिसम्बर १९३९, ८ जुलाई १९४६, कलकत्ता, नेशनल लायब्रेरी, nd (उर्दू)

"मौलाना आजाद के वे भाषण तथा वक्तव्य जो कि अमृत बाजार पत्रिका, कलकत्ता में प्रकाशित हुए।"

१४८ *स्पीचेज आफ मौलाना अबुल कलाम आजाद,*

खण्ड २, १९४६-४८, अप्रकाशित (अग्रेजी)

"मौलाना आजाद के अमृत बाजार पत्रिका मे प्रकाशित भाषण और वक्तव्य।"

१४९ *स्पीचेज, इनओगूरल एड्रेसेज एड प्रेसिडेशियल एड्रेसेज, १९५५-५८*

(अग्रेजी) (अप्रकाशित)

"विवरणिका (१) स्पीचेज, लेईंग आफ दि फॉऊडेशन स्टोन आफ दि नेशनल म्यूजिम, नई दिल्ली, १२ मई १९५५, ५ पृ०, (२) इनओगूरल एड्रेस, यूनेस्को सेमिनार ऑन डेव्लपमेट आफ पब्लिक लायब्रेरिज इन एशिया, नई दिल्ली, ६ अक्तूबर १९५५, ६ पृ०, (३) एड्रेस, सेकेण्ड इण्टर यूनिवर्सिटी फेस्टिवल, २३ अक्तूबर १९५५, नई दिल्ली, ८ पृ०, (४) प्रेसिडेंशियल एडवाईजरी बोर्ड आफ एजूकेशन, नई दिल्ली, १४ जनवरी १९५६, ११ पृ०, (५) प्रेसिडेंशियल एड्रेस, सेकण्ड कॉन्फ्रेस आफ दि इण्डियन नेशनल कमीशन फार यूनेस्को, ६ फरवरी १९५६, नई दिल्ली, ८ पृ०, (६) वेलकम एड्रेस टू देएर इम्पीरियल मजेस्टीज दि शहनशाह एण्ड दि एम्प्रेस आफ ईरान, नई दिल्ली, दि नाईनटीनथ, फरवरी, १९५६, ३ पृ०, (७) एड्रेस—नाईनूथ सेशन आफ दि जनरल कानप्रेंस आफ यूनेस्को, ५ नवम्बर १९५६, १२ पृ०, (८) कन्क्लूडिंग एड्रेस, नाइन्थ सेशन आफ दि जनरल कानफ्रेस आफ यूनेस्को, ३ पृ०, (९) प्रेसिडेंशियल एड्रेस, २४थ मीटिंग आफ दि मेन्ट्रल एडवाईजरी बोर्ड आफ एजूकेशन, नई दिल्ली, १६ जनवरी, १९५७, ७ पृ०, (१०) स्पीच, १०थ मीटिंग आफ दि आल इण्डिया कासिल फार टेकनिकल एजूकेश्न, २२ फरवरी १९५७, नई दिल्ली, ४ पृ०,

(११) एड्रेस, स्टेट एजूकेशन मिनिस्टर्स कानफ्रेस, नई दिल्ली, २० सितम्बर १९५७, ७ पृ०, (१२) वेलकम एड्रेस, फोर्थ इण्टर यूनिवर्सिटी यूथ फेस्टिवल, १ नवम्बर १९५७, नई दिल्ली, ३ पृ०, (१३) प्रेसिडेशियल एड्रेस, २५थ मीटिंग आफ दि सेंट्रल एडवाईजरी बोर्ड आफ एजूकेशन, नई दिल्ली, ७ फरवरी १९५८, १० पृ०, (१४) प्रेसिडेंशियल एड्रेस, जनरल एसेम्बली मीटिंग आफ दि इण्डियन कॉसिल फार कल्चरल रिलेशन्स, १४ फरवरी १९५८, ६ पृ०।"

१५० *स्पीचेज बाई मौलाना आजाद*

२ खड नई दिल्ली, पब्लिकेशन डिवीजन, १९५६ (अग्रेजी)

"इन भाषणो का अग्रेजी अनुवाद सैयद अब्दुल लतीफ ने किया। यह एशिया पब्लिशिग हाऊस से १९६६-६७ से प्रकाशित किया और यही हैदराबाद से १९७८ में प्रकाशित हुआ है।"

१५१ *स्प्रिट आफ इस्लाम ऐ समरी आफ दि कमेट्री आफ मौलाना अब्दुल कलाम आजाद ऑन अल-फातेहा*

सम्पा० आशफाक हुसैन बम्बई, एशिया पब्लिशिग हाऊस, १९५८ (अग्रेजी)

"कुरान-ए-करीम का पहला अध्याय। कुरान के बहुत से अनुवादो तथा व्याख्यो का अध्ययन करने के बाद सम्पादक अशफाक हुसैन ने मौलाना की व्याख्या की बडी प्रशसा की है। इसमे यह कुरान के पहले अध्याय, 'सूरत-ए-अलफातिहा' का निचोड है, जो एक वन्दना है।"

१५२ *सदा-ए-रफअत*

सम्पा० मिर्जा जाँबाज दिल्ली, आजाद अकादमी, nd (उर्दू)

"मौलाना आजादी के धार्मिक एतिहासिक और साहित्यिक लेखो का सग्रह जो उनकी असीम विद्वता और निर्मल शैली का श्रेष्ठ नमूना है। यह पुस्तक मलिक पब्लिशर्स लायलपुर से भी प्रकाशित हो चुकी है।"

१५३ *सदा-ए-हक*

सम्पा० मसूदुल हसन दिल्ली, हाली पब्लिशिग हाऊस, nd (उर्दू)

"मौलाना आजाद के भाषणों का सग्रह जो उन्होंने जीवन के विभिन्न पहलूओ पर धार्मिक प्रकाश मे विभिन्न स्थानों पर दिए थे।"

१५४ *सभापति के भाषण*

रामगढ, कॉंग्रेस कमेटी, nd

"इण्डियन नेशनल कौंग्रेस के अधिवेशन, रामगढ, सम्पन्न १९४० के अवसर दिए गए मौलाना आजाद के अध्यक्षीय भाषण का हिन्दी अनुवाद।"

१५५. *सरमद-ए-शहीद*

लाहौर, मलिक मुहम्मद उद्दीन, nd. (उर्दू)

"एक लेख, सरमद के सम्बन्ध में है जो औरगजेब के समय में एक वरिष्ठ सूफी थे। सरमद को बादशाह और उसकी कट्टरपथी उलेमा-मण्डली के आदेश पर फाँसी दे दी गई थी। यह पुस्तक तनवीर पब्लिशर्स लखनऊ ने भी प्रकाशित की है।"

१५६ *सुबहे-उम्मीद*

सम्पा० हाफिज फैयाज अहमद दिल्ली, सगम किताब घर, १९५९ (उर्दू)

"मौलाना की कुछ तहरीरो का सग्रह है।"

१५७ *सौरात-उल-हिन्द अल-सियासिया*

काहिरा, मतबाउत मनार, १९२३ (अरबी)

"कलकत्ता कोर्ट के सामने मौलाना आजाद के भाषण का अरबी अनुवाद।"

१५८ *हकीकतुल-सलात*

बनारस, दारूल कुतुब, nd (उर्दू)

"एक अभिभाषण ज़ो मौलाना आजाद ने इस्लाम की प्राथमिक प्रणाली-नमाज के विषय में किया था।"

१५९ *हजरत यूसुफ अलेहस्सलाम*

दिल्ली, चमन बुक डिपो, nd (उर्दू)

"एक पैगम्बर की जीवनी और तत्कालीन घटनाएँ।"

१६०. *हमारी आजादी*

एक तारीख जो आपबीती भी है। अनु मुहम्मद मुजीब बम्बई, ओरियन्ट लोंगमेस, १९६१ (उर्दू)

"मौलाना आजाद की पुस्तक 'इण्डिया विंस फ्रीडम' का उर्दू अनुवाद।"

१६१ *जिक्रा*

१९२५ (उर्दू)

"हजरत मुहम्मद साहेब की जीवनी।"

१६२ *हिन्दुस्तान पर हमला और मुसलमानो के फराईज*

मेरठ, कौमी दारूल इशाअल १९२१ (उर्दू)

पत्र-पत्रिकाऐं
मौलाना आज़ाद द्वारा संपादित अथवा सहयोग प्रदत्त

खंड 'ख'

१६३ *अल-जामिया*
(कलकत्ता) (१९२३/२४)
"मौलाना अब्दुल रज्जाक मलिहाबादी के सहयोग से।"

१६४. *अल-बलाग* (कलकत्ता) १९१५/१६

१६५ *अल-नदवा* (लखनऊ) १९०५/०६

१६६. *अल-मिसबाह* (कलकत्ता) १९००

१६७. *अल-हिलाल* (कलकत्ता) १९१२/१४

१६८ *अल-हिलाल* (सानी) १९२७

१६९ *एहसनुल अखबार* (कलकत्ता) १९०७

१७० *खदग-ए-नजर* (लखनऊ) १९००

१७१. *दारुल सलतनत* (कलकत्ता) १९०७

१७२ *पैगाम* (कलकत्ता) १९२१

१७३ *पैयाम* (कलकत्ता) १९२७

१७४. *लिसानुल सिद्क* (कलकत्ता) १९०३/०५

१७५. *नैरग-ए-आलम* (कलकत्ता) १८९९

१७६ *वकील* (अमृतसर) १९०६/०८

भाग २

मौलाना आज़ाद पर रचित पुस्तकें

खंड 'क'

१७७ **अजमत अतल्लाह मलिहाबादी**
सवानेह-ए-हयात
मौलाना अबुल कलाम आजाद दिल्ली, अन्सारी प्रेस, १९४०, उर्दू
"मौलाना की जीवनी तथा उनके लेखो तथा भाषणो का सकलन।"

१७८ **अजीज (के के)**
दी इन्डियन खिलाफत मूवमेंट १९१५–१९३३ कराची, पाक पब्लिशर्स, १९७२ (अंग्रेजी)

१७९ **अबु सलमान शाहजहाँपुरी**
अबुल कलाम आजाद बाहैसियत मुफस्सिर-व-मोहद्दिस
कराची, इदारा-ए-तसनीफ-व-तहकीक, १९८४ (उर्दू)
"मौलाना आजाद की इस्लाम के विषय पर विचित्र पकड से बहस करती है। इस क्षेत्र मे मौलाना के स्थान का निश्चय करती है।"

१८० **अबु सलमान शाहजहाँपुरी**
अबुल कलाम व अब्दुल माजिद अदबी माअर्का
कराची, इदारा-ए-तसनीफ-औ-तहकीक, १९८७ (उर्दू)
"उर्दू मे शब्दो तथा मुहाविरो के उपयुक्त प्रयोग पर मौलाना आजाद और मौलाना अब्दुल माजिद दरियाबादी मे एक साहित्यिक वाद-विवाद हुआ था जो अल-हिलाल तथा अलबलाग मे १९१३ मे प्रकाशित हुआ था। इसी साहित्यिक वाद-विवाद की समालोचना पुस्तक मे है।"

१८१ **अबु सलमान शाहजहाँपुरी**
उर्दू की तरक्की मे मौलाना अबुल कलाम आजाद का हिस्सा
कराची, इदारा-ए-तसनीफ-व-तहकीक, nd (उर्दू)
"दो विषयो पर लिखा गया है
(१) मौलाना का अदबी योगदान और
(२) उर्दू जबानो-अदब की प्रगति मे मौलाना का योगदान।"

१८२ **अबु सलमान शाहजहाँपुरी**
मौलाना अबुल कलाम आजाद
असलूब कराची, मकतबा-ए-असलूब, १९८६ (उर्दू)
"मौलाना आजाद के व्यक्तित्व और उनकी साहित्यिक धार्मिक और राजनीतिक रचनाओं पर भारत और पाक के सुप्रसिद्ध लेखको के लेखो का सकलन।"

१८३ **अबु सलमान शाहजहाँपुरी**
मौलाना अबुल कलाम आजाद और उनके मआसिरीन
(उर्दू)
"मौलाना अबुल कलाम आजाद का उनके समकालीन विद्वानो तथा नेताओ के साथ तुलनात्मक अध्ययन।"

१८४ **अबु सलमान अलहिन्दी**
इमामुल हिन्द
कराची, मकतबा-ए-असलूब, १९६२ (उर्दू)
"मौलाना अबुल कलाम आजाद के जीवन और कृतित्व का विस्तारपूर्वक अध्ययन करती है। अबुल सलमान शाहजहाँपुरी के नाम में भी प्रविष्टियाँ उपलब्ध हैं।"

१८५ **अबु सलमान शाहजहाँपुरी**
मौलाना अबुल कलाम आजाद
लाहौर, np १९६७ (उर्दू)
"जीवन-परिचय"

१८६ **अबुल हसन अली नदवी**
मौलाना अबुल कलाम आजाद (उर्दू)
"पुस्तक पुराने चराग, भाग २, लखनऊ, मक्तबा-ए-फिर्दोस, १९८६ से लिया गया है।"

१८७ **अब्दुल कवी दसनवी**
अबुल कलाम आजाद
दिल्ली, साहित्य अकेडमी, १९८७ (उर्दू)
'मौलाना आजाद की एक जीवनी"

१८८ **अब्दुल कवी दसनवी**
मुताअला-ए-गुबार-ए-खातिर
नई दिल्ली, मक्तबा जामिया, १९८१ (उर्दू)
"मौलाना द्वारा लिखित पत्रो की व्याख्या, पृष्ठभूमि और बौद्धिक मूल्याकन प्रस्तुत किया गया है। लेखक ने अपने पत्रो मे प्रमुख लेखको, जैसे गालिब, सरसैयद, हाली और शिबली के उल्लेख भी है।"

१८९ **अब्दुल गफ्फार (काजी मुहम्मद)**
आसार-ए-अबुल कलाम आजाद
नफस्याती मुताअला दिल्ली, आजाद किताब घर, १९६३ (उर्दू)
"मौलाना आजाद का जीवन-परिचय।"

१९० **अब्दुल रज्जाक मलीहाबादी**
जिक्र-ए-आजाद मौलाना अबुल कलाम आजाद की रिफाकत मे अडतीस साल
कलकत्ता, दफ्तर आजाद हिन्द, १९६० (उर्दू)
"मौलाना आजाद के जीवन तथा कार्यों के सम्बन्ध मे लेखक के विचार।"

१९१ **अब्दुल रहमान सईद, सम्पा०**
दास्ताने-करबला
कराची, नफीस एकेडमी, १९५६ (उर्दू)
"करबला की घटना पर मौलाना आजाद के विचार।"

१९२ **अब्दुल माजिद दरियाबादी.**
उर्दू का अदीब-ए-आजम
मौलाना अबुल कलाम आजाद का हुस्न-ए-इशा और मुरक्का-ए-सीरत पर एक नजर। कराची, इदारा-ए-तसनीफ-औ-तालीफ, १९८६ (उर्दू)

"मौलाना आजाद की जीवनी और लेखक के साथ उनका पत्राचार। पुस्तक में लेखक की मौलाना के बारे में कुछ लेख भी शामिल हैं जो 'सिदूक-ए-जदीद' और दूसरी पत्रिकाओं में भी शामिल है।"

१९३ **अब्दुल मुगनी**
मौलाना अबुल कलाम आजाद जहन-औ-किरदार
नई दिल्ली, अजुमन तरक्की-ए-उर्दू, १९८९ (उर्दू)

"मौलाना आजाद की जीवनी और उनके विचार, विशेष रूप से उनके धार्मिक विचारो और चरित्र के साथ-साथ कुरान की व्याख्या की गई है।"

१९४ **अब्दुल मुनअम अल-नामिर.**
अबुल कलाम आजाद
२ खण्ड काहिरा, अल-मिश्र अल-मजलिस अल-नशनून; अल इस्लामिया, १९७३ (उर्दू)

१९५ **अब्दुल वदूद, सम्पा०**
मौलाना अबुल कलाम आजाद तहरीक-ए-आजादी व यकजहती
दिल्ली, किताब वाला, १९८३ (उर्दू)

१९६ **अब्दुल वहीद खाँ**
तकसीम-ए-हिन्द
लाहौर, मकतबा ऐवाने-अदब, १९५९ (उर्दू)

"यह पुस्तक मौलाना आजाद की पुस्तक "हमारी आजादी" के उत्तर मे लिखी गई है। लेखक ने स्वतन्त्रता सग्राम मे जिनहा की भूमिका पर बल दिया है।

१९७ **अब्दहू (जी रसूल)**
एजूकेशनल आईडियाज आफ मौलाना अबुल कलाम आजाद
नई दिल्ली, स्ट्रलिग पब्लि०, १९७३ (अग्रेजी)

"मौलाना आजाद के शैक्षिक दृष्टिकोण और धर्म पर आधारित पारम्परिक पद्धति तथा विज्ञान व तकनीक पर आधारित नवीन धाराओं के बीच समन्वय की विशेष धारणा का विशद अध्ययन।"

१९८ **अयर (सुब्रामनिया)**
रोल आफ मौलाना अबुल कलाम आजाद इन इण्डियन पालिटिक्स
हैदराबाद, अबुल कलाम आजाद ओरियन्टल रिसर्च इस्टिट्यूट, १९६८ (अग्रेजी)

१९९ **अर्श मल्सियानी**
अबुल कलाम आजाद
नई दिल्ली, पब्लिकेशन्स डिवीजन, १९७६ (अग्रेजी)

"मौलाना अबुल कलाम आजाद का जीवन-चरित्र।"

२०० **अर्श मल्सियानी**
अबुल कलाम आजाद
सवानेह-हयात नई दिल्ली, पब्लिकेशन्स डिवीजन, १९७४ (उर्दू)

अबुल कलाम आजाद की जीवनी।"

२०१ **असद ✓✓। (सैयद)**
मौलाना अबुल कलाम आजाद
नई दिल्ली, चिल्ड्रन बुक सोसाईटी, १९७६

"मौलाना आजाद की जीवनी बच्चों के अध्ययन के लिए।"

२०२ **असारी (असरबिन याहिया)**
मौलाना आजाद एक सियासी डायरी
धूलिया, आलिया पब्लि०, १९८२ (उर्दू)
"मौलाना आजाद का जीवन चरित्र तथा विचारों का विवरण तथा भारत की कुछेक महत्त्वपूर्ण राजनीतिक घटनाओ का उल्लेख।"

२०३ **अहमद अमीन**
जईम्मा अलहस्लाह फिऊल-असर अल-हदीस
बेरुत, दारूउल-किताब अलजदीद nd (अरबी)

२०४ **अहमद हसन कमाल**
मौलाना अबुल कलाम आजाद ने बर्रे-सगीर पाक-औ-हिन्द-औ-बगलादेश के बारे मे क्या कहा था?
मुलतान, मकतबा अफकार-ऐ-नौ, १९७३ (उर्दू)
"उपमहाद्वीप के बारे मे मौलाना के विचार।"

२०५ **आजाद (जगन्नाथ).**
अबुल कलाम आजाद
लखनऊ, इदारा-ए-फरोगे-उर्दू, १९५८ (उर्दू)
"जीवनी"

२०६ **इमदाद साबरी.**
इमामुल हिन्द मौलाना अबुल कलाम आजाद
कराची, इदारा-ए-तसनीफ-व-तहकीक, १९८६ (उर्दू)
"मौलाना इमदाद साबरी ने, जो कि मौलाना आजाद के निकट सहयोगी थे, मौलाना आजाद की जीवनी लिखी है। इसमे उन्होने मौलाना की विद्वता, बुद्धिजीवी दृष्टिकोण और उनके लेखों की प्रशसा की है।"

२०७ **इसलाम अली**
मौलाना आजाद की शख्सियत
लाहौर, अदबीयात, १९६४ (उर्दू)
"जीवनी"

२०८ **उमरी (मौहम्मद शुऐब)**
इस्लामी एहकाम-औ-फिकाह मे तर्मीम मौलाना आजाद की नजर मे
बगलूर, np, nd
"इस्लामी कानून पर मौलाना का स्पष्टीकरण।"

२०९ **उस्मानी (मसूदुल हसन)**
अबुल कलाम आजाद एहवाल-औ-आसार
लखनऊ, मौलाना आजाद मैमोरियल एकेडेमी, १९७७ (उर्दू)
"मौलाना आजाद के व्यक्तित्व के विभिन्न पहलूओ पर प्रकाश डाला गया है।"

२१० **कबीर (हुमायूँ), सम्पा०**
अबुल कलाम आजाद
नई दिल्ली, पब्लि० डिवीजन, १९५८
"मौलाना आजाद का अध्ययन।"

२११ **कबीर (हुमायूँ), सम्पा०**
मौलाना अबुल कलाम आजाद ए मेमोरियल वालियोम
बम्बई, एशिया पब्लि० हाउस, १९५९ (अग्रेजी)

"विवरण
१ नेहरु दि पासिग आफ ए ग्रट मैन, पृ० १-४
२ राधा कृष्णन दि सर्च एण्ड दि अटेनमेंट, पृ० ५-७
३ मशीगनन माई मीटिंगज़ू विद मौलाना आजाद, पृ० २७-२९
४ कृपलाणी दि वॉईस आफ रीजन, पृ० ३०-३६
५ सैयद महमूद ए रेसप्लैंडेट पर्सनल्टी, पृ० ३७-५१
६ हबीब दि रेवोल्यूश्नरी मौलाना, पृ० ७९-१००
७ अब्दुल लतीफ एन अनफिनिश्ड मास्टर पीस, पृ० ११६-१३३
८ मुजीब दि तजकिरा ए बायोग्राफी इन सिम्बलस्, पृ० १३१-१५२
९ फैजी दि रिइन्टरप्रीटेशन आफ इस्लाम्, पृ० १५३-१८१
१० मैक्डोनल्ड मौलाना आजाद एण्ड दि स्पैरोज, पृ० १८२-१८९
११ राजागोपालाचर्य टलैमिक एरर, पृ० १९४-१९५
१२ चागला दि कास्टिट्यूशन आफ इण्डिया, पृ० १९६-२००
१३ ताराचन्द इण्डिया एण्ड दि वैस्ट, पृ० २११-२४० आदि"

२१२ **कबीर (हुमायूँ), सम्पा०**
मौलाना आजाद ए होमेज
दिल्ली, पब्लि० डिवीजन, १९५८ (अग्रेजी)

"मौलाना आजाद की जीवनी और योगदान पर लेखो का सग्रह, श्रद्धाजलि सहित जो कि मौलाना की ७०वीं वर्षगाँठ के उपलक्ष्य मे ससार भर के बुद्धिजीवियों और साहित्यकारों ने उनको भेंट की।"

२१३ **कासिमी (अखलाक हुसैन)**
मौलाना आजाद की कुरानी बसीरत
लाहौर, सुन्नी पब्लि०, डिवीजन, १९८८ (उर्दू)

"पुस्तक मे मौलाना आजाद के धार्मिक विचारों तथा फिकह और शरियत के बारे में स्पष्टीकरण को पेश किया गया है।"

२१४ **कुमार (एच० एल०)**
अपोसिल आफ यूनीटी बायोग्राफिक्ल स्टडी आफ मौलाना अबुल कलाम आजाद
लाहौर, हीरो पब्लि०, १९४४ (अग्रेजी)

"स्कूली बच्चो के लिए मौलाना आजाद की सक्षिप्त जीवनी।"

२१५ **कैसर जमाल**
मौलाना आजाद के कारनामे
लखनऊ, करीम बुक डिपो, १९४५ (उर्दू)

"मौलाना आजाद का जीवन चित्रण तथा उनके विचार।"

२१६ **खलीक अजुम, सम्पा०**
मौलाना अबुल कलाम आजाद शख्सियत और कारनामे
दिल्ली, उर्दू अकादमी, १९८६ (उर्दू)

"उर्दू अकादमी दिल्ली ने २५-२७ अक्तूबर १९८५ को खलीक अजुम की अध्यक्षता में मौलाना अबुल कलाम आजाद पर एक सेमिनार कराया था। भाग लेने वाले विद्वानों ने मौलाना के निजी हालात के साथ साथ उनकी पुस्तकों पर आलोचनात्मक लेखों का विवरण भी दिया है।"

२१७ **खालिदी (मोहम्मद यूनुस)**
रूह-ए-आजाद
लखनऊ, अबुल कलाम अकादमी, १९६० (उर्दू)

२१८ **खालिद, तरमी**
यादगार-ए-आजाद
लाहौर, np १९०५ (उर्दू)
"हिन्द और पाक के कवियों द्वारा काव्य श्रद्धाँजली।"

२१९ **खालिदी (मौहम्मद यूनुस)**
नकश-ए-अबुल कलाम आजाद
लखनऊ, मौलाना आजाद मैमोरियल कमेटी, १९७८ (उर्दू)
"मौलाना आजाद के भाषणो और लेखों का सकलन।"

२२० **खुदा बख्श ओरियन्टल पब्लिक लायब्रेरी (पटना), सम्पा०**
मौलाना अबुल कलाम आजाद की याद मे।
पटना, सम्पादक, १९८८
"खुदा बख्श ओरियन्टल पब्लिक लायब्रेरी, पटना, द्वारा मौलाना आजाद के जीवन तथा कारनामो पर एक पुस्तक।"

२२१ **गाँधी (राज मोहन)**
ऐट लाईव्ज
ऐ स्टडी आफ दि हिन्दू मुस्लिम-एनकाऊँटर नई दिल्ली, रोली बुक्स इण्टरनेशनल, १९८६ (अग्रेजी)
'मौलाना का जीवन चरित्र।"

२२२ **गुफरान अहमद**
अबुल कलाम आजाद
दिल्ली, फैजान बुक सप्लायर्स, १९८५ (उर्दू)
"बच्चो के लिये मौलाना की जीवन कथा।"

२२३ **डुगलास (इयान हेण्डरसन).**
अबुल कलाम आजाद इन इटैलेकच्यूअल एड रिलीजियस बायग्राफ्री
सम्पा० गैल मिनोट एण्ड क्रिस्चियन डब्लू ट्राल दिल्ली, आक्सफर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, १९८८ (अग्रेजी)
"पुस्तक मे मौलाना आजाद के प्रारभिक हालात उनके धार्मिक विचार, मानसिक परिवर्तन, राजनीतिक गतिविधियाँ और राष्ट्रीय नेता के रूप मे स्वतन्त्रता आन्दोलन में उनके योगदान का उल्लेख है। उनकी जीवनी को तीन भागों मे विभाजित किया गया है। १८८८-१९१०, १९११-१९२२ और १९२३-१९५८"

२२४ **डेसाई (महादेव)**
मौलाना अबुल कलाम आजाद ए बायोग्राफिकल मैमायर स० २
आगरा, शिवलाल अग्रवाल, १९४६ (अग्रेजी)
"मौलाना आजाद का जीवन-चरित्र। महादेव देसाई स्वाधीनता सग्राम मे मौलाना के निकट सहयोगी थे।"

२२५ **चोपडा (पी० एन०)**
मौलाना अबुल कलाम आजाद अन-फुलफिलड ड्रिम्ज
नई दिल्ली, इन्टर-प्रिन्ट, १९९० (अग्रेजी)
"मौलाना आजाद की जीवनी और स्वाधीनता सग्राम में उनकी भूमिका।"

२२६ **जावेद वशिष्ठ, सम्पा०**
मौलाना अबुल कलाम आजाद फिक्र व नजर के आईने मे
फरीदाबाद, हरियाणा उर्दू अकादमी, १९८७ (उर्दू)
"मौलाना अबुल कलाम आजाद की जन्म शताब्दि समारोह पर हरियाणा-उर्दू अकादमी ने एक सेमिनार १० मार्च १९८७ को नूह (मेवात) मे आयोजित किया था। मौलाना के धार्मिक, राजनीतिक और साहित्यिक ग्रथों के विभिन्न पहलूओ को विशेषत उनके चरित्र तथा विचारो को उजागर किया गया है। यासीन मेओ डिगरी कालेज नूह के एक मुशायरे की रिपोर्ट भी अन्त में अकित है।"

२२७ **जैदी (अली जव्वाद), सम्पा०**
अनवार-ए-अबुल कलाम
श्रीनगर, जश्न-ए-काश्मीर कमेटी, १९५९ (उर्दू)
"एक सप्ताह के सेमिनार का आयोजन जश्ने बहार-ए-काश्मीर ने १९५८ मे किया था। इस मे मौलाना की धार्मिक, राजनीतिक, एतिहासिक और शिक्षा-सम्बन्धी पुस्तकों पर लेख पढे गए। सेमिनार की रिपोर्ट भी साथ में प्रकाशित की गई है।"

२२८ **झा (विमल जगदीश)**
मौलाना अबुल कलाम आजाद
इलाहाबाद, चित्री हितकारी पुस्तक मेला, १९४०
"विद्यालयो के छात्रो के लिए मौलाना अबुल कलाम आजाद की हिन्दी मे जीवनी।"

२२९ **ताराचद**
मौलाना अबुल कलाम आजाद इन हिस्ट्री आफ दी फ्रीडम मूवमेण्ट
खड ३ नई दिल्ली, पब्लि० डिवीजन, १९७२ (अग्रेजी)
"मौलाना आजाद का स्वतन्त्रता आन्दोलन में जो रोल रहा है, उसका अध्ययन किया गया है।"

२३० **पन्नी (शेर बहादुर)**
मौलाना अबुल कलाम आजाद मौलाना आजाद की शख्सियत, सीरत और अफकार का मुताअला
कराची, इदारा-ए-तसनीफ-औ-तहकीक, १९८६ (उर्दू)
"यह पुस्तक उनके निजी आजाद-अनुशीलन पर आधारित है। कुछ एतिहासिक खुतबे जैसे रामगढ का खुतबा (१९४०), जामा मस्जिद दिल्ली का खुतबा (१९४७) और पार्लियामेट का खुतबा (१९५४) अन्त मे शामिल है।"

२३१ **फजलुल हक खैराबादी. सम्पा० मौ० अब्दुल शाहिद ख़ाँ शेरवानी**
अल-सौरात अल-हिन्दिया
बिजनौर, अखबार मदीना, १९४७ (अरबी)
"कौल-ए-फैसल का अरबी मे अनुवाद, जिसमे स्वाधीनता सग्राम के हालात का जायजा लिया गया है।"

२३२ **फारूकी (आई एच आजाद)**
दी तर्जुमानुल कुरान
नई दिल्ली, विकास, १९८२ (अग्रेजी)
"कुरान के अध्ययन के लिए मौलाना के नजरियात का आलोचनात्मक जायजा पेश किया गया है।"

२३३ **फारूकी (बुरहान अहमद)**
दि मुज्जदीज कन्सैप्शन आफ तौहीद
लाहौर, अशरफ, १९४० (अग्रेजी)

२३४ **फारूकी (मौ० अब्दुर्रज्जाक)**
अबुल कलाम आजाद के तालीमी तसव्वुरात
गुलबर्गा, अजुमन-ए-हयात-नौ, १९८५ (उर्दू)
"मौलाना का शिक्षाविद के रूप मे अवलोकन किया गया है।"

२३५ **फिदा हुसैन**
इमामुल हिन्द मौलाना अबुल कलाम आजाद
इलाहाबाद, फिदा हुसैन खॉ, १९५८ (उर्दू)
"मौलाना आजाद की जीवनी।"

२३६ **बज्मी (अबुसईद)**
मौलाना अबुल कलाम आजाद तनकीद और तर्बासरे की निगाह मे
दिल्ली, नाज पब्लिशिग हाऊस, १९४० (उर्दू)
"मौलाना के व्यक्तित्व और उनके कारनामो का विवेचनात्मक उल्लेख। इकबाल एकेडेमी लाहौर ने भी प्रकाशित किया।"

२३७ **बट्ट (अब्दुल्ला), सम्पा०**
अबुल कलाम आजाद
लाहौर, कोमी कुतबखाना, १९४३ (उर्दू)
"मौलाना की साहित्यिक राजनैतिक और धार्मिक गतिविधियो के बारे मे प्रमुख लेखकों के निबन्धो का सकलन।"

२३८ **बट्ट (अब्दुल्ला), सम्पा०**
आस्पेक्टस आफ मौलाना अबुल कलाम आजाद
कराची, इदारा-ए-तसनीफ-औ-तहकीक, nd (अग्रेजी)
"मौलाना आजाद के निकट सहयोगियो पडित नेहरू, अरूणा आसिफ अली, महादेव डेसाई और राजगोपालाचार्य ने उनके जीवन पर प्रकाश डाला है। अन्त मे इन लेखको की जीवनी भी है।"

२३९ **बेदार (आबिद रजा)**
मौलाना अबुल कलाम आजाद
रामपुर, इस्टिट्यूशन आफ ओरियटल रिसर्च, १९६८ (उर्दू)
"मौलाना आजाद के जीवन तथा उनके विचारो का विश्लेषण। पुस्तक में उनके सग्रहों का विस्तार के साथ मूल्याकन भी है।"

२४० **बाल जेन (जे० एम० एस०)**
माड्रन उर्दू कुरान

इन्टरप्रीटेशन, १८६०-१९६० लिडिन ब्रील, १९६१ (अग्रेजी)

"मौलाना की पुस्तक तर्जुमान ऊल कुरान की समालोचना।"

२४१ **भट्टाचार्य (शान्ति रजन), सम्पा०**
मौलाना अबुल क्लाम आजाद के पासपोर्ट की खुफिया फाईल
नई दिल्ली, अन्जुमन तरक्की-उर्दू, १९८७ (उर्दू)

"पुस्तक मे मौलाना का जीवन परिचय और उनकी पुस्तक 'हमारी आजादी' के अश दिये गये है।

२४२ **रजीउद्दीन अहमद**
नक्द-ए-अबुल क्लाम
त्रुपति, श्रीवेकटेश्वर विश्वविद्यालय, १९६८ (उर्दू)

"मौलाना आजाद का विस्तृत अध्ययन। इसमे लेखक ने मौलाना की तुलना मीर तकीमीर, मिर्जागालिब, सर सैय्यद अहमद खॉ और सर मुहम्मद इकबाल के साथ की है।"

२४३ **राजपूत (ए बी)**
मौलाना अबुल क्लाम आजाद
लाहौर, लोईन प्रेस, १९४६ (अग्रेजी)

"मौलाना आजाद का जीवन-परिचय जिसमे लेखक ने मौलाना की तुलना सीजर और पाल से की है जो वर्तमान युग और भविष्य के पुरुष समझते जाते है।"

२४४ **रियाजुल करीम. सम्पा०**
मुस्लिमस एण्ड दी कॉग्रेस
कलकत्ता, बिरेन्द्र लायब्रेरी, १९४१ (अग्रेजी)

२४५ **रूखसाना जलाली (के)**
अबुल क्लाम आजाद परिचय व सन्देश
लखनऊ, मौलाना आजाद मेमोरियल अकादमी, १९८०

"विश्वविद्यालय के छात्रो के लिए मौलाना आजाद का जीवन-चरित्र।"

२४६ **रे (एमेलेण्डो)**
इन क्रिसमटैसीज इन आजाद
हावडा, बगावर्ती ग्रथालय, १९६८ (अग्रेजी)

"मौलाना और उनके जीवन सम्बन्धी विचारो की समालोचना।"

२४७ **नवाती देव**
मौलाना अबुल क्लाम आजाद
हैदराबाद सिन्ध, कौमी साहित्य दल, nd (सिन्धी)

'सिन्धी भाषा मे मौलाना आजाद की जीवनी।"

२४८ **निजामी (खलीक अहमद)**
मौलाना आजाद अलबम
दिल्ली, इदारा-ए-अदबियात-ए-दिल्ली, १९८८ (उर्दू/अग्रेजी)

"मौलाना की शताब्दी समारोह पर एक चित्र-सग्रह प्रकाशित किया गया। यह चित्रों फोटो, स्कोचो, डायग्रामों और मौलाना के उद्गारो तथा लेखों, अन्य लेखको के लेखो से उद्धरित अवतरणों का सुन्दर सग्रह है।"

२४९ **निजामी (जफ़र अहमद)**
मौलाना आजाद की कहानी
नई दिल्ली, मक्तबा पयाम-ए-तालीम, १९८८ (उर्दू)
"बच्चो के लिए मौलाना आजाद की जीवनी।"

२५० **मदनी (हुसैन अहमद)**
नक्श-ए-हयात
२ खण्ड देवबन्द, मक्तबा-ए-दीनियात, १९३३-५३
"प्रथम खण्ड (१९३३) और द्वितीय खण्ड (१९५३) मे पृथक् रूप से मौलाना आजाद के व्यक्तित्व तथा कारनामो का उल्लेख।"

२५१ **मसीह-उल-हसन (सैय्यद)**
हवाशी-ए-अबुल कलाम आजाद
दिल्ली, उर्दू अकादमी, १९८८
"मौलाना आजाद के पुस्तकालय की पुस्तको पर मौलाना आजाद के कलम से टिप्पणियॉ यह पुस्तके अरबी, अग्रेजी, फारसी तथा उर्दू की हैं। यह पुस्तके आजाद भवन लायब्रेरी मे सुरक्षित मौलाना के निजी ग्रथ-कोश के अन्तर्गत मौजूद है। उन्हीं पर मौलाना के हाशियो का जायजा लिया गया है। सारी सामग्री विषय-शीर्षको जैसे दर्शन व धर्म, साहित्य व सस्मरण, इतिहास व भूगोल मे विभाजित है। हर शीर्षक मे सम्बन्धित पुस्तक का विवरण, उसकी भूमिका, पृष्ठभूमि और विशेष भागों पर मौलाना का हाशिया पुस्तक के कोने मे अकित है।"

२५२ **मजूर अहमद (मलिकजादा)**
गुबारे खातिर का तकीदी मुताअला
लखनऊ, मक्तबा दीन-औ-अदब, १९७६ (उर्दू)
"मौलाना आजाद की पुस्तक का साहित्यिक विश्लेषण।"

२५३ **मजूर अहमद (मलिकजादा)**
मौलाना अबुल कलाम आजाद अलहिलाल के आईने मे
लखनऊ, np १९७२ (उर्दू)
"अलहिलाल में मौलाना आजाद के लेखो तथा सम्पादकीयों पर टिप्पणी।"

२५४ **मंजूर अहमद (मलिकजादा)**
मौलाना अबुल कलाम आजाद फिक्र-औ-फन
लखनऊ, नसीम बुक डिपो, १९६९ (उर्दू)
"मौलाना अबुल कलाम आजाद की जीवनी और उनके साहित्यिक कृतियों पर समालोचना १९७८ मे रिप्रिन्ट प्रकाशित हुआ।"

२५५ **मालिक राम**
तजकिरा-ए-मआसिरीन
४ खण्ड नई दिल्ली, मक्तबा-ए-जामिया, १९७२-१९७८ (उर्दू)

२५६ **मिनोट (गैल)**
दी खिलाफत मूवमेंट
न्यूयार्क, कोलम्बिया प्रेस, १९८२ (अग्रेजी)
"खिलाफत आन्दोलन मे मौलाना आजाद की भूमिका का विवरण।"

२५७ **मुईन शाकिर**
खिलाफत टू पार्टीशन
नई दिल्ली, कलमकार प्रकाशन, १९७० (अंग्रेजी)
"खिलाफत आन्दोलन से लेकर देश के विभाजन तक की राष्ट्रीय स्वतन्त्रता आन्दोलन का अध्ययन, मौलाना आजाद सहित।"

२५८ **मुजीब (मौ०)**
दी तजकिरा ऐ बायोग्राफी सिम्बलस इन आजाद मैमोरियल वालियोम
सम्पा० हुमायूँ-कबीर, बम्बई ऐशिया, १९५९ (अंग्रेजी)

२५९ **मुशीर-उल-हक़**
मौलाना अबुल कलाम आजाद, ए रिवोल्यूशनरी आलिम इन मौलाना आजाद
१८थ डैथ एनीवर्सरी, २२ फरवरी १९७६ लखनऊ, मौलाना आजाद मेमोरियल एकेडेमी, १९७६ (अंग्रेजी)
"एक प्रगतिशील बुद्धिजीवी की हैसियत से मौलाना आजाद का तनकीदी मुताअला।"

२६० **शाहिद (एम० ए०)**
मौलाना आजाद और उनके नाकिद
कराची, माड्रन पब्लि, १९८१ (उर्दू)
"मौलाना आजाद के विषय मे लिखी हुई पुस्तको का मूल्याकन।"

२६१ **शैदा रिवाडवी (अब्दुल रहमान)**
मौलाना अबुल कलाम आजाद की सरगर्म जिदगी का मुरक्का
मेरठ, कुतुब खारा सईदिया, १९४०
"मौलाना आजाद के व्यक्तित्व का चित्रण।"

२६२ **सईद अहमद अकबराबादी**
मौलाना अबुल कलाम आजाद सरित-औ-शख्सियत और इल्मी-औ-अमली कारनामे
सम्पा० अबु सलमान शाहजहाँपुरी कराची, इदारा-ए-तसनीफ-औ-तहकीक, १९८६ (उर्दू)
"एक जीवन-चरित्र और ४ अन्य लेखों मे प्रसिद्ध साहित्यकारो ने मौलाना के विभिन्न पहलूओं पर प्रकाश डाला है।"

२६३ **सालिक (अब्दुल मजीद)**
ग्रोथ आफ़ मुस्लिम जरनलईज्म इन ए हिस्ट्री आफ दि फ्रीडम मुवमेन्ट
ख० ३, भाग २ कराची, पाकिस्तान हिस्टारिकल सोसाईटी, १९६३ (अंग्रेजी)
"मौलाना आजाद पत्रकार के रूप मे।"

२६४ **सालिक (अब्दुल मजीद).**
याराने-कुहन
लाहौर, मतबूआत-ए-चट्टान, १९५५ (उर्दू)

२६५ *सिपासनामा*
अबुल कलाम आजाद वजीर-ए-तालीमात, हुकूमत-ए-हिन्द, हैदराबाद, दायरातुल मुआरिफ, १९५२ (उर्दू)
"एक प्रशसानिहित लेख।"

२६६ **सिद्दीकी (अतीक), सम्पा०.**
आईना-ए-अबुल कलाम आजाद मजमूआ-ए-मकालात
दिल्ली, अजुमन-ए-तरक्की-ए-उर्दू, १९७६ (उर्दू)
"यह मौलाना आजाद के व्यक्तित्व पर प्रमुख साहित्यकारों तथा नेताओ के लेखों का सग्रह है। अन्त में मौलाना साहेब के लेखों का सकलन भी शामिल है।"

२६७ **सैयदेन (के जी)**
दि ह्यूमनिस्ट ट्रैडीशन इन इण्डियन एजूकेशनल थाट
बम्बई, एशिया पब्लि० हाऊस, १९६६ (अग्रेजी)
"मौलाना आजाद के शिक्षा सम्बन्धी विचारों पर आलोचनात्मक दृष्टि।"

२६८ **सैय्यदेन (के जी)**
मौलाना आजाद्स कन्ट्रीब्यूशन टू एजूकेशन
बडौदा, महाराज सियाजी राव यूनिवर्सिटी, १९६१ (अग्रेजी)
"मौलाना पर दो भाषण (१) एजूकेशनल सिस्टम और (२) पालीसीज एण्ड प्रोग्राम्स। दोनो महाराजा सियाजी राव मेमोरियल लेकचरज के अन्तर्गत दिए गए।"

२६९ **हसन मुहम्मद पहलवान**
अबुल कलाम आजाद
हैदराबाद, मक्तबा-ए-इत्तिहाद-औ-तरक्की, १९५८ (उर्दू)
"मौलाना आजाद का सक्षिप्त जीवन-विवरण।"

२७० **हार्डी (पीटर)**
पार्टनर्स इन फ्रीडम एण्ड ट्रयू मुस्लिम्स दी पोलिटिकल थॉटस आफ सम मुस्लिम स्कालर्स इन ब्रिटिश इण्डिया, १९१२-१९४७
, स्केण्डीनेविया इस्टिट्यूट आफ लिटरेचर, १९७१ (अग्रेजी)
"मौलाना आजाद की राजनीतिक तथा राष्ट्रीय सेवाओ का उल्लेख।"

२७१ **हुमायूँ कबीर, सम्पा०**
मौलाना अबुल कलाम आजाद ए मेमोरियल वालियोम
बम्बई, एशिया, १९५९ (अग्रेजी)
"यह पुस्तक मौलाना आजाद को श्रद्धाजलि है। १९५७ मे ११ नवम्बर १९५८ को मौलाना की ७०वीं वर्षगॉठ मनाने के लिए एक कमेटी बनाई गई थी। यह निश्चय किया गया कि एक पुस्तक मौलाना पर प्रकाशित की जाए और उनको एक सार्वजनिक सभा मे भेट किया जाए। मौलाना फरवरी १९५८ मे देहान्त कर गए। प्रशस्ति खड के बजाए मौलाना आजाद की प्रथम पुण्य स्मृति पर यह स्मारिका भेंट की गई।"

२७२ **हैन (अर्नेस्ट एच)**
मौलाना अबुल कलाम आजाद्स कॉन्सेप्ट्स आफ रिलीजन एण्ड रिलीजियस ब्लीफ एकार्डिंग टू हिज तरजुमानुल कुरान (अग्रेजी)
"अप्रकाशित प्रति, एस टी एम थेसिस, मॉन्ट्रियल, मैकगिल यूनिवर्सिटी प्रेस, १९६५"

पत्र-पत्रिकाओं में मौलाना के विषय में प्रकाशित लेखों का विवरण

खंड 'ख'

२७३ **अखलाक हुसैन कास्मी**
वहिए नबूअत के तसव्वुर मे सर सैयद और मौलाना आजाद का इख्तिलाफ
बुर्हान (दिल्ली), १००(३), सितम्बर १९८७ पृ० १७७-१८० (उर्दू)
"तर्जुमानुल कुरान पर लेखक की टिप्पणी। इसमे मौलाना आजाद और सर सैयद अहमद खॉ के मतभेद पर विचार किया गया है।"

२७४ **अब्दुल कवी दिसनवी**
मौलाना अबुल कलाम आजाद और हफतावार पैगाम
आजकल (दिल्ली), ४३(५), दिसम्बर १९८५ पृ० ५०-५८ (उर्दू)
"मौलाना पत्रकार के रूप में और उनका पत्र पैगाम '

२७५ **अब्दुल्ला (यू०)**
दि आजाद पेपस—मिस्ट्री अन-रिवील्ड
हिन्दू, (दिल्ली), २७ नवम्बर, १९८८ (अंग्रेजी)
"मौलाना की पुस्तक इण्डिया विंस फ्रिडम, प्रकाशन १९८८ के पूर्ण ममविदे पर विस्तृत जानकारी।"

२७६ **अब्दुल्ला (यू)**
गुबार खातिर और कारवान-ए-खयाल
बुरहान, ४४(४), अप्रैल १९६०, पृ० २२९-२५६ (उर्दू)
"मौलाना आजाद की दो पुस्तको पर समीक्षा।"

२७७ **अब्दुल लतीफ आजमी**
अबुल कलाम आजाद तारीखी गलतियॉं,
आजकल (दिल्ली), ४६(३) अक्टूबर १९८७, पृ० १५-१८-२३ (उर्दू)
"अब्दुल कवी दसनवी की पुस्तक अबुल कलाम आजाद पर तबसिरा।"

२७८ **अब्दुल लतीफ आजमी**
मौलाना अबुल कलाम आजाद
जामिया (दिल्ली), ८०(३), मार्च १९८३ पृ० ३०-३४ (उर्दू)
"मौलाना आजाद के व्यक्तित्व का मूल्याकन।"

२७९ **अब्दुल लतीफ आजमी**
मौलाना आजाद का सद-साला यौम-ए-पैदाईश
हमारी जबान (दिल्ली), ४६(४२), १ नवम्बर १९८७, ८ पृ० (उर्दू)
"मौलाना की शैली पर विचार-व्यक्ति और उन मुद्दो की ओर सकेत जिनपर अभी शोध करने की आवश्यकता है।"

२८० **अब्दुल लतीफ आजमी**
मौलाना अबुल कलाम आजाद और सैयद सुलैमान नदवी के बाहिमी ताल्लुकात उनके खुतूत की रोशनी में
जामिया (दिल्ली), ४९(६), दिसम्बर १९६३ पृ० ३१४-३२९ (उर्दू)

२८१ **अब्दुल लतीफ आजमी**
मौलाना अबुल कलाम आजाद पर बेबुनियाद इल्जिमात
जबान-औ-अदब (पटना) १२(२), अप्रैल-जून १९८६ पृ० २४-४६ (उर्दू)
"निसार अहमद फारूकी के लेख प्रकाशित हमारी जबान (दिल्ली) १५ अप्रैल १९८६ के उत्तर मे।"

२८२ *अबुल कलाम आजाद बर्थ सेंटीनरी सैलीबरेशन ऑन नवम्बर ११, इण्डियन एक्सप्रेस* (दिल्ली), ६ दिसम्बर १९८८ (अंग्रेजी)
"११ नवम्बर को विज्ञान भवन मे आजाद के जन्म की शताब्दि आयोजित करने के सम्बन्ध मे एक प्रैस नोट।"

२८३ **अबुल हसन अली नदवी**
मौलाना आजाद
कौमी आवाज (दिल्ली), २१ फरवरी १९८८, एक पृष्ठ (उर्दू)
"लेखक ने मौलाना आजाद के साथ अपने सम्पर्क का उल्लेख किया है और मौलाना के व्यक्तित्व, चरित्र और साहित्यिक स्तर पर अपने विचार व्यक्त किए हैं।"

२८४ **अबु सलमान शाहजहॉपुरी**
अल-हिलाल (कलकत्ता) तारीखी खसाईस व मकासिद और फन की रोशनी मे
जामिया (दिल्ली), ५८(२), फरवरी १९८८, पृ० १००-११४ (उर्दू)
"अखबार अलहिलाल के प्रकाशन का उद्देश्य तथा इतिहास।"

२८५ **अबु सलमान शाहजहॉपुरी**
नुकूश-ए-इमामुल हिन्द मौलाना अबुल कलाम आजाद पाकिस्तान मे
उर्दू-अदब (दिल्ली), १९६४ पृ० १४३-१५९ (उर्दू)
"लेखक ने बताया है कि विभाजन के बाद मौलाना आजाद के महत्त्व का अनुमान पाकिस्तान मे बिल्कुल नहीं था किन्तु १९६४ मे जब मौलाना के बारे मे कई लेख प्रकाशित हुए तो पाकिस्तान मे उनकी विद्वता की पहचान हो गई।"

२८६ **अबु सलमान शाहजहॉपुरी**
नुकूश-ए-इमामुल हिन्द और रिसाले
उर्दू अदब (दिल्ली), १९६७ पृ० ५-३२ (उर्दू)
"मौलाना आजाद पर शोधकार्य के लिए एक महत्त्वपूर्ण सूत्र।"

२८७ **अबु सलमान शाहजहॉपुरी**
मौलाना अबुल कलाम आजाद
निदा-ए-मिल्लत (लखनऊ) ४२(४२), पहली नवम्बर १९८७ (उर्दू), पृ० २-४
"मौलाना आजाद की पत्रकारिक जिन्दगी पर प्रकाश।"

२८८ **अबु सलमान शाहजहॉपुरी**
मौलाना अबुल कलाम आजाद पर पहली किताब

मआरिफ (आजमगढ), ९९(४), अप्रैल १९६७, पृ० २०५-२९५ (उर्दू)

"इमामुल अहरार और मौलाना अबुल कलाम आजाद पर तबसिरा।"

२८९ **अबु सलमान शाहजहाँपुरी**
हिन्दुस्तान मे तारीख-औ-दावत-ए-इस्लाम का एक बाब
मौलाना आजाद और तंहरीक-ए-नज्म-ए-जमाअत बुर्हान (दिल्ली), ६५(३), सितम्बर १९७०, पृ० १५३-१७७ (उर्दू)

"लेखक ने मौलाना की इस्लाम विशेषत राष्ट्रीय एकता और नेतृत्व की एकता की शिक्षा के सदर्भ से अध्ययन किया है।"

२९० *अलजमियत (दिल्ली) (दैनिक) (उर्दू)*
४ दिसम्बर १९५८

"आजाद विशेषाक।"

२९१ **(अलवी (तौसीफ)**
मौलाना अबुल कलाम आजाद एक एहद आफरीन शख्सियत
कौमी आवाज (दिल्ली) ५ जनवरी, १९८९ (उर्दू)

"मौलाना आजाद का विवेचनात्मक अध्ययन।"

२९२ *आजकल (दिल्ली) (मासिक) (उर्दू)*
१७(१), अगस्त १९५८

"अबुल कलाम नम्बर।"

२९३ *आजकल (दिल्ली) (मासिक) (उर्दू)*
४७(७), नवम्बर १९८८

"मौलाना आजाद नम्बर।"

२९४ **आजाद (जगन्नाथ)**
मौलाना आजाद का शैरी जौक
कौमी राज, १३(१४), १० दिसम्बर १९८६, पृ० १८-३१ (उर्दू)

"मौलाना के साहित्यिक चरित्र और काव्य-अभिरुचि के सम्बन्ध मे लिखा गया एक लेख। विभिन्न उद्धरणो तथा सूत्रो द्वारा अपने दृष्टिकोण की पुष्टि की गई है।"

२९५ **आलम (एम)**
मौलाना अबुल कलाम आजाद एक हमागीर शख्सियत
दिल्ली (दिल्ली), अप्रैल-सितम्बर १९८८ पृ० १२-१३ (उर्दू)

"मौलाना आजाद का जीवन-चरित्र।"

२९६ *आर वी राजीव लाऊड आजाद्स् रोल*
ट्रिब्यून (चडीगढ), १३ नवम्बर १९८८ (अग्रेजी)

"विज्ञान भवन मे मौलाना आजाद की जन्म शताब्दी समारोह के उपलक्ष्य मे श्री वेकटरमन और श्री राजीव गाधी ने अपने भाषणो मे मौलाना आजाद को एक महान धर्मनिरपेक्ष बताया था। उसकी अखबारी रिपोर्ट।"

२९७ **इकबाल मसूद**
पार्टिशनिग प्रिलेम पर्सनल व्यूपुआँइट
इण्डियन एक्सप्रैस (दिल्ली), २७ नवम्बर १९८८ (अग्रेजी)

"ब्रिटिश सरकार के घिनावने रोल के कारण देश के बटवारे को अनिवार्य परिस्थितियो पर टिप्पणी।"

२९८ **इण्डिया टूडे (नई दिल्ली)**
आजाद पेपर्स पेनफुल डिसक्लोजर्स एक्सट्रेक्ट्स
नई दिल्ली, इण्डिया टूडे, १९८८ (अग्रेजी)
"पत्रिका इण्डिया टूडे, १५ नवम्बर १९८८, पृ० १०२-१०८, मे मौलाना आजाद के विवादास्पद ३० पृष्ठो पर तीव्र आलोचना।"

२९९ **इण्डियन एक्सप्रैस**
बर्थ सेंटिनरी सैलीबरेशन ऑन नवम्बर ११
इण्डियन एक्सप्रैस (दिल्ली), ६ नवम्बर, १९८८ (अग्रेजी)
"११ नवम्बर, को विज्ञान भवन मे मौलाना की जन्म शताब्दि समारोह रिपोर्ट।"

३०० **इण्डियन एक्सप्रैस**
क्रिटिकल रेफ्रेस आफ पटेल इन आजाद पेपर्स
इण्डियन एक्सप्रैस (दिल्ली), २४ अक्तूबर, १९८८ (अग्रेजी)
"राबिन्द्रनाथ राय, हुमायूँ कबीर के स्टाफ मे थे और उनका दावा था कि उन्होने ही इण्डिया विंस फ्रीडम के मसविदे को टाईप किया था। प्रेस को एक इण्टरव्यू देते हुए उन्होने तीस पृष्ठो के रहस्योद्घाटन करने की कोशिश की।"

३०१ **इण्डियन एक्सप्रैस**
गवर्मेण्ट आस्कड् टू टेक ओवर आजादस् बर्थ प्लेस
इण्डियन एक्सप्रेस (दिल्ली), २५ नवम्बर १९८८ (अग्रेजी)
"ससत्सदस्यो ने मौलाना आजाद के जन्म-स्थान पर सदेह व्यक्त किया और इसकी माग की गई कि उसको राष्ट्रीय स्मारक घोषित किया जाए तथा उसको सरकार अपने अधिकार मे ले ले।"

३०२ **इण्डियन एक्सप्रैस**
लीग बिडटू सली कॉग्रेस इमेज
इण्डियन एक्सप्रैस (दिल्ली), ७ नवम्बर १९८८ (अग्रेजी)
"इण्डिया विंस फ्रीडम मे तीस पृष्ठो के प्रकाशन के सदर्भ मे।"

३०३ **इण्डियन एक्सप्रैस**
मौलाना आजाद एस्से कम्पीटीशन
इण्डियन एक्सप्रैस (दिल्ली), ११ नवम्बर १९८८ (अग्रेजी)
"आई सी सी आर के तत्वावधान मे मौलाना आजाद लेखो के कम्पीटीशन के सिलसिले मे घोषण की रिपोर्ट।"

३०४ **इण्डियन एक्सप्रैस**
रिमार्क्स् अगेस्ट नेहरू इन आजादस् पेपर्स
इण्डियन एक्सप्रैस (दिल्ली), २५ अक्तूबर १९८८ (अग्रेजी)
"विवादस्पद ३० पृष्ठो के बारे मे प्रकाशक की विज्ञप्ति।"

३०५ **इण्डियन एक्सप्रैस**
नेहरुज स्टेट्मेंटस् कट्रीब्यूटेड टू पार्टीशन
इण्डियन एक्सप्रैस, (दिल्ली), १५ नवम्बर १९८८, (अग्रेजी)

३०६ **इजीनियर (असगर अली)**
थियोलोजिकल क्रिएटिविटी आफ अबुल कलाम आजाद
इण्डियन लिट्रेचर (दिल्ली), ३१(४), जुलाई-अगस्त १९८८, पृ० १७-२९ (अग्रेजी)
"मौलाना आजाद की वर्षगॉठ मनाने के लिए साहित्य अकादमी ने अगस्त १९८८ मे एक सेमिनार किया था। इस सेमिनार का यह लेख है। लेखक ने इस मे मौलाना की धार्मिक विचारधारा को उजागर करने की कोशिश की है।"

३०७ **इस्लाही (जियाउद्दीन)**
मौलाना अबुल कलाम आजाद और कौमी जद्दोजहद
मआरिफ (आजमगढ), १४३(४), अप्रैल १९८९, पृ० ३०२-३१४ (उर्दू)
"स्वतन्त्रता सग्राम मे मौलाना आजाद के योगदान की चर्चा।"

३०८ *उर्दू अदब*
(अलीगढ) (क्यू) (उर्दू), ८/१९८९
आजाद नम्बर।"

३०९ **उम्मीद अदीबी**
इमामुल हिन्द मौलाना अबुल कलाम आजाद
कौमी राज (बमबई) ९(२४), २५ दिसम्बर १९८२, पृ० १२-१६, (उर्दू)
'मौलाना आजाद की जीवनी।"

३१० **उस्मानी (नज्म जावेद)**
मौलाना अबुल कलाम आजाद
कौमी आवाज, (दिल्ली), २० नवम्बर १९८८ (उर्दू)
"भारतीय राजनीति मे मौलाना आजाद के प्रमुख योगदान पर विस्तारपूर्वक टिप्पणी।'

३११ *एवान-ए-उर्दू*
(दिल्ली) (मासिक) (उर्दू) ३(८), १९८८,
"आजाद विशेषाक।"

३१२ **कमाली (एस० ए०)**
अबुल कलाम आजादस् कमेंट्री ऑन दि कुरान
मुस्लिम वर्ल्ड (हर्टफोर्ड, यू०एस०ए०) ४९(१), जनवरी १९५९, पृ० ५-१८ (अग्रेजी)
'मौलाना की व्याख्या तर्जुमानुल कुरान का विवेचनात्मक अध्ययन।"

३१३ **कृष्ण कात**
व्हैन मौलाना आजाद लाईड टू दी महात्मा
दिल्ली, रिकार्डर (दिल्ली), ९(६), अगस्त १९६८, पृ० ४-६ (अग्रेजी)
"इसमे मौलाना आजाद और महात्मा गाधी के मतभेदो का उल्लेख है। महात्मा गाधी के दूसरे सहयोगियो के साथ भी मौलाना के मतभेद थे। सुधीरघोष ने अपनी पुस्तक गाधीज एमीसरी मे लिखा है कि मौलाना ने केबिनेट मिशन मे कॉग्रेस मुसलमानो के प्रतिनिधित्व के सिलसिले मे जो भी लिखा है, वह गाधी की अनुमति के बिना था।"

३१४ **कुतुबुल्ला**
मौलाना आजाद अकादमी
कौमी आवाज (दिल्ली), २१ फरवरी १९८८ पृ० ३ (उर्दू)

"मौलाना आजाद के सग्रहो की प्रशसा और आजाद मेमोरियल अकादमी के उद्घाटन की सूचना।"

३१५ **कौमी आवाज**
ऐवान-ए-उर्दू का आजाद नम्बर
कौमी आवाज (दिल्ली), ६ अप्रैल १९८८ (उर्दू)
"आजाद नम्बर पर एक समीक्षा।"

३१६ **कैसर (मौ० यूसुफ)**
मौलाना अबुल कलाम आजाद और भोपाल
आजकल (दिल्ली), दिसम्बर १९५८ (उर्दू)

३१७ **कौमी आवाज**
तीस सफहात की इशाअत खुद मौलाना आजाद की हिदायत पर रोकी गई थी
कौमी आवाज (दिल्ली), २५ अक्तूबर १९८८ (उर्दू)
"राय का वक्तव्य, जिसमे कहा गया था कि ३० पृष्ठो का प्रकाशन रोक दिया जाए, यह स्वय मौलाना आजाद का निर्णय था।"

३१८ **कौमी आवाज**
सर बामुहर पैकिटो से मौलाना आजाद के ३० सफाहात गायब
हुमायूँ कबीर ने आजाद मुसव्वदे मे तगय्युर-औ-तबादुल करके नया मुसव्वदा तैयार किया था। जनता दौर मे चरण सिह की हिदायत पर रद्दो बदल की गई थी। कौमी आवाज (दिल्ली), १७ नवम्बर १९८८ (उर्दू)
"इडिया विस फ्रीडम के ३० पृष्ठो के प्रकाशन के बारे मे कुछ तथ्यो का रहस्योद्घाटन।"

३१९ **खालिद महमूद**
मौलाना आजाद बाहैसियत सहाफी
निदा-ए-मिल्लत (लखनऊ) ४३(१८), १५ मई १९८८, पृ० २१-२२ (उर्दू)
"मौलाना के प्रारम्भिक जीवन की घटनाएँ विशेष रूप से उनके पत्रकार-जीवन का उल्लेख है।"

३२० **गुफ़रान अहमद**
मौलाना अबुल कलाम आजाद
सबरस, ४४(३), मार्च १९८४, पृ० २५-३१ (उर्दू)
"मौलाना के व्यक्तित्व पर आलोचनात्मक लेख। प० जवाहरलाल नेहरू तथा गुलाम रसूल मेह्र के विचारो पर इस मे टिप्पणी शामिल है। सुबह-ए-उम्मीद के मार्च के अक मे यह पुन प्रकाशित हो चुका है।"

३२१ **गोपाल सिह**
एन अनसीमली कट्रोवर्सी
हिन्दुस्तान टाइम्स (दिल्ली), २० नवम्बर १९८८ (अग्रेजी)
"मौलाना आजाद की पुस्तक इण्डिया विंस फ्रीडम के तीस पृष्ठो के वर्तमान प्रकाशन पर गतिरोध की टीका।"

३२२ *चट्टान (लाहौर)*
(साप्ताहिक) (उर्दू) १८, १५ फरवरी १९६५
"आजाद नम्बर।"

३२३ **जनसत्ता**
७ नवम्बर को रहस्य खुलेगा

नवभारत टाइम्स (दिल्ली) २५ अक्टूबर १९८८

"एक समाचार, ३० पृष्ठ, ७ नवम्बर १९८८ को प्रकाशित किए जाएँगे।"

३२४ **जकी एम कासिम**
मौलाना अबुल कलाम आजाद और उर्दू

कौमी आवाज (दिल्ली), २४ फरवरी १९८६, पृ० ३-६ (उर्दू)

'उर्दू भाषा के समर्थन मे मौलाना के प्रयासो की प्रशसा।"

३२५ *जमहूर (अलीगढ)*

(पाक्षिक) (उर्दू) ५ और ६, १६ फरवरी १९६० (१५ अक एक मास मे प्रकाशित)

"आजाद नम्बर।"

३२६ **जाकिर हुसैन**
मौलाना अबुल कलाम आजाद एक हमागीर शख्सियत

जामिया (दिल्ली), ८५(२), फरवरी १९८८ पृ० ११-१४ (उर्दू)

"मौलाना आजाद के साथ अपने सहयोग की घटनाओ पर प्रकाश डाला गया है।"

३२७ *जामिया (दिल्ली)*

(मासिक) (उर्दू) ४८(३), मार्च १९६३

"आजाद नम्बर।"

३२८ **जौहर (जे एस)**
तकसीम का जिम्मेदार कौन ?

कौमी आवाज (दिल्ली), २९ नवम्बर १९८८ (उर्दू)

"लेखक ने इण्डिया विन्स फ्रीडम की शकाओ से बहस की है और बताया है कि देश का बटवारा अनिवार्य था जिसकी तमाम जिम्मेवारी ब्रिटिश सरकार की है।"

३२९ **टाइम्स आफ इण्डिया**
मौलानाज मजार

टाइम्स आफ इण्डिया (दिल्ली), २७ अक्टूबर १९८८ (अग्रेजी)

"मूर्तिकार हबीबुर्रहमान ने जामा मस्जिद के निकट स्थित मौलाना अबुल कलाम आजाद के मजार की खस्ता हालत देखकर अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त की।"

३३० **टाइम्स आफ इण्डिया**
चैम्पियण्ड यूनीटी

टाइम्स आफ इण्डिया (दिल्ली) १५ नवम्बर १९८८ (अग्रेजी)

"मौलाना आजाद की शताब्दि के उपलक्ष्य मे विज्ञान भवन के उद्घाटन समारोह की प्रेस रिपोर्टें।"

३३१ **दत्ता (अनुराधा)**
दि आजाद पेपर्स

इलस्ट्रेटिड वीकली (बम्बई), ६-१३ मार्च १९८८ पृ० ८-१७ (अग्रेजी)

"लेखक ने मौलाना आजाद के तीस पृष्ठो के तीव्र विवाद पर विचार व्यक्त किए हैं।"

३३२ **दत्ता (वी० एन०)**
आजाद फाइनल लुक एट फाईनल फेम

ट्रिब्यून (चण्डीगढ), २७ नवम्बर १९८८ (अग्रेजी)

"मौलाना के सम्बन्ध मे विस्तृत लेख का तीसरा भाग। पिछले भाग ३१ जुलाई और ७ अगस्त के ट्रिब्यून मे प्रकाशित हुए थे। यह लेख इण्डिया विंस फ्रीडम के बारे मे विवाद पर प्रकाश डालते हैं।"

३३३ **दत्ता (वी० एन०)**
आजाद पेपर्स टाइम्स आफ इण्डिया (दिल्ली)
२४ अक्तूबर १९८८ (अग्रेजी)

"इण्डिया विंस फ्रीडम के लेखक के बारे मे अपनी शकाएँ व्यक्त की है। इस लेख मे लेखक ने अपनी शकाओ तथा निष्कर्षो का औचित्य प्रस्तुत किया है।"

३३४ **दत्ता (वी० एन०)**
इवेण्टस् लीडीग टू पार्टिशन
टाइम्स आफ इण्डिया १२ और २१ दिसम्बर १९८८ (अग्रेजी)

३३५ **दत्ता (वी० एन०)**
तीस सफहात का फैसला खुद आजाद का
प्रताप (दिल्ली), २५ अक्तूबर १९८८

"पुस्तक इण्डिया विस फ्रीडम के तीस पृष्ठो के प्रकाशन के लिए निर्णय के सम्बन्ध मे एक वक्तव्य।"

३३६ *पद्रहवी सदी*
(दिल्ली) (मासिक) (उर्दू) ९(१), जनवरी १९८९

"आजाद नम्बर।"

३३७ **प्रताप**
तीस सफहात की इशाअत मौलाना ने नही रोकी थी
प्रताप (दिल्ली), २७ अक्तूबर १९८८ (उर्दू)

"मौलाना आजाद के निजी सचिव एन० एम० मसूद का स्पष्टीकरण।"

३३८ **प्रताप**
मौलाना आजाद की किताब उर्दू से तर्जुमा नही बल्कि ओरिजीनल थी
प्रताप (दिल्ली), २५ अक्तूबर १९८८ (उर्दू)

"इण्डिया विंस फ्रीडम मे तीस साल बाद तीस पृष्ठ के शामिल करने पर राय का प्रेस इण्टरव्यू।"

३३९ **प्रताप**
मौलाना कितने सच्चे थे और कितने ?
प्रताप (दिल्ली), २४-२८ नवम्बर १९८८ (उर्दू)

'ताजा रहस्योद्घाटनो की रोशनी मे मौलाना आजाद के बारे मे एक अखबार विशेष की राय।"

३४० **प्रताप**
मौलाना के इल्जामात
प्रताप (दिल्ली), १२ नवम्बर १९८८ (उर्दू)

"इण्डिया विंस फ्रीडम के तीस पृष्ठो के विषय पर अखबार का सम्पादकीय लेख।"

३४१ **फखुद्दीन आरिफ**
कौमी एकता के अलम्बरदार मौलाना अबुल कलाम आजाद
जबान-औ-अदब (पटना), १३(१), जनवरी-मार्च १९८७ पृ० १३-१६ (उर्दू)

३४२ **फ्रेक (यट सोबर)**
ऐ रिपोट बाइ पार्वती मेनन
फ्रटलाईन (मद्राम) ५(५), ५-१८ मार्च १९८८ पृ० ११६-१२० (अग्रेजी)
'मौलाना आजाद की विवादपूर्ण पुस्तक इण्डिया।''

३४३ **फ्रट लाईन**
आजादस पेपस, ट्बल्ड लैगेसी
फ्रटलाईन (मद्राम), ५(५), ५-१८ मार्च १९८८, पृ ११३-११६ (अग्रेजी)
''मौलाना आजाद की आत्म-कथा के विवादस्पद पृष्ठो पर हसन सुरूर की रिपोर्ट।''

३४४ **फारूकी (इमादुल हसन आजाद)**
अल्लामा इकबाल और मौलाना आजाद खुतबात और तर्जुमानुल कुरान की रोशनी मे
जामिया (दिल्ली), ८५(२), फरवरी १९८८, पृ० ७७-९७
'इकबाल तथा आजाद का दार्शनिक के रुप मे एक तुलनात्मक अध्ययन और उनके भाषणो तथा तर्जुमानुल कुरान की रोशनी मे इस्लाम के दोनो विद्वानो की तुलना।''

३४५ **फारूकी (ख्वाजा अहमद)**
हजरत मौलाना अबुल कलाम आजाद
मुब्बमिर, ९(०), अगस्त १९८१, पृ० ९-१७ (उर्दू)
''मौलाना की विद्वता तथा दानिशवरी के मम्बन्ध मे एक लेख।''

३४६ **फारूकी (जियाऊल हसन)**
शज्रात मौलाना आजाद
जामिया (दिल्ली), ८३(२), फरवरी १९८६, पृ० ३-६ (उर्दू)
इस लेख मे मौलाना की साहित्यिक सेवाओ और भारतीय इतिहास मे उनकी भूमिका के माथ-साथ मौलाना के विचार भी शामिल है।''

३४७ **फारूकी (जियाऊल हसन)**
अफकार-ए-आजाद की मानवियत आजाद हिन्द के मुसलमानो के लिए
इस्लाम और अस्र-ए-जदीद (दिल्ली), १८(१), जनवरी १९८६, पृ० ५-१२ (उर्दू)
'मुसलमानो का दर्शन-अध्ययन जो लेखक के अनुसार आज भी मुस्लिम समुदाय के लिए अनुकरणीय है। यह लेख जामिया के फरवरी ८६ अक तथा फरवरी १९८८ के अको मे प्रकाशित हो चुका है।''

३४८ **फारूकी (निसार अहमद)**
मौलाना आजाद का खानदानी पस-मजर
हमारी जबान (दिल्ली), ४०(१०), १० अप्रैल १९८६, पृ० १-३ (उर्दू)
''मौलाना के पारिवारिक हालात तथा पूर्वजो का शजरा।''

३४९ **फारूकी (निसार अहमद)**
मौलाना अबुल कलाम आजाद एक दानिशवर
कौमी आवाज (दिल्ली), १६ नवम्बर १९८८ (उर्दू)
''मौलाना आजाद के जीवन तथा साहित्यिक उपलब्धियो का सक्षिप्त विवरण।''

३५० *बरनी डाऊट्स आजादस् आथरशिप*
हिन्दुस्तान टाईम्स, (दिल्ली), २८ नवम्बर १९८८ (अग्रेजी)
"ईरान सोसाईटी के तत्त्वावधान मे आयोजित मौलाना आजाद जन्म शताब्दि समारोह थी उद्घाटन सभा में दिए गए श्री एस एम० एच० बरनी, अध्यक्ष, अल्पसख्यक आयोग के अभिभाषण की प्रेस रिपोर्ट।

३५१ **मजहर हसन**
मौलाना अबुल कलाम आजाद
आवाज (दिल्ली) १६ नवम्बर १९८६, पृष्ठ ११ (उर्दू)
"राष्ट्रीय एकता, जीवनोद्देश्य और शैक्षिक सिद्धान्तो की सफलता मे मौलाना के प्रयासो पर लेख मे बहस की गई है।"

३५२ **मलकानी (के० आर०)**
हू इज टू बिलेम फार पार्टीशन ?
इण्डियन एक्सप्रैस (दिल्ली), २० नवम्बर १९८८ (अग्रेजी)
"नेहरु पर लगाए गए आरोपो का विवेचन और उन उलझे हालात का वक्तव्य जिनके नतीजे मे देश का बटवारा हुआ।"

३५३ **मलिक हफीज**
अबुल कलाम आजाद थ्योरी आफ नेशनलइज्म
मुस्मिल वर्ल्ड (हार्टफोर्ड, यू०एस०ए०), ५३(१), जनवरी १९६३, पृ० ३३-४० (अग्रेजी)

३५४ **मसीह-उल-हसन**
मौलाना आजाद के कलमी हवाशी जेर-ए-मुताअला किताबो पर
इस्लाम और अस्र-ए-जदीद (दिल्ली), २ जुलाई १९७४, पृ० ६२-७० (उर्दू)
"मौलाना आजाद की अध्ययन-आधीन पुस्तको पर टिप्पणियाँ।"

३५५ **मसूद (एम० एन०)**
मौलाना अबुल कलाम आजाद के मेक्रेट्री
कौमी आवाज (दिल्ली), ८(१०६), १७ अप्रैल १९८८, पृ० १२ (उर्दू)
"शताब्दि समारोह के लिए तैयार की जानेवाली डाकूमेन्ट्री फिल्म को मौलाना आजाद क निर्जी सचिव एम० एन० मसूद द्वारा दिया हुआ इन्टरव्यू।"

३५६ **माथुर (गिरीश)**
दि मैसेज आफ मौलाना
लिंक (दिल्ली), २८ फरवरी १९८८, ८९ (अग्रेजी)
"लेखक ने बताया है कि हमारी स्वाधीनता की लडाई किस प्रकार समाप्त हुई और देश के बटवारे के क्या हालात थे।"

३५७ **मालिक राम**
मौलाना अबुल कलाम आजाद पहले बीस साल
तहरीर, २(१), १९६८, पृ० ७५-९७ (उर्दू)
"मौलाना आजाद के जीवन के प्रारभिक बीस वर्षो के हालात।"

३५८ *माहौल (कराची)*
(साप्ताहिक) (उर्दू) ६(१७), १८ सितम्बर १९६०,
"आजाद नम्बर।"

३५९ **मुईन शाकिर**
गुबारे-खातिर मे मौलाना आजाद की शख्सियत
आवाज (दिल्ली), ४८(१२), १६ जून १९८३, पृ० ११-१३ (उर्दू)
"मौलाना की पुस्तक समीक्षा।"

३६० **मुखोपाध्याय (नीलागन)**
आजाद मजार रिमेस नैगलेक्टेड
सडे मेल, (दिल्ली), ३० अक्टूबर १९८८ (अग्रेजी)
"मौलाना आजाद के मजार के शिल्पकार हबीबउर्रहमान ने मजार की दुदर्शा को १५ वर्ष के उपरान्त देखने पर यह लेख लिखा।"

३६१ **मुशीर-उल-हसन**
दि मुस्लिमस् मास कोंटैक्ट कैम्पेन एन अटैम्पट एट पोलिटिकल मोबीलाईजेशन
इकोनोमिक्स एण्ड पोलिटीकल वीकली (बम्बई), २१(५२), २७ दिसम्बर १९८६, पृ० २२-३-८२ (अग्रेजी)

३६२ मुआरिफ *(आजमगढ)*
(मासिक) (उर्दू) १९५३
"अबुल क्लाम आजाद।"

३६३ **मआरिफ**
शजरात
मआरिफ (आजमगढ), १९ नवम्बर १९८८, (उर्दू)
"मआरिफ द्वारा एक सम्पादकीय मे १९८८ की जन्म-शताब्दि समारोहो का सर्वेक्षण और मौलाना आजाद को श्रद्धाजली।"

३६४ **मेह्र (गुलाम रसूल)**
मौलाना अबुल क्लाम आजाद मेह्र के खुतूत शेरवानी के नाम
जामिया (दिल्ली) (२) फरवरी १९२८ (उर्दू)
"गुलाम रसूल मेह्र और शेरवानी के बीच मौलाना आजाद के सिलसिले मे खत्तो-किताबत।"

३६५ **मेसीनो (लियो)**
मौलाना आजाद से मेरी मुलाकात
जामिया (दिल्ली), ८५(२), फरवरी १९८८, पृ० १५-१७ (उर्दू)
"लियो मेसीनो एशियाई भाषा का फ्रांसीसी विद्वान था और वह सूफीमत का लब्ध प्रतिष्ठित विद्वान भी था। मौलाना आजाद पर उसके विचार तथा सस्मरण।"

३६६ **मोहम्मद हसन**
अबुल क्लाम आजाद और हम
कौमी आवाज (दिल्ली), ८(१०८), ९ अप्रैल १९८८, पृ० ३ (उर्दू)
"जीवन के प्रति अपेक्षित और क्रयायोग्य मौलाना के दृष्टिकोण और सिद्धान्तो का विवेचनात्मक अध्ययन।"

३६७ **रफीउल्ला**
इस्लामी कानून मौलाना आजाद की नजर मे
बुर्हान (दिल्ली), २(४५) अगस्त १९६०, पृ० ११७-१२२ (उर्दू)
"शरियत और कानून के बीच जो भेद है और मौलाना का दृष्टिकोण बयान किया गया है।"

३६८ **रशीदुदीन खाँ**
मौलाना अबुल कलाम आजाद (१९५८-८८)
मेनस्ट्रम (दिल्ली), वार्षिक, ८, अक्तूबर १९८८, पृ० ३७-३८ और १८० (अग्रेजी)
"मौलाना आजाद के जीवन-चित्रण मे ४ मुख्य पहलूओ को दर्शाया गया है। (१) हिन्दु-मुस्लिम एकता (२) खिलाफत आन्दोलन (३) असहयोग आन्दोलन तथा (४) एक मिली जुली राष्ट्रीयता मुसलमानों की जिम्मेदारी।"

३६९ **रिजवी (खुर्शीद मुस्तफा).**
मौलाना अबुल कलाम आजाद की सियासी बसीरत
कौमी आवाज (दिल्ली), विशेषाक, १८ सितम्बर १९८८ (उर्दू)
"इस लेख मे मौलाना आजाद द्वारा स्वाधीनता सग्राम मे भाग लेने और उनके कारनामो का विवरण है।"

३७० **नकवी (गुलजार अहमद)**
इस्लाम और नेशनलईज्म मेकिग आफ मौलाना
पैट्रयोट (दिल्ली), १५ नवम्बर १९५९ (अग्रेजी)
"मौलाना आजाद के व्यक्तित्व मे इस्लामी और राष्ट्रीय विचारो का समन्वय।"

३७१ **नकवी (गुलजार अहमद)**
मौलाना आजाद की इतिजामी सलाहियत
पन्द्रहवीं सदी (दिल्ली), १(१९), जनवरी १९८९, पृ० २३-२४ (उर्दू)
"मौलाना आजाद की प्रशासनिक क्षमता को उजागर किया गया है।"

३७२ **नवभारत टाईम्स**
७ नवम्बर को रहस्य खुलेगा
नवभारत टाइम्स (दिल्ली), २५ अक्तूबर १९८८,
"एक समाचार ३० पृष्ठ ६ नवम्बर १९८८ को प्रकाशित किए जाएँगे।"

३७३ *नया दौर (लखनऊ)*
(मासिक) (उर्दू) (विशेषाक) १४, १५ अगस्त १९५९
"आजाद खुसूसी नम्बर।"

३७४ *नई दुनिया (दिल्ली)*
(दैनिक) (उर्दू), २५ नवम्बर १९५८
"इमामुलहिन्द नम्बर।"

३७५ **निशात याहिया**
मौलाना आजाद का मुताअला-ए-कलामतुल शौरा
हमारी जबान (दिल्ली), ४५(१३), १ अप्रैल १९८६, ७ पृ० (उर्दू)
"लेखक ने मौलाना आजाद की काव्य प्रशसा के साथ-साथ उनकी स्मरणशक्ति की तारीफ की है।"

३७६ **नेशनल हैरल्ड**
आजाद क्रिटीकल आफ नेहरू टू
नेशनल हैरल्ड् (दिल्ली), २५ अक्तूबर १९८८ (अग्रेजी)
"ओरियन्ट लोगमैस का वक्तव्य जो कि इस पुस्तक (इण्डिया विन्स फ्रीडम) के प्रकाशक हैं।"

३७७ **नेशनल हैरल्ड**
आजाद क्रिटीकल टू नेहरु
नेशनल हैरल्ड् (दिल्ली), २५ अक्तूबर १९८८ (अंग्रेजी)

३७८ **नेशनल हैरल्ड**
आजाद एम्बाडीड मैक्यूलरईज्म
नेशनल हैरल्ड (दिल्ली), १२ नवम्बर १९८८ (अंग्रेजी)

३७९ **वत्स (उपेन्द्र)**
दुख की बात मे मजा
नवभारत टाईम्स (दिल्ली) २५ नवम्बर १९८८
"मौलाना आजाद की पुस्तक इण्डिया विंस फ्रीडम पर एक नजर, एक समीक्षा।"

३८० **शर्मा (शकर दयाल)**
मौलाना आजाद—जहानत का मम्बा
कौमी आवाज (दिल्ली), ८ फरवरी १९८९, (उर्दू)
"अमुख पुम्तक के विमोचन के अवसर पर उपराष्ट्रपति के भाषण का माराश।"

३८१ **शहाबुद्दीन दसनवी**
अजुमन-ए-इस्लाम तहरीक
आजकल (दिल्ली), अक्तूबर १९८१, पृ० १५-२२ (उर्दू)

३८२ **शाहराह (दिल्ली)**
(मासिक) (उर्दू)
फरवरी-मार्च १९५९
"आजाद नम्बर।"

३८३ **शेख (एम एच)**
मौलाना आजाद, सफे-अव्वल के सियासतदाँ
कौमी राज (बम्बई), २८ दिसम्बर १९८६, पृ० ७३-७८ (उर्दू)
"मौलाना आजाद के योगदान का अध्ययन।"

३८४ **शेरवानी (रियाजुर्रहमान).**
मौलाना आजाद की अदबी हैसियत का तजजिया
अलीगढ मैगजीन (अलीगढ), १९५९, पृ० १०४-११८, (उर्दू)
"मौलाना आजाद के साहित्यिक योगदान पर रोशनी।"

३८५ **स्टेट्समैन**
पटेल टर्नड् अगेस्ट गाँधीजी आजाद
स्टेट्समैन (दिल्ली), ८ नवम्बर १९८८ (अंग्रेजी)
"इण्डिया विंस फ्रीडम के तीस पृष्ठों वाली सामग्री के प्रकाशन के सम्बन्ध में रिपोर्ट।"

३८६ **सबा (हैदराबाद)**
(मासिक) (उर्दू)
५(३ और ४), १९५९
"आजाद नम्बर।"

३८७ **सबाहउद्दीन उमर**
मौलाना आजाद को रूस्वा करने की साजिश
हमारी जबान (दिल्ली), ४७(६), ८ फरवरी १९८८ पृ० ३ (उर्दू)
"मलिकजादा मजूर अहमद की दो पुस्तको की तीव्र आलोचना।"

३८८ **सिद्दिकी (अतीक)**
अल-हिलाल का इण्डेक्स
उर्दू-अदब (दिल्ली) १९६१, पृ० १३३-१७८
'अल-हिलाल का विस्तृत अध्ययन। अल-हिलाल के अको की सूचि भी शामिल है।"

३८९ **सिद्दीकी (इशरत अली)**
मौलाना आजाद तारीखी शख्सियत
कौमी आवाज (दिल्ली), २० नवम्बर १९८८ (उर्दू)

३९० **सिद्दीकी (रशीद अहमद)**
मौलाना अबुल कलाम मरहूम
अलीगढ, मैगजीन (अलीगढ) १९५९, पृ० १-१४ (उर्दू)
'एक जीवनी।"

३९१ *सुबह (दिल्ली)*
(क्यू) (उर्दू)
'मौलाना अबुल कलाम आजाद नम्बर।"

३९२ **सुरूर (ए ए)**
लिटरेरी कन्ट्रीब्यूशन आफ मौलाना आजाद
इण्डियन लिट्रेचर (दिल्ली) ३०(४), जुलाई-अगस्त १९८८, पृ० ५-१६ (अग्रेजी)
"मौलाना आजाद की जन्मशताब्दि समारोह मनाने के लिए साहित्य अकादमी ने अगस्त १९८८ मे एक सेमिनार कराया था। इस लेख मे मौलाना के प्रारभिक लेखो के अलावा, उनके भाषणो का सकलन भी किया गया है।"

३९३ **सुलेमान साबिर**
मौलाना आजाद शख्सियत, अदब और सहाफत
कौमी आवाज (दिल्ली), ५ मार्च १९८६, पृ० ३ (उर्दू)
"मौलाना आजाद की साहित्यिक तथा पत्रकारिक सेवाओ का उल्लेख।"

३९४ **हसन नजमी**
मौलाना आजाद पर सह-रोजा सेमिनार
हमारी जबान (दिल्ली), ४४(२२), १५ नवम्बर १९८०, पृ० ८-१०
"उर्दू अकादमी दिल्ली के तत्त्वावधान मे सम्पन्न ३ दिवसीय सेमिनार।"

३९५ **हसीन अमीन**
मौलाना आजाद और लखनऊ का खमीरा
कौमी आवाज (दिल्ली), (४३), २१ फरवरी १९८८, ३ पृ० (उर्दू)
"मौलाना आजाद का प्रिय शौक पान चबाना था। इस लेख मे यही बताया गया है।"

३९६ **हसीन अमीन**
हिस्टोरियन रिफ्यूट्स आजाद्स कटेंशन

हिन्दुस्तान टाईम्स, १५ नवम्बर १९८८ (अग्रेजी)

"इण्डिया विंस फ्रीडम के ३० पृष्ठो के बारे मे अखबारी रिपोर्ट।"

३९७ **हिन्दुस्तान टाइम्स**
लीग स्प्रैड लाईन्स आजाद

हिन्दुस्तान टाईम्स (दिल्ली), ७ नवम्बर १९८८ (अग्रेजी)

"पुस्तक इण्डिया विंस फ्रीडम के दूसरे सस्करण के प्रकाशन की रिपोर्ट विवादस्पद तीस पृष्ठो सहित।"

३९८ **हिन्दुस्तान टाइम्स**
हिस्टोरियन रिफ्यूट्स आजाद कनटेशन

हिन्दुस्तान टाईम्स (दिल्ली), १५ नवम्बर १९८८ (अग्रेजी)

"विवादपूर्ण ३० पृष्ठो के सम्बन्ध मे एक समाचार।"

३९९ *सुब्ह (देहली)*
(त्रिमासिक) (उर्दू)

४०० *उर्दू अदब*
(त्रिमासिक) (उर्दू)
आजाद विशेषाक, भाग ८, १९५९